

सुत्त-पिटक का

# संयुक्त-निकाय

दूसरा भाग

[ पळायत्तनवर्ग, महावर्ग ]

अनुवादक

भिक्षु जगदीश काश्यप एम. ए.

त्रिपिटकाचार्य भिक्षु धर्मरक्षित

प्रकाशक

महाबोधि सभा

सारनाथ, बनारस

प्रथम संस्करण  
१९००

बु० सं० २४९८  
ई० सं० १९५४

प्रकाशक—मिस्त्र एम० लक्ष्मण मन्त्री महावोधि समा सारनाथ, बनारस  
मुद्रक—श्रीमू प्रकाश कपूर, धातमण्डल प्रकाशक, बनारस ४१२६-२६

# संयुक्त-सूची

३४. पलायतन-वेदना-संयुक्त	..	४५१-५५०
३५. सातृगाम संयुक्त	.	५५१-५५८
३६. जन्तुस्तादक संयुक्त	..	७५८-७६२
३७. सासपढक संयुक्त	.	५६३
३८. मोगगदलान संयुक्त	.	५६४-५६९
३९. चित्त संयुक्त	..	५७०-५७९
४०. गामणी संयुक्त	.	५८०-५९९
४१. भसखत संयुक्त	.	६००-६०५
४२. शल्याकृत संयुक्त	...	६०६-६१५
४३. मार्ग संयुक्त	..	६१९-६४९
४४. योर्ध्यंग संयुक्त	.	६५०-६८३
४५. स्मृतिप्रस्थान संयुक्त	.	६८४-७०८
४६. इन्द्रिय संयुक्त	.	७०९-७३३
४७. सम्यक् प्रधान संयुक्त	.	७३४
४८. बल संयुक्त	..	७३५
४९. ऋद्धिपाद संयुक्त	.	७३६-७५०
५०. अनुग्रह संयुक्त	..	७५१-७५७
५१. ध्यान संयुक्त	.	७५८-७६०
५२. आनापान संयुक्त	...	७६१-७७१
५३. श्रोत्रापत्ति संयुक्त	.	७७२-८०३
५४. सत्य संयुक्त	.	८०४-८३२

# खण्ड-सूची

		पृष्ठ	
१	बीया खण्ड	: पञ्चपत्रक वर्ग	३४९-६१५
२	पॉबर्को खण्ड	: महावर्ग	६१७-८१९

---

# ग्रन्थ-विषय-सूची

१. चरतु-कथा	...	(१)
२. सुत्त-सूची	...	(१-३२)
३. संयुत्त-सूची	..	(३३)
४. खण्ड-सूची	.	(३४)
५. विषय-सूची	...	(३५)
६. अन्यानुवाद	...	४५१-८३२
७. उपमा-सूची	...	८३३-८३४
८. नाम-अनुक्रमणी	...	८३५-८३९
९. शब्द-अनुक्रमणी	...	८४०-८४६

---

## वस्तु-कथा

पूरे संयुक्त निकाय की छपाई एक साथ हो गई थी और पहले विचार था कि एक ही जिल्द में पूरा संयुक्त निकाय प्रकाशित कर दिया जाय, किन्तु ग्रन्थ-कलेवर की विशालता और पाठकों की असुविधा का ध्यान रखते हुए इसे दो जिल्दों में विभक्त कर देना ही उचित समझा गया। यही कारण है कि इस दूसरे भाग की पृष्ठ-संख्या का क्रम पहले भाग से ही सम्बन्धित है।

इस भाग में पळायतनवर्ग और महावर्ग ये दो वर्ग हैं, जिनमें ९ और १२ के क्रम से २१ संयुक्त हैं। वेदना संयुक्त सुविधा के लिए पळायतन और वेदना दो भागों में कर दिया गया है, किन्तु दोनों की क्रम-संख्या एक ही रखी गयी है, क्योंकि पळायतन संयुक्त कोई अलग संयुक्त नहीं है, प्रत्युत वह वेदना संयुक्त के अन्तर्गत ही निहित है।

इस भाग में भी उपमा सूची, नाम अनुक्रमणी और दाद-अनुक्रमणी अलग से दी गई है। बहुत कुछ सतर्कता रखने पर भी प्रूफ सम्बन्धी कुछ त्रुटियाँ रह गई हैं, किन्तु वे ऐसी त्रुटियाँ हैं जिनका ज्ञान स्वतः उन स्थलों पर हो जाता है, अतः शुद्धि-पत्र की आवश्यकता नहीं समझी गई है।

सारनाथ, बनारस

४-९-५४

भिक्षु जगदीश काश्यप

भिक्षु धर्मरक्षित

# सुत्त (=सूत्र)-सूची

## चौथा खण्ड

### षळायतन वर्ग

#### पहला परिच्छेद

#### ३४. षळायतन संयुक्त

#### मूल पणणासक

#### पहला भाग : अनित्य वर्ग

नाम	विषय	पृष्ठ
१. अनित्य सुत्त	आध्यात्म आयतन अनित्य हैं	४५१
२. दुःख सुत्त	आध्यात्म आयतन दुःख हैं	४५१
३. अनत्त सुत्त	आध्यात्म आयतन अनात्म हैं	४५२
४. अनित्य सुत्त	वाह्य आयतन अनित्य हैं	४५२
५. दुःख सुत्त	वाह्य आयतन दुःख हैं	४५२
६. अनत्त सुत्त	वाह्य आयतन अनात्म हैं	४५२
७. अनित्य सुत्त	आध्यात्म आयतन अनित्य हैं	४५२
८. दुःख सुत्त	आध्यात्म आयतन दुःख हैं	४५२
९. अनत्त सुत्त	आध्यात्म आयतन अनात्म हैं	४५३
१०. अनित्य सुत्त	वाह्य आयतन अनित्य हैं	४५३
११. दुःख सुत्त	वाह्य आयतन दुःख हैं	४५३
१२. अनत्त सुत्त	वाह्य आयतन अनात्म हैं	४५३

#### दूसरा भाग : थमक वर्ग

१. सम्बोध सुत्त	थथार्थ ज्ञान के उपरान्त बुद्धत्व का दावा	४५४
२. सम्बोध सुत्त	थथार्थ ज्ञान के उपरान्त बुद्धत्व का दावा	४५४
३. अस्वाद सुत्त	आस्वाद की खोज	४५४
४. अस्वाद सुत्त	आस्वाद की खोज	४५५
५. नो चेतं सुत्त	आस्वाद के ही कारण	४५५
६. नो चेतं सुत्त	आस्वाद के ही कारण	४५५
७. अभिनन्दन सुत्त	अभिनन्दन से सुक्ति नहीं	४५५
८. अभिनन्दन सुत्त	अभिनन्दन से सुक्ति नहीं	४५६
९. उत्पत्ति सुत्त	उत्पत्ति ही दुःख है	४५६
१०. उत्पत्ति सुत्त	उत्पत्ति ही दुःख है	४५६

## तीसरा भाग : सर्व धर्म

१	सम्बन्ध सुच	सब किसे कहते हैं ?	४५७
२	पहलान सुच	सर्व-स्वाग के योग्य	४५७
३	पहलान सुच	आम-बुद्धकर सर्व-स्वाग के योग्य	४५७
४	परिजानन सुच	विना आने-रुहे हुएों का सब बर्ही	४५७
५	परिजानन सुच	विना आने-रुहे हुएों का सब बर्ही	४५८
६	आदिच सुच	सब पैक रहे है	४५८
७	अपसुच सुच	सब कुछ बनवा है	४५९
८	सहस्य सुच	सभी मान्यताओं का तीस मार्ग	४५९
९	सप्याय सुच	सभी मान्यताओं का नास-मार्ग	४६
१०	सप्याय सुच	सभी मान्यताओं का नास मार्ग	४६

## चौथा भाग : आदिधर्म धर्म

१	आदि सुच	सभी आदिधर्म हैं	४६१
२	बरा-बराधि-सरघादयो सुच	सभी बराधर्म हैं	४६१

## पाँचवाँ भाग : अन्तिम धर्म

१	अन्तिम सुच	सभी अन्तिम हैं	४६३
---	------------	----------------	-----

## द्वितीय पण्णासक

## पहला भाग : अविद्या धर्म

१	अविद्या सुच	कितने ज्ञान से विद्या की उत्पत्ति ?	४६४
२	सम्बोधन सुच	संयोगों का महान	४६४
३	सम्बोधन सुच	संयोगों का महान	४६४
४-५	आसय सुच	श्रीमत्तों का महान	४६५
६	अनुसय सुच	अनुसय का महान	४६५
७	परिज्ञान सुच	अपादान परिज्ञान	४६५
८	परिचादिच सुच	सभी अपादानों का पर्नादान	४६५
९	परिचादिच सुच	सभी अपादानों का पर्नादान	४६६

## दूसरा भाग : मृगजाळ धर्म

१	मिगजाळ सुच	एक विहारी	४६७
२	मिगजाळ सुच	पुष्पा-विहीन से हुएों का अर्थ	४६७
३	समिद्धि सुच	मार कीर्ति होती है ?	४६८
४-५	समिद्धि सुच	अर्थ हुएों की	४६८
६	अपसेन सुच	अपुष्पात् अपसेन का योग द्वारा हैसा अना	४६८
७	अपदान सुच	सांख्यिक धर्म	४६९
८	अपदान सुच	असता मद्यधर्म के अर्थ है	४६९
९	अपदान सुच	असता मद्यधर्म के अर्थ है	४७०
१०	अपदान सुच	असता मद्यधर्म के अर्थ है	४७०



## तीसरा भाग : ग्लान वर्ग

१. गिलान सुत्त	सुद्धधर्म राग से मुक्ति के लिए	४७१
२. गिलान सुत्त	सुद्धधर्म निर्वाण के लिए	४७२
३. राध सुत्त	अभित्य से दृष्टा को दृष्टाना	४७२
४. राध सुत्त	दुःख से दृष्टा को दृष्टाना	४७२
५. राध सुत्त	अनात्म से दृष्टा को दृष्टाना	४७२
६. अविज्जा सुत्त	अविद्या का प्रहाण	४७२
७. अविज्जा सुत्त	अविद्या का प्रहाण	४७३
८. भिक्खु सुत्त	दुःख को समझने के लिए उपचर्य-पालन	४७३
९. लोक सुत्त	लोक क्या है ?	४७४
१०. फलगुन सुत्त	परिनिर्वाण-प्राप्त पुत्र देये नहीं जा सकते	४७४

## चौथा भाग : उल्ल वर्ग

१. पलोक सुत्त	लोक क्यों कहा जाता है ?	४७५
२. सुञ्ज सुत्त	लोक शून्य है	४७५
३. संविल्ल सुत्त	अनित्य, दुःख	४७५
४. उल्ल सुत्त	अनात्मवाद, उल्ल द्वारा आत्म-हत्या	४७६
५. पुण्ण सुत्त	धर्म-प्रचार की सद्दिष्णुता और त्याग	४७७
६. वाहिय सुत्त	अनित्य, दुःख	४७९
७. एज सुत्त	चित्त का स्पन्दन रोग है	४७९
८. एज सुत्त	चित्त का स्पन्दन रोग है	४८०
९. द्वय सुत्त	दो बातें	४८०
१०. द्वय सुत्त	दो के प्रत्यय से विज्ञानकी उत्पत्ति	४८०

## पाँचवाँ भाग : पट्ट वर्ग

१. संगह सुत्त	छ स्पर्शावतन दु सदायक है	४८१
२. संगह सुत्त	अनासक्ति के दुःख का अन्त	४८२
३. परिहान सुत्त	गमिभावित आयतन	४८३
४. पमादविहारी सुत्त	धर्म के प्रादुर्भाव से अप्रमाद-विहारी होना	४८४
५. सवर सुत्त	इन्द्रिय-निग्रह	४८४
६. समाधि सुत्त	समाधि का सम्प्राप्त	४८५
७. पटियरुल्लण सुत्त	कायविवेक का अन्प्राप्त	४८५
८. न तुम्हाक सुत्त	जो अपना नहीं, उसका त्याग	४८५
९. न तुम्हाक सुत्त	जो अपना नहीं, उसका त्याग	४८६
१०. ठहक सुत्त	दुःख के मूल को खोजना	४८६

## तृतीय पण्णासक

## पहला भाग : योगक्षेमी वर्ग

१. योगक्षेमी सुत्त	सुद्ध योगक्षेमी हैं	४८७
२. वपात्राय सुत्त	किसके कारण आध्यात्मिक सुख दुःख ?	४८७

३. कुम्ह सुच	कुम्ह की उत्पत्ति और भाषा	४४७
४. छोक सुच	छोक की उत्पत्ति और भाषा	४४८
५. सेम्पो सुच	बषा होने का विचार क्यों ?	४४८
६. संजोवन सुच	संजोवन क्या है ?	४४८
७. उपादान सुच	उपादान क्या है ?	४४९
८. पञ्चाव सुच	पञ्चु को जाने बिना कुम्ह का क्षय नहीं	४४९
९. पञ्जात सुच	क्षय को जाने बिना कुम्ह का क्षय नहीं	४४९
१. उपस्मृति सुच	प्रतीत्य-समुत्पाद्य धर्म की सीख	४४९

### दूसरा भाग : जोककामसुच धर्म

१-२. मारपास सुच	मार के सम्बन्ध में	४९
३. कोककासगुण सुच	बककर कोक का मृत पाता सम्बन्ध नहीं	४९
४. कोककामगुण सुच	चित्त की रक्षा	४९१
५. सख सुच	इसी जन्म में निर्बान्ध-प्राप्ति का कारण	४९२
६. पञ्चसिख सुच	इसी जन्म में निर्बान्ध-प्राप्ति का कारण	४९२
७. पञ्चसिख सुच	मिथु के वर-गृहस्थी में कौटुम्बे का कारण	४९३
८. राहुक सुच	राहुक को बर्हत्व की प्राप्ति	४९४
९. सम्जीवन सुच	संजोवन क्या है ?	४९४
१. उपादान सुच	उपादान क्या है ?	४९५

### तीसरा भाग : गृहपति धर्म

१. बेसाकि सुच	इसी जन्म में निर्बान्ध-प्राप्ति का कारण	४९६
२. बजि सुच	इसी जन्म में निर्बान्ध-प्राप्ति का कारण	४९६
३. नाकन्धा सुच	इसी जन्म में निर्बान्ध-प्राप्ति का कारण	४९६
४. मारहाण सुच	क्यों मिथु ब्रह्मचर्य का पाठन कर पाते हैं ?	४९६
५. सोष सुच	इसी जन्म में निर्बान्ध-प्राप्ति का कारण	४९७
६. बीसित सुच	बाहुओं की विधिबन्धा	४९८
७. इकिरु सुच	प्रतीत्य-समुत्पाद्य	४९८
८. बकुळपिया सुच	इसी जन्म में निर्बान्ध-प्राप्ति का कारण	४९८
९. कोरिख सुच	प्रतीत्य और बलीत आशुओं की तुलना इकिरु-संयम	४९९
१. बेरहचानि सुच	धर्म का अस्कार	५००

### चौथा भाग : देवदह धर्म

१. देवदहकाय सुच	अध्याय के साथ विहरता	५०२
२. अंयटा सुच	मिथु जीवन की धर्मसा	५०२
३. अयटा सुच	समझ का फल	५०२
४. बटम दकमडी सुच	अध्याय-वर्धित का त्याग	५०२
५. बुतिव पञ्जसी सुच	अध्याय-वर्धित का त्याग	५०३
६. बटम अगुण सुच	अध्याय	५०३
७. बुतिव अगुण सुच	कुम्ह	५०४

८. तत्तिय भङ्गसुत्त	अनात्म	५०४
९-११. बाहिर सुत्त	अनित्य, दुःख, अनात्म	५०४

पाँचवाँ भाग : नवपुराण वर्ग

१. कम्म सुत्त	नया और पुराना कर्म	५०५
२. पठम सप्पाय सुत्त	निर्वाण-साधक मार्ग	५०५
३-४. सप्पाय सुत्त	निर्वाण-साधक मार्ग	५०६
५. सप्पाय सुत्त	निर्वाण-साधक मार्ग	५०६
६. अन्तेवासी सुत्त	विना अन्तेवासी और आचार्य के विहरना	५०६
७. किमत्थिय सुत्त	दु ख विनाश के लिए ब्राह्मचर्य-पालन	५०७
८. अत्थि तु खो परिचाय सुत्त	आत्म-ज्ञान कथन के कारण	५०७
९. इन्द्रिय सुत्त	इन्द्रिय सम्पत्त कौन ?	५०८
१०. कथिक सुत्त	धर्मकथिक कौन ?	५०८

चतुर्थ पण्णासक

पहला भाग : तृष्णा-क्षय वर्ग

१. पठम नन्दिक्खय सुत्त	सम्यक् दृष्टि	५०९
२. दुत्तिय नन्दिक्खय सुत्त	सम्यक् दृष्टि	५०९
३. तत्तिय नन्दिक्खय सुत्त	षष्ठु का चिन्तन	५०९
४. चतुत्थ नन्दिक्खय सुत्त	रूप-चिन्तन से मुक्ति	५०९
५. पठम जीवकम्भवन सुत्त	समाधि-भावना करो	५०९
६. दुत्तिय जीवकम्भवन सुत्त	एकान्त-चिन्तन	५१०
७. पठम कोट्टि सुत्त	अनित्य से इच्छा का त्याग	५१०
८-९. दुत्तिय-तत्तिय कोट्टि सुत्त	दु ख से इच्छा का त्याग	५१०
१०. मिच्छादिट्ठि सुत्त	मिथ्यादृष्टि का प्रहाण कैसे ?	५१०
११. सक्काव सुत्त	संशय-दृष्टि का प्रहाण कैसे ?	५१०
१२. अत्त सुत्त	आत्मदृष्टि का प्रहाण कैसे ?	५११

दूसरा भाग : सट्ठि पेच्याल

१. पठम छन्द सुत्त	इच्छा को दवाना	५१२
२-३. दुत्तिय-तत्तिय छन्द सुत्त	राग को दवाना	५१२
४-६. छन्द सुत्त	इच्छा को दवाना	५१२
७-९. छन्द सुत्त	इच्छा को दवाना	५१२
१०-१२. छन्द सुत्त	इच्छा को दवाना	५१२
१३-१५. छन्द सुत्त	इच्छा को दवाना	५१२
१६-१८. छन्द सुत्त	इच्छा को दवाना	५१३
१९. अतीत सुत्त	अनित्य	५१३
२०. अतीत सुत्त	अनित्य	५१३
२१. अतीत सुत्त	अनित्य	५१३



१०. छपाण सुत्त  
११. यथकलापि सुत्त

संथम और असंथम, छ जीवों की उपमा  
मूर्ख यथ के समान पीटा जाता है

५३२  
५३३

## दूसरा परिच्छेद

### ३४. वेदना संयुत्त

पहला भाग : सगाथा वर्ग

१. समाधि सुत्त	तीन प्रकार की वेदना	५३५
२. सुखाय सुत्त	तीन प्रकार की वेदना	५३५
३. पहाण सुत्त	तीन प्रकार की वेदना	५३५
४. पाताळ सुत्त	पाताळ क्या है ?	५३६
५. ददुडय सुत्त	तीन प्रकार की वेदना	५३६
६. सल्लत्त सुत्त	पण्डित और मूर्ख का अन्तर	५३७
७. पठम गेळञ्ज सुत्त	समय की प्रतीक्षा करे	५३८
८. दुत्तिय गेळञ्ज सुत्त	समय की प्रतीक्षा करे	५३९
९. अन्निसु सुत्त	तीन प्रकार की वेदना	५३९
१०. फस्समूलक सुत्त	स्पर्श से उत्पन्न वेदनायें	५३९

दूसरा भाग : रहोगत वर्ग

१. रहोगतक सुत्त	संस्कारों का निरोध क्रमशः	५४०
२. पठम आकास सुत्त	विविध-वायु की भौति वेदनायें	५४०
३. दुत्तिय आकास सुत्त	विविध-वायु की भौति वेदनायें	५४१
४. भागार सुत्त	पाना प्रकार की वेदनायें	५४१
५. पठम सन्तक सुत्त	संस्कारों का निरोध क्रमशः	५४१
६. दुत्तिय सन्तक सुत्त	संस्कारों का निरोध क्रमशः	५४२
७. पठम अट्टक सुत्त	संस्कारों का निरोध क्रमशः	५४२
८. दुत्तिय अट्टक सुत्त	संस्कारों का निरोध क्रमशः	५४२
९. पञ्चकङ्ग सुत्त	तीन प्रकार की वेदनायें	५४३
१०. भिक्खु सुत्त	विभिन्न दृष्टिकोण से वेदनाओं का उपदेश	५४५

तीसरा भाग : अट्टसत्त परिणय वर्ग

१. सीवक सुत्त	सभी वेदनायें पूर्वकृत कर्म के कारण नहीं	५४६
२. अट्टसत्त सुत्त	एक सौ आठ वेदनायें	५४७
३. भिक्खु सुत्त	तीन प्रकार की वेदनायें	५४७
४. पुटवेथान सुत्त	वेदना की उत्पत्ति और निरोध	५४८
५. भिक्खु सुत्त	तीन प्रकार की वेदनायें	५४८
६. पठम समणब्राह्मण सुत्त	वेदनाओं के ज्ञान से ही श्रमण या ब्राह्मण	५४८
७. दुत्तिय समणब्राह्मण सुत्त	वेदनाओं के ज्ञान से ही श्रमण या ब्राह्मण	५४९
८. त्तिय समणब्राह्मण सुत्त	वेदनाओं के ज्ञान से ही श्रमण या ब्राह्मण	५४९
९. सुद्धिक निरामिस सुत्त	तीन प्रकार की वेदनायें	५४९

## तीसरा परिच्छेद

३५ मातृगाम संयुक्त

पहला भाग : पेंप्पाळ वर्ग

१	महापामनाप सुप्त	पुरुष को सुमानेवाकी की	५५१
२	महापामनाप सुप्त	की को सुमानेवाका पुरुष	५५१
३	आवैषिक सुप्त	क्षियों के भयसे पाँच बुद्ध	५५१
४	तीहि सुप्त	तीन बातों से क्षियों की दुरंगति	५५२
५	कोबल सुप्त	पाँच बातों से क्षियों की दुरंगति	५५२
६	कपनाही सुप्त	सिर्फज	५५२
७	हस्तुकी सुप्त	ईर्ष्याह	५५२
८	मच्छरी सुप्त	कृपल	५५३
९	अतिचारी सुप्त	कुछरा	५५३
१०	हुस्तीक सुप्त	दुराचारिणी	५५३
११	अपस्तुत सुप्त	अवरमुत	५५३
१२	कुमील सुप्त	भाकरी	५५३
१३	सुदस्वति सुप्त	सौंदी	५५३
१४	पञ्चरे सुप्त	पाँच अथगों से युक्त की दुरंगति	५५३

दूसरा भाग : पेंप्पाळ वर्ग

१	अज्ञेय सुप्त	पाँच बातों से क्षिया की दुरंगति	५५४
२	अनुपनाही सुप्त	न अकना	५५४
३	अविस्तुकी सुप्त	ईर्ष्या-रहित	५५४
४	अमच्छरी सुप्त	कृपयता-रहित	५५४
५	अतिचारी सुप्त	पतिमता	५५४
६	तीकवा सुप्त	सदाचारिणी	५५४
७	अहस्तुत सुप्त	अहस्तुत	५५५
८	क्षिरिक सुप्त	परिभ्रमी	५५५
९	सति सुप्त	तीन-बुद्धि	५५५
१०	पञ्चतीक सुप्त	पञ्चतीक-युक्त	५५५

तीसरा भाग : षष्ठ वर्ग

१	विस्तार सुप्त	एकी को पाँच बकों से प्रसक्तता	५५६
२	वसत सुप्त	स्वामी को वस में करना	५५६
३	अभिमुख सुप्त	स्वामी को हवाकर रचना	५५६
४	एक सुप्त	की को हवाकर रचना	५५६
५	अह सुप्त	की के पाँच बक	५५६
६	कामैति सुप्त	की का बुक दो दृष्ट देना	५५६
७	द्वे सुप्त	की-बक से रचना प्राप्ति	५५७

## नवाँ परिच्छेद

## ४१. असङ्गत संयुक्त

पहला भाग : पहला वर्ग

१. काय सुत्त	निर्वाण और निर्वाणगामी मार्ग	६००
२. समथ सुत्त	समथ-विदर्शना	६००
३. चित्तफ सुत्त	समाधि	६००
४. सुज्जता सुत्त	समाधि	६०१
५. सतिपट्टान सुत्त	स्थितिप्रस्थान	६०१
६. सम्मपपधान सुत्त	सम्यक् प्रधान	६०१
७. इन्द्रिपाद सुत्त	अन्द्रिपाद	६०१
८. इन्द्रिय सुत्त	इन्द्रिय	६०१
९. बल सुत्त	बल	६०१
१०. बोधवृक्ष सुत्त	बोधवृक्ष	६०१
११. मग्ग सुत्त	आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग	६०१

दूसरा भाग : दूसरा वर्ग

१. असङ्गत सुत्त	समथ	६०२
२. अन्त सुत्त	अन्त और अन्तगामी मार्ग	६०४
३. अनासव सुत्त	अनासव और अनाश्रवगामी मार्ग	६०४
४. सच्च सुत्त	सत्य और सत्यगामी मार्ग	६०४
५. पार सुत्त	पार और पारगामी मार्ग	६०४
६. निपुण सुत्त	निपुण और निपुणगामी मार्ग	६०४
७. सुदुद्दस सुत्त	सुदुर्दर्शगामी मार्ग	६०५
८-३३ अज्जजर सुत्त	अज्जजरगामी मार्ग	६०५

## दसवाँ परिच्छेद

## ४२. अव्याकृत संयुक्त

१. खेमा धेरी सुत्त	अव्याकृत पर्यो ?	६०६
२. अनुराध सुत्त	चार अव्याकृत	६०७
३. सारिपुत्त कौट्टित सुत्त	अव्याकृत धताने का कारण	६०९
४. सारिपुत्तकौट्टित सुत्त	अव्यक्त धताने का कारण	६०९
५. सारिपुत्तकौट्टित सुत्त	अव्याकृत	६१०
६. सारिपुत्तकौट्टित सुत्त	अव्याकृत	६१०
७. भोम्महान सुत्त	अव्याकृत	६११
८. घच्छ सुत्त	लोक शाश्वत नहीं	६१२

७ भाकिष्ठस्य सुप्त	भाकिष्ठस्यपापसम	५६६
८ मेघसंज्ञस्य सुप्त	मेघसंज्ञानासंज्ञावचन	५६६
९ अविमिच्छ सुप्त	अविमिच्छ-समाधि	५६६
१० सख्य सुप्त	सुख, धर्म संध में इह अन्ध से प्रगति	५६७
११ अन्ध सुप्त	त्रिरत्व में अन्ध से सुगति	५६७

### सातर्षो परिच्छेद

#### ३९ चित्त संयुक्त

१ सन्धीव सुप्त	उन्धराग ही बन्धन है	५७
२ पठम इतिदत्त सुप्त	भाप्य की विनिम्बता	५७१
३ द्वितीय इतिदत्त सुप्त	सत्काम से ही मिच्छा रुद्धिर्षो	५७१
४ मद्रु सुप्त	मद्रु द्वारा अग्नि प्रवर्तन	५७३
५ पठम अमम् सुप्त	विमृत उपदेश	५७४
६ द्वितीय कामम् सुप्त	तीन प्रकार के संस्कार	५७५
७ योदध सुप्त	एक वर्ष बाँके विनिम्ब सत्वर	५७६
८ त्रियम् सुप्त	ज्ञान क्या है या अन्ध ?	५७७
९ अथैक सुप्त	अथैक कावच्य की अर्थत्व प्राप्ति	५७८
१० गिहानवस्तव सुप्त	चित्त गुरुपति की अत्यु	५७९

### आठर्षो परिच्छेद

#### ४० गामणी संयुक्त

१ अथ सुप्त	अथ और गुरु कर्माय के कारण	५८
२ सुप्त सुप्त	अथ अथ में उत्पन्न होते हैं	५८
३ सौम्याधीव सुप्त	सिवादिप्यो की गति	५८१
४ इति सुप्त	इतिप्रकार की गति	५८१
५ अथ सुप्त	बोधसत्कार की गति	५८२
६ पञ्चाध्मक सुप्त	अपने कर्म से ही सुगति-गुराति	५८२
७ ईशमा सुप्त	सुख की दशा धर्म पर	५८३
८ सद् सुप्त	निगन्दबाधसुप्त की विद्या उच्छृ	५८४
९ सुक्त सुप्त	कुर्षों के कारण के अथ कारण	५८५
१० अविच्छ सुप्त	धर्मों के लिये सोना-चर्दी विहित नहीं	५८६
११ मद्रु सुप्त	गृह्णा ह्यन्व का मूक है	५८७
१२ इति सुप्त	मत्पय मार्ग का उपदेश	५८८
१३ वादधि सुप्त	सुख प्राप्ता कहते हैं प्राप्ताकी गुराति को प्राप्त होना है निम्नादि बाकों का विचार नहीं विमिच्छ मत्प्रवाह उच्छृवाह, अविच्छवाह धर्म की समाधि	५९३



३. पठम पटिपदा सुत्त	मिप्पा-मार्ग	६२७
४. दुत्तिय पटिपदा सुत्त	सम्यक् मार्ग	६२७
५. पठम सप्पुरिम सुत्त	सप्पुरिम और अमप्पुरिम	६२८
६. दुत्तिय सप्पुरिम सुत्त	सप्पुरिम ओर अमप्पुरिम	६२८
७. छम्भ सुत्त	चित्त का आधार	६२८
८. समाधि सुत्त	समाधि	७२९
९. वेदना सुत्त	वेदना	६२९
१०. उरिय सुत्त	पाँच कामगुण	६२९

### चौथा भाग : प्रतिपत्ति वर्ग

१. पटिपत्ति सुत्त	मिप्पा और सम्यक् मार्ग	६३०
२. पटिपत्त सुत्त	मार्ग पर आरुद्र	६३०
३. विरत्त सुत्त	आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग	६३०
४. पारदम सुत्त	पार ज्ञाना	६३१
५. पठम तामझ सुत्त	श्रामण्य	६३१
६. दुत्तिया तामझ सुत्त	श्रामण्य	६३१
७. पठम मल्लज सुत्त	मल्लण्य	६३१
८. दुत्तिय मल्लज सुत्त	मल्लण्य	६३२
९. पठम मल्लचरिय सुत्त	मल्लचर्य	६३२
१०. दुत्तिय मल्लचरिय सुत्त	मल्लचर्य	६३२

### अञ्जतिरिथय-पेट्याल

१. विराग सुत्त	राग को जीतने का मार्ग	६३२
२. सञ्जोजन सुत्त	संयोजन	६३२
३. अनुसय सुत्त	अनुसय	६३२
४. अदान सुत्त	मार्ग का अन्त	६३३
५. आमवक्खय सुत्त	आश्रय-क्षय	६३३
६. विज्जाविमुत्ति सुत्त	विद्या-विमुक्ति	६३३
७. ज्ञाण सुत्त	ज्ञान	६३३
८. अनुपादाय सुत्त	उपादान से रहित होना	६३३

### सुरिय-पेट्याल

#### चिचेक-निश्चित

१. कल्लयाणमित्त सुत्त	कल्लयाण-मित्रता	६३३
२. सील सुत्त	सील	६३४
३. छन्द सुत्त	छन्द	६३४
४. भत्त सुत्त	दृढ़ निश्चय का होना	६३४
५. दिट्ठि सुत्त	दृष्टि	६३४

- १ कुम्भारकसायन सुच  
३ आमन्त्र सुच  
११ समिध सुच

दृष्या उपवासन सुच  
अस्तिवा और मारितवा  
अध्याकृत

११३  
११४  
११४

## पाँचवाँ खण्ड

### महावर्ग

#### पहला परिच्छेद

#### ४३ मार्ग संयुक्त

#### पहला भाग : अविद्या वर्ग

१ अविद्या सुच	अविद्या पापों का मूक है	११९
२ उपद्रु सुच	कल्याणमित्र से महापतन की संकल्पता	११९
३ सारियुक्त सुच	कल्याणमित्र से महापतन की संकल्पता	१२०
४ मङ्ग सुच	महापतन	१२०
५ किमतिथ सुच	दुःख की पहचान का मार्ग	१२१
६ परम भिन्न सुच	महापतन क्या है ?	१२२
७ द्रुविभ भिन्न सुच	अमृत क्या है ?	१२२
८ विमङ्ग सुच	भार्य अष्टादशिक मार्ग	१२२
९ सुक्त सुच	टीक धारणा से ही विद्या का प्राप्ति	१२३
१० नन्दिन सुच	विद्या-प्राप्ति के ध्येय वर्ग	१२३

#### दूसरा भाग : विद्या वर्ग

१ परम विहार सुच	दुःख का एकान्तवास	१२४
२ द्रुविभ विहार सुच	दुःख का एकान्तवास	१२४
३ सेक्त सुच	दौलत	१२५
४ परम उपाय सुच	दुःखोत्पत्ति के विना सम्मत्त नहीं	१२५
५ द्रुविभ उपाय सुच	दुःख-विनाश के विना सम्मत्त नहीं	१२५
६ परम परिशुद्ध सुच	दुःखोत्पत्ति के विना सम्मत्त नहीं	१२५
७ द्रुविभ परिशुद्ध सुच	दुःख-विनाश के विना सम्मत्त नहीं	१२५
८ परम कुण्डलाराम सुच	अन्यथा क्या है ?	१२६
९ द्रुविभ कुण्डलाराम सुच	महापतन क्या है ?	१२६
१० द्रुविभ कुण्डलाराम सुच	महापतन की लीला है ?	१२६

#### तीसरा भाग : मिथ्यात्व वर्ग

१ मिथ्या सुच	मिथ्यात्व	१२७
२ अनुसक्त सुच	अनुसक्त वर्ग	१२७

३. पटम परिपत्रा सुत्त	मिप्या-मार्ग	६२७
४. दुतिय परिपत्रा सुत्त	सम्यक् मार्ग	६२७
५. पठम मण्डुरिम सुत्त	साणुदय और भयणुदय	६२८
६. दुतिय मण्डुरिम सुत्त	साणुदय और भयणुदय	६२८
७. कुम्भ सुत्त	चिन्ता का आधार	६२८
८. समाधि सुत्त	समाधि	६२९
९. वेदना सुत्त	वेदना	६२९
१०. षष्ठिय सुत्त	पाँच कामगुण	६२९

### चौथा भाग : प्रतिपत्ति वर्ग

१. परिपत्ति सुत्त	मिप्या और सम्यक् मार्ग	६३०
२. परिपत्त सुत्त	मार्ग पर आरम्भ	६३०
३. विरद सुत्त	आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग	६३०
४. पारल्लम सुत्त	पार जाना	६३१
५. पठम सामञ्ज सुत्त	श्रामण्य	६३१
६. दुतिया सामञ्ज सुत्त	श्रामण्य	६३१
७. पठम मल्लञ्ज सुत्त	मल्लण्य	६३१
८. दुतिय मल्लञ्ज सुत्त	मल्लण्य	६३२
९. पठम मल्लचरिय सुत्त	मल्लचर्य	६३२
१०. दुतिय मल्लचरिय सुत्त	मल्लचर्य	६३२

### अञ्जतिथिय-पेय्याल

१. विराग सुत्त	राग को जीतने का मार्ग	६३२
२. सञ्जोजन सुत्त	संयोजन	६३२
३. अनुमय सुत्त	अनुशय	६३२
४. अद्धान सुत्त	मार्ग का अन्त	६३३
५. आसवक्कय सुत्त	आश्रय-क्षय	६३३
६. विज्जाविमुत्ति सुत्त	विद्या-विमुक्ति	६३३
७. ज्ञाण सुत्त	ज्ञान	६३३
८. अनुपादाय सुत्त	उपादान से रहित होना	६३३

### सुरिय-पेय्याल

#### विचेक-निश्चित

१ कट्टयाणमित्त सुत्त	कट्टयाण-मित्रता	६३३
२ सील सुत्त	शील	६३४
३ छन्द सुत्त	छन्द	६३४
४ भत्त सुत्त	एक निश्चय का होना	६३४
५. दिट्ठि सुत्त	दृष्टि	६३४

६ अप्पमाद् सुप्त	अप्पमाद्	६३७
७ योगिसो सुप्त	ममम करणा	६३७
	राग-विनय	
८ कल्याणमिष्ट सुप्त	कल्याण-मिश्रता	६३७
९, सीक सुप्त	सीक	६३७
१०-१२ छन्द सुप्त	छन्द	६३७

### प्रथम एकवर्ष पेय्याल

#### विशेष-मिश्रित

१ कल्याणमिष्ट सुप्त	कल्याण-मिश्रता	६३५
२ सीक सुप्त	सीक	६३५
३ छन्द सुप्त	छन्द	६३५
४ अष्ट सुप्त	विष्ट की दृष्टता	६३५
५, विष्टि सुप्त	दृष्टि	६३५
६ अप्पमाद् सुप्त	अप्पमाद्	६३५
७ योगिसो सुप्त	ममम करणा	६३५

#### राग-विनय

८ कल्याणमिष्ट सुप्त	कल्याण-मिश्रता	६३६
९-१४ सीक सुप्त	सीक	६३६

### द्वितीय एकवर्ष-पेय्याल

#### विशेष-मिश्रित

१ कल्याणमिष्ट सुप्त	कल्याण-मिश्रता	६३६
२-७ सीक सुप्त	सीक	६३६

#### राग-विनय

८ कल्याणमिष्ट सुप्त	कल्याण-मिश्रता	६३७
९-१४ सीक सुप्त	सीक	६३७

### गङ्गा-पेय्याल

#### विशेष-मिश्रित

१ बटम पाशीव सुप्त	विद्याव की ओर बटमा	६३७
२ मुठिय पाशीव सुप्त	विद्याव की ओर बटमा	६३७
३, तसिय पाशीव सुप्त	विद्याव की ओर बटमा	६३७
४ चट्टव पाशीव सुप्त	विद्याव की ओर बटमा	६३७
५ बटम पाशीव सुप्त	विद्याव की ओर बटमा	६३७

६. छद्म पाचीन सुत्त	निर्वाण की ओर बढ़ना	६३८
७-१२ समुह सुत्त	निर्वाण की ओर बढ़ना	६३८
	राग-धितथ	
१३-१८. पाचीन सुत्त	निर्वाण की ओर बढ़ना	६३८
१९-२४. समुह सुत्त	निर्वाण की ओर बढ़ना	६३८
	अमत्तोगध	
२५-३०. पाचीन सुत्त	अमृत-पद को पहुँचना	६३९
३१-३६. समुह सुत्त	अमृत-पद को पहुँचना	६३९
	निर्वाण-निम्न	
३७-४२. पाचीन सुत्त	निर्वाण की ओर जाना	६३९
४३-४८. समुह सुत्त	निर्वाण की ओर जाना	६३९

पाँचवाँ भाग : अप्रमाद वर्ग

१. तयागत सुत्त	तयागत सर्वश्रेष्ठ	६४०
२. पद सुत्त	अप्रमाद	६४०
३. कूट सुत्त	अप्रमाद	६४१
४. मूल सुत्त	गन्ध	६४१
५. सार सुत्त	सार	६४१
६. वरिसक सुत्त	जूही	६४१
७. राज सुत्त	चक्रवर्ती	६४१
८. चन्दिम सुत्त	बाँद	६४१
९. सुरिय सुत्त	सूर्य	६४१
१०. बश्य सुत्त	काशी-बस्त्र	६४१

छठों भाग : वलकरणीय वर्ग

१. शील सुत्त	शील का आधार	६४२
२. शीम सुत्त	शील का आधार	६४२
३. नाग सुत्त	शील के आधार से वृद्धि	६४२
४. रुक्ख सुत्त	निर्वाण की ओर झुकना	६४३
५. कुम्भ सुत्त	अकृशाल-धर्मों का त्याग	६४३
६. सुक्किय सुत्त	निर्वाण की प्राप्ति	६४३
७. आकास सुत्त	आकाश की उपमा	६४३
८. पठम मेघ सुत्त	घर्षा की उपमा	६४४
९. दुत्तिय मेघ सुत्त	बादल की उपमा	६४४
१०. भावा सुत्त	संयोजनों का नष्ट होना	६४४
११. आगन्तुक सुत्त	धर्मशाळा की उपमा	६४४
१२. नदी सुत्त	गृहस्थ बनना सम्भव नहीं	६४५

## साक्षर्यो भाग : एरण्य वर्ग

१	पुसज सुच	लीन पुसजो	१७१
२	बिबा सुच	लीन बिबाकार	१७१
३	आसब सुच	लीन आसब	१७७
४	मभ सुच	लीन मभ	१७७
५	हुणकता सुच	लीन हुणकता	१७७
६	कीक सुच	लीन ककावटो	१७७
७	मक सुच	लीन मक	१७७
८	मीब सुच	लीन मीब	१७७
९	बेदना सुच	लीन बेदना	१७७
१०	दण्डा सुच	लीन दण्डा	१७७
११	तसिन सुच	लीन दण्डा	१७७

## आठसो भाग : शोध वर्ग

१	शोध सुच	चार बाक	१७८
२	योग सुच	चार योग	१७८
३	उपादान सुच	चार उपादान	१७८
४	गन्ध सुच	चार गन्धि	१७८
५	अनुसय सुच	साठ अनुसय	१७८
६	कामगुण सुच	पाँच काम-गुण	१७९
७	बीबरज सुच	पाँच बीबरज	१७९
८	काम्य सुच	पाँच उपादान दण्ड	१७९
९	भोरम्मागिय सुच	बिचडे पाँच संबोजन	१७९
१०	उद्धम्मागिय सुच	कपरी पाँच संबोजन	१७९

## वृत्तरा परिच्छेद

## ४४ शोधपङ्क संयुच

## पहला भाग : पर्येत वर्ग

१	दिसबन्ध सुच	शोधपङ्क-अन्वयस से वृद्धि	१७९
२	काम सुच	आहार पर अवकथित	१८५
३	कीक सुच	शोधपङ्क-भावना से साठ पञ्च	१८५
४	बच सुच	साठ शोधपङ्क	१८५
५	मिचल सुच	शोधपङ्क का अर्थ	१८५
६	हुणकता सुच	विद्या और विमुक्ति की पूर्णता	१८५
७	दूर सुच	विद्या की और तुलना	१८५
८	उपदान सुच	शोधपङ्क की विधि का ध्यान	१८५
९	बदल उपादान सुच	शोधपङ्क से ही सम्भव	१८५
१०	दुष्टिब उपादान सुच	शोधपङ्क से ही सम्भव	१८५

## दूसरा भाग : ग्लान वर्ग

१. पाण सुत्त	शील का आधार	६५६
२. पठम सुरियूपम सुत्त	सूर्य की उपमा	६५६
३. द्वुत्तिय सुरियूपम सुत्त	सूर्य की उपमा	६५६
४. पठम गिलान सुत्त	महाकाश्यप का बीमार पड़ना	६५६
५. द्वुत्तिय गिलान सुत्त	महामोग्गल्लान का बीमार पड़ना	६५७
६. तत्तिय गिलान सुत्त	भगवान् का बीमार पड़ना	६५७
७. पारगामी सुत्त	पार करना	६५७
८. विरद्ध सुत्त	मार्ग का रुकना	६५८
९. अरिय सुत्त	मोक्ष मार्ग से जाना	६५८
१०. निळिप्रदा सुत्त	निर्वाण की प्राप्ति	६५८

## तीसरा भाग : वदायि वर्ग

१. धोघन सुत्त	बोध्यङ्ग क्यों कहा जाता है ?	६५९
२. वेसना सुत्त	सात बोध्यङ्ग	६५९
३. ठान सुत्त	स्यान पाने से ही वृद्धि	६५९
४. अयोनिस्सो सुत्त	ठीक से मनन न करना	६५९
५. अपरिहानि सुत्त	क्षय न होनेवाले धर्म	६६०
६. खय सुत्त	तृष्णा-क्षय के मार्ग का अभ्यास	६६०
७. निरोध सुत्त	तृष्णा निरोध के मार्ग का अभ्यास	६६०
८. निवघेध सुत्त	तृष्णा को काटनेवाला मार्ग	६६०
९. एकधम्म सुत्त	बन्धन में बालनेवाले धर्म	६६१
१०. उदायि सुत्त	बोध्यङ्ग भावना से परमार्थ की प्राप्ति	६६१

## चौथा भाग : नीचरण वर्ग

१. पठम कुसल सुत्त	अप्रमाद ही आधार है	६६२
२. द्वुत्तिय कुसल सुत्त	अच्छी तरह मनन करना	६६२
३. पठम किलेस सुत्त	सोना के समान चित्त के पाँच मल	६६२
४. द्वुत्तिय किलेस सुत्त	बोध्यङ्ग भावना से विमुक्ति-फल	६६३
५. पठम योनिस्सो सुत्त	अच्छी तरह मनन न करना	६६३
६. द्वुत्तिय योनिस्सो सुत्त	अच्छी तरह मनन करना	६६३
७. बुद्धि सुत्त	बोध्यङ्ग-भावना से वृद्धि	६६३
८. नीचरण सुत्त	पाँच नीचरण	६६३
९. रुक्ख सुत्त	ज्ञान के पाँच आवरण	६६३
१०. नीचरण सुत्त	पाँच नीचरण	६६४

## पाँचवाँ भाग : चक्रवर्ती वर्ग

१. विद्या सुत्त	बोध्यङ्ग-भावना से अभिमान का त्याग	६६५
२. चक्रवर्ती सुत्त	चक्रवर्ती के सात रत्न	६६५
३. मार सुत्त	मार-सेना को भगाने का मार्ग	६६५
४. दुप्पन्न सुत्त	बेयकूफ क्यों कहा जाता है ?	६६५

५	पञ्जरा सुप्त	पञ्जराय् नयो कदा जाता है ?	२१६
६	बद्धि सुप्त	इतिम्	२१६
७	अबद्धि सुप्त	धमी	२१६
८	आदिप सुप्त	पूर्व-असृज	२१६
९	पदम अ- सुप्त	अच्छी तरह मनम करवा	२१६
१०	हुविप लङ् सुप्त	कम्पाय भिष	२१६

छूर्णो भाग : शोधपङ्क पाठकम्

१	आहार सुप्त	बीबरणो का आहार	२१७
२	परिवाप सुप्त	हुगुवा होना	२१८
३	अग्नि सुप्त	समय	२७
४	मेघ सुप्त	मैत्री-भावना	२७१
५	सङ्कारव सुप्त	मन्त्र का न सूचना	२७३
६	जमप सुप्त	परमज्ञान-दर्शन का क्षेत्र	२७४

सातधर्वो भाग : भानापायन धर्मो

१	अद्विक सुप्त	अद्विक-भावना	२७६
२	पुञ्जक सुप्त	पुञ्जक-भावना	२७७
३	विनीक सुप्त	विनीक-भावना	२७७
४	विधिक सुप्त	विधिक-भावना	२७७
५	बहुमातक सुप्त	बहुमातक-भावना	२७७
६	मेघ सुप्त	मैत्री-भावना	२७७
७	कल्पा सुप्त	कल्पा-भावना	२७७
८	मुदिता सुप्त	मुदिता-भावना	२७७
९	अपेक्षा सुप्त	अपेक्षा-भावना	२७७
१०	आवाप सुप्त	आवाप-भावना	२७७

आठधर्वो भाग : निरोध वर्ग

१	अधुम सुप्त	अधुम-संज्ञा	२७८
२	मरु सुप्त	मरु-संज्ञा	२७८
३	प्रतिबुद्ध सुप्त	प्रतिबुद्ध-संज्ञा	२७८
४	अभिमिरि सुप्त	अभिमिरि-संज्ञा	२७८
५	अदिक सुप्त	अदिक-संज्ञा	२८
६	हुण सुप्त	हुण-संज्ञा	२७८
७	अवप सुप्त	अवप-संज्ञा	२८
८	पहा सुप्त	पहा-संज्ञा	२७८
९	विराग सुप्त	विराग-संज्ञा	२७८
१०	निरोध सुप्त	निरोध संज्ञा	२७८

नयो भाग : शङ्गा पेम्पाळ

१	पार्थिव सुप्त	विर्थाव की ओर कदा	२७९
२	११. शेष सुप्त	विर्थाव की ओर कदा	२७९



	दसवाँ भाग :	अप्रमाद वर्ग	
१-१० सव्ये सुत्तन्ता		अप्रमाद आधार द्वै	६७९
	ग्यारहवाँ भाग :	चलकरणीय वर्ग	
१-१२ सव्ये सुत्तन्ता		चल	६८०
	बारहवाँ भाग :	एपण वर्ग	
१-१२ सव्ये सुत्तन्ता		तीन एपणायें	६८०
	तेरहवाँ भाग :	ओघवर्ग	
१-९ सुत्तन्तानि		चार वाढ़	६८१
१० उद्धमभामिय सुत्त		ऊपरी सत्रोजन	६८१
	चौदहवाँ भाग :	गङ्गा-पेट्याल	
१ पाचीन सुत्त		निर्वाण की ओर बढ़ना	६८१
२-१२, तेस सुत्तन्ता		निर्वाण की ओर बढ़ना	६८१
	एन्द्रहवाँ भाग :	अप्रमाद वर्ग	
१-१० सव्ये सुत्तन्ता		अप्रमाद ही आधार द्वै	६८२
	सोलहवाँ भाग :	चलकरणीय वर्ग	
१-१२ सव्ये सुत्तन्ता		चल	६८२
	सत्रहवाँ भाग :	एपण वर्ग	
१-१० सव्ये सुत्तन्ता		तीन एपणायें	६८३
	अठारहवाँ भाग :	ओघ वर्ग	
१-१० सव्ये सुत्तन्ता		चार वाढ़	६८३

### तीसरा परिच्छेद

#### ४५. स्मृतिप्रस्थान संयुक्त

	पहला भाग :	अम्बपाली वर्ग	
१ अम्बपालि सुत्त		चार स्मृतिप्रस्थान	६८४
२ सप्तो सुत्त		स्मृतिमान् होकर चिहरना	६८४
३ भिक्खु सुत्त		चार स्मृति प्रस्थानों की भाषना	६८५
४ सरल सुत्त		चार स्मृतिप्रस्थान	६८५
५ कुत्तलरसि सुत्त		कुत्तल-नादि	६८६
६ सङ्गणगघी सुत्त		ठौं छोड़कर कुत्तल में न जाना	६८६
७ भक्कट सुत्त		बन्दर की बपना	६८७
८ खद सुत्त		स्मृति प्रस्थान	६८७
९ शिलान सुत्त		अपना भरोसा करना	६८८
१० भिक्खुनिवासक सुत्त		स्मृति प्रस्थानों की भाषना	६८९

## दूसरा भाग : सासन्द वर्ग

१ महापुरिम सुच	महापुरिम	१११
२ नाकन्द सुच	तथापय सुकना-रहित	१११
३ सुन्द सुच	आसुपमान् सारियुक्त का परिनिर्वाण	११२
४ चोक सुच	अप्रभावकों के बिना मिश्र-संज्ञ सूत्रा	११३
५ आक्षिप सुच	कुसक धर्मों का आदि	११७
६ उक्षिप सुच	कुसक धर्मों का आदि	११७
७ अक्षिप सुच	स्मृति प्रस्थान की भावना से पुत्र-कथ	११५
८ अक्ष सुच	त्रिमुक्ति का एकमात्र मार्ग	११५
९ वेदक सुच	स्मृतिप्रस्थान की भावना	११५
१० अक्षपद सुच	अक्षपदकथनामी की रूपमा	११६

## तीसरा भाग : शीकस्थिति वर्ग

१ शीक सुच	स्मृतिप्रस्थानों की भावना के लिए कुसक-शीक	११७
२ शिक्ति सुच	धर्म का विरस्थापी होना	११७
३ परिदान सुच	संज्ञर्म की परिदानि न होना	११८
४ सुकक सुच	आर स्मृतिप्रस्थान	११८
५ आक्षय सुच	धर्म के विरस्थापी होने का कारण	११८
६ पदेम सुच	शीक	११८
७ समय सुच	अक्षय	११९
८ काक सुच	ज्ञानी होने का कारण	११९
९ शिरिचक्र सुच	धीर्यार्थन का भीमार पक्षमा	११९
१० साक्षरिच सुच	साक्षरिच का अतातामी होना	७

## चौथा भाग : अलनुधुत वर्ग

१ अलनुधुत सुच	पढ़के कभी न सुधी गई जाते	७ १
२ विराग सुच	स्मृतिप्रस्थान-भावना से निर्वाण	७ १
३ विरह सुच	मार्ग में रुझाव	७ १
४ भावना सुच	पार जाना	७ १
५ मती सुच	स्मृतिमान् होकर विदरना	७० १
६ अज्ञा सुच	परम धार	७ १
७ अन्द सुच	स्मृतिप्रस्थान-भावना से ज्ञाना छत्र	७ १
८ परिष्कार सुच	काय की भावना	७ १
९ भावना सुच	स्मृतिप्रस्थानों की भावना	७ १
१० विमत्र सुच	स्मृतिप्रस्थान	७ १

## पाँचवाँ भाग : अमृत वर्ग

१ अमृत सुच	अमृत की प्राप्ति	७० ४
२ अमृत सुच	अमृत और अक्ष	७० ४
३ अमृत सुच	विमुक्ति का एकमात्र मार्ग	७० ४

४. सतो सुत्त	स्मृतिमान् होकर विहरना	७०४
५. कुसलरासि सुत्त	कुशल राशि	७०५
६. पत्तिमोक्ष सुत्त	कुशल धर्मों का भादि	७०५
७. दुच्चरित सुत्त	दुच्चरित्र का त्याग	७०५
८. मित्र सुत्त	मित्र को स्मृतिप्रस्थान में लगाना	७०६
९. वेदना सुत्त	तीन वेदनाएँ	७०६
१०. आसव सुत्त	तीन आश्रव	७०६

**छठों भाग : गङ्गा-पेट्याल**

१-१२. सब्बे सुत्तन्ता	निर्वाण की ओर बचना	७०७
-----------------------	--------------------	-----

**सातवाँ भाग : अग्रमाद वर्ग**

१-१०. सब्बे सुत्तन्ता	अग्रमाद आधार है	७०७
-----------------------	-----------------	-----

**आठवाँ भाग : वलकरणीय वर्ग**

१-१२ सब्बे सुत्तन्ता	वल	७०८
----------------------	----	-----

**नवाँ भाग : एपण वर्ग**

१-११ सब्बे सुत्तन्ता	चार एपणाएँ	७०८
----------------------	------------	-----

**दसवाँ भाग : ओघ वर्ग**

१-१०. सब्बे सुत्तन्ता	चार वाढ़	७०८
-----------------------	----------	-----

## चौथा परिच्छेद

### ४६. इन्द्रिय संयुत्त

**पहला भाग : शुद्धि क वर्ग**

१. सुद्धि सुत्त	पाँच इन्द्रियाँ	७०९
२. पठम सोत्त सुत्त	स्रोतापन्न	७०९
३. दुत्तिय सोत्त सुत्त	स्रोतापन्न	७०९
४. पठम अरहा सुत्त	अर्हत्	७०९
५. दुत्तिय अरहा सुत्त	अर्हत्	७१०
६. पठम समणब्राह्मण सुत्त	श्रमण और ब्राह्मण कौन ?	७१०
७. दुत्तिय समणब्राह्मण सुत्त	श्रमण और ब्राह्मण कौन ?	७१०
८. दह्दव्व सुत्त	इन्द्रियों को देखने का स्थान	७१०
९. पठम विमङ्ग सुत्त	पाँच इन्द्रियाँ	७११
१०. दुत्तिय विमङ्ग सुत्त	पाँच इन्द्रियाँ	७११

**दूसरा भाग : मृदुत्तर वर्ग**

१. पटिकाभ सुत्त	पाँच इन्द्रियाँ	७१३
२. पठम सक्खित्त सुत्त	इन्द्रियाँ यदि कम हूय तो	७१३
३. दुत्तिय संक्खित्त सुत्त	शुर्पों की विभिन्नता से अन्तर	७१३

४	तृतीय संविधान सुच	इन्द्रिय विपन्न नहीं होते	७१४
५	पदम विचार सुच	इन्द्रियों की पूर्णता से बर्हत्त्व	७१४
६	द्वितीय विचार सुच	पुरुषों की मिश्रता से अन्तर	७१५
७	तृतीय विचार सुच	इन्द्रियों विपन्न नहीं होते	७१५
८	पट्टिपत्र सुच	इन्द्रियों से रहित अज्ञ हैं	७१५
९	उपसम सुच	इन्द्रिय-सम्पन्न	७१५
१	भासवपत्र सुच	बाधकों का क्षय	७१५

तीसरा भाग । पञ्चिन्द्रिय वर्ग

१	नष्टम सुच	इन्द्रिय-ज्ञान के बाद पुरुष का दावा	७१६
२	अविच सुच	तीन इन्द्रियों	७१६
३	भाष सुच	तीन इन्द्रियों	७१६
४	पुत्रामिष्ट सुच	पाँच इन्द्रियों	७१६
५	सुदृक सुच	छा इन्द्रियों	७१७
६	सोतापत्र सुच	सोतापत्र	७१७
७	पदम अज्ञ सुच	बर्हत्त्व	७१७
८	द्वितीय अज्ञ सुच	इन्द्रिय ज्ञान के बाद पुरुष का दावा	७१७
९	पदम समनसाहज सुच	इन्द्रिय ज्ञान से असमत्व या साहजत्व	७१८
१	द्वितीय समनसाहज सुच	इन्द्रिय ज्ञान से असमत्व या साहजत्व	७१८

चौथा भाग । सुरुपेन्द्रिय वर्ग

१	सुदृक सुच	पाँच इन्द्रियों	७१९
२	सोतापत्र सुच	सोतापत्र	७१९
३	अज्ञ सुच	बर्हत्त्व	७१९
४	पदम समनसाहज सुच	इन्द्रिय-ज्ञान से असमत्व या साहजत्व	७१९
५	द्वितीय समनसाहज सुच	इन्द्रिय ज्ञान से असमत्व या साहजत्व	७१९
६	पदम विज्ञ सुच	पाँच इन्द्रियों	७२
७	द्वितीय विज्ञ सुच	पाँच इन्द्रियों	७२
८	तृतीय विज्ञ सुच	पाँच से तीन होना	७२
९	अज्ञ सुच	इन्द्रिय उत्पत्ति के ईदु	७२
१	उपसम सुच	इन्द्रिय-विरोध	७२१

पाँचवाँ भाग । ज्ञापन

१	अज्ञ सुच	चौथ में चार्पत्र दिया है ।	७२२
२	उपसम साहज सुच	घन इन्द्रियों का प्रतिधारण है	७२२
३	साधन सुच	इन्द्रियों ही अज्ञ हैं	७२३
४	पुरुषोद्भूत सुच	इन्द्रिय-भावना से निर्बल प्राप्ति	७२४
५	पदम पुरुषात्म सुच	पञ्चिन्द्रिय की भावना से निर्बल प्राप्ति	७२४
६	द्वितीय पुरुषात्म सुच	अज्ञ-अज्ञ और अज्ञ विपुलि	७२४
७	तृतीय पुरुषात्म सुच	अज्ञ इन्द्रियों की भावना	२५
८	उपसम पुरुषात्म सुच	पाँच इन्द्रियों की भावना	७२५

१. विण्डोल सुत्त	विण्डोल भारद्वाज को भर्हृत्स्य-प्राप्ति	७२५
२. आपण सुत्त	सुद्ध-भक्त को धर्म में दाँका नहीं	७२६
<b>छठाँ भाग</b>		
१. साला सुत्त	प्रज्ञेन्द्रिय श्रेष्ठ है	७२७
२. मल्लिक सुत्त	इन्द्रियाँ का अपने-अपने स्थान पर रहना	७२७
३. सेरु सुत्त	सौक्ष्म-असौक्ष्म जानने का दृष्टिकोण	७२७
४. पाद सुत्त	प्रज्ञेन्द्रिय सर्वश्रेष्ठ	७२८
५. सार सुत्त	प्रज्ञेन्द्रिय अम्र है	७२९
६. पतिव्रित्त सुत्त	अप्रमाद	७२९
७. मण सुत्त	इन्द्रिय-भात्रना से निर्वाण की प्राप्ति	७२९
८. सूकर खाता सुत्त	अनुत्तर योगक्षेम	७३०
९. पठम उप्पाद सुत्त	पाँच इन्द्रियाँ	७३०
१०. दुतिय उप्पाद सुत्त	पाँच इन्द्रियाँ	७३०

**सातवाँ भाग : द्योधि पाक्षिक वर्ग**

१. सयोजन सुत्त	संयोजन	७३१
२. अनुसय सुत्त	अनुशय	७३१
३. परिडजा सुत्त	मार्ग	७३१
४. आसवक्खय सुत्त	आश्रव-क्षय	७३१
५. द्वे फला सुत्त	दो फल	७३१
६. सत्तानिसंस सुत्त	सात सुपरिणाम	७३१
७. पठम रुक्ख सुत्त	ज्ञान पाक्षिक धर्म	७३२
८. दुतिय रुक्ख सुत्त	ज्ञान पाक्षिक धर्म	७३२
९. ततिय रुक्ख सुत्त	ज्ञान-पाक्षिक धर्म	७३२
१०. चतुर्थ रुक्ख सुत्त	ज्ञान-पाक्षिक धर्म	७३२

**आठवाँ भाग : गंगा-पेठ्याल**

१. प्राचीन सुत्त	निर्वाण की ओर अग्रसर होना	७३३
२-१२ सब्बे सुत्तन्ता	निर्वाण की ओर अग्रसर होना	७३३

**नवाँ भाग : अग्रमाद वर्ग**

१-१०. सब्बे सुत्तन्ता	अग्रमाद आधार है	७३३
-----------------------	-----------------	-----

**पाँचवाँ परिच्छेद**

**४७ सम्यक् प्रधान संयुत्त**

**पहला भाग : गंगा-पेठ्याल**

१-१२ सब्बे सुत्तन्ता	चार सम्यक प्रधान	७३४
----------------------	------------------	-----

## छठों परिच्छेद

## ४८ षष्ठ संयुक्त

पहला भाग : गंगा-वेम्पाळ

१११ सम्बे सुलम्बा

पॉच वर

७२५

## सातवों परिच्छेद

## ४९ अक्षिपाद संयुक्त

पहला भाग : चापाळ वर

१	अपरा सुत	चार अक्षिपाद	७२६
२	विरह सुत	चार अक्षिपाद	७२६
३	अरिप सुत	अक्षिपाद मुक्तिवर्ष है	७२६
४	विपिबरा सुत	विर्षाज-दावक	७२७
५	परैस सुत	अक्षि की सावना	७२७
६	समस सुत	अक्षि की पूर्ण सावना	७२७
७	भिकरु सुत	अक्षिपादों की सावना ठी बहूँव	७२७
८	आहा सुत	चार अक्षिपाद	७२७
९	आज सुत	आज	७२८
१०	वीतिव सुत	सुद द्वारा जीवन-अक्षि का लया	७२८

दूसरा भाग : मासादकम्पन वर

१	देठ सुत	अक्षिपाद की सावना	७२८
२	महपक सुत	अक्षिपाद सावना के महापक	७२९
३.	छन्द सुत	चार अक्षिपादों की सावना	७२९
४	मोम्यदकान सुत	मोम्यदकान की अक्षि	७२९
५	माझण सुत	छन्द-महाण का मार्ग	७२९
६	पदम अमलमाझण सुत	चार अक्षिपाद	७२९
७	हुतिव ससममाझण सुत	चार अक्षिपादों की सावना	७२९
८	मिबसु सुत	चार अक्षिपाद	७२९
९.	रेसवा सुत	अक्षि और अक्षिपाद	७२९
१०	विमद सुत	चार अक्षिपादों की सावना	७२९

तीसरा भाग : अपोयुक्त वर

१	अभ्य सुत	अक्षिपाद-सावना का मार्ग	७२९
२	अपोयुक्त सुत	शरीर से अक्षिपाद कावना	७२९
३	मिबसु सुत	चार अक्षिपाद	७२९
४	सुद सुत	चार अक्षिपाद	७२९

५. प्रथम फल सुक्त	चार ऋद्धिपाद	७४८
६. द्वितीय फल सुक्त	चार ऋद्धिपाद	७४८
७. प्रथम भानन्द सुक्त	ऋद्धि और ऋद्धिपाद	७४८
८. द्वितीय भानन्द सुक्त	ऋद्धि और ऋद्धिपाद	७४९
९. प्रथम भिक्षु सुक्त	ऋद्धि और ऋद्धिपाद	७४९
१०. द्वितीय भिक्षु सुक्त	ऋद्धि और ऋद्धिपाद	७४९
११. मोग्गलान सुक्त	मोग्गलान की ऋद्धिमत्ता	७४९
१२. तथागत सुक्त	बुद्ध की ऋद्धिमत्ता	७४९
<b>चौथा भाग : गङ्गा-पेर्याल</b>		
१-१२ सव्ये सुक्तम्ता	निर्वाण की ओर अग्रसर होना	७५०

## आठवाँ परिच्छेद

### ५०. अनुरुद्ध संयुक्त

#### पहला भाग : रहोगत वर्ष

१. प्रथम रहोगत सुक्त	स्मृतिप्रस्थानों की भावना	७५१
२. द्वितीय रहोगत सुक्त	चार स्मृतिप्रस्थान	७५२
३. सुक्तसु सुक्त	स्मृतिप्रस्थानों की भावना से अभिज्ञा-प्राप्ति	७५२
४. प्रथम कण्टकी सुक्त	चार स्मृतिप्रस्थान प्राप्त कर विहरना	७५२
५. द्वितीय कण्टकी सुक्त	चार स्मृतिप्रस्थान	७५३
६. तृतीय कण्टकी सुक्त	सहज-लोक को जाना	७५३
७. तण्हस्सय सुक्त	स्मृतिप्रस्थान-भावना से तृष्णा का क्षय	७५३
८. सल्लकागार सुक्त	गृहस्थ होना सम्भव नहीं	७५३
९. सव्य सुक्त	अनुरुद्ध द्वारा अर्हत्त्व प्राप्ति	७५४
१०. धाल्लगिलान सुक्त	अनुरुद्ध का भीमार पशना	७५४

#### दूसरा भाग : सहस्त्र वर्ष

१. सहस्त्र सुक्त	हजार करपों को स्मरण करना	७५५
२. प्रथम इद्धि सुक्त	ऋद्धि	७५५
३. द्वितीय इद्धि सुक्त	दिव्य धोत्र	७५५
४. वेत्तोपरिब सुक्त	परमे के चित्त को जानने का ज्ञान	७५५
५. प्रथम ठान सुक्त	स्थान का ज्ञान होना	७५६
६. द्वितीय ठान सुक्त	दिव्य चक्षु	७५६
७. पटिपदा सुक्त	मार्ग का ज्ञान	७५६
८. लोक सुक्त	लोक का ज्ञान	७५६
९. नानाधिमुत्ति सुक्त	धारणा को धारणा	७५६
१०. इन्द्रिय सुक्त	इन्द्रियों का ज्ञान	७५६
११. ज्ञान सुक्त	समापत्ति का ज्ञान	७५६
१२. प्रथम विज्जा सुक्त	पूर्वजन्मों का स्मरण	७५७

१३	दुष्टिच विज्ञा सुप्त	दिव्य चन्द्र	७५७
१४	तद्विच विज्ञा सुप्त	दुःख क्षय ज्ञान	७५७

### नवाँ परिच्छेद

#### ५१ ध्यान संयुक्त

	पहला भाग	:	गङ्गा-पय्यास	
१	पहम सुद्विच सुप्त		चार भाग	७५८
२	१२ सन्धे सुप्तम्ता		चार ध्यान	७५८
	दूसरा भाग	:	भद्रमाद् धन	
१	सन्धे सुप्तम्ता		भद्रमाद्	७५९
	तीसरा भाग	:	घटकरणीय धन	
१	१२ सन्धे सुप्तम्ता		बद्ध	७५९
	चौथा भाग	:	धरण धन	
१	सन्धे सुप्तम्ता		तीन पत्रार्थ	७६
	पाँचवाँ भाग	:	भोग धन	
१	भोग सुप्त		चार भाग	७६
२	भोग सुप्त		चार भोग	७६
३	उदम्मागिय सुप्त		कपरी पाँच संवीकन	७६

### दसवाँ परिच्छेद

#### ५२ आनापान-संयुक्त

	पहला भाग	:	एकधर्म वर्ग	
१	अहकर्म सुप्त		आनापान-स्मृति	७६१
२	भोग सुप्त		आनापान-स्मृति	७६२
३	सुद्विच सुप्त		आनापान-स्मृति	७६२
४	पहम कर्म सुप्त		आनापान स्मृति-आवना कर्म कर्म	७६२
५	दुष्टिच कर्म सुप्त		आनापान-स्मृति-आवना कर्म कर्म	७६२
६	अरिह सुप्त		भावना-विधि	७६३
७	अधिव सुप्त		अधिव-रहित होना	७६३
८	धीच सुप्त		आनापान समाधि की भावना	७६४
९	बैरागी सुप्त		सुप्त विहार	७६५
१०	किम्बिक सुप्त		आनापान-स्मृति-आवना	७६६
	दूसरा भाग	:	द्वितीय वर्ग	
१	इच्छाबद्ध सुप्त		सुप्त-विहार	७६६
२	अधिव सुप्त		धीच और सुप्त-विहार	७६६



३. पठम आनन्द सुत्त	आनापान स्मृति से मुक्ति	७६९
४. दुत्तिय आनन्द सुत्त	एकधर्म से लयकी पूर्ति	७७१
५. पठम भिक्खु सुत्त	आनापान-स्मृति	७७१
६. दुत्तिय भिक्खु सुत्त	आनापान-स्मृति	७७१
७. सयोजन सुत्त	आनापान-स्मृति	७७१
८. अनुसय सुत्त	अनुसय	७७१
९. अद्धान सुत्त	मार्ग	७७१
१०. आसवक्खय सुत्त	आश्रय-क्षय	७७१

## ग्यारहवाँ परिच्छेद

### ५३. स्रोतापत्ति संयुत्त

#### पहला भाग : चेलुद्धार वर्ग

१. राज सुत्त	चार श्रेष्ठ धर्म	७७२
२. भोगय सुत्त	चार धर्मों से स्रोतापन्न	७७३
३. दीर्घायु सुत्त	दीर्घायु का बीमार पड़ना	७७३
४. पठम सारिपुत्त सुत्त	चार बातों से युक्त स्रोतापन्न	७७४
५. दुत्तिय सारिपुत्त सुत्त	स्रोतापत्ति-अद्द	७७४
६. थपत्ति सुत्त	घर झझटों से भरा है	७७५
७. चेलुद्दारेव्य सुत्त	गार्हस्थ्य धर्म	७७६
८. पठम गिण्णकावसथ सुत्त	धर्मादर्श	७७८
९. दुत्तिय गिण्णकावसथ सुत्त	धर्मादर्श	७७८
१०. तत्तिय गिण्णकावसथ सुत्त	धर्मादर्श	७७९

#### दूसरा भाग : सहस्सक वर्ग

१. सहस्स सुत्त	चार बातों से स्रोतापन्न	७८०
२. प्राह्ण सुत्त	उद्वयगामी मार्ग	७८०
३. आनन्द सुत्त	चार बातों से स्रोतापन्न	७८०
४. पठम हुग्गति सुत्त	चार बातों से हुग्गति नहीं	७८१
५. दुत्तिय हुग्गति सुत्त	चार बातों से हुग्गति नहीं	७८१
६. पठम भित्तेनामच्च सुत्त	चार बातों की शिक्षा	७८१
७. दुत्तिय भित्तेनामच्च सुत्त	चार बातों की शिक्षा	७८१
८. पठम देवचारिक सुत्त	बुद्ध-भक्ति से स्वर्ग-प्राप्ति	७८२
९. दुत्तिय देवचारिक सुत्त	बुद्ध-भक्ति से स्वर्ग-प्राप्ति	७८२
१०. तत्तिय देवचारिक सुत्त	बुद्ध-भक्ति से स्वर्ग-प्राप्ति	७८२

#### तीसरा भाग : सरक्कानि वर्ग

१. पठम महानाम सुत्त	भावित चित्तवाले की निष्पाप मृत्यु	७८३
२. दुत्तिय महानाम सुत्त	निर्वर्ण की ओर अग्रसर होना	७८३
३. गोथ सुत्त	गोधा उपासक की बुद्ध-भक्ति	७८४

३	पठम सरकाभि सुच	सरकाभि शासन का स्वीतापत्र होवा	७८५
५	दुतिय सरकाभि सुच	सरक में प पञ्चमेवाछे व्यक्ति	७८६
६.	पठम अनाथपिण्डिक सुच	अनाथपिण्डिक गृहपति के गुण	७८७
७	दुतिय अनाथपिण्डिक सुच	घर बाहों से नय नहीं	७८८
८	ततिय अनाथपिण्डिक सुच	अप्येवाचक को बैर-भय नहीं	७८९
९.	अथ सुच	बैर-भय रहित व्यक्ति	७९
१	किञ्चि सुच	भीतरी स्वाभ	७९

### बीषा भाग : पुण्याभिसन्द् पर्व

१	पठम अमिसन्द् सुच	पुण्य की चार चारायें	७९१
२	दुतिय अमिसन्द् सुच	पुण्य की चार चारायें	७९१
३	ततिय अमिसन्द् सुच	पुण्य की चार चारायें	७९१
४	पठम देवपद् सुच	चार देव पद्	७९२
५.	दुतिय देवपद् सुच	चार देव-पद्	७९२
६.	समाप्त सुच	देवता भी स्वागत करते हैं	७९२
७	महाभाम सुच	सप्ये उपासक के गुण	७९३
८	वसु सुच	आम्र-क्षय के उपासक-धर्म	७९३
९	काकि सुच	स्वीतापत्र के चार धर्म	७९३
१	अग्नि सुच	प्रमाद तथा अग्रमाद से विहरना	७९४

### पौषर्षी भाग : सगायक पुण्याभिसन्द् पर्व

१	पठम अमिसन्द् सुच	पुण्य की चार चारायें	७९५
२	दुतिय अमिसन्द् सुच	पुण्य की चार चारायें	७९५
३	ततिय अमिसन्द् सुच	पुण्य की चार चारायें	७९६
४	पठम महाभाम सुच	महाभयवात् आचक	७९६
५.	दुतिय महाभाम सुच	महाभयवात् आचक	७९६
६	मिथु सुच	चार चारों से स्वीतापत्र	७९६
७	अग्नि सुच	चार चारों से स्वीतापत्र	७९६
८	अग्नि सुच	चार चारों से स्वीतापत्र	७९७
९.	महाभाम सुच	चार चारों से स्वीतापत्र	७९७
१	अथ सुच	स्वीतापत्र के चार अर्थ	७९७

### छठी भाग : सप्तम पर्व

१	सगायक सुच	चार चारों से स्वीतापत्र	७९८
२	वसुसुच सुच	अर्द्ध क म शीघ्र अग्नि	७९८
३	अग्नि सुच	गार्हपत्य-धर्म	७९९
४	मिथु सुच	विशुद्ध गृहस्थ और भिक्षु में अन्तर नहीं	७९९
५.	पठम अनुष्क सुच	चार धर्मों की भावना से स्वीतापत्र-धर्म	८
६	दुतिय अनुष्क सुच	चार धर्मों की भावना से स्वीतापत्र-धर्म	८
७	ततिय अनुष्क सुच	चार धर्मों की भावना से अग्रगामी-धर्म	८ १
८	अनुष्क अनुष्क सुच	चार धर्मों की भावना से अर्द्ध-धर्म	८ १

९. पटिलाभ सुत्त	चार धर्मों की भाषना से प्रज्ञा-लाभ	८०१
१०. बुद्धि सुत्त	प्रज्ञा-वृद्धि	८०१
११. वेपुल सुत्त	प्रज्ञा की विपुलता	८०१

सातवाँ भाग : महाप्रज्ञा वर्ग

१. महा सुत्त	महा-प्रज्ञा	८०२
२. पुथु सुत्त	पृथुल-प्रज्ञा	८०२
३. विपुल सुत्त	विपुल-प्रज्ञा	८०२
४. गम्भीर सुत्त	गम्भीर-प्रज्ञा	८०२
५. अप्रमत्त सुत्त	अप्रमत्त प्रज्ञा	८०२
६. भूरि सुत्त	भूरि प्रज्ञा	८०२
७. वहुल सुत्त	प्रज्ञा-वाहुलय	८०२
८. सीघ सुत्त	शीघ्र-प्रज्ञा	८०२-
९. लहु सुत्त	लघु-प्रज्ञा	८०२
१०. हास सुत्त	प्रसन्न-प्रज्ञा	८०३
११. जवन सुत्त	तीव्र-प्रज्ञा	८०३
१२. तिवल्ल सुत्त	तीक्ष्ण-प्रज्ञा	८०३
१३. निरुबेधिक सुत्त	निर्वेधिक-प्रज्ञा	८०३

चारहवाँ परिच्छेद

५४. सत्य संयुत्त

पहला भाग : समाधि वर्ग

१. समाधि सुत्त	समाधि का अभ्यास करना	८०४
२. पटिलल्लान सुत्त	आत्म चिन्तन	८०४
३. पठम कुलपुत्त सुत्त	चार आर्यसत्य	८०४
४. दुत्तिय कुलपुत्त सुत्त	चार आर्यसत्य	८०५
५. पठम समणब्राह्मण सुत्त	चार आर्यसत्य	८०५
६. दुत्तिय समणब्राह्मण सुत्त	चार आर्यसत्य	८०५
७. वित्तक्क सुत्त	पाप वित्तकं न करना	८०५
८. चिन्ता सुत्त	पाप-चिन्तन न करना	८०६
९. विरगाहिक सुत्त	लड़ाई-भ्रगड़े की बात न करना	८०६
१०. कथा सुत्त	निरर्थक कथा न करना	८०६

दूसरा भाग : धर्मचक्र-प्रवर्तन वर्ग

१. धम्मचक्रपवत्तन सुत्त	तथागत का प्रथम उपदेश	८०७
२. तथागतेन वुत्त सुत्त	चार आर्यसत्त्यों का ज्ञान	८०८
३. खन्ध सुत्त	चार आर्य सत्य	८०९
४. आयतन सुत्त	चार आर्य सत्य	८०९
५. पठम धारण सुत्त	चार आर्य सत्त्यों को धारण करना	८०९

६. कुटिप चारण सुच	चार आर्षसत्त्वों को चारण करना	२०९
७. अविष्ठा सुच	अविष्ठा क्या है ?	२१
८. विष्ठा सुच	विष्ठा क्या है ?	२१
९. संकासन सुच	आर्षसत्त्वों को प्रकट करना	२१०
१. तथा सुच	चार पञ्चार्थ बातें	२१

### तीसरा भाग : कौटिल्यात्म चर्चा

१. पहल विष्ठा सुच	आर्षसत्त्वों के अ-दर्शन से ही आशागमन	२११
२. कुटिप विष्ठा सुच	ये अमल श्रीर ब्राह्मण नहीं	२११
३. सम्भासादुक्त सुच	चार आर्षसत्त्वों के ज्ञान से सम्बन्ध	२१२
४. आरहा सुच	चार आर्षसत्त्व	२१२
५. आसन्नकल्प सुच	चार आर्षसत्त्वों के ज्ञान से आसन्न-कल्प	२१२
६. मित्र सुच	चार आर्षसत्त्वों की शिक्षा	२१२
७. तथा सुच	आर्षसत्त्व वचार्थ हैं	२१३
८. लोक सुच	कुछ ही आर्ष हैं	२१३
९. परिष्मेद्य सुच	चार आर्षसत्त्व	२१३
१. यद्यप्यपि सुच	चार आर्षसत्त्वों का दर्शन	२१३

### चौथा भाग : सिंसपाभन चर्चा

१. सिंसपा सुच	करी हुई बातें भीषी ही हैं	२१४
२. अदिर सुच	चार आर्षसत्त्वों के ज्ञान से ही दुःख का अन्त	२१४
३. दण्ड सुच	चार आर्षसत्त्वों के अ-दर्शन से आशागमन	२१५
४. श्रेष्ठ सुच	अज्ञान की परवाह न कर आर्ष-सत्त्वों को जाने	२१५
५. सपिसत् सुच	सही माके से भीषा जाना	२१५
६. धाम सुच	अज्ञान से मुक्त होगा	२१५
७. अदम सुविभूषण सुच	ज्ञान का पूर्ण अन्त	२१६
८. कुटिप सुविभूषण सुच	तथागत की उत्पत्ति से ज्ञानाक्रोह	२१६
९. इन्द्रभीष्ट सुच	चार आर्षसत्त्वों के ज्ञान से विवर्तन	२१६
१. चादि सुच	चार आर्षसत्त्वों के ज्ञान से विवर्तन	२१७

### पाँचवाँ भाग : प्रपात पत्र

१. विष्ठा सुच	लोक का विस्तार न करे	२१८
२. वचान सुच	प्रमाणक प्रपात	२१८
३. परिवाह सुच	परिवाह-कारक	२१९
४. अटगार सुच	भूभागार की वचन	२१९
५. अदम विष्ठा सुच	सबसे अधिक अदम	२२
६. अज्ञकार सुच	सबसे बड़ा अज्ञानक अज्ञकार	२२
७. कुटिप विष्ठा सुच	काने कपुने की वचन	२२१
८. सविष विष्ठा सुच	काने कपुने की वचन	२२१
९. अदम सुमेव सुच	सुमेव की वचन	२२१
१. कुटिप सुमेव सुच	सुमेव की वचन	२२१

## छठों भाग : अभिसमय वर्ग

१. नक्षत्रसिद्ध सुक्त	धूल तथा पृथ्वी की उपमा	८२३
२. पीकलरणी सुक्त	पुष्करिणी की उपमा	८२३
३. पठम सम्ब्रैज सुक्त	जलकण की उपमा	८२३
४. द्वुतिय सम्ब्रैज सुक्त	जलकण की उपमा	८२३
५. पठम पठवी सुक्त	पृथ्वी की उपमा	८२४
६. द्वुतिय पठवी सुक्त	पृथ्वी की उपमा	८२४
७. पठम समुद्र सुक्त	महासमुद्र की उपमा	८२४
८. द्वुतिय समुद्र सुक्त	महासमुद्र की उपमा	८२४
९. पठम पद्मवतुपमा सुक्त	हिमालय की उपमा	८२४
१०. द्वुतिय पद्मवतुपमा सुक्त	हिमालय की उपमा	८२४

## सातवों भाग : सप्तम वर्ग

१. अञ्जत्र सुक्त	धूल तथा पृथ्वी की उपमा	८२५
२. पद्मन्त सुक्त	प्रयन्त जनपद की उपमा	८२५
३. पञ्जा सुक्त	भार्य प्रज्ञा	८२५
४. सुरामेरय सुक्त	नशा से विरत होना	८२५
५. आदेक सुक्त	स्थल और जल के प्राणी	८२५
६. सत्तेय्य सुक्त	मातृ-भक्त	८२६
७. पेतैय्य सुक्त	पितृ-भक्त	८२६
८. सामण्य सुक्त	श्रामण्य	८२६
९. प्रह्णञ्ज सुक्त	प्राणण्य	८२६
१०. पचायिक सुक्त	कुल के जेठों का सम्मान करना	८२६

## आठवों भाग : अष्टमका विरत वर्ग

१. पाण सुक्त	हिंसा	८२७
२. अदिक्क सुक्त	थोरी	८२७
३. कामेसु सुक्त	व्यभिचार	८२७
४-१०. सव्ये सुक्तन्ता	भृथा वाद	८२७

## नववों भाग : नामकधान्य-पेय्याल

१. नञ्च सुक्त	नृत्य	८२८
२. सयन सुक्त	शयन	८२७
३. रजत्र सुक्त	सोना-चौबी	८२८
४. धञ्ज सुक्त	अन्न	८२८
५. मंसु सुक्त	मास	८२८
६. कुमारिय सुक्त	स्त्री	८२८
७. दासी सुक्त	दासी	८२८
८. अजेळक सुक्त	भेड़-बकरी	८२८
९. कुषकुटसूकर सुक्त	मूर्गा सूकर	८२९
१०. हरिय सुक्त	हाथी	८२९

## वृत्तार्थो भाग : बहुतर सस्य धग

१ शेष सुच	प्रेत	८३
२ कपबिम्ब सुच	रूप बिम्ब	८३
३ वृत्तेषु सुच	वृत्त	८३
४ तुलास्य सुच	नाप बोध	८३
५ अककोट सुच	रानी	८३
६ ११ सप्ये सुचन्ता	काठना-मारवा	८३

## व्यारहर्षो भाग : गति-पञ्चक धर्म

१ पञ्चगति सुच	नरक में पैदा होना	८३१
२ पञ्चगति सुच	पशु-बोधि में पैदा होना	८३१
३ पञ्चगति सुच	प्रेत-बोधि में पैदा होना	८३१
४-६ पञ्चगति सुच	देवता होना	८३१
७-९ पञ्चगति सुच	देवलोक में पैदा होना	८३१
१०-१२ पञ्चगति सुच	मनुष्य बोधि में पैदा होना	८३१
१३ १५ पञ्चगति सुच	नरक से मनुष्य-बोधि में जाना	८३१
१६ १८ पञ्चगति	नरक से देवलोक में जाना	८३१
१९-२१ पञ्चगति	पशु से मनुष्य होना	८३२
२२ २४ पञ्चगति सुच	पशु से देवता होना	८३२
२५-२७ पञ्चगति सुच	प्रेत से मनुष्य होना	८३२
२८ ३० पञ्चगति	प्रेत से देवता होना	८३२

# चौथा खण्ड

पञ्चायतन वर्ग

# पहला परिच्छेद

## ३४. पञ्चायतन-संयुक्त

मूल पण्णासक

पहला भाग

अनित्य वर्ग

### § १. अनित्य सुत्त ( ३४. १. १. २ )

आध्यात्म आयतन अनित्य है

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय भगवान् श्रायस्सी में अनाश्रयिण्डक के जेतवन आराम में विचार करते थे ।

पहले, भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया—भिक्षुओं !

"नन्द !" कहकर भिक्षुओं ने भगवान् को उत्तर दिया ।

भगवान् बोले, "भिक्षुओं ! चक्षु अनित्य है । जो अनित्य है वह टूट सके । जो टूट सके वह भनात्म है । जो अनात्म है वह न मेरा है, न मैं हूँ, न मेरा आत्मा है । इसे यथार्थतः प्रज्ञापूर्वक जान लेना चाहिये ।

श्रोत्र अनित्य है... । घ्राण अनित्य है । जिह्वा अनित्य है । काया अनित्य है... ।

मन अनित्य है । जो अनित्य है वह टूट सके । जो टूट सके वह अनात्म है । जो अनात्म है वह न मेरा है, न मैं हूँ, न मेरा आत्मा है । इसे यथार्थतः प्रज्ञापूर्वक जान लेना चाहिये ।

भिक्षुओं ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक चक्षु में धारण करता है । श्रोत्र में । घ्राण में । जिह्वा में । काया में । मन में । धारण करने से राग-रहित हो जाता है । रागरहित होने से विमुक्त हो जाता है । विमुक्त हो जाने से 'विमुक्त हो गया' ऐसा ज्ञान होता है । जति क्षीण हुई, यज्ञचर्य पूरा हो गया, जो करना था सो कर लिया, पुनः जन्म नहीं होगा—जान लेता है ।

### § २. दुक्ख सुत्त ( ३४. १. १. २ )

आध्यात्म आयतन दुःख है

भिक्षुओं ! चक्षु दुःख है । जो दुःख है वह अनात्म है । जो अनात्म है वह न मेरा है, न मैं हूँ, न मेरा आत्मा है । इसे यथार्थतः प्रज्ञापूर्वक जान लेना चाहिये ।

श्रोत्र दुःख है । घ्राण दुःख है । जिह्वा दुःख है । काया दुःख है । मन दुःख है । इसे यथार्थतः प्रज्ञापूर्वक जान लेना चाहिये ।

भिक्षुओं ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक चक्षु में धारण करता है ।



## § ३ अनन्त सुप्त ( ३४ १ १ ३ )

आध्यात्म भाष्यतन् अनात्म है

मिथुनी ! बहुत अनात्म है । जो अनात्म है वह न मेरा है, न मैं हूँ न मेरा आत्मा है । इसे वचार्थता प्रज्ञापूर्वक ज्ञान लेना चाहिये ।

ओज्ज अनात्म है । प्राण । विद्या । कथा । मन ।

मिथुनी ! इसे ज्ञान परिष्कृत आर्षेयावक ।

## § ४ अनिच्छ सुप्त ( ३४ १ १ ४ )

वाह्य भाष्यतन् अनित्य है

मिथुनी ! रूप अनित्य है । जो अनित्य है वह दुःख है । जो दुःख है वह अनात्म है । जो अनात्म है वह न मेरा है, न मैं हूँ न मेरा आत्मा है । इसे वचार्थता प्रज्ञापूर्वक ज्ञान लेना चाहिये ।

सम्पन्न अनित्य है । गन्ध । रस । स्पर्श । धर्म ।

मिथुनी ! इसे ज्ञान परिष्कृत आर्षेयावक ।

## § ५ दुःख सुप्त ( ३४ १ १ ५ )

वाह्य भाष्यतन् दुःख है

मिथुनी ! रूप दुःख है । जो दुःख है वह अनात्म है । जो अनात्म है वह न मेरा है, न मैं हूँ न मेरा आत्मा है । वचार्थता प्रज्ञापूर्वक ज्ञान लेना चाहिये ।

सम्पन्न दुःख है । गन्ध । रस । स्पर्श । धर्म ।

मिथुनी ! इसे ज्ञान परिष्कृत आर्षेयावक ।

## § ६ अनन्त सुप्त ( ३४ १ १ ६ )

वाह्य भाष्यतन् अनात्म है

मिथुनी ! रूप अनात्म है । जो अनात्म है वह न मेरा है न मैं हूँ न मेरा आत्मा है । इसे वचार्थता प्रज्ञापूर्वक ज्ञान लेना चाहिये । सम्पन्न अनात्म है । गन्ध । रस । स्पर्श । धर्म ।

मिथुनी ! इसे ज्ञान परिष्कृत आर्षेयावक ।

## § ७ अनिच्छ सुप्त ( ३४ १ १ ७ )

आध्यात्म भाष्यतन् अनित्य है

मिथुनी ! अतीत और अनागत चक्षु अनित्य है वर्तमान का क्या कहना है ! मिथुनी ! इसे ज्ञान परिष्कृत आर्षेयावक अतीत चक्षु में भी अवरोध होता है, अनागत चक्षु का अभिव्यक्त नहीं करता और वर्तमान चक्षु के विरोध विराग और विरोध के किन्हे बलशक्ति होता है ।

ओज्ज । प्राण । विद्या । कथा । मन ।

## § ८ दुःख सुप्त ( ३४ १ १ ८ )

आध्यात्म भाष्यतन् दुःख है

मिथुनी ! अतीत और अनागत चक्षु दुःख है वर्तमान का क्या कहना ! मिथुनी ! इसे ज्ञान परिष्कृत आर्षेयावक अतीत चक्षु में भी अवरोध होता है अनागत चक्षु का अभिव्यक्त नहीं करता और वर्तमान चक्षु के विरोध विराग और विरोध के किन्हे बलशक्ति होता है ।

ध्रोव' । प्राण' । जिह्वा' । काया' । मन' ।

### § ९. अनत्त सुत्त ( ३४ १. १. ९ )

वाह्य आयतन अनात्म हैं

भिक्षुओ ! अतीत और अनागत चक्षु अनात्म है, वर्तमान का क्या कहना ।'

ध्रोव' । मन' ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक' ।

### § १०. अनिच्च सुत्त ( ३४ १. १. १० )

वाह्य आयतन अनित्य हैं

भिक्षुओ ! अतीत और अनागत रूप अनित्य है, वर्तमान का क्या कहना ।'

शब्द' । गन्ध' । इसे जान पण्डित आर्यश्रावक' ।

### § ११. दुक्ख सुत्त ( ३४ १. १. ११ )

वाह्य आयतन दुःख हैं

भिक्षुओ ! अतीत और अनागत रूप दुःख है, वर्तमान का क्या कहना ।

शब्द' । गन्ध' । रस' । स्पर्श' । धर्म' ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक' ।

### § १२. अनत्त सुत्त ( ३४. १. १. १२ )

वाह्य आयतन अनात्म हैं

भिक्षुओ ! अतीत और अनागत रूप अनात्म है, वर्तमान का क्या कहना । शब्द' । गन्ध' । रस' । स्पर्श' । धर्म' ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक अतीत रूप में भी अनपेक्ष होता है, अनागत रूप का अभिनन्दन नहीं करता, और वर्तमान रूपके निर्वेद, विराग और निरोध के लिये यत्नशील होता है ।

शब्द' । गन्ध' । रस' । स्पर्श' । धर्म' ।

अनित्य वर्ग समाप्त

## दूसरा भाग

### यमक वर्ग

४ १ सम्बोध सुच ( ३४ १ २ १ )

यथार्थ ज्ञान के उपरान्त बुद्धत्व का दावा

भाष्यस्ती ।

भिक्षुओ ! बुद्धत्व काम करने के पूर्व ही मेरे बोधिसत्त्व रहते मन में यह बात आई, “बहु का आस्ताद् क्या है दाप क्या है मोक्ष क्या है ? भोज का मय क्या ?

भिक्षुओ ! तब मुझे ऐसा माधुर्य हुआ “बहु के प्रत्यक्ष म जो सुख-सौमनस्य उत्पन्न होते हैं वे बहु के आस्ताद् हैं। जो बहु अल्प बुद्ध और परिवर्तनशील है वह है बहु का दाप। जो बहु के प्रति छन्दसा का महाल है वह है बहु का मोक्ष।

भोज के । भ्रम के । भिद्य के । दापा के । मय के ।

भिक्षुओ ! जब तक मैं इन छः आध्यात्मिक भावतन्त्रों के आस्ताद् का आस्ताद् के तौर पर शेष का शेष के तौर पर और मोक्ष को मोक्ष के तौर पर पचाईतः नहीं जान लिया तब तक मैंने इन सबके समार लोक में सम्यक् समुद्भव पाते का दावा नहीं किया।

भिक्षुओ ! क्योंकि मैंने इन छः आध्यात्मिक भावतन्त्रों के आस्ताद् को पचाईतः जान लिया है इमीन्द्रिये दापा किया।

मुझे ज्ञान-दर्शन उत्पन्न हो गया। चित्त की विमुक्ति हो गई, यह अन्तिम कम्म है अब पुनर्जन्म होने का नहीं।

४ २ सम्बोध सुच ( ३४ १ ० २ )

यथार्थ ज्ञान के उपरान्त बुद्धत्व का दावा

[ ऊपर जैसा ही ]

४ ३ अस्ताद् सुच ( ३४ १ ० ३ )

आस्ताद् की श्लोक

भिक्षुओ ! मैंने बहु के आस्ताद् जाचन की शीघ्र की। बहु का का आस्ताद् है उन जान लिया। बहु का जितना आस्ताद् है मैंने प्रजा म देण किया। भिक्षुओ ! मैंने बहु के दाप जाचने की श्लोक की। बहु का जो दाप है उसे जान लिया। बहु का जितना दाप है मैंने प्रजा से देण किया। भिक्षुओ ! मैंने बहु के मोक्ष जाचने की श्लोक की। बहु का जो मोक्ष है उसे जान लिया। बहु का जितना मोक्ष है मैंने प्रजा म देण किया। भोज । भ्रम । भिद्य । दापा । मय ।

भिक्षुओ ! जब तक मैं इन छः आध्यात्मिक भावतन्त्रों के आस्ताद् दावा किया। मुझे ज्ञान-दर्शन उत्पन्न हो गया... ।

## § ४. अस्वाद सूक्त ( ३४ १. २ ४ )

## आम्वाद् की ग्राज

भिक्षुओं ! मैंने रूप के आम्वाद् जानने की ग्राज की । रूप का जो आम्वाद् है उसे जान लिया । रूप का जितना आम्वाद् है मैंने प्रजा में देखा लिया । भिक्षुओं ! मैंने रूप के द्रोण जानने की ग्राज की । रूप का जो द्रोण है उसे जान लिया । रूप का जितना द्रोण है मैंने प्रजा में देखा लिया । भिक्षुओं ! मैंने रूप के मोक्ष जानने की ग्राज की । रूप का जो मोक्ष है उसे जान लिया । रूप का जितना मोक्ष है मैंने प्रजा में देखा लिया ।

भिक्षुओं ! जब तक मैं इन ३ वाद्य आयतनों के आम्वाद् दावा किया ।

मुझे ज्ञान-दर्शन उत्पन्न हो गया ।

## § ५. नो चेतं सूक्त ( ३४ १. २ ५ )

## आम्वाद् के ही कारण

भिक्षुओं ! यदि चक्षु में आम्वाद् नहीं होता, तो प्राणी चक्षु में रक्त नहीं होते । क्योंकि चक्षु में आम्वाद् है इसीलिये प्राणी चक्षु में रक्त होते हैं ।

भिक्षुओं ! यदि चक्षु में द्रोण नहीं होता, तो प्राणी चक्षु में निर्वैट (= धराग्र्य) नहीं करते । क्योंकि चक्षु में द्रोण है इसीलिये प्राणी चक्षु में निर्वैट करते हैं ।

भिक्षुओं ! यदि चक्षु में मोक्ष नहीं होता, तो प्राणी चक्षु में मुक्त नहीं होते । क्योंकि चक्षु से मोक्ष होता है इसीलिये प्राणी चक्षु में मुक्त होते हैं ।

श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन ।

भिक्षुओं ! जब तक मैं इन ३ आध्यात्मिक आयतनों के आम्वाद् को दावा किया ।

## § ६. नो चेतं सूक्त ( ३४ १ २ ६ )

## आम्वाद् के ही कारण

भिक्षुओं ! यदि रूप में आम्वाद् नहीं होता, तो प्राणी रूप में रक्त नहीं होते क्योंकि रूप में आम्वाद् है इसीलिये प्राणी रूप में रक्त होते हैं ।

भिक्षुओं ! यदि रूप में द्रोण नहीं होता, तो प्राणी रूप में निर्वैट नहीं करते । क्योंकि रूप में द्रोण है, इसीलिये प्राणी रूप में निर्वैट करते हैं ।

भिक्षुओं ! यदि रूप में मोक्ष नहीं होता तो प्राणी रूप से मुक्त नहीं होते । क्योंकि रूप से मोक्ष होता है इसीलिये प्राणी रूप से मुक्त होते हैं ।

शब्द । गन्ध । रस । स्पर्श । धर्म ।

भिक्षुओं ! जब तक मैं इन ६ वाद्य आयतनों के आम्वाद् को दावा किया ।

## § ७ अभिनन्दन सूक्त ( ३४ १ २ ७ )

## अभिनन्दन से मुक्ति नहीं

भिक्षुओं ! जो चक्षु का अभिनन्दन करता है वह दुःख का अभिनन्दन करता है । जो दुःख का अभिनन्दन करता है वह दुःख से मुक्त नहीं हुआ है—ऐसा मैं कहता हूँ ।

जो श्रोत्र का । घ्राण । जिह्वा । काया । मन ।

भिक्षुओं ! जो चक्षु का अभिनन्दन नहीं करता है वह दुःख का अभिनन्दन नहीं करता है । जो दुःख का अभिनन्दन नहीं करता है वह दुःख से मुक्त हो गया—ऐसा मैं कहता हूँ ।

श्रोत्र । ध्यान । विद्या । काया । मन ।

§ ८ अभिनन्दन सूत्र ( ३४ १ २ ८ )

अभिनन्दन से मुक्ति नहीं

मिथुनी ! जो रूप का अभिनन्दन करता है वह दुःख का अभिनन्दन करता है । जो दुःख का अभिनन्दन करता है वह दुःख से मुक्त नहीं हुआ है—येमा में कहता हूँ ।

शब्द । गन्ध । रस । स्पर्श । धर्म ।

मिथुनी ! जो रूप का अभिनन्दन नहीं करता है वह दुःख का अभिनन्दन नहीं करता है वह दुःख से मुक्त हो गया—येमा में कहता हूँ ।

§ ९ उत्पाद सूत्र ( ३४ १ २ ९ )

उत्पत्ति ही दुःख है

मिथुनी ! जो बन्धु की उत्पत्ति स्थिति बन्धु केना मादुर्माप है वह दुःख की उत्पत्ति है ।

श्रोत्र मन ।

मिथुनी ! जो बन्धु का निरोध=व्युपसम=नस्त हो जाता है वह दुःख का निरोध=व्युपसम=नस्त हो जाता है ।

श्रोत्र मन ।

§ १० उत्पाद सूत्र ( ३४ १ २ १० )

उत्पत्ति ही दुःख है

मिथुनी ! जो रूप की उत्पत्ति स्थिति बन्धु केना मादुर्माप है वह दुःख की उत्पत्ति है ।

श्रोत्र मन ।

मिथुनी ! जो रूप का निरोध=व्युपसम=नस्त हो जाता है वह दुःख का निरोध=व्युपसम=नस्त हो जाता है ।

श्रोत्र मन ।

धर्मक बर्ग समाप्त

## तीसरा भाग

### सर्व वर्ग

§ १ सव्य सुक्त ( ३४ १. ३ १ )

सव्य किसे कहते हैं ?

श्रावस्ती...।

भिक्षुओ ! मैं तुम्हें सर्व का उपदेश करूँगा । उसे सुना । भिक्षुओ ! सर्व क्या है ? चक्षु और रूप । श्रोत्र और शब्द । घ्राण और गन्ध । जिह्वा और रस । काया और स्पर्श । मन और धर्म । भिक्षुओ ! इसी को सर्व कहते हैं ।

भिक्षुओ ! यदि कोई ऐसा कहे—मैं इस सर्व को देखने सर्व का उपदेश करूँगा, तो यह ठीक नहीं । पड़े जाने पर नहीं बतला सकेगा । मैं क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि यह वात अनहोनी है ।

§ २. प्रहाण सुक्त ( ३४. १ ३ २ )

सर्व-त्याग के योग्य

भिक्षुओ ! मैं सर्व-प्रहाण का उपदेश करूँगा । उम्ने सुनो । भिक्षुओ ! सर्व-प्रहाण के योग्य कौन से धर्म हैं ?

भिक्षुओ ! चक्षु का सर्व-प्रहाण करना चाहिये । रूप का । चक्षु विज्ञान का । चक्षु सस्पर्श का । जो चक्षु सस्पर्श के प्रत्यय से सुख, दुःख, या अदुःख-सुख वेदना उत्पन्न होती है उसका भी सर्व-प्रहाण करना चाहिये । श्रोत्र, शब्द । घ्राण, गन्ध । जिह्वा, रस । काया, स्पर्श । मन, धर्म । भिक्षुओ ! यही सर्व-प्रहाण के योग्य धर्म हैं ।

§ ३. प्रहाण सुक्त ( ३४ १ ३. ३ )

जान-वृद्धकर सर्व-त्याग के योग्य

भिक्षुओ ! सभी जान-वृद्धकर प्रहाण करने योग्य धर्मों का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओ ! जान-वृद्धकर चक्षु का प्रहाण कर देना चाहिये, रूप । चक्षु विज्ञान । चक्षु सस्पर्श । जो चक्षु सस्पर्श के प्रत्यय से सुख, दुःख या अदुःख-सुख वेदना उत्पन्न होती है उसका भी । श्रोत्र । मन ।

भिक्षुओ ! यही जान-वृद्धकर प्रहाण करने योग्य धर्म हैं ।

§ ४. परिजानन सुक्त ( ३४. १ ३ ४ )

बिना जाने वृद्धे दुःखों का क्षय नहीं

भिक्षुओ ! सधर्मो बिना जाने वृद्धे, उससे विरक्त हुये और उसको छोड़े दुःखों का क्षय करना सम्भव नहीं ।

मिथुना ! बहुत का बिना जाने कुछ दुखों का क्षय करना सम्भव नहीं। रूप को । जो बहुसंस्पर्श के प्रत्यय से सुख दुःख या अनुकूल-सुख बचना उत्पन्न होती है उसका । श्रोत्र । मन । मिथुना ! इन्हीं सबका बिना जाने कुछे उससे विरक्त हुये और उसको छोड़ें दुःख का क्षय करना सम्भव नहीं।

मिथुना ! सबको जान-बूझ उससे विरक्त हो और उसको छोड़ें दुखों का क्षय करना सम्भव है।

मिथुना ! किन्तु सबका जान-बूझ उससे विरक्त हो और उसको छोड़ें दुखों का क्षय करना सम्भव है ?

मिथुना ! बहुत को जान-बूझ दुःखों का क्षय करना सम्भव है। रूप को । जो बहु संस्पर्श के प्रत्यय से सुख दुःख या अनुकूल-सुख बचना उत्पन्न होती है उसको । श्रोत्र । मन ।

मिथुना ! इन्हीं सब को जान-बूझ उससे विरक्त हो और उसको छोड़ें दुखों का क्षय करना सम्भव है।

### ४५ परिखानन सूत्र ( ३४ १ ३ ५ )

बिना जाने कुछ दुखों का क्षय नहीं

मिथुना ! सब को बिना जाने कुछे उससे विरक्त हुये और उसको छोड़ें दुखों का क्षय करना सम्भव नहीं।

जो बहुत है का रूप है, जो बहुत विद्या है और जो बहुविद्या से जानने योग्य बर्त है ।

जो श्रोत्र । प्राण । विद्या । काया । मन ।

मिथुना ! इन्हीं सब को बिना जाने कुछे उससे विरक्त हुये और उसको छोड़ें दुख का क्षय करना सम्भव नहीं।

मिथुना ! सब को जान-बूझ उससे विरक्त हो और उसको छोड़ें दुखों का क्षय करना सम्भव है।

मिथुना ! किन्तु सब को ?

जो बहुत है जो रूप है जो बहुत विद्या है और जो बहुविद्या से जानने योग्य बर्त है ।

जो श्रोत्र । प्राण । विद्या । काया ।

जो मन है जो बर्त है जो महाविद्या है और जो महाविद्या से जानने योग्य बर्त है ।

मिथुना ! इन्हीं सब का जान-बूझ उससे विरक्त हो और उनका छोड़ें दुखों का क्षय करना सम्भव है।

### ४६ आदिषु सूत्र ( ३४ १ ३ ६ )

सब अच्छे हैं

एक समय भगवान् इन्द्र मिथुना के साथ श्यामा में श्यामासीस पहाड़ पर विहार करते थे।

वहाँ भगवान् ने मिथुना को ध्यामन्त्रित किया मिथुना ! सब आदिषु हैं। मिथुना ! क्या सब आदिषु हैं ?

मिथुना ! बहुत हैं आदिषु हैं। रूप आदिषु हैं। बहुविद्या आदिषु हैं। बहु संस्पर्श आदिषु हैं।

जो बहु संस्पर्श के प्रत्यय से उत्पन्न होनेवाली सुख दुःख या अनुकूल-सुख बचना है वह भी आदिषु हैं।

किन्तु आदिषु हैं ? शान्ति व श्रेयसि से मोक्षसि व आदिषु हैं। आदिषु स जरा से मृत्यु से शोक व परिशेष से दुःख से दीर्घमरण से और जयाजयों से ( व पराजयों से ) आदिषु हैं—देखा मैं कहता हूँ।

श्रोत्र आदिस है '। प्राण' । जिह्वा । काया' ।

मन आदिस है । धर्म आदिस है । मनोविज्ञान आदिस है । मन सस्पर्श आदिस है । जो यह मन सस्पर्श के प्रत्यय मे उत्पन्न होने वाली सुख, दुःख, और अदुःख-सुख वेदना है वह भी आदिस है ।

किससे आदिस है ? रागाग्नि से, द्वेषाग्नि से, मोहाग्नि से आदिस है । जाति, जरा, मृत्यु ' उपायासों से आदिस है—ऐसा मैं कहता हूँ ।

भिक्षुओं ! यह जान, पण्डित आर्यशावक चक्षु में भी निर्वेद करता है । रूपों में भी निर्वेद करता है । चक्षुर्विज्ञान में भी निर्वेद करता है । चक्षु सस्पर्श में भी जो चक्षु संस्पर्श के प्रत्यय मे उत्पन्न होने वाली वेदना है उममें भी निर्वेद करता है ।

श्रोत्र में भी निर्वेद करता है ' । प्राण । जिह्वा । काया । मन , जो मन सस्पर्श के प्रत्यय मे उत्पन्न होने वाली वेदना है उममें भी निर्वेद करता है ।

निर्वेद करने से रागरहित हो जाता है । रागरहित होने से विमुक्त हो जाता है । विमुक्त हो जाने से 'विमुक्त हो गया' ऐसा ज्ञान होता है । जाति क्षीण हुई, ब्रह्मचर्य पूरा हो गया । जान लेता है ।

भगवान् यह बोले । सतुष्ट हो कर भिक्षुओं ने भगवान् के कहे का अभिनन्दन किया ।

भगवान् के इस धर्मोपदेश करने पर उन हजार भिक्षुओं के चित्त उपादान-रहित हो आश्रवों से मुक्त हो गये ।

### § ७ अन्धभूत सुक्त ( ३४ १ ३ ७ )

सब कुछ अन्धा है

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय भगवान् राजगृह में बेलुचन कलन्दकनिवाप में विहार करते थे ।

वहाँ, भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया—भिक्षुओं ! सब कुछ अन्धा बना हुआ है ।

भिक्षुओं ! क्या अन्धा बना हुआ है ।

भिक्षुओं ! चक्षु अन्धा बना हुआ है । रूप अन्धे बने हैं । चक्षु-विज्ञान अन्धा बना है । चक्षु-सस्पर्श अन्धा बना है । यह जो चक्षु-संस्पर्श के प्रत्यय मे उत्पन्न होनेवाली वेदना है वह भी अन्धी बनी है ।

किससे अन्धा बना हुआ है ? जाति, जरा उपायास से अन्धा बना है—ऐसा मैं कहता हूँ ।

श्रोत्र अन्धा । प्राण । जिह्वा । काया ।

मन अन्धा बना है । धर्म अन्धे बने हैं । मनोविज्ञान अन्धा बना है । मन सस्पर्श अन्धा बना है । जो मन सस्पर्श के प्रत्यय मे उत्पन्न होनेवाली वेदना है वह भी अन्धी बनी है ।

भिक्षुओं ! इन्हे जान, पण्डित आर्यशावक जाति क्षीण हुई जान लेता है ।

### § ८. सारूप्य सुक्त ( ३४ १ ३ ८ )

सभी मान्यताओं का नाश-मार्ग

भिक्षुओं ! सभी मानने के नाश करनेवाले सारूप्य मार्ग का उपदेश करेगा । उन्हे सुनो ।

भिक्षुओं ! सभी मानने का नाश करनेवाला मार्ग क्या है ? भिक्षुओं ! भिक्षु चक्षु की नहीं मानता है, चक्षु में नहीं मानता है, चक्षु करके नहीं मानता है, चक्षु मेरा है ऐसा नहीं मानता है । रूप को नहीं मानता है, रूपों में नहीं मानता है, रूप करके नहीं मानता है । चक्षु-विज्ञान । चक्षु-संस्पर्श ।



जो बभ्रु-संस्पर्श के प्रत्यय से बेचना उत्पन्न होती है उसे नहीं मानता है उसमें नहीं मानता है बेसा करके नहीं मानता है वह मेरा है यह भी नहीं मानता है ।

श्रीमन् को नहीं मानता है । प्राण । विद्युत् । काया । मन को नहीं मानता है; भ्रमों में नहीं मानता है; मन करके नहीं मानता है; मन मरा है पूसा नहीं मानता है । ब्रह्मों को नहीं मानता है । मनोविज्ञान । मना-संस्पर्श । जो मना-संस्पर्श के प्रत्यय से बेचना उत्पन्न होती है उसे नहीं मानता है उसमें नहीं मानता है, बसा करके नहीं मानता है यह मेरा है यह भी नहीं मानता है ।

सब नहीं मानता है; सब में नहीं मानता है; सब करके नहीं मानता है; सब मेरा है वह नहीं मानता है ।

यह इस प्रकार नहीं मानते हुये संसार में नहीं उपादान नहीं करता । कहीं उपादान नहीं करने से परित्रास नहीं करता । परित्रास नहीं करने से अपने भीतर ही भीतर निर्वाण या केता है । जाति शीघ्र हुई ऐसा जाना जाता है ।

मिथुभो ! यही सब मानने का नाश करनेवाला मार्ग है ।

### § ९ सप्पाय सुत्त ( ३४ < ३ ९ )

#### सभी मान्यताओं का नाश मार्ग

मिथुभो ! सभी मानने के नाश करनेवाले सप्पाय मार्ग का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

मिथुभो ! सभी मानने का नाश करनेवाला सप्पाय मार्ग क्या है ? मिथुभो ! मिथु बभ्रु को नहीं मानता है । कर्पांडो । बभ्रु विज्ञान को । बभ्रु-संस्पर्श का । जो बभ्रु-संस्पर्श के प्रत्यय से उत्पन्न होनेवाली बेचना है उसको नहीं मानता है ।

मिथुभो ! किमही मानता है किममें मानता है जो करके मानता है विसे "मेरा है" ऐसा मानता है वह उसका अभ्यधा हो जाता है (= बद्ध जाता है) । अभ्यधा हो जानेवाले संसार के शीघ्र संसार ही का अभिगमन करते हैं ।

धीम मन ।

मिथुभो ! जो इन्द्रज्योतिष आचलन है उसे भी नहीं मानता है उसमें भी नहीं मानता है बीसा करके भी नहीं मानता है वह मेरा है यह भी नहीं मानता है । इस प्रकार नहीं मानते हुये संसार में वह कहीं उपादान नहीं करता । उपादान नहीं करने से वह कहीं त्रास नहीं करता । परित्रास नहीं करने से वह अपने भीतर ही भीतर निर्वाण या केता है । जाति शीघ्र हुई

मिथुभो ! यही सभी मानने का नाश करनेवाला सप्पाय मार्ग है ।

### § १० सप्पाय सुत्त ( ३४ १ ३ १० )

#### सभी मान्यताओं का नाश-मार्ग

मिथुभो ! सभी मानने के नाश करनेवाले सप्पाय मार्ग का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

मिथुभो ! सभी मानने का नाश करनेवाला सप्पाय मार्ग क्या है ?

मिथुभो ! ना सुय क्या समझे ही यधु निच है या अतिथ ।

अतिथ भन्ने !

हा अतिथ है वह तु न है वा तुल ?

दुक् भन्ने !

जो अनित्य, दुःख और परिवर्तनशील है उसे क्या होगा ममज्ञाना ठीक है—यह मेरा है, यह मैं हूँ, यह मेरा आत्मा है ?

नहीं भन्ते !

रूप • , चक्षु-विज्ञान , चक्षु-संस्पर्श चक्षु-सम्पर्श के प्रत्यय से उत्पन्न होनेवाली ••• वेदना नित्य है या अनित्य ?

अनित्य भन्ते ! ••

श्रोत्र • । घ्राण • । जिह्वा • । काया ••• । मन • ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक चक्षु में भी निवेद करता है । रूप में •• । चक्षु विज्ञान में भी • । चक्षु संस्पर्श में भी • । चक्षु संस्पर्श के प्रत्यय से जो वेदना उत्पन्न होती है उसमें भी निवेद करता है ।

श्रोत्र • । घ्राण • । जिह्वा • । काया • । मन में भी निवेद करता है, धर्मों में भी • , मनो-विज्ञान में भी • , मन संस्पर्श में भी • , मन संस्पर्श के प्रत्यय से जो वेदना उत्पन्न होती है उसमें भी निवेद करता है ।

निवेद करने से रागरहित होता है । रागरहित होने से विमुक्त हो जाता है । विमुक्त होने से 'विमुक्त हो गया' ऐसा ज्ञान उत्पन्न होता है । जाति क्षीण हुई ।

भिक्षुओ ! यही सभी मानने का नाश करनेवाला समाय मार्ग है ।

सर्व धर्म समाप्त

## चौथा भाग

### जातिधर्म वर्ग

§ १ जाति सुप्त ( ३४ १ ४ १ )

सभी जातिधर्मों हैं

भावस्ती ।

मिथुनो ! सब जातिधर्मों ( = इतरप होने के स्वभाववाला ) हैं । मिथुनो ! जातिधर्मों क्या सब हैं ?

मिथुनो ! बहुत जातिधर्मों हैं । रूप जातिधर्मों हैं । -विज्ञान जातिधर्मों हैं । बहुत संस्पर्श । जो बहुत-संस्पर्श के प्रत्यय से बेदना उत्पन्न होती है वह भी जातिधर्मों हैं ।

मोक्ष । प्रान । विद्या । कर्मा । मन जातिधर्मों हैं । धर्म जातिधर्मों हैं । मनोविज्ञान । मन-संस्पर्श । जो मन-संस्पर्श के प्रत्यय से बेदना उत्पन्न होती है वह भी जातिधर्मों हैं ।

मिथुनो ! इसे जान पवित्रत धर्मभावक जाति धर्म हो गई । जान केया है ।

§ २-१० अरा-क्याधि मरमादयो सुप्तन्ता ( ३४ १ ४ २-१० )

सभी अराधर्मों हैं

मिथुनो ! सब अराधर्मों हैं । मिथुनो ! सब व्याधिधर्मों हैं । मिथुनो ! सब मरमधर्मों हैं । मिथुनो ! सब लोकधर्मों हैं । मिथुनो ! सब संकषाधर्मों हैं । मिथुनो ! सब अणधर्मों हैं ।

मिथुनो ! सब अणधर्मों हैं । मिथुनो ! सब उग्रधर्मधर्मों हैं । मिथुनो ! सब विरोधधर्मों हैं ।

जातिधर्म वर्ग समाप्त

## पाँचवाँ भाग

### अनित्य वर्ग

§ १-१०, अनिच्च सुत्त ( ३४. १. ५. १-१० )

सभी अनित्य है

धावस्ती ।

भिक्षुओ ! सभी अनित्य है ॥

भिक्षुओ ! सभी दुःख है ॥

भिक्षुओ ! सभी अनात्म है ॥

भिक्षुओ ! सभी अभिशेष है ॥

भिक्षुओ ! सभी परिशेष है ॥

भिक्षुओ ! सभी प्रहातव्य है ॥

भिक्षुओ ! सभी साक्षात् करने योग्य है ॥

भिक्षुओ ! सभी जानने वृत्तने के योग्य है ॥

भिक्षुओ ! सभी उपद्रव-पूर्ण है ॥

भिक्षुओ ! सभी उपसृष्ट ( =परेशान ) है ॥

अनित्य वर्ग समाप्त  
प्रथम पण्णासक समाप्त

---

# द्वितीय पण्णासक

## पहला भाग

### अधिष्ठा घर्ग

§ १ अधिष्ठा सुत्त ( २४ २ १ १ )

किसके ज्ञान से विद्या की उत्पत्ति ?

भायस्ती ।

तब कोई सिद्धु बहूँ भगवान् ये बहूँ जाबा भीर भगवान् का अभिवाचन कर एक ओर बैठ गया । एक ओर बैठ वह सिद्धु भगवान् से बोला 'भग्ने ! क्या ज्ञान और देव देने से अधिष्ठा प्रहीण होती है और विद्या उत्पन्न होती है ?

सिद्धु ! षड्धु को अभित्य ज्ञान और देव देने से अधिष्ठा प्रहीण होती है और विद्या उत्पन्न होती है । क्या को अभित्य ज्ञान और देव देने से । षड्धु विज्ञान को । षड्धुसंस्पर्श को । जो षड्धुसंस्पर्श के प्रत्यय से वेदना उत्पन्न होती है उसको अभित्य ज्ञान और देव देने से अधिष्ठा प्रहीण होती है और विद्या उत्पन्न होती है ।

श्रोत्र । प्राण । शिद्धा । क्पवा । मन को अभित्य ज्ञान और देव देने से अधिष्ठा प्रहीण होती है और विद्या उत्पन्न होती है । धर्मों को अभित्य ज्ञान और देव देने से । महाविज्ञान को । महासंस्पर्श को । जो धर्मसंस्पर्श के प्रत्यय से वेदना उत्पन्न होती है उसको अभित्य ज्ञान और देव देने से अधिष्ठा प्रहीण होती है और विद्या उत्पन्न होती है ।

सिद्धु ! हमी को ज्ञान और देव देने से अधिष्ठा प्रहीण होती है और विद्या उत्पन्न होती है ।

§ २ सम्प्रोखन सुत्त ( २४ २ १ २ )

संयोगों का प्रहाण

भग्ने ! क्या ज्ञान और देव देने से सभी संयोग ( = सम्भव ) प्रहीण होते हैं ?

सिद्धु ! षड्धु को अभित्य ज्ञान और देव देने से सभी संयोग प्रहीण होते हैं । रूप का । षड्धुविज्ञान को । षड्धुसंस्पर्श को । वेदना उत्पन्न होती है उसको । श्रोत्र मन ।

सिद्धु ! हमी को ज्ञान और देव देने से सभी संयोग प्रहीण होते हैं ।

§ ३ सम्प्रोखन सुत्त ( २४ २ १ ३ )

संयोगों का प्रहाण

भग्ने ! क्या ज्ञान और देव देने से सभी संयोग विद्या की प्राप्त होते हैं ?

सिद्धु ! षड्धु का जगत्तम ज्ञान और देव देने से सभी संयोग विद्या की प्राप्त होते हैं । रूप की । षड्धु-विज्ञान को । षड्धुसंस्पर्श को । जो षड्धुसंस्पर्श के प्रत्यय से । वेदना उत्पन्न होती है उसको जगत्तम ज्ञान और देव देने से सभी संयोग विद्या की प्राप्त होते हैं । श्रोत्र" मन" ।

सिद्धु ! हमी ज्ञान और देव देने से सभी संयोग विद्या की प्राप्त होते हैं ।

## § ४-५, आमव सुत्त ( ३४ २ १. ४-५ )

## आश्रयों का प्रहाण

भन्ते ! क्या जान और देग लेने से आश्रय प्रहाण होते हैं ?

भन्ते ! क्या जान और देग लेने से आश्रय विनाश को प्राप्त होते हैं ?

## § ६-७, अनुसय सुत्त ( ३४ २ १ ६-७ )

## अनुसय का प्रहाण

भन्ते ! क्या देग और जान लेने से अनुसय प्रहाण होते हैं ?

भन्ते ! क्या देग और जान लेने से अनुसय विनाश को प्राप्त होते हैं ?

## § ८, परिज्जा सुत्त ( ३४ २ १ ८ )

## उपादान परिजा

भिक्षुओ ! मैं तुम्हें सभी उपादान की परिजा के योग्य वस्तु का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओ ! सभी उपादान की परिजा के धर्म कौन हैं ? चक्षु और रूपों के प्रत्यय से चक्षु-विज्ञान उत्पन्न होता है । तीनों का मिलना स्पर्श है । स्पर्श के प्रत्यय से वेदना होती है ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक चक्षु में भी निर्वेद करता है । रूपों में भी । चक्षु-स्पर्श में भी । वेदना में भी निर्वेद करता है । निर्वेद करने से रागरहित होता है । रागरहित होने से विमुक्त होता है । विमुक्त होने से 'उपादान मुझे परिजात हो गया' ऐसा जान लेता है ।

ध्रोत्र और शब्दों के प्रत्यय से । घ्राण और गन्धों के प्रत्यय से । जिह्वा और रसों के प्रत्यय से । काया और स्पर्श के प्रत्यय से । मन और धर्मों के प्रत्यय से मनोविज्ञान उत्पन्न होता है । तीनों का मिलना स्पर्श है । स्पर्श के प्रत्यय से वेदना होती है ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक मन में भी निर्वेद करता है । धर्मों में भी । मनो-विज्ञान में भी । मन-स्पर्श में भी । वेदना में भी निर्वेद करता है । निर्वेद करने से रागरहित होता है । रागरहित होने से विमुक्त होता है । विमुक्त होने से 'उपादान मुझे परिजात हो गया' ऐसा जान लेता है ।

भिक्षुओ ! यही सभी उपादान की परिजा के योग्य वस्तु हैं ।

## § ९, परियादिन्न सुत्त ( ३४. २ १. ९ )

## सभी उपादानों का पर्यादान

भिक्षुओ ! सभी उपादानों के पर्यादान (= नाश) के धर्म का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओ ! चक्षु और रूपों के प्रत्यय से चक्षु-विज्ञान उत्पन्न होता है । तीनों का मिलना स्पर्श है । स्पर्श के प्रत्यय से वेदना होती है ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक चक्षु में निर्वेद करता है । वेदना में भी निर्वेद करता है । निर्वेद करने से रागरहित हो जाता है । रागरहित होने से विमुक्त हो जाता है । विमुक्त हो जाने से 'उपादान पर्यादान (= नष्ट) हो गये' ऐसा जान लेता है ।

ध्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन ।

भिक्षुओ ! यही सभी उपादानों के पर्यादान के धर्म हैं ।

## ५ १० परियादिभ सुच ( ३४ २ १ १० )

### समी उपादानों का पर्यादान

मिथुनो ! समी उपादानों के पर्यादान के धर्म का उपवेश करूँगा । उसे तुमो ।

मिथुनो ! समी उपादानों के पर्यादान का धर्म क्या है ?

मिथुनो ! तो तुम क्या समझते हो बहुत मित्य है या अनित्य ?

अमित्य मन्ते !

तो अनित्य है वह दुःख है या सुख ?

दुःख मन्ते !

हां अनित्य दुःख और परिवर्तनशील है क्या उसे ऐसा समझना ठीक है—वह मेरा है वह मैं हूँ, वह मेरा आत्मा है ?

नहीं मन्ते !

रूप ; अक्षुब्धभाव ; अक्षुब्धस्पर्श ; उत्पन्न होनेवाली वेदना है वह मित्य है या अनित्य ?

अमित्य मन्ते !

घोर । प्राण । विद्धा । काया । मय ?

अमित्य मन्ते !

तो अनित्य है वह दुःख है या सुख ?

दुःख मन्ते !

तो अनित्य दुःख और परिवर्तनशील है क्या उसे ऐसा समझना ठीक है—वह मेरा है वह मैं हूँ, वह मेरा आत्मा है ?

नहीं मन्ते !

मिथुनो ! इस अन परिदल आर्कशावक अति धीन हुई जान कता है ।

मिथुनो ! यही समी उपादान के पर्यादान का धर्म है ।

अभिधा धर्म समाप्त

—

## दूसरा भाग

### मृगजाल वर्ग

§ १. मिगजाल सुत्त ( ३४. २. २ १ )

एक विहारी

श्रावस्ती ।

एक ओर बैठ, आयुष्मान् मृगजाल भगवान् से बोले, “भन्ते ! लोग एक-विहारी, एक-विहारी” कहा करते हैं । भन्ते ! कोई कैसे एकविहारी होता है, और कोई कैसे सद्धितीय विहारी होता है ?”

मृगजाल ! ऐसे चक्षुविज्ञेय रूप है, जो अभीष्ट, सुन्दर, लुभावने, प्यारे, इच्छा पैदा कर देने वाले, और राग बढ़ानेवाले है । कोई उमका अभिनन्दन करे, उमकी बड़ाई करे, और उसमें लग्न होकर रहे । इस तरह, उसको तृष्णा उत्पन्न होती है । तृष्णा के होने से सराग होता है । सराग होने से सयोग होता है । मृगजाल ! तृष्णा के जाल में फँसा हुआ भिक्षु सद्धितीय विहार करता है ।

ऐसे श्रोत्रविज्ञेय शब्द हैं । ऐसे मनोविज्ञेय धर्म हैं ।

मृगजाल ! इस प्रकार विहार करनेवाला भिक्षु भले ही नगर से दूर किसी शान्त, विचेक और ध्यान-भास के योग्य आरण्य में रहे, किन्तु वह सद्धितीयविहारी ही कहा जायगा ।

सो क्यों ? तृष्णा जो उसके साथ द्वितीय होकर रहती है वह प्रहीण नहीं हुई है, इसलिये वह सद्धितीयविहारी ही कहा जायगा ।

मृगजाल ! ऐसे चक्षुविज्ञेय रूप हैं । भिक्षु उसका अभिनन्दन नहीं करे, उसकी बड़ाई नहीं करे, और उसमें लग्न होकर नहीं रहे । इस तरह, उसकी तृष्णा निरुद्ध हो जाती है । तृष्णा के नहीं रहने से सराग नहीं होता है । सराग नहीं होने से सयोग नहीं होता है । मृगजाल ! तृष्णा और सयोगन से छूट वह भिक्षु एकविहारी कहा जाता है ।

ऐसे श्रोत्रविज्ञेय शब्द हैं । ऐसे मनोविज्ञेय धर्म हैं । मृगजाल ! तृष्णा और सयोगन से छूट वह भिक्षु एकविहारी कहा जाता है ।

मृगजाल ! यदि वह भिक्षु भले ही भिक्षु, भिक्षुणी, उपासक, उपासिका, राजा, राजमन्त्री, तैथिक तथा तैथिक-आवकों से आकीर्ण किसी गाँव के मध्य में रहे, वह एकविहारी ही कहा जायगा ।

सो क्यों ?

तृष्णा जो उसके साथ द्वितीय होकर थी वह प्रहीण हो गई, इसलिये वह एकविहारी ही कहा जाता है ।

§ २ मिगजाल सुत्त ( ३४ २ २ २ )

तृष्णा-निरोध से दुःख का श्रन्त

एक ओर बैठ, आयुष्मान् मृगजाल भगवान् से बोले, “भन्ते ! भगवान् सुझे सक्षेप से धर्मों-पदेश करें, जिसे सुन मैं अकेला, अलग, अप्रसक्त, स्वयमशक्त, और प्रशिताम होकर विहार करूँ ।



सृगजाल ! बहुविधेय रूप है । मिथु उसका अभिमान्यन करता है । इस तरह उसे गुप्ता सम्पन्न होती है । सृगजाल ! गुप्ता के समुद्रय सं युक्त का समुद्रय होता है—गुप्ता में कहता हूँ । धात्रविजये धार्य है । मनाविजये धर्म है । सृगजाल ! गुप्ता के समुद्रय से युक्त का समुद्रय होता है—गुप्ता में कहता हूँ ।

सृगजाल ! बहुविधेय रूप है । मिथु! <sup>३३</sup> <sup>३३</sup> अभिमान्यन बड़ी करता है । इस तरह उसकी गुप्ता निरह हो जाती है । सृगजाल ! गुप्ता के विरोध सं युक्त का विरोध होता है—ऐसा मैं कहता हूँ धात्रविजये धार्य है । मनाविजये धर्म है । सृगजाल ! गुप्ता के विरोध सं युक्त का विरोध होता है—गुप्ता में कहता हूँ ।

तब आयुष्मान् सृगजाल भगवान् के कृद् का अभिमान्यन और अनुभोयन कर आसम से उठ भगवान् का अभिवादन और प्रदक्षिणा कर पस गये ।

तब, आयुष्मान् सृगजाल ने अकेला, अकेला अग्रमत्त मयमसीक भार प्रद्विताम हा विहार करते हुये सीम ही उन अनुत्तर महाधर्म की मित्रि का देवत देवते कृय तात् और माहात् कर प्राप्त कर लिया मिमके लिख बुद्धयुग पर म ने पर हा भरती तरह प्रयत्न होते हैं । जाते छीण हुई, महाधर्म पूरा हो गया जो करता था या कर लिया युव जन्म होते या नहीं—आव लिया ।

आयुष्मान् सृगजाल जहनों में एक हुये ।

३३ ममिदि मुत्त ( ३५ ० २ ३ )

मार कैला होता है ?

एक ममय भगवान् राजगृह में येशुपन कलम्बकनिषाय में विहार करते थे ।

एक भोर बेट आयुष्मान् ममिदि भगवान् म बोल 'मम ! म्मो - मार मार' बड़ी बरत है । मम ! मार कैला होता है या मार कैम जाता जाता है ?

ममिदि ! जहाँ यशु है रूप है बहुविजय है बहुविजय म जातय योग्य धर्म है बड़ी मार है या मार जाता जाता है ।

ममिदि ! जहाँ भोग है गन् है । जहाँ मम है धर्म है ।

ममिदि ! जहाँ यशु नहीं है बहाँ मार मी नहीं है या मार जाता भी नहीं जाता है ।

ममिदि ! जहाँ काय नहीं है जहाँ मन नहीं है यहाँ मार भी नहीं है या मार जाता भी नहीं जाता है ।

३४-६ ममिदि मुत्त ( ३५ ० २-६ )

मरय युग्य मार

मम ! मम "मम मम" बडा बरत है [ मार के ममान ही ] ।

मम ! मम "दुग दुग" बडा बरत है ।

मम ! मम "मोद मोद" बडा बरत है " " ।

३७ उपमेय मुत्त ( ३५ ० ३ )

आयुष्मान् उपमेय का नाम ठारा डारा जाता

एक ममय आयुष्मान् ममिदि और आयुष्मान् उपमेय राजगृह में ममममिदि ममिदि ममिदि में इतिवत्त में विहार करने थे ।

इत ममय आयुष्मान् उपमेय के ममम में ममिदि ममिदि ममिदि ।

तत्र, आयुमान् उपमेन न भिक्षुणां कां आनन्दिन विद्या, 'विद्युजा ! तुने, एव शरीर को ग्याट पर लिटा थापर ७ चले । या शरीर एव मुह्ये भुम्मे कां तगा विपर जायगा ।

या वदने पर, आयुमान् मारिपुत्र आयुमान् उपमेन न चले "दस लोम आयुमान् उपमेन के शरीर को विरल, या इन्द्रियों या विपरिणत नर्त जेतने ते ।

तत्र, आयुमान् उपमेन चले—भिक्षुणां ! मुने एव शरीर कां ग्याट पर लिटा थापर ले चले । या शरीर एव मुह्ये भुम्मे कां तगा विपर जायगा ।

आयुम मारिपुत्र ! जिनमे ऐसा होगा या—म चक्षु है, या मेरा चक्षु है 'मै मन है, या मेरा मन है—उसी का शरीर विरल होता है, या इन्द्रियों विपरिणत होता है ।

जलुम मारिपुत्र ! मुने ऐसा नर्त होता है, तो मेरा शरीर जैसे विरल होगा, इन्द्रियों कसे विपरिणत होंगी ॥

आयुमान् उपमेन के आशर, ममकार, मानानुभव उर्वरणात् से इतने मष्ट कर किये गये थे कि उन्हे ऐसा नर्त होता या वि—मै चक्षु है, या मेरा चक्षु है—मै मन है, या मेरा मन है ।

तव, भिक्षु लोम आयुमान् उपमेन न शरीर कां ग्याट पर लिटा थापर ले अत्ये । आयुमान् उपमेन या शरीर कां मुह्ये नर भुम्मे कां तगा विपर गया ।

## § ८. उपधान सुच ( ३४ २ २. ८ )

### सादृष्टिक-धर्म

.. एक और त्रैठ, आयुमान् उपधान भगवान् से बोले, "भन्ते ! लोम "सादृष्टिक धर्म, सादृष्टिक धर्म "का कहते हैं । भन्ते ! सादृष्टिक धर्म कैसे होता है ?—अनाधिक=( बिना डेरी के प्राप्त होनेवाला ), एतिपम्यक (=जो लोगों को पुकार पुकार कर विमाने के योग्य है, कि—आओ देखो । ) आपनाधिक (=निर्वाण की ओर ले जानेवाला ), और विज्ञां के द्वारा अपने भीतर ही भीतर अनुमान किया जानेवाला ?

उपधान ! चक्षु से रूप को देख, भिक्षु को रूप का आर रूपराग का अनुभव होता है । यदि अपने भीतर रूपों में राग है तो यह जानता है कि मुझे अपने भीतर रूपों में राग है । उपधान ! इसी लिये धर्म सादृष्टिक, अकालिक है ।

श्रोत्र से शब्दों को सुन । मन से धर्मों को जान, भिक्षु को धर्म का और धर्मराग का अनुभव होता है । यदि अपने भीतर धर्मों में राग है तो यह जानता है कि मुझे अपने भीतर धर्मों में राग है । उपधान ! इसीलिये, धर्म सादृष्टिक, अकालिक है ।

उपधान ! चक्षु से रूप को देख, किसी भिक्षु को रूप का अनुभव होता है, किन्तु रूपराग का नहीं । यदि अपने भीतर रूपों में राग नहीं है तो यह जानता है कि मुझे अपने भीतर रूपों में राग नहीं है । उपधान ! इसीलिये भी, धर्म सादृष्टिक, अकालिक है ।

श्रोत्र । मनसे "। यदि अपने भीतर धर्मों में राग नहीं है तो यह जानता है कि मुझे अपने भीतर धर्मों में राग नहीं है । उपधान ! इसीलिये भी, धर्म सादृष्टिक, अकालिक ।

## § ९. उद्यमसाधनानि सुच ( ३४ २ २ ९ )

### उसका ब्रह्मचर्य बेकार है

भिक्षुओं ! जो भिक्षु छ स्पर्शागतनों के समुदय, अम्ल होने, आस्वाद, दौष, और मोक्ष को पयार्थतः नहीं जानता है उसका ब्रह्मचर्य बेकार है, वह इस धर्मविनय से बहुत दूर है ।

पह कहने पर कोई मिथु मगबाद् से बोला 'भग्ने ! डीक बह नहीं ममसा । भग्ने ! मैं का स्पर्शापतनो के समुद्र भग्ने होने आम्बाद् होय भीर मांश का पथार्थनः नहीं जानता हूँ ।

मिथु ! क्या तुम ऐसा ममसते हो कि बहुत मेरा ई मैं हूँ या मेरा आत्मा ई ?

नहीं भग्ने !

मिथु ! डीक ई इन्ही को पथार्थनः जान मुदह होगा । वही दुःख का मम ई ।

भोक् । प्राण । जिह्वा । काया । मन ।

### § १० छफस्सापतनिक सुत्त ( ३४ ० ० १० )

उसका प्रश्नार्थ्य संकार ई

बह इस धर्मविनय मे बहुत दूर है ।

पह कहने पर कोई मिथु मगबाद् से बोला 'भग्ने ! नहीं जानता हूँ ?

मिथु ! तुम जानते हो न कि बहुत मेरा नहीं ई मैं नहीं ई मेरा आत्मा नहीं ई ?

हाँ भग्ने !

मिथु ! डीक ई । तुम इस पथार्थनः प्रज्ञापूर्वक ममसत था । इस तरह तुम्हारा प्रथम स्पर्शापतन प्रहीन हो जायगा । अविष्य मे कमी उत्पन्न नहीं होगा ।

भोक् । प्राण । जिह्वा । काया । मन । इस तरह तुम्हारा छटौं स्पर्शापतन प्रहीन हो जायगा । अविष्य मे कमी उत्पन्न नहीं होगा ।

### § ११ छफस्सापतनिक सुत्त ( ३४ २ ० ११ )

उसका प्रश्नार्थ्य संकार ई

बह इस धर्मविनय मे बहुत दूर है ।

'भग्ने ! नहीं जानता हूँ ।

मिथु ! तो तुम क्या ममसते हो बहुत विनय है या अविनय ?

अविनय भग्ने !

का अविनय है बह दुःख है या सुख ?

दुःख भग्ने !

को अविनय दुःख भीर परिवर्तवशीक है क्या उन्न ऐसा सज्जना डीक है—बह मेरा है ?

नहीं भग्ने !

भोक् । प्राण । जिह्वा । काया । मन ।

मिथु ! इन्ही जान परिवर्तवशीक बहुत मे भी निर्बेद करता है । मन मे भी निर्बेद करता है

आदि एवम् हूँ । जान केता है ।

मृगच्छाक वर्ग समाप्त

## तीसरा भाग

### ग्लान वर्ग

§ १ ग्लान सुत्त ( ३४ २. ३ १ )

बुद्धधर्म राग से मुक्ति के लिए

श्रावस्ती ।

एक और बैठ, वह भिक्षु भगवान् से बोला, “भन्ते ! अमुरु विहार में एक नया साधारण भिक्षु हुआ वीमार पड़ा है । यदि भगवान् वहाँ चले जहाँ वह भिक्षु है तो यही कृपा होती ।

तब, भगवान् नये, साधारण और वीमार की बात सुन जहाँ वह भिक्षु था वहाँ गये ।

उस भिक्षु ने भगवान् को दूर ही से आते देखा । देखकर, खाट थिलाने लगा ।

तब, भगवान् उस भिक्षु से बोले, “भिक्षु ! रहने दो, खाट मत चिछाओ । यहाँ आगन लगे हैं, मैं उन पर बैठ जाऊँगा । भगवान् थिले आसन पर बैठ गये ।

बैठ कर, भगवान् उस भिक्षु से बोले, “भिक्षु ! कहीं, तुम्हारी तवियत अच्छी तो है न ? तुम्हारा दुःख घट तो रहा है न ?

नहीं भन्ते मेरी तवियत अच्छी नहीं है । मेरा दुःख बढ़ ही रहा है, घटता नहीं है ।

भिक्षु ! तुम्हारे मन में कुछ पछतावा या मलाल तो नहीं न है ?

भन्ते ! मेरे मन में बहुत पछतावा और मलाल है ।

तुम्हें कहीं शील न पालन करने का आत्मपञ्चात्ताप तो नहीं हो रहा है ?

नहीं भन्ते !

भिक्षु ! तब, तुम्हारे मन में कैसा पछतावा या मलाल है ?

भन्ते ! मैं भगवान् के उपदिष्ट धर्म को शीलविशुद्धि के लिये नहीं समझता हूँ ।

भिक्षु ! यदि मेरे उपदिष्ट धर्म को तुम शीलविशुद्धि के लिए नहीं समझते हो, तो किस अर्थ के लिये समझते हो ?

भन्ते ! भगवान् के उपदिष्ट धर्म को मैं राग से छूटने के लिये समझता हूँ ।

ठीक है भिक्षु ! तुमने ठीक ही समझा है । राग से छूटने ही के लिये मैंने धर्म का उपदेश किया है ।

भिक्षु ! तुम क्या समझते हो चक्षु मित्य है या अनित्य ?

अनित्य भन्ते !

श्रोत्र , घ्राण , जिह्वा , काया , मन ?

अनित्य भन्ते !

जो अनित्य है वह दुःख है या सुख ?

दुःख भन्ते !

जो अनित्य, दुःख और परिवर्तनशील है उसे क्या ऐसा समझना चाहिये, “यह मेरा है ” ?

नहीं भन्ते !

भिक्षु ! इन्से जान, पण्डित आर्यश्रावक जाति क्षीण हुई जान लेता है ।

## § ९ लोक सुप्त ( ३१ ० ३ ९ )

लोक क्या है ?

एक बार बैठ वह मिथु मगधार् से बोला 'मन्ते ! लोग लोक कहा करते हैं। मन्ते ! क्या हाँसे 'लोक' कहा जाता है ?

मिथु ! सुखित होता है (=इच्छता पश्यता है) इसलिये 'लोक' कहा जाता है। क्या सुखित होता है ?

मिथु ! बहुत सुखित होता है। रूप । बहुविधता । बहुसंस्पर्श । 'वेदना' ।

मिथु ! सुखित हाँसा है, इसलिये 'लोक' कहा जाता है।

## § १० फग्गुन सुप्त ( ३४ ० ३ १० )

परिनिर्वाण-प्राप्त बुद्ध कैसे नहीं जा सकते

एक बार बैठ आयुष्मान् फग्गुन मगधार् से, बाक "मन्ते ! क्या ऐसा भी बहुत है जिससे अतीत=परिनिर्वाण पाये=छिन्न प्रपञ्च बुद्ध भी जाने का सके ?

आप्त । प्राय । विद्वान् । क्या । क्या ऐसा सब है जिससे अतीत=परिनिर्वाण पाये=छिन्न प्रपञ्च बुद्ध भी जाने का सके ?

नहीं कम्युव । ऐसा बहुत नहीं है जिससे अतीत=परिनिर्वाण पाये छिन्न प्रपञ्च । बुद्ध भी जाने का सके ।

अत्र मत् ।

महान वरा समाप्त

## चौथा भाग

### छन्द वर्ग

#### § १. प्रलोक सुक्त ( ३४ २ ४. १ )

लोक क्यों कहा जाता है ?

एक ओर बैठ, आयुष्मान् आनन्द भगवान् से बोले, “भन्ते ! लोग ‘लोक, लोक’ कहा करते हैं । भन्ते ! क्या होने से ‘लोक’ कहा जाता है ?”

आनन्द ! जो प्रलोकधर्मा (=नाशवान्) है वह आर्यविनय में लोक कहा जाता है । आनन्द ! प्रलोकधर्मा क्या है ?

आनन्द ! चक्षु प्रलोकधर्मा है । रूप प्रलोकधर्मा है । चक्षु-विज्ञान । चक्षु-संस्पर्श । वेदना ।

श्रोत्र मन ।

आनन्द ! जो प्रलोकधर्मा है वह आर्यविनय में लोक कहा जाता है ।

#### § २ सुञ्ज सुक्त ( ३४ २.४ २ )

लोक शून्य है

एक ओर बैठ, आयुष्मान् आनन्द भगवान् से बोले, “भन्ते ! लोग कहा करते हैं कि ‘लोक शून्य है’ । भन्ते ! क्या होने से लोक शून्य कहा जाता है ?”

आनन्द ! क्योंकि आत्मा या आत्मीय से शून्य है इसलिए लोक शून्य कहा जाता है । आनन्द ! आत्मा या आत्मीय से शून्य क्या है ?

आनन्द ! चक्षु आत्मा या आत्मीय से शून्य है । रूप । चक्षु-विज्ञान । चक्षु-संस्पर्श । वेदना ।

आनन्द ! क्योंकि आत्मा या आत्मीय से शून्य है इसलिये लोक शून्य कहा जाता है ।

#### § ३ संक्वित्त सुक्त ( ३४ २ ४ ३ )

अनित्य, दुःख

भगवान् से बोले, “भन्ते ! भगवान् मुझे संक्षेप से धर्म का उपदेश करें, जिसे सुन मैं अकेला, अलग-विहार करूँ ।”

आनन्द ! क्या समझते हो, चक्षु नित्य है या अनित्य ?

अनित्य भन्ते !

जो अनित्य है वह दुःख है या सुख ?

दुःख भन्ते !

जो अनित्य, दुःख और परिवर्तनशील है क्या उसे ऐसा समझना चाहिये—यह मेरा है—

भगवान् यह बाल । समुद्र हो मिथु न भगवान् के कहे का अभिनन्दन किया । इस धर्मोपदेश का मुन उर मिथु का रागरहित निर्मल धर्म-चक्षु उत्पन्न हो गया—जो कुछ समुद्रपथर्मा है सभी निरापधर्मा है ।

### § २ गिलान मुक्त ( ३४ ० ३ ० )

सुन्दधर्म निषाण के लिए

[ ठीक ऊपर जाता ]

मिथु ! यदि मर उपदिष्ट धर्म का नून शीलविमुक्ति के छिपे नहीं समझत हो ता किस भर्म के लिए समझत हो ?

मम ! भगवान् के उपदिष्ट धर्म को मैं उपादानरहित निर्वाण के लिए समझता हूँ ।

ठीक है मिथु ! तुमने ठीक ही समझा है । उपादानरहित निर्वाण ही के छिपे मैंने धर्म का उपदेश किया है ।

[ ऊपर जाता ]

भगवान् यह बाल । समुद्र हो मिथु न भगवान् के कहे का अभिनन्दन किया । इस धर्मोपदेश का मुन उर मिथु का चित्त उपादानरहित हो आधर्मों से विमुक्त हो गया ।

### § ३ राघ मुक्त ( ३४ ० ३ ३ )

अभित्य स इच्छा को हटाना

एक बार बंद आसुप्पारम् राघ भगवान् स बोल "मम ! भगवान् मुझे संसय स धर्मों वदस करें जिन मुन मैं अनेका अलग विहार करूँ ।

राघ ! जो अभित्य है उसके प्रति अपनी जगती इच्छा का हटाओ । राघ ! क्या अभित्य है ? राघ ! चक्षु अभित्य है उसके प्रति अपनी जगती इच्छा को हटाओ । रूप अभित्य है । चक्षु-विज्ञान । चक्षु मरपदा । वेदना । धीम मग ।

राघ ! जो अभित्य है उसके प्रति अपनी जगती इच्छा को हटाओ !

### § ४ राघ मुक्त ( ३४ ० ३ ४ )

सु ग स इच्छा का हटाना

राघ ! जो सु ग है उसके प्रति अपनी जगती इच्छा का हटाओ ।

### § ५ राघ मुक्त ( ३४ ० ३ ५ )

अमागम स इच्छा का हटाना

राघ ! जो अमागम है उसके प्रति अपनी जगती इच्छा का हटाओ ।

### § ६ अविद्या मुक्त ( ३४ ० ३ ६ )

अविद्या का प्रहाण

एक बार बंद बर मिथु भगवान् स बाला अगत । क्या काई तेरा एक धर्म है जिनके प्रहाण स मिथु का अविद्या प्रहाण हो जाती है और विद्या उत्पन्न होती है ?

हाँ मिथु ! क्या एक धर्म है जिनके प्रहाण से मिथु का अविद्या प्रहाण हो जाती है और विद्या उत्पन्न होती है ?

अम ! वह एक धर्म क्या है ?

भिक्षु ! वह एक धर्म अविद्या है जिसके प्रमाण यह है ।

भन्ते ! क्या जान और देख लेने से भिक्षु को अविद्या प्रमाण ही जाती है और विद्या उपपन्न होती है ?

भिक्षु ! वस्तु का अविद्या ज्ञान और देख लेने से भिक्षु को अविद्या प्रमाण ही जाती है और विद्या उपपन्न होती है ।

रूप" । चक्षु विज्ञान" । वस्तु सम्पन्न" । वेदना" ।

श्रोत्र" । घ्राण" । जिह्वा" । वायु" । मन" ।

भिक्षु ! हमें जान और देख भिक्षु को अविद्या प्रमाण होगा है और विद्या उपपन्न होती है ।

### § ७. अविज्जा सुत्त ( ३५ २ ३ ७ )

अविद्या का प्रमाण

[ उपर जग ]

भिक्षुओ ! भिक्षु एसा सुमता है—जसे अभिनिवेद्य के योग्य नहीं है, यहाँ जसे अभिनिवेद्य के योग्य नहीं है । वह सब धर्म का जानता है । वह सब धर्म को जान अच्छी तरह पहचानता है । सब धर्मको वह यहाँ निमित्तों को ज्ञानपूर्वक देख लेता है । वस्तु को ज्ञानपूर्वक देख लेता है । रूपों को । चक्षुविज्ञान को । श्रुत्यर्थों को । वेदना को ।

भिक्षु ! हमें जान और देख, भिक्षु को अविद्या प्रमाण जाती है और विद्या उपपन्न होती है ।

### § ८. भिक्षुसु मुत्त ( ३५ २ ३ ८ )

दुःख को समझने के लिए ब्रह्मचर्य-पालन

तब, कुछ भिक्षु जहाँ भगवान् से जाँचें, जहाँ भगवान् का अभिधादन कर एक और बैठ गये ।

एक और बैठ, ये भिक्षु भगवान् से बोले, "भन्ते ! दूसरे मतवाले साधु हम से पूछते हैं—

भन्ते ! हमण सौतम के शासन में आप लोग ब्रह्मचर्य-पालन क्यों करते हैं ?

भन्ते ! इस पर हम लोगों ने उन्हें उत्तर दिया, "आहुस ! दुःख को ठीक-ठीक समझ लेने के लिये हम लोग भगवान् के शासन में ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं ।

भन्ते ! इस प्रश्न का क्या उत्तर देकर हम लोगों ने भगवान् के सिद्धान्त का ठीक-ठीक तो प्रतिपादन किया न ?

भिक्षुओ ! इस प्रश्न का ऐसा उत्तर देकर तुम लोगों ने मेरे सिद्धान्त के अनुकूल ही कहा है ।

दुःख को ठीक-ठीक समझ लेने के लिये ही मेरे शासन में ब्रह्मचर्य-पालन किया जाता है ।

भिक्षुओ ! यदि दूसरे मतवाले साधु हमसे पूछें—आहुस ! यह दुःख क्या है जिसे ठीक-ठीक समझने के लिये श्रमण सौतम के शासन में ब्रह्मचर्य-पालन किया जाता है ?—तो तुम उन्हें ऐसा उत्तर देना —

आहुस ! चक्षु दुःख है, उसे ठीक-ठीक समझने के लिये श्रमण सौतम के शासन में ब्रह्मचर्य-पालन किया जाता है । रूप दुःख 'वेदना' । श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । वायु । मन ।

आहुस ! यही दुःख है, जिसे ठीक-ठीक समझने के लिये श्रमण सौतम के शासन में ब्रह्मचर्य-पालन किया जाता है ।



## § ९. लोक सुच ( ३७ = ३ ९ )

लोक क्या है ?

एक ओर बंद यह मिथु मगवान् मे बोला मन्ते । खोग 'लोक' काङ्क कर्दा करते है ।  
मन्ते । क्या हाल न 'लोक' कहा जाता है ?

मिथु ! सुखित हाता है ( = ककडता पलकता है ) इसकिये 'लोक' कर्दा जाता है । क्या सुखित होता है ?

मिथु ! बहुत सुखित होता है । रूप । बहुविज्ञान । बहुसंस्पर्श । वेदना ।

मिथु ! सुखित हाता है, इसकिये 'लोक' कहा जाता है ।

## § १०. फगुन सुच ( ३४ = ३ १० )

परिनिर्वाण प्राप्त कुछ बच्चे नहीं जा सक्ते

एक ओर बंद, धायुप्मान् फगुन मगवान् सँबोले "मन्ते । क्या जमा भी बहुत है जिससे  
अर्थात्=परिनिर्वाण पाये=छिन्न प्रपञ्च कुछ भी जाने जा सकें ?

मोक्ष । प्राण । विद्वान् । वाया । क्या मृदा मन है जिससे अर्थात्=परिनिर्वाण पाये=  
छिन्नप्रपञ्च "कुछ भी जाने जा सकें ?

नहीं फगुन । ऐसा बहुत नहीं है जिससे अर्थात्=परिनिर्वाण पाये छिन्नप्रपञ्च । कुछ भी जाने  
जा सकें ।

प्राण मन ।

स्थान यग समाप्त

## चौथा भाग

### छन्द वर्ग

#### § १. पलोक सुत्त ( ३४. २. ४ १ )

##### लोक क्यों कहा जाता है ?

एक ओर बैठ, आयुष्मान् आनन्द भगवान् से बोले, “भन्ते ! लोग “लोक, लोक” कहा करते हैं। भन्ते ! क्या होने से ‘लोक’ कहा जाता है ?”

आनन्द ! जो प्रलोकधर्मा ( =नाशवान् ) है वह आर्यविनय में लोक कहा जाता है । आनन्द ! प्रलोकधर्मा क्या है ?

आनन्द ! चक्षु प्रलोकधर्मा है । रूप प्रलोकधर्मा है । चक्षु-विज्ञान । चक्षु-संस्पर्श । वेदना ।

श्रोत्र मन ।

आनन्द ! जो प्रलोकधर्मा है वह आर्यविनय में लोक कहा जाता है ।

#### § २ सुञ्ज सुत्त ( ३४ २.४ २ )

##### लोक शून्य है

एक ओर बैठ, आयुष्मान् आनन्द भगवान् से बोले, “भन्ते ! लोग कहा करते हैं कि “लोक शून्य है” । भन्ते ! क्या होने से लोक शून्य कहा जाता है ?”

आनन्द ! क्योंकि आत्मा या आत्मीय से शून्य है इसलिये लोक शून्य कहा जाता है । आनन्द ! आत्मा या आत्मीय से शून्य क्या है ?

आनन्द ! चक्षु आत्मा या आत्मीय से शून्य है । रूप । चक्षु-विज्ञान । चक्षु-संस्पर्श । वेदना ।

आनन्द ! क्योंकि आत्मा या आत्मीय से शून्य है इसलिये लोक शून्य कहा जाता है ।

#### § ३ संविखच्च सुत्त ( ३४ २ ४ - ३ )

##### अनित्य, दुःख

भगवान् से बोले, “भन्ते ! भगवान् मुझे सक्षेप से धर्म का उपदेश करें, जिसे सुन मैं अकेला, अलग-अलग विहार करूँ ।

आनन्द ! क्या समग्रते ही, चक्षु नित्य है या अनित्य ?

अनित्य भन्ते !

जो अनित्य है वह दुःख है या सुख ?

दुःख भन्ते !

जो अनित्य, दुःख और परिवर्तनशील है क्या उसे ऐसा समझना चाहिये—यह मेरा है ?

नहीं मन्ते ।

कृप , बहु विज्ञान , बहु-संस्पर्श ; 'बेवना ?

अल्प मन्ते ।

शोक । घाम । विद्या । काया । मन ।

जो अल्पिय हुआ और परिवर्तनशील है क्या उसे ऐसा समझना चाहिये—वह मेरा है ?

नहीं मन्ते ।

आनन्द । इसे ज्ञान परिष्कृत कार्यभावक अति क्षीम हुई ज्ञान लेता है ।

### § ४ छुन्न सुप्त ( ३४ २ ४ ४ )

अनारम्यात् छुन्न द्वारा आरम इत्या

एक समय भगवान् राजगृहमें वेदुषन कष्टव्यकनिषापरमें विहार करते थे ।

उस समय आयुष्मान् सारिपुत्र आयुष्मान् महाशुभ्र और आयुष्मान् छुन्न शुभ्रकूट पर्वत पर विहार करते थे ।

उस समय आयुष्मान् छुन्न बहुत बीमार थे ।

तब सोचा समय आयुष्मान् सारिपुत्र ध्यान से उठ जाईं आयुष्मान् महाशुभ्र से जाईं गये और बाड़े आयुष्मान् शुभ्र । परे जाईं आयुष्मान् छुन्न बीमार है जाईं गये ।

“आजुस ! बहुत जल्द यह आयुष्मान् महाशुभ्र ने आयुष्मान् सारिपुत्र का उत्तर दिया ।

तब आयुष्मान् महाशुभ्र और आयुष्मान् सारिपुत्र जाईं आयुष्मान् उठ बीमार ने जाईं गये । बाहर गिछे जासन पर बैठ गये ।

बैठ कर आयुष्मान् सारिपुत्र आयुष्मान् उठ न बोले :— आजुस उठ ! आपकी तबियत जल्दी हो है बीमारी कम हो रही है न ?

आजुस सारिपुत्र ! मेरी तबियत जल्दी नहीं है बीमारी बढ़ ही रही है ।

आजुस ! जैसे कोई बलवान् पुत्र तेज लकड़ार से गिर न बार बार लुभोवे वंस ही बाल सेरे सिर के पहा मार रहा है । आजुस ! मेरी तबियत जल्दी नहीं है बीमारी बढ़ ही रही है ।

आजुस ! जैसे कोई बलवान् पुत्र गिर न कमकर रस्मी कपेट ने, जैसे ही अधिक पीना हो रही है ।

आजुस ! जब कोई चहर शायतक या गोघातक का अन्धेबामी तज कुरे से पेट काटे जैसे ही अधिक पट में बाल न पीना हो रही है ।

आजुस ! जैसे हा बलवान् पुत्र किसी निर्बल पुत्र को थोड़ पकड़ उर धपकती जाग में तपावे जैसे ही मरे मार शरीर में दाढ़ हो रहा है ।

आजुस सारिपुत्र ! मैं आरम-इत्या कर लूँगा, जीवा नहीं चाहता ।

आयुष्मान् उठ आरम हा मत करें । आयुष्मान् उठ जीवित रहा, इस लोग आयुष्मान् उठ का अविश्व रदन ही चाहते हैं । यदि आयुष्मान् उठ को अच्छा जीवन नहीं मिलता हा तो मैं स्वर्ग अर्पण मोक्षन का दिया करूँगा । यदि आयुष्मान् उठ को अच्छा रहा करे। नहीं मिलता हा तो मैं स्वर्ग अर्पण रहा शीतों त्या दिया करूँगा । यदि आयुष्मान् उठ का कोई अनुकूल इहन करने वाला नहीं है तो मैं स्वर्ग आयुष्मान् का इहन करूँगा । आयुष्मान् उठ आरम-इत्या मत करें । आयुष्मान् उठ जीवित रहें । इस लोग आयुष्मान् उठ का जीवन रहना ही चाहते हैं ।

आजुस सारिपुत्र ! मेरी बात नहीं है कि मुझे अच्छे मोक्षन न मिलते हैं । मुझ अन्धे ही मोक्षन मिलता करते हैं । मेरी बात ही नहीं है कि मुझे अच्छा इतर-शरीर नहीं मिलता ही । मुझे अच्छा ही रहा

धीरो मिला करता है। ऐसी बात भी नहीं है कि मैंने टहल करनेवाले अनुकूल न हों। मेरे टहल करनेवाले अनुकूल ही हैं।

आयुस ! यति, मैं दाम्ना को त्रीर्षकाल में प्रिय समझता आ रहा हूँ, अभिय नहीं। प्रायकों को यही चाहिये। क्योंकि दाम्ना की सेवा प्रिय में नहीं चाहिये, अभिय में नहीं, इसीलिये भिक्षु छत्र निर्दोष आत्म-हत्या करेगा।

यदि आयुमान् छत्र अनुमति दें तो तब तुझ प्रश्न पड़े।

आयुस सारिपुत्र ! पूछें, सुनकर उत्तर दूँगा।

आयुस छत्र ! क्या आप चक्षु, चक्षुविज्ञान, और चक्षुविज्ञान से जानने योग्य धर्मों को ऐसा समझते हैं—या मेरा है ? श्रोत्र 'मन' ?

आयुस सारिपुत्र ! मैं चक्षु, चक्षुविज्ञान, और चक्षुविज्ञानसे जानने योग्य धर्मों को समझता हूँ कि—यह सोग नहीं है, यह मैं नहीं हूँ, या मेरा आत्मा नहीं है। श्रोत्र 'मन'।

आयुस छत्र ! उनमें क्या श्रेय और जानकर आप उन्हें ऐसा समझते हैं ?

आयुस सारिपुत्र ! उनमें निर्दोष श्रेय और जानकर मैं उन्हें ऐसा समझता हूँ।

उस पर, आयुमान् महासुन्द आयुमान् छत्र से बोले, "आयुस छत्र ! तौ, भगवान् के इस उपदेश में भी सदा मनन करना चाहिये—निवृत्त में स्पन्दन होता है, अनिवृत्त में स्पन्दन नहीं होता है। स्पन्दन के नहीं होने से प्रवृत्ति होती है। प्रवृत्ति के होने से झुकाव नहीं होता है। झुकाव नहीं होने से अगतिगति नहीं होती है। अगतिगति नहीं होने से च्युत होना या उत्पन्न होना नहीं होता है। च्युत या उत्पन्न नहीं होने से न इस लोक में, न परलोक में, और न बीच में। यही दुःख का अन्त है।

तब, आयुमान् सारिपुत्र और आयुमान् महासुन्द आयुमान् छत्र को ऐसा उपदेश दे आसन से उठ चले गये।

उन आयुमान् के जाने के बाद ही आयुमान् छत्र ने आत्म-हत्या कर ली।

तब, आयुमान् सारिपुत्र जहाँ भगवान् से वहाँ आये, और भगवान् का अभिवादन कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठ, आयुमान् सारिपुत्र भगवान् से बोले, "भन्ते ! छत्र ने आत्म-हत्या कर ली है, उनकी क्या गति होगी ?"

सारिपुत्र ! छत्र ने तुम्हें क्या अपनी निर्दोषता बताई थी ?

भन्ते ! पुट्यविउत्तन नामक वज्जियों का एक ग्राम है। वहाँ आयुमान् छत्र के मित्रकुल=सुहृदकुल उपगन्तव्य (=जिनके पास जाया जाये) कुल है।

सारिपुत्र ! छत्र भिक्षु के सचमुच मित्रकुल=सुहृदकुल उपवचकुल हैं। सारिपुत्र ! किन्तु, मैं इतने से किसी को उपवच्य (=जाने आने के समर्थ वाला) नहीं कहता। सारिपुत्र ! जो एक शरीर छोड़ता है और दूसरा शरीर धारण करता है, उसीको मैं 'उपवच्य' कहता हूँ। वह छत्र भिक्षु को नहीं है। छत्र ने निर्दोषपूर्ण आत्म-हत्या की है—ऐसा समझो।

## § ५ पुण्य सुक्त ( ३४ २ ४. ५ )

### धर्म-प्रचार की सहिष्णुता और त्याग

एक ओर बैठ, आयुमान् पूर्ण भगवान् से बोले, "भन्ते ! मुझे संक्षेप से धर्म का उपदेश करें।

पूर्ण ! चक्षु विज्ञेय रूप है, अभीष्ट, सुन्दर। भिक्षु उनका अभिनन्दन करता है, इससे उसे तृष्णा उत्पन्न होती है। पूर्ण ! तृष्णा के समुत्थ से दुःख का समुत्थ होता है—ऐसा मैं कहता हूँ।

\* यही सुक्त मज्झिम निकाय ३ ५, २ में भी।

भ्रातृविजय नाम्ना मनाविजय धर्म ।

पूर्ण ! ब्रह्मविजय रूप है अमीष्ट, सुख । जिहु उमका अभिमान्यन नहीं करता है । इस उमकी तुम्हा निरह हो जाती है । पूर्ण ! तुम्हा क निरोध म सुख, का निरोध होता है—तुम्हा मैं करता है ।

धोत्रविजय नाम्ना मनाविजय धर्म ।

पूर्ण ! मरे इस संक्षिप्त उपदेश को सुन तुम किस अनपद में विहार करोगे ?  
 भन्ते ! सुनापरमत्त नाम का एक अनपद है, यही मैं विहार करूँगा ।  
 पूर्ण ! सुनापरमत्त के लोग बने अन्ध-दन्धे हैं । पूर्ण ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुम्हें गाकी देंगे और कहेंगे तो तुम्हें क्या होगा ?

भन्ते ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुझे गाकी देंगे और कहेंगे तो तुझे यह होगा—यह सुनापरमत्त के लोग बने मज्र है जो तुझे हाथ स मार-पीट नहीं करते हैं । भगवन् ! तुझे ऐसा ही होगा । सुगत ! तुझे ऐसा ही होगा ।

पूर्ण ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुम्हें हाथ स मार-पीट करेंगे तो तुम्हें क्या होगा ?

भन्ते ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुझे हाथ स मार-पीट करेंगे तो तुझे यह होगा—यह सुनापरमत्त के लोग बने मज्र है जो तुझे डेका म नहीं मारते हैं । भगवन् ! तुझे ऐसा ही होगा । सुगत ! तुझे ऐसा ही होगा ।

पूर्ण ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुम्हें डेका से मारें तो तुम्हें क्या होगा ?

भन्ते ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुझे डेका से मारेंगे तो तुझे यह होगा—यह सुनापरमत्त के लोग मज्र है जो तुझे काटी से नहीं मारते ।  
 यदि सुनापरमत्त के लोग तुम्हें काटी से मारेंगे तो तुम्हें क्या होगा ?

भन्ते ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुझे काटी स मारेंगे तो तुझे यह होगा—यह सुनापरमत्त के लोग बने मज्र है जो तुझे किसी इजिफार से नहीं मारते हैं ।

पूर्ण ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुम्हें इजिफार से मारें तो तुम्हें क्या होगा ?

भन्ते ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुझे इजिफार स मारेंगे तो तुझे यह होगा—यह सुनापरमत्त के लोग बने मज्र है जो तुझे हाथ स नहीं मार सकते हैं ।

पूर्ण ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुम्हें हाथ से मार सकें तो तुम्हें क्या होगा ?

भन्ते ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुझे हाथ से ही मार सकें तो तुझे यह होगा—भगवान् के प्राणक इस-सरीर और जीवन से एक नाथ-दत्ता करने के किये बुद्धत्व की लक्ष्य करते हैं—तो यह तुझे बिना लक्षा किये मिल गया । भगवन् ! तुझे ऐसा ही होगा । सुगत ! तुझे ऐसा ही होगा ।

पूर्ण ! यदि सुनापरमत्त के लोग तुम्हें सुख-दुःख सुनापरमत्त अनपद में विचार कर सकते हैं तो तुम्हें क्या होगा ?  
 जब तुम वहाँ जाओ जाने की छुट्टी है ।

तब ब्रह्मविजय पूर्ण भगवान् के कहे का अभिमान्यन और ब्रह्मसोदन कर भगवान् को प्रणाम प्रदर्शित कर विचारन करे, पात्र-बीर के सुनापरमत्त की और रमत कगाले एक दिने । प्रमसा रमत कगाले वहाँ सुनापरमत्त अनपद है वहाँ पहुँचे । वहाँ सुनापरमत्त अनपद में ब्राह्मण्य पूर्ण विहार करने लगे । तुम ब्राह्मण्य पूर्ण में उर्ध्व वर्णानाम में पौष सी लोगी जो—बीड उपायक बना दिया । उसी वर्णोद्यम में तीनों विधानों का साक्षात्कार कर किया । वही वर्णोद्यम में परिक्रमण भी पा किया ।

— तब तुम जिहु वहाँ भगवान् स वहाँ गये और भगवान् को अभिवादन कर एक और बैठ गये ।  
 । पृष्ठ और बैठ वे जिहु भगवान् से बाले "भन्ते ! पूर्ण नामक बुद्ध-पुत्र किये भगवान् में संक्षेप से धर्म का उपदेश किया का वह मर गया । उसकी क्या गति होगी ।

बिभ्रुओं । वह पुनः प्रविष्टन वा । वह भवान् मुक्तं प्रविष्टन वा । मेरे धर्म को पटनम नार्त्ता  
रहेगा । बिभ्रुओं । पूर्ण पुनः प्रविष्टन नै निर्वाण वा विष्णु । ७

§ ६. चार्हिय मुक्त ( ३४ २. ४. ६ )

अनिष्ट, दुःख

“ एक और संत, आयुष्मान् चार्हिय भगवान् से बोले, “भन्ने । भगवान् मुक्तं सर्वेषु नै धर्म  
का उपदेश करें ।”

चार्हिय ! क्या समस्तों ही, चक्षु निष्प ही या अविष्णु ?

अनिष्ट भन्ने !

जो अनिष्ट, दुःख और परिश्रमनाश हो उभये क्या ऐसा समझना चार्हिये—यह मेरा है ?  
नहीं भन्ने !

रूप । विज्ञान । न-सुखमर्षण ?

अनिष्ट भन्ने !

जो अनिष्ट, दुःख और परिश्रमनाश ही उभये क्या ऐसा समझना चार्हिये—यह मेरा है ?  
नहीं भन्ने !

श्रोत्र । मन ।

चार्हिय । उभये जान, परिश्रम अर्थश्रायक । जाति धांण हुई । जान एता है ।

नय, आयुष्मान् चार्हिय भगवान् के को का अभिनन्दन और अनुमोदनकर, वासन से उठ,  
भगवान् को प्रणाम-प्रदक्षिणा कर चले गये ।

तब, आयुष्मान् चार्हिय अर्थात् ज्ञातिध्रांण हुई । जान लिये ।

आयुष्मान् चार्हिय अर्थात् म एक हुये ।

§ ७ एज मुक्त ( ३४ २. ४. ७ )

चित्त का स्पन्दन रोग है

बिभ्रुओं । एज (=चित्त का स्पन्दन) रोग है, दुर्गन्ध है, कौट है । बिभ्रुओं । इसलिये बुद्ध  
अनेज, निष्कण्टक विहार करने है ।

बिभ्रुओं । यदि तुम भी चाहो तो अनेज, निष्कण्टक विहार कर सकते हो ।

चक्षु को नहीं मानना चार्हिये, चक्षु में नहीं मानना चार्हिये, चक्षु के ऐसा नहीं मानना चार्हिये,  
चक्षु मेरा है ऐसा नहीं मानना चार्हिये । रूप को नहीं मानना चार्हिये । चक्षुविज्ञान को । चक्षु  
संस्पर्श को । वेदना को ।

श्रोत्र । ज्ञान । जिह्वा । काया । मन ।

सभी को नहीं मानना चार्हिये । सभी में नहीं मानना चार्हिये । सभी के ऐसा नहीं मानना  
चार्हिये । सभी मेरा है ऐसा नहीं मानना चार्हिये ।

इस प्रकार, वह नहीं मानते हुये लोक में कुछ भी उपादान नहीं करता है । उपादान नहीं करने  
से उभये परिश्रम नहीं होता । परिश्रम नहीं होने से वह अपने भीतर ही भीतर निर्वाण पा लेता है ।  
जाति ध्रांण हुई, ब्रह्मचर्य पूरा हो गया, जो कर्म था वो कर लिया, अब पुनर्जन्म होने को नहीं—  
ऐसा जान लेता है ।

§ ८ एवमुच्यते ( ३१ ० ४ ८ )

बिम्ब का स्पन्दन योग है

बिम्बुभा ! यदि तुम भी चाहा तो अनेक निष्कण्ठक बिहार कर सकते हो ।

अबु को नहीं मानना चाहिये [अपर केना] । बिम्बुभा ! जिसको मानता है जिसमें मानता है जिसका करने मानता है जिसको 'जरा है' जरा मानता है उससे वह जगया हो जाता है (स्वरस जता है) । अन्वयानापी ।

भाषा । प्राण । विद्या । कथा । मय ।

बिम्बुभा ! जिसके एक-एक बातु भाषणव है उन्हें भी नहीं मानना चाहिये उनमें भी नहीं मानना चाहिये बना करके भी नहीं मानना चाहिये व मरी है ऐसा भी नहीं मानना चाहिये ।

वह इन तरह नहीं मानता बुद्ध लोक में कुछ उपादान नहीं करता । उपादान नहीं करने से उभ परिणम नहीं होता है । परिणाम नहीं होने से अवन भीतर ही भीतर निर्जन्म पा लेता है । जानि क्षीय हुई जान जाता है ।

§ ९ इयमुच्यते ( ३४ २ ४ ५ )

दो पार्ले

बिम्बुभा ! वा का उच्यता कर्मणा । उय तुता । बिम्बुभा ! वा क्या है ?

अबु भार कप । भार भीर रात्र । प्राण और रात्र । विद्या भीर रम । पावा भीर स्वर्ग । मत्त भीर धर्म ।

बिम्बुभा ! यदि कोई बड़े कि मैं इन "वा का" पाक तुमसे दो वा निर्देश कर्कशा ता उसका कडना कडन है । पूर जाय पर क्या नहीं मचना । उक्त द्वार पानी पक्या ।

वा क्या ? बिम्बुभा ! कबोकि पात पनी नहीं है ।

§ १० इयमुच्यते ( ३४ ० ४ १ )

दो के प्रत्यय म विज्ञान की उपपत्ति

बिम्बुभा ? वा के प्रत्यय म विज्ञान पैदा हाता है । बिम्बुभा ! वा के प्रत्यय म विज्ञान क्या पैदा होता है ?

अबु भीर रता के प्रत्यय म अणुविज्ञान उगक होता है । अबु अक्षिण = विपरिणामी = अन्वयानापी है । अत्र अक्षिण = विपरिणामी = अन्वयानापी है । कैये ही होता अणु भीर इय अक्षिण । अणुविज्ञान अक्षिण । अणुविज्ञान की उपपत्ति का जो हेतु = प्रत्यय है वह भी अक्षिण ।

बिम्बुभा ! अक्षिण प्रत्यय के कारण अणु-वैज्ञान उगक हाता है । वह यता निम्न कैये हाता ? बिम्बुभा ! जो इन तीन पदों का मिलना है वह अणु-वैज्ञान कहा जाता है । अणु-वैज्ञान भी अक्षिण = विपरिणामी = अन्वयानापी है । अणु-वैज्ञान की उपपत्ति के जो हेतु = प्रत्यय है वह भी अक्षिण ।

बिम्बुभा ! अक्षिण प्रत्यय के कारण अणु-वैज्ञान पैदा कैये निम्न हाता ? बिम्बुभा ! स्वर्ग के दाव म ही वैदना हाती है स्वर्ग के जाने में ही वैदना हाती है स्वर्ग के जाने म ही वैदना हाती है । व अभी भी अणु-वैज्ञान अक्षिण विपरिणामी भी अन्वयानापी है ।

भाषा । प्राण । विद्या । कथा । मय ।

बिम्बुभा ! इन तरह जाने के प्रत्यय म विज्ञान हाता है ।

इयम वग मन्वयान

## पाँचवाँ भाग

### षट्धर्मा

§ १ संगण्य सुत्त ( ३४. २ ५ १ )

छ स्पर्शायतन दु खदायक है

भिक्षुओ ! यह छ स्पर्शायतन अदान्त=अगुप्त=अरक्षित=अमरत दु ख देनेवाले है । कान से छ ?

(१) भिक्षुओ ! चक्षु-स्पर्शायतन अदान्त । (२) श्रोत्रम्पर्शायतन । (३) घ्राणस्पर्शायतन ।

(४) जिह्वास्पर्शायतन । (५) कायारस्पर्शायतन । (६) मन स्पर्शायतन ।

भिक्षुओ ! यही छ स्पर्शायतन अदान्त हैं ।

भिक्षुओ ! यह छ स्पर्शायतन सुदान्त=सुगुप्त=सुरक्षित=सुमरत सुख देनेवाले है । कान से छ ?

भिक्षुओ ! चक्षु-स्पर्शायतन मन स्पर्शायतन ।

भिक्षुओ ! यही छ स्पर्शायतन सुदान्त सुख देनेवाले है ।

भगवान् ने इतना कहा । इतना कहकर बुद्ध फिर भी बोले ---

भिक्षुओ ! छ स्पर्शायतन है,

जिनमें अमरत रहनेवाला दु ख पाता है ।

उनके मयम को जिनने श्रद्धा से जान लिया,

वे फलेदारहित हो विहार करते हैं ॥१॥

मनोरम रूपों को देख,

और अमनोरम रूपों को भी देख,

मनोरम के प्रति उठनेवाले राग को दबावे,

न 'यह मेरा अप्रिय है' समझ मनमें द्वेष लावे ॥२॥

दोनों प्रिय और अप्रिय शब्द को सुन,

प्रिय शब्दों के प्रति मूच्छित न हो जाय,

अप्रिय के प्रति अपने द्वेष को दबावे,

न "यह मेरा अप्रिय है" समझ, मनमें द्वेष लावे ॥३॥

सुरभि मनोरम गन्धका घ्राण कर,

और अशुचि अप्रिय का भी घ्राण कर,

अप्रिय के प्रति अपनी खिन्नता को दबावे,

और प्रिय के प्रति अपनी इच्छा में वहक न जाय ॥४॥

बड़े मधुर स्वादिष्ट रस का भोग कर,

और कभी बुरे स्वादवाले पदार्थ को भी खा,

स्वादिष्ट को बिल्कुल छूटकर नहीं खाता है,

और अस्वादिष्ट को बुरा भी नहीं मानता है ॥५॥

सुख-स्पर्श के लगने से मतवाला न ही जाय,



आर बुद्ध स्पर्श से कौपल न बना  
 मुक्त और बुद्ध लोग स्पर्शों के प्रति उपेक्षा स  
 न किन्ती को चाहे और न किसी को न चाहे ॥१॥  
 उस ठसे अनुपप प्रपञ्चमहावाल हैं  
 प्रपञ्च में पक्ष के संज्ञावाके हैं  
 यह सारा कर मन पर ही पडा है  
 उसे जीत निष्कर्ष करें ॥०३॥  
 इस प्रकार इन छ में अब मन सुभाषित हाता ह  
 ता कहीं स्पर्श के लगाने में विल कौपला नहीं है।  
 मिश्रुओ ! राग और द्वेष को तथा  
 भय्य य बु के पार ही आत है ॥५॥

### ६२ संग्रह सूच ( ३४ २ ५ )

भगवत्सक्ति से बुद्ध का भयत

एक बार बैठ भायुध्याम् मालुक्कपुत्र भगवान् से बोले भन्ते ! भगवान् मुझे संशेष स  
 धर्म का उपदेश करें ।

मालुक्कपुत्र ! यहाँ जहाँ छोड़े छोड़े मिश्रुओ के सामन क्या कहूँगा । जहाँ तुम जीर्णवृद्ध  
 मिश्रु रहो वहाँ संशेष स धर्म सुनने की आवश्यकता करना ।

भन्ते ! यहाँ मैं जीर्णवृद्ध हूँ । माते ! भगवान् मुझे संशेष से धर्म का उपदेश करें जिसम  
 में भगवान् के कहने का अर्थ सीध ही न म लें । भगवान् के उपदेश का मैं सीध ही ग्रहण करनेवाला  
 हा जाऊँगा ।

मालुक्कपुत्र ! क्या समझत हो जिन बहुविधोप कर्षों को तुमने न कभी पढ़क देया है और  
 न जर्मों देय रहे हा उनको 'वैभू' देया तुम्हारे मन में नहीं होता है ? उनके प्रति तुम्हारा कम्प-रता  
 का प्रय है ?

नहीं भन्ते !

आ औपचरिण्य सम्प है । जो प्रायचरिण्य सम्प है । जो मिश्रुविशेष सम् है । जो पावा  
 विज्ञान स्पर्श है । आ समाधिज्येय धर्म है । नहीं भन्ते !

मालुक्कपुत्र ! यहाँ वेदो सुने जाते धर्मों में जटो म देवता मर होगा । सुने म सुना मर होगा ।  
 प्राय विष म प्राय करना मर रहेगा । चरो में कल्पना मर रहेगा । हुये में हला मर रहेगा । आते में  
 कल्पना मर रहेगा ।

मालुक्कपुत्र ! इससे तुम उनमें नहीं मार होग । मालुक्कपुत्र ! अब तुम उनमें सक्त नहीं हम्मे  
 ता उनके पीछे नहीं पकोगे । मालुक्कपुत्र ! अब तुम उनके पीछ नहीं पकोगे तो तुम न इस काम में न  
 परलोक में धर्म न नहीं बीच में रहोगे । नहीं बुद्ध का मज्ज ह ।

भन्ते ! भगवान् के इस मन्त्रे से बड़े पावे का मूल विस्तार से अर्थ प्राप्त किया :-

कप को दूल् स्थिति-ग्रह हो विधिमित्त को मन में आते

अनुत्पत्त चित्तवाक का कैवला हाती है अन्तमें कल्प हा कर रहता है

अमरी विवकाये कर्ता है कप म होने वाक अनेय

शोम और द्वेष उसके चित्त का द्वा दूत है

इस प्रकार बुद्ध बर्धरता है वह 'निर्वाण से चहुन दूर कहा जाता है' ॥१॥

शब्द को सुन स्मृति-श्रष्ट हो " [ ऊपर जैसा ही ]

इस प्रकार दुःख बटोरता है, वह 'निर्वाण मे बहुत दूर' कहा जाता है ॥२॥

गन्ध का घ्राण कर स्मृति-श्रष्ट हो

इस प्रकार दुःख बटोरता है, वह 'निर्वाणमे बहुत दूर' कहा जाता है ॥३॥

रस का स्वाद ले, स्मृति-श्रष्ट हो

इस प्रकार श्रुत् ख बटोरता है ॥४॥

स्पर्श के लगने से स्मृति श्रष्ट हो

इस प्रकार दुःख बटोरता है ॥५॥

यमों को जान स्मृति-श्रष्ट हो

इस प्रकार दुःख बटोरता है ॥६॥

वह रूपा में राग नहीं करता, रूप को देख स्मृतिमान् रहता है, विरक्त चित्त से देवना का अनुभव करता है, उसमें लग्न नहीं होता, अतः, उसके रूप देखने और वेदना का अनुभव करने पर भी, घटता है, बढ़ता नहीं, ऐसा वह स्मृतिमान् विचरता है ।

इस प्रकार, दुःख को घटाते वह 'निर्वाण' के पास' कहा जाता है ॥७॥

वह शब्दों में राग नहीं करता' [ऊपर जैसा] ॥८॥

वह गन्धों में राग नहीं करता ॥९॥

वह रसों में राग नहीं करता ॥१०॥

वह स्पर्शों में राग नहीं करता ॥११॥

वह यमों में राग नहीं करता ॥१२॥

भन्ते ! भगवान् के सक्षेप से कहे गये का मैं इस प्रकार विस्तार से अर्थ समझता हूँ ।

ठीक है, मालुक्यपुत्र । तुमने मेरे सक्षेप से कहे गये का विस्तार से अर्थ ठीक ही समझा है ।

रूप को देख स्मृतिश्रष्ट हो [ऊपर कही गई गाथा में ज्यों की त्यों]

मालुक्यपुत्र । मेरे सक्षेप से कहे गये का इसी तरह विस्तार से अर्थ समझना चाहिए ।

तब, आयुष्मान् मालुक्यपुत्र भगवान् के कहे का अभिनन्दन और अनुमोदन कर, आसन से उठ, भगवान् को प्रणाम-प्रदक्षिणा कर चले गये ।

तब, आयुष्मान् मालुक्यपुत्र अकेला, अलग, अग्रमत्त ।

आयुष्मान् मालुक्यपुत्र अर्हत्तों में एक हुये ।

### § ३. परिहान सुत्त ( ३४ २ ५. ३ )

#### अभिभावित आयतन

भिक्षुओ ! परिहानधर्म, अपरिहानधर्म, और छ अभिभावित आयतनों का उपदेश करेंगा । उमे सुनो ।

भिक्षुओ ! परिहानधर्म कैसे होता है ?

भिक्षुओ ! चक्षु मे रूप देख भिक्षु को पापमय चञ्चल सकल्पवाले सयोजन में डालनेवाले अकुशल धर्म उत्पन्न होते हैं । यदि भिक्षु उनको टिक्तने दे, जोड़े नहीं = उबावे नहीं = अन्त नहीं करे = नाश नहीं करे, तो उसे समझना चाहिए कि मैं कुशल धर्मों में गिर रहा हूँ ( प्रहाण कर रहा हूँ ) । भगवान् ने हमी को परिहान कहा है ।

श्रोत्र से शब्द सुन । घ्राण । जिह्वा । वाया । मनमे धर्मों को जान ।

मिथुभो ! उसे ही परिहास धर्म हाता है ।

मिथुभो ! अपरिहास धर्म कैसे होता है ?

मिथुभो ! यमु से रूप देव मिथु का पापमय बंधन संकल्प बाल संवादन में डालनेवाले अज्ञान धर्म उत्पन्न होते हैं । यदि मिथु उनका निर्मम से छाड़ दे = बन्ध कर दे = नाश कर दे तो उसे समझना चाहिये कि मैं हुआ धर्मों में गिर नहीं रहा हूँ । भगवान् ने इसी को अपरिहास कहा है ।

श्रीय से पात्र सुन । प्राण । क्रिडा । पापा । मन में धर्मों को जान ।

मिथुभो ! उसे ही अपरिहास धर्म होता है ।

मिथुभो ! छः अभिभावित भाषणन पीन-स है ?

मिथुभो ! यमु से रूप देव मिथु को पापमय बंधन संकल्प बाल संवादन में डालनेवाले अज्ञान धर्म नहीं उत्पन्न होते हैं । मिथुभो ! तब उग्र मिथु को समझना चाहिये कि मेरा वह भावतम अभिव्यक्त हो गया है । (= जीत लिया गया है) इसी को भगवान् ने अभिभावित भाषणन कहा है ।

श्रीय से पात्र सुन । मन में धर्मों का जान ।

मिथुभो ! यही छः अभिभावित भाषणन बड़े बात है ।

### § ४ प्रमादविहारी सुत ( ३४ २ ५ ४ )

धर्म के प्रादुर्भाव से अप्रमाद विहारी होता

भाषस्ती ।

मिथुभो ! अप्रमादविहारी और अप्रमादविहारी का उपदेश बरुणा । उसे सुनी ।

मिथुभो ! कैसे प्रमादविहारी होता है ?

मिथुभो ! अराजक यमु इन्द्रिय से विहार करनेवाले का चित्त यमुविशेष रूप में क्लेशयुक्त चित्तवाले को प्रमोह नहीं होता है । प्रमोह नहीं होने से प्रीति नहीं होती है । प्रीति नहीं होने से प्रसन्न नहीं होती है । प्रसन्न नहीं होने से दुःख पूर्वक विहार करता है । दुःखयुक्त चित्त समाधि-काम नहीं करता है । असमाहित चित्त में धर्म प्रादुर्भाव नहीं होते । धर्मों के प्रादुर्भाव नहीं होने से वह 'प्रमाद विहारी' कहा जाता है ।

मिथुभो ! असंयत श्रोत्र-इन्द्रिय से विहार करनेवाले का चित्त यमुविशेष रूप में क्लेशयुक्त होता है । प्राण । क्रिडा । पापा । मन ।

मिथुभो ! ऐसे ही प्रमादविहारी होता है ।

मिथुभो ! कैसे अप्रमादविहारी होता है ?

मिथुभो ! संयत यमु-इन्द्रिय से विहार करनेवाले का चित्त यमुविशेष रूप में क्लेशयुक्त नहीं होता है । क्लेशरहित चित्तवाले को प्रमोह होता है । प्रमोह होने से प्रीति होती है । प्रीति होने से प्रसन्न होती है । प्रसन्न होने से दुःख-पूर्वक विहार करता है । दुःख से चित्त समाधि-काम करता है । समाहित चित्त में धर्म प्रादुर्भाव होते हैं । धर्मों के प्रादुर्भाव होने से वह 'अप्रमादविहारी' कहा जाता है । श्रीय 'मन' ।

मिथुभो ! ऐसे ही अप्रमादविहारी होता है ।

### § ५ संवर सुत ( ३४ २ ५ ५ )

इन्द्रिय-निग्रह

मिथुभो ! संवर और अर्धव का उपदेश बरुणा । उसे सुनी ।

बिभुओ ! कैसे अमयर होता है ?

बिभुओ ! चक्षुविज्ञेय रूप अर्थात्, सुन्दर, लुभावने, प्यारे, कामसुक, राग में डालनेवाले होते हैं । यदि कोई बिभु उसका अभिनन्दन करे, उसकी चढ़ाई करे, और उसमें लग्न हो जाय, तो उसे समझना चाहिये कि मैं कुशल धर्मों में गिर रहा हूँ । इसे भगवान् ने परिग्रह कहा है ।

श्रोत्रविज्ञेय द्रव्य । घ्राणविज्ञेय गन्ध । जिह्वाविज्ञेय रस । कायाविज्ञेय स्पर्श । मनो-  
विज्ञेय धर्म ।

बिभुओ ! ऐसे ही अमयर होता है ।

बिभुओ ! कैसे मयर होता है ?

बिभुओ ! चक्षुविज्ञेय रूप अर्थात्, सुन्दर, लुभावने, प्यारे, कामसुक, राग में डालनेवाले होते हैं । यदि कोई बिभु उनका अभिनन्दन न करे, उनकी चढ़ाई न करे, और उनमें लग्न न हो, तो उसे सम-  
झना चाहिये कि मैं कुशलधर्मों में नहीं गिर रहा हूँ । इसे भगवान् ने अपरिग्रह कहा है ।

श्रोत्र । मन ॥

बिभुओ ! ऐसे ही मयर होता है ।

### § ६ समाधि सुत्त ( ३४. २ ५. ६ )

समाधि का अभ्यास

बिभुओ ! समाधि का अभ्यास करो । समाहित बिभु को यथार्थ-ज्ञान होता है ।

किसका यथार्थ-ज्ञान होता है ?

चक्षु अनिय है इसका यथार्थ-ज्ञान होता है । रूप । चक्षुविज्ञान । चक्षुसस्पर्श । वेदना  
अभिव्य है इसका यथार्थ-ज्ञान होता है ।

श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन अनिय है इसका यथार्थ-ज्ञान होता है ।

बिभुओ ! समाधि का अभ्यास करो । समाहित बिभु को यथार्थ-ज्ञान होता है ।

### § ७ पटिमल्लण सुत्त ( ३४. २ ५. ७ )

कायविवेक का अभ्यास

बिभुओ ! प्रतिस्खलन का अभ्यास करो । प्रतिस्खलीन बिभु को यथार्थ-ज्ञान होता है ।

किसका यथार्थ-ज्ञान होता है ?

चक्षु-अनिय है इसका यथार्थ-ज्ञान होता है [ ऊपर जैसा ही ]

### § ८. न तुम्हाक सुत्त ( ३४. २ ५. ८ )

जो अपना नहीं, उसका त्याग

बिभुओ ! जो तुम्हारा नहीं है उसे छोड़ो । उसके छोड़ने से तुम्हारा हित और सुख होगा ।

बिभुओ ! तुम्हारा क्या नहीं है ?

बिभुओ ! चक्षु तुम्हारा नहीं है, उसे छोड़ो । उसके छोड़ने से तुम्हारा हित और सुख होगा ।  
रूप तुम्हारा नहीं है । चक्षु-विज्ञान । चक्षुसस्पर्श । वेदना तुम्हारा नहीं है, उसे छोड़ो । उसके  
छोड़ने से तुम्हारा हित और सुख होगा ?

श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन तुम्हारा नहीं है, उसे छोड़ो । उसके छोड़ने से  
तुम्हारा हित और सुख होगा । धर्म तुम्हारा नहीं है । मनोविज्ञान । मन सस्पर्श । वेदना तुम्हारी  
नहीं है, उसे छोड़ो । उसके छोड़ने से तुम्हारा हित और सुख होगा ।

बिभुओ ! जैसे, इस जेतवन के वृण-काष्ठ-शाखा-फलस को लोग ले जायें, या जलायें, या जो  
इच्छा करें, तो क्या तुम्हारे मनमें ऐसा होगा—हमें लोग ले जा रहे हैं, या हमें जला रहे हैं, या हमें  
जो इच्छा कर रहे हैं ।

नहीं मन्ते ।

सा क्यों ?

मन्ते ! यह मरा आत्मा या अपना नहीं है ।

मिथुनो ! मैंने ही बहुत दुःखों को नहीं है [ ऊपर बड़े गधे की पुनरावृत्ति ] उसके लोभने से दुःख राहित और सुख होगा ।

§ ९ न तुम्हाक सुच ( ३७ २ ५ ९ )

जो अपना नहीं, उसका त्याग

[ अतः लक्षण आदि की उपमा को छोड़ ऊपर का सूत्र ग्या का त्या ]

§ १० उहक सुच ( ३४ २ ५ १० )

दुःख के मूल को लोचना

मिथुनो ! उहक रामपुत्र पूमा कहता था—

यह मैं जानी ( = वेदम् ) हूँ, यह मैं सर्वज्ञि हूँ ।

मैंने दुःख के मूल को ( = गण्ड-मूल ) खन दिया है ॥

मिथुनो ! उहक रामपुत्र जानी नहीं दाते हुए भी अपने को जानी कहता था । सर्वज्ञि नहीं दाते हुए भी अपने को सर्वज्ञि कहता था । उसके दुःख-मूल को ही हूने व किन्तु कहता था कि मैंने दुःख के मूल को खन दिया है ।

मिथुनो ! यद्यपि मैं कोई मिथु ही ऐसा कह सकता है—

यह मैं जानी ( = वेदम् ) हूँ, यह मैं सर्वज्ञि हूँ ।

मैंने दुःख के मूल को खन दिया है ॥

मिथुनो ! मिथु कैसे जानी होता है ? मिथुनो ! क्योंकि मिथु छः स्पर्शापत्तता के समुद्रव अन्न दाते आन्नाद्, शेष चार मोक्ष को यद्यपि जानता है इसी से मिथु जानी होता है ।

मिथुनो ! मिथु कैसे सर्वज्ञि होता है ? मिथुनो ! क्योंकि मिथु छ स्पर्शापत्तता के समुद्रव अन्न दाते आन्नाद् शेष चार मोक्ष को यद्यपि जानता है अतः अपादापरहित हो बिमुक्त हो जाता है इसी से मिथु सर्वज्ञि होता है ।

मिथुनो ! मिथु कैसे दुःख के मूल को खन देता है ? मिथुनो ! दुःख ( = गण्ड ) इन चार महाभूतों में बने शरीर के भिन्न कहा गया है जो माता-पिता के संयोग से उत्पन्न होता है जो मात-बाप से बनता यामात है जो अन्न है अतः अन्नपानि का लेप करते हैं अतः मरते और दुबलते हैं अन्न को नष्ट-अन्न हो जायेगा है । मिथुनो ! दुःख मूल नृणा को कहा गया है । मिथुनो ! जब मिथु की नृणा प्रदीप हो जाती है तदुत्पन्न विर बड़े ताप के समान मिथु ही गई जो फिर उत्पन्न न हो पके तो वह कहा जा सकता है कि उसने दुःख के मूल को खन दिया है ।

मिथुनो ! मैं उहक रामपुत्र कहता था—

यह मैं जानी हूँ, यह मैं सर्वज्ञि हूँ ।

मैंने दुःख के मूल को खन दिया है ॥

मिथुनो ! उहक रामपुत्र जानी नहीं दाते हुए भी अपने को जानी कहता था । सर्वज्ञि नहीं दाते हुए भी अपने को सर्वज्ञि कहता था । उसके दुःख-मूल को ही हूने से किन्तु कहता था कि मैंने दुःख के मूल को खन दिया है ।

मिथुनो ! यद्यपि मैं कोई मिथु ही पूमा कह सकता है—

यह मैं जानी हूँ, यह मैं सर्वज्ञि हूँ ।

मैंने दुःख के मूल को खन दिया है ॥

पदार्थ समता

द्वितीय पञ्चांगण समता

# तृतीय पाण्डिसक

## पहला भाग

### योगक्षेमी वर्ग

#### § १. योगक्षेमी सुक्त ( ३४ ३ १ १ )

##### बुद्ध योगक्षेमी है

मिथुओ ! तुम्हें योगक्षेमी-कारणभूत का धर्मोपदेश करेगा । उसे सुनो ।  
मिथुओ ! चतुर्विंशत्य रूप अभीष्ट, सुन्दर, लुभायने लगे हैं । बुद्ध के ये प्राणिन होते हैं,  
उच्छिन्नमूल । उसके प्राण के लिये दोग किया था, इसलिये बुद्ध योगक्षेमी कहें जाते हैं ।  
श्रोत्रविंशत्य शब्द \* मनोविंशत्य धर्म ।

#### § २. उपादाय सुक्त ( ३४ ३.१. २ )

##### क्रिसके कारण आध्यात्मिक सुख-दुःख ?

मिथुओ ! क्रिसके लाने में, क्रिसके उपादान में आध्यात्मिक सुख-दुःख उत्पन्न होते हैं ?  
भन्ते ! धर्म के मूल भगवान् ही ।  
मिथुओ ! उल्लु के लाने में, उल्लु के उपादान में आध्यात्मिक सुख-दुःख उत्पन्न होते हैं । श्रोत्र  
मन के होने में ।

मिथुओ ! क्या समझते हो, उल्लु नित्य है या अनित्य ?  
अनित्य भन्ते !

जो अनित्य, दुःख और परिवर्तनशील है, क्या उसका उपादान नहीं करने में भी आध्यात्मिक  
सुख-दुःख उत्पन्न होंगे ?

नहीं भन्ते !

श्रोत्र । प्राण । जिह्वा । कथा । मन ।

मिथुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक जाति क्षीण हुई जान लेता है ।

#### § ३. दुक्ख सुक्त ( ३४. ३ १ ३ )

##### दुःख की उत्पत्ति और नाश

मिथुओ ! दुःख के समुत्थय और अस्त होने का उपदेश करेगा । उसे सुनो ।

मिथुओ ! दुःख का समुत्थय क्या है ?

उल्लु और रूपों के प्रत्यय से उल्लुविज्ञान उत्पन्न होता है । तीनों का मिलना स्पर्श है । स्पर्श के  
प्रायय से वेदना होती है । वेदना के प्रत्यय से तृष्णा होती है । यही दुःख का समुत्थय है ।

श्रोत्र और शब्दों के प्रत्यय से श्रोत्रविज्ञान उत्पन्न होता है\*\* । मन और धर्मों के प्रत्यय से  
मनोविज्ञान उत्पन्न होता है ।

मिथुभो ! दुःख का भस्म होना क्या है ?

वेदना के प्रत्यय से तुष्णा होती है। उन्मी तुष्णा के निस्सुख निरोध में मन का निरोध होता है। मन के निरोध से भाति का निरोध जाता है। भाति के निरोध से जरा मरण सभी निरव हो जाते हैं। इस तरह सारे दुःख-समुदाय का निरास हो जाता है। यही दुःख का भस्म हो जाना है।

श्रीमन् मन । यही दुःख का भस्म हो जाता है।

### § ४ लोक सुप्त ( ३४ अ १ ४ )

लोक की उत्पत्ति और नाश

मिथुभो ! लोक के समुदाय और भस्म होना का उपदेश करूँगा। उसे सुना ।

मिथुभो ! लोक का समुदाय क्या है ?

बहु चीजों का मिश्रण स्वर्ण है। स्वर्ण के प्रत्यय से वेदना होती है। वेदना के प्रत्यय से तुष्णा होती है। तुष्णा के प्रत्यय से उपादान जाता है। उपादान के प्रत्यय से मज होता है। मज के प्रत्यय से भाति होती है। भाति के प्रत्यय से जरा मरण उत्पन्न होते हैं। यही लोक का समुदाय है।

श्रीमन् मन । यही लोक का समुदाय है।

मिथुभो ! लोक का भस्म होना क्या है ?

[ ऊपरवास सूत्र के ऐसा ही ]

यही लोक का भस्म होना है।

### § ५ सेय्यो सुप्त ( ३४ अ १ ५ )

यज्ञ होने का विचार क्यों ?

मिथुभो ! किन्हे होने से किसके उपादान से ऐसा होता है—मैं क्या हूँ, या मैं परावर हूँ, या मैं छाटा हूँ ?

धर्म के सूत्र मगबाह ही ।

मिथुभो ! यज्ञ के होने से यज्ञ के उपादान से यज्ञ के अनिनिवेश से ऐसा होता है—मैं क्या हूँ या मैं परावर हूँ या मैं छोटा हूँ ।

श्रीमन् के होने से मज के होने से ।

मिथुभो ! क्या समझते हैं यज्ञ मित्य है या अमित्य ?

अमित्य मन्ते !

आ अमित्य दुःख और परिवर्तनशील है क्या उसके उपादान नहीं करने से भी ऐसा होगा—मैं क्या बड़ा हूँ ?

नहीं मन्ते !

श्रीमन् । प्रथम । मिथु । कर्मा । मन ।

मिथुभो ! इयं भाव, परिवर्तनशील भावभावक भाति शीघ्र हुई जान लता है।

### § ६ संयोजन सुप्त ( ३४ अ १ ६ )

संयोजन क्या है ?

मिथुभो ! संयोजनीय धर्म और संयोजन का उपदेश करूँगा। उसे सुनो ।

मिथुभो ! संयोजनीय धर्म क्या है और क्या है संयोजन ?

मिथुभो ! यज्ञ संयोजनीय धर्म है। उसके प्रति जो कष्टरामा है वह यहाँ संयोजन है।

श्रीमन् मन ।

भिक्षुओं ! यहाँ मंगोजनीय धर्म और मयोजन है ।

### § ७. उपादान सूक्त ( ३४. ३. १. ७ )

उपादान क्या है ?

“भिक्षुओं ! चक्षु उपादानीय धर्म हैं । उमके प्रति जो छन्दराग हैं वह वहाँ उपादान हैं ।”

### § ८. पजान सूक्त ( ३४. ३. १. ८ )

चक्षु को जाने बिना दु ख का क्षय नहीं

भिक्षुओं ! चक्षु को बिना जाने, बिना समझे, उसके प्रति राग को बिना दवाये तथा उसे बिना छोड़े हुए दु खों का क्षय करना सम्भव नहीं । श्रोत्र का “ मन को” ।

भिक्षुओं ! चक्षु को जान, समझ, उमके प्रति राग का दवा, तथा उसे छोड़ दू नों का क्षय करना सम्भव है । श्रोत्र ‘मन’ ।

### § ९. पजान सूक्त ( ३४. ३. १. ९ )

रूप को जाने बिना दु ख का क्षय नहीं

भिक्षुओं ! रूप को बिना जाने तथा उसे बिना छोड़े हुए दु खों का क्षय करना सम्भव नहीं ।

शब्द । गन्ध । रस । स्पर्श । धर्म ।

रस स्पर्श । धर्म को जान तथा उसे छोड़ दू खों का क्षय करना सम्भव है ।

### § १०. उपस्तुति सूक्त ( ३४. ३. १. १० )

प्रतीत्य-समुत्पाद, धर्म की सीख

एक समय भगीवान् नातिक्रम में जिज्ञासावस्थ में विहार करते थे ।

तत्र, पुरान्त में शान्तचित्त बटे हुये भगवान् ने यह धर्म की बात कही ।

चक्षु और रूपों के प्रत्यय से चक्षुविज्ञान उत्पन्न होता है । तीनों का मिलना स्पर्श है । स्पर्श के प्रत्यय से वेदना होती है । वेदना के प्रत्यय से तृष्णा होती है । तृष्णा के प्रत्यय से उपादान होता है । इस तरह, सारा दु ख-समूह उठ खड़ा होता है ।

श्रोत्र” । ग्राण” । जिह्वा । काया” । मन ।

- वेदना के प्रत्यय से तृष्णा होती है । उसी तृष्णा के चित्कूल निरोध से उपादान का निरोध होता है । इस तरह, सारा दु ख समूह निरुद्ध हो जाता है ।

श्रोत्र । ग्राण । जिह्वा । काया । मन ।

उम समय कोई भिक्षु भी भगवान् की बात को खड़े-खड़े सुन रहा था ।

भगवान् ने उसे खड़े-खड़े अपनी बात सुनते देखा । देखकर उमको कहा, “भिक्षु ! तुमने धर्म की इस बात को सुना ?”

हाँ भन्ते !

भिक्षु ! तुम धर्म की इस बात की सीख लो, याद कर लो । भिक्षु ! धर्म की बात प्रज्ञाचारी को सीखने योग्य परमार्थ की होती है ।

योगक्षेमी वर्ग समाप्त





अमृत के वाता, धर्मस्वामी, तथागत । इसका अर्थ भगवान् ही में पृथना चाहिये । जैसा भगवान् वतावें वेंसा ही समझें ।

आयुष्मान् आनन्द ! ठीक है, जैसा भगवान् वतावें वेंसा ही हम समझें । तो भी, आयुष्मान् आनन्द स्वयं बुद्ध और विज्ञ गुरुभाइयों से प्रशसित और सम्मानित है । भगवान् के इस सक्षेप से दिये गये इंगारे का अर्थ विगतरपूर्यक समझा सकते हैं । आयुष्मान् आनन्द इसे हलका करके समझावें आयुष्मान् । तो सुनें, अच्छी तरह मन में लावें, मैं कहता हूँ ।

“आयुष्मान् वदुत अच्छा” कह, उन भिक्षुओं ने आयुष्मान् आनन्द को उत्तर दिया ।

आयुष्मान् आनन्द बोले—आयुष्मान् । इसका विस्तार से अर्थ मैं यों समझता हूँ ।

आयुष्मान् ! जिससे लोक में “लोक की सज्ञा” या मान करता है वह आर्यविनय में लोक कहा जाता है । आयुष्मान् ! किससे लोक में लोक की सज्ञा या मान करता है ? आयुष्मान् ! चक्षु से लोक में लोक की सज्ञा या मान करता है । श्रोत्र से । घ्राण से । जिह्वा से । कर्णा से । मन से । आयुष्मान् ! जिससे लोक में लोक की सज्ञा या मान करता है वह आर्यविनय में लोक कहा जाता है ।

आयुष्मान् ! इसका विगतर में अर्थ मैं यों ही समझता हूँ । यदि आप आयुष्मान् चाहे तो भगवान् के पास जा कर इसका अर्थ पूछें । जैसा भगवान् वतावें वेंसा ही समझें ।

“आयुष्मान् वदुत अच्छा” कह, वे भिक्षु आयुष्मान् आनन्द को उत्तर दे, आसन से उठ जहाँ भगवान् थे वहाँ गये, और भगवान् का अभिवादन कर एक और बैठ गये ।

एक ओर बैठ, वे भिक्षु भगवान् ने बोले, “भन्ते ! भगवान् विहार के भीतर चले गये । भन्ते ! इस लिये, हम लोग जहाँ आयुष्मान् आनन्द थे वहाँ गये और इसका अर्थ पूछा ।

भन्ते ! सों आयुष्मान् आनन्द ने इन शब्दों में इसका अर्थ समझाया है ।

भिक्षुओं ! आनन्द पण्डित है, महाप्रज्ञ है । भिक्षुओं ! यदि तुम सुझ से यह पूछते तो मैं ठीक वेंसा ही समझाता जैसा कि आनन्द ने समझाया है । उसका वही अर्थ है हमें वेंसा ही समझो ।

### § ४. लोककामगुण सुक्त ( ३४ ३ २. ४ )

#### चित्त की रक्षा

भिक्षुओं ! बुद्धस्व लाभ करने के पहले, बोधिमत्व रहते ही सुझे यह हुआ—जो पूर्वकाल में अनुभव कर लिये गये पाँच कामगुण अतीत, निरुद्ध, विपरिणत हो गये हैं, वहाँ मेरा चित्त बहुत जाता है, धर्तमान और अनगत की तो बात ही क्या ! भिक्षुओं ! सों मेरे मन में यह हुआ—जो पूर्वकाल में मेरे अनुभव कर लिये गये पाँच कामगुण अतीत, निरुद्ध, विपरिणत हो गये हैं, उनके प्रति आत्म-हित के लिये सुझे अप्रमत्त और स्मृतिमान् हो अपने चित्त की रक्षा करनी चाहिये ।

भिक्षुओं ! इसलिये, तुम्हारे भी जो पूर्वकाल में अनुभव कर लिये गये पाँच कामगुण अतीत, निरुद्ध, विपरिणत हो गये हैं, वहाँ चित्त बहुत जाता ही होगा । इसलिये, उनके प्रति आत्महित के लिये तुम्हें भी अप्रमत्त और स्मृतिमान् हो अपने चित्त की रक्षा करनी चाहिये ।

भिक्षुओं ! इसलिये, उन आयतनों को जानना चाहिये जहाँ चक्षु निरुद्ध हो जाता है और रूप मज्ञा भी नहीं रहती है । जहाँ मन निरुद्ध हो जाता है और वर्मनज्ञा भी नहीं रहती है ।

इतना कह, भगवान् आत्मन में उठ विहार के भीतर चले गये ।

तब, भगवान् के जाने के बाद ही उन भिक्षुओं के मन में यह हुआ— आयुष्मान् ! यह भगवान् सक्षेप से सकेत दे, उसके अर्थ का बिना विस्तार किये आसन से उठ विहार के भीतर चले गये हैं ।

कौन भगवान् के इस सक्षेप सकेत का अर्थ विस्तार में समझावे ?

तब, उन भिक्षुओं को यह हुआ— यह आयुष्मान् आनन्द ।

तब वे मिथुन चर्हों आयुष्मान् आनन्द्य वे चर्हों जाये ।

जाबुस ! जैसे कोई पुत्र हीर पाये वही इच्छा से वृद्ध के मूल-पत्र को छोड़ ।

जाबुस आनन्द्य ! आयुष्मान् आनन्द्य इमे हमरा करके समझाये ।

जाबुस ! तो मुन अन्धी तरह मन में लार्थें मी कहता हूँ ।

'जाबुस ! बहुत लच्छा कह उन मिथुनों ने आयुष्मान् आनन्द्य को उत्तर दिया ।

य युष्मान् जानन्द्य बोले—जाबुस ! हमका बिस्तार से अर्थ मी पाँ समझता हूँ ।

जाबुस ! मगवान् ने यह पडावतन-विरोध के विषय में कहा ह। हमकिने उन आपतनीं को आनता य हिमे चर्हों बहुत विरह हो जाता है और रू-संज्ञा भी नहीं रहती है। चर्हों मग विरह हो जाता है और चर्मसंज्ञा जी नहीं रहती है ।

जाबुस ! इसरा विरहारे मे अर्थ मी पाँ ही समझता हूँ । यदि आप आयुष्मान् चर्हों तो मगवान् के पास जाकर इसका अर्थ पूछें । वैसा मगवान् बतावेँ वैसा ही समझें ।

जाबुस ! बहुत लच्छा" कह वे मिथु आयुष्मान् आनन्द्य को उत्तर दे आसन से उठ चर्हों मगवान् से चर्हों गये । मग्ते ! सो आयुष्मान् आनन्द्य ने हन पाश्यों में इसरा अर्थ समझाया है ।

मिथुन ! आनन्द्य पबिबत है महामज है। मिथुनो ! यदि तुम मुझसे यह पूछते हो मी भी ठीक वैसा ही समझाता वैसा कि आनन्द्य ने समझाया ह। उसरा यही अर्थ है। इसी वैसा ही समझो ।

§ ५ सुद्ध सुच ( ३४ ३ २ ५ )

इसी जन्म में निर्वाण प्राप्ति का कारण

एक समक मगवान् राजगृह में गृह्यफूट पर्वत पर बिहार करते थे ।

तब वैभेन्द्र नाम चर्हों मगवान् से चर्हों आया और मगवान् का अभिवादन कर एक ओर चला ही गया ।

एक ओर चला ही वैभेन्द्र नाम मगवान् से बोला 'मग्ते ! क्या कारण है कि कुछ लोग अपने वेकते ही वेकते परिनिर्वाण नहीं पा लेते हैं और कुछ लोग अपने वेकते ही वेकते परिनिर्वाण पा लेते हैं ?'

वैभेन्द्र ! षष्ठविशेष रूप अभीष्ट सुन्दर सुभाषणे है। मिथु उनका अभिवादन करता ह उनकी चर्वाई करता है और उनमें कर्म होके रहता है। इस तरह उसे कर्मों को हुये उपादानका विज्ञान होता है। वैभेन्द्र ! उपादान के साथ क्या हुआ वह मिथु परिनिर्वाण नहीं पाता है ।

श्रोत्रविशेष शब्द मनोविशेष चर्म । वैभेन्द्र ! उपादान के साथ क्या हुआ वह मिथु परिनिर्वाण नहीं पाता है ।

वैभेन्द्र ! यही कारण है कि कुछ लोग अपने वेकते-वेकते परिनिर्वाण नहीं पाते हैं ।

वैभेन्द्र ! षष्ठविशेष रूप अभीष्ट सुन्दर ह। मिथु उनका अभिवादन नहीं करता है उनमें कर्म होके नहीं रहता है। इस तरह उसे कर्मों का हुये उपादानका विज्ञान नहीं होता है। वैभेन्द्र ! उपादान-रहित वह मिथु परिनिर्वाण पा लेता है ।

श्रोत्रविशेष शब्द मनोविशेष चर्म । वैभेन्द्र ! उपादान रहित वह मिथु परिनिर्वाण पा जाता है ।

वैभेन्द्र ! यही कारण है कि कुछ लोग अपने वेकते-वेकते परिनिर्वाण पा लेते हैं ।

§ ६ पञ्चसिद्ध ( ३४ ३ ० ६ )

इसी जन्म में निर्वाण प्राप्ति का कारण

राजगृह गृह्यफूट ।

तब पञ्चसिद्ध नाम चर्हों मगवान् से चर्हों आया और मगवान् को अभिवादन कर एक ओर चला ही गया ।

एक और मटा हो, पञ्चगिर्य गन्धर्वपुत्र भगवान् से बोला, "भगने ! क्या कारण है कि कुछ लोग अपने देगते हो देगते परिनिर्वाण नाहीं पा लेते हैं और कुछ लोग अपने देगते-ही-देगते परिनिर्वाण पा लेते हैं ?"

[ उपर जैसा ]

### § ७. पञ्चसिख सुत्त ( ३४ ३. २. ७ )

भिक्षु के घर गृहस्थी में लौटने का कारण

एक समय, आयुमान् सारिपुत्र श्रावस्ती में भनाश्रपिण्डक के अराम जेतवन में विहार करते थे ।

तब, एक भिक्षु जाँ आयुमान् सारिपुत्र ये वहाँ आया और कुशल-प्रश्न पूछने के उपरान्त एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, वह भिक्षु आयुमान् सारिपुत्र से बोला, "आहुय सारिपुत्र ! मेरा शिष्य भिक्षु निम्ना को छोड़ घर-गृहस्थी में लौट गया है ।"

आहुय ! इन्द्रियों में अमयत, भोजन में मात्रा को न जाननेवाले, और जो जागरणशील नहीं है उपाका ऐसा ही होता है । आहुय ! ऐसा हो नहीं सकता कि इन्द्रियों में अमयत भोजन में मात्रा को न जाननेवाला, और अजागरणशील जीवन भर परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्यका पालन करेगा ।

आहुय ! जो इन्द्रियों में मयत, भोजन में मात्रा को जाननेवाला, और जागरणशील है वहाँ जीवन भर परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करेगा ।

आहुय ! इन्द्रियों में मयत कैसे होता है ? आहुय ! भिक्षु चक्षु से रूप को देख न उसमें मन ललचता है और न उसमें श्वाद लेना है । जो अमयत चक्षु-इन्द्रिय से विहार करता है, उसमें लोभ, द्वेष और पापमय मनुशाल धर्म पैठ जाते हैं । अतः उसके सखर के लिए प्रयत्नशील होता है । चक्षु-इन्द्रिय की रक्षा करता है । चक्षुइन्द्रिय को मयत कर लेता है ।

श्रोत्र मन मन-इन्द्रिय को मयत कर लेता है ।

आहुय ! इसी तरह इन्द्रियों में मयत होता है

आहुय ! कैसे भोजन में मात्रा का जाननेवाला होता है ? आहुय ! भिक्षु अच्छी तरह क्याल से भोजन करता है—न दूध के लिये, न मद्य के लिये, न टाट वाट के लिये, किन्तु केवल इस शरीर की स्थिति बनाये रखने के लिये, जीवन निर्वाह के लिये, बिहिंसा की उपरति के लिये, ब्रह्मचर्य के अनुग्रह के लिये । इस तरह, पुरानी वेदनाओं को कम करता है, नई वेदनाएँ उत्पन्न नहीं करेगा, मेरा जीवन कट जायगा, निर्दोष और सुख-पूर्वक विहार करेगा ।

अहुय ! इस तरह भोजन में मात्रा का जाननेवाला होता है ।

आहुय ! कैसे जागरणशील होता है ? आहुय ! भिक्षु दिन में चक्रमण कर और आसन लगा आवरण में डालनेवाले धर्मों से चित्त को शुद्ध करता है । रात्रि के प्रथम याम में चक्रमण कर और आसन लगा आवरण में डालनेवाले धर्मों से चित्त को शुद्ध करता है । रात्रि के मध्यम याम में दाहिने करबट पैर पर पैर रख सिद्धशय्या लगा स्मृतिमान्, सप्रज्ञ और उपाहाशील रहता है । रात्रि के पिछले याम में चक्रमण कर और आसन लगा आवरण में डालनेवाले धर्मों से चित्त को शुद्ध करता है ।

आहुय ! इस तरह जागरणशील होता है ।

आहुय ! इसलिये, ऐसा सीखना चाहिये—इन्द्रियों में मयत रहेगा, भोजन में मात्रा को जानेगा, जागरणशील रहेगा ?

आहुय ! ऐसा ही सीखना चाहिये ।

## ३८ राहुल मुष ( ३४ ३ ० ८ )

## राहुल को महत्व की प्राप्ति

एक समय मगधान् थावन्ती में अनाथपिण्डिक के आराम जेतवत म बिहार करते थे ।

तब एकदा में शाल्य बड़े हुए मगधान् के पित्त में यह बिलक उठा—राहुल के विमुक्ति पत्र नामे धर्म पत्र चुके हैं तो क्यों न मैं इसे उसके ऊपर माध्या के छप कराने म कगाऊ !

तब मगधान् पूर्वाह्न में पहल और पाप-बीबर स मिश्रादन के सिधे थावन्ती में घड़े । मिश्रादन से कीट भोजन कर लंन के बाद मगधान् मे राहुल का आमन्त्रित किया—राहुल ! आसन से सो दिन के विहार के छिमे जहाँ अम्पवत है वहाँ चले ।

‘मन्ते ! बहुत अच्छा’ कह आयुष्मान् राहुल मगधान् को उत्तर में आसन छ मगधान् के पीठ पीठे हा किये ।

उस समय अन्क महत्व दुवता में मगधान् के पीठ-पीठ कना शय—आज मगधान् आयुष्मान् राहुल को ऊपरपाल माध्या के छप कराने में धरावेंगे ।

तब मगधान् अम्पवत में पठ एक हृष्ट के पात्र निक आसन पर बैठ गये । आयुष्मान् राहुल में मगधान् का अभिवादन कर एक धीर बैठ गये । एक जोर देते आयुष्मान् राहुल मे मगधान् बोले—  
राहुल ! क्या समझते हो बहुत निय है वा अनिय ?

अनिय मन्ते !

ओ अनिय है वह दुःख है वा सुख है ?

दुःख मन्ते !

ओ अनिय दुःख आर परिवर्तनशील है उमे क्या ऐसा समझना ठीक है—वह मेरा है यह मैं हूँ यह मेरा आत्मा है ?

नहीं मन्ते !

स्व ! अमुविज्ञान ! अमुसंस्पर्श ! वेदना !

अनिय मन्ते !

ओ अनिय दुःख और परिवर्तनशील है उमे क्या ऐसा समझना ठीक है—वह मेरा है मैं हूँ यह मेरा आत्मा है ?

नहीं मन्ते !

ओत्र ! ज्ञान ! विद्या ! कर्मा ! मम !

राहुल ! इस जग पण्डित आर्यजापक आयु मे भी निवेद करता है जाति हीन ५ जग लता है ।

मगधान् बर बाले । संजुह हा आयुष्मान् राहुल मे मगधान् के बड़े का अभिवादन किया । पयो-चरैत के बड़े उमे वह आयुष्मान् राहुल का पित्त उपाय म-दित्त हा आध्यायों से मुक्त अन्क महत्व देवताओं का शारादित्त निर्मल अर्ध-आयु अन्क दो गया—जा वृत्त मगधुपयम हावे अम्पवतना ) है मन्ते निरापयमी है ।

## ३९ मन्त्राज्ञन मुष ( ३४ ३ ० ९ )

संवाञ्जन क्या है ?

मिथुना ! संवाञ्जन पदों की संज्ञा है वा उपदेश कर्तव्य । उमे मन्ते ।

मिथुनी ! संवाञ्जन पदों क न ले है अर वा है संज्ञा ?

भिक्षुओं ! चक्षुर्विज्ञेय रूप अर्भीष्ट, सुन्दर, ... है । भिक्षुओं ! इन्होंने को कहते हैं मयाजनीय धर्म, और जो उनके प्रति होनेवाले छन्दराग है वह वहाँ संयोजन है ।

श्रोत्रविज्ञेय शब्द 'मनोविज्ञेय धर्म' ।

### § १०. उपादान सुत्त ( ३४. ३. २. १० )

{ उपादान क्या है ?

भिक्षुओं ! उपादानिय धर्म और उपादान का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओं ! उपादानिय धर्म कौन से है, और क्या है उपादान ?

भिक्षुओं ! चक्षुर्विज्ञेय रूप अर्भीष्ट, सुन्दर है । भिक्षुओं ! इन्होंने को कहते हैं उपादानिय धर्म । उनके प्रति होनेवाले जो छन्द राग है वह वहाँ उपादान है ।

लोककामगुण वर्ग समाप्त

## तीसरा भाग

### गृहपति वर्ग

#### § १ वेसालि सुक्त ( ३४ ३ ३ १ )

इसी जन्म में निर्घाण प्राप्ति का कारण

एक समय भगवान् वैशाखी में महाघन की फूटागागशाष्टा में विहार करते थे ।

तब बस की का रहनेवाला उग्र गृहपति वहाँ भगवान् से वहाँ आया और भगवान् को भूमि वादत कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ उग्र गृहपति भगवान् से बोला—मन्ते ! क्या कारण है कि कितने लोग अपने देवते-ही उच्छत परिनिर्वाण पा लेते हैं और कितने लोग नहीं पाते हैं ?

गृहपति ! बहुविध्य रूप जमीष्ट सुन्दर है । गृहपति ! उपादान के साथ रगा हुआ मिष्ठ परिनिर्वाण नहीं पाता है ।

[ सूत्र ३४ ३ २ ५ के समान ही ]

#### § २ वज्जि सुक्त ( ३४ ३ ३ २ )

इसी जन्म में निर्घाण प्राप्ति का कारण

एक समय भगवान् वज्जिया के इस्ति ग्राम में विहार करते थे ।

तब इस्ति-ग्राम का उग्र गृहपति वहाँ भगवान् से वहाँ आया और भगवान् को भूमिवादन कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ उग्र गृहपति भगवान् से बोला—

[ ऊपरवाले सूत्र के समान ही ]

#### § ३ नालन्दा सुक्त ( ३४ ३ ३ ३ )

इसी जन्म में निष्वाय प्राप्ति का कारण

एक समय भगवान् नालन्दा में पावारिक-आश्रम में विहार करते थे ।

तब उपासि गृहपति वहाँ भगवान् से वहाँ आया ।

एक ओर बैठ उपासि गृहपति भगवान् से बोला “मन्ते ! क्या कारण है [ ऊपर वाले सूत्र के समान ही ]

#### § ४ भरद्वाज सुक्त ( ३४ ३ ३ ४ )

क्यों मिष्ठु प्रद्वक्य का प्राप्त कर पाते हैं ?

एक समय आपुष्मान् विष्ठाक भारद्वाज काशाखी के धारिताराम में विहार करते थे ।

तब राजा उद्वय वहाँ आपुष्मान् विष्ठाक भारद्वाज से वहाँ आया और वृशभ धेम वृत्त कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ राजा उद्वय आपुष्मान् विष्ठाक भारद्वाज से बोला “भारद्वाज ! क्या कारण है

कि यह नई उन्नत वाले भिक्षु कोमल, काले केश वाले, नई जवानों पाये, संसार के सुखों का बिना उपभोग किये अजीवन परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, और इस लक्ष्मी राह पर आ जाते हैं।

महाराज। उन सर्वज्ञ, सर्वज्ञ, अर्हत् सम्यक् सम्बुद्ध भगवान् ने कहा है—भिक्षुओं। सुनो, तुम माता की उन्नतवाली स्त्रियों के प्रति माता का भाव रखो, बहन की उन्नतवाली स्त्रियों के प्रति बहन का भाव रखो, लड़की की उन्नतवाली के प्रति लड़की का भाव रखो। महाराज। यही कारण है कि यह नई उन्नत वाले भिक्षु ।

भारद्वाज। चित्त बड़ा चंचल है। कभी-कभी माता के समान वालियों पर भी मन चला जाता है, कभी कभी बहन के समान वालियों पर भी मन चला जाता है, कभी कभी लड़की के समान वालियों पर भी मन चला जाता है। भारद्वाज। क्या कोई दूसरा कारण है कि यह नई उन्नत वाले भिक्षु ?

महाराज। उन सर्वज्ञ भगवान् ने कहा है, "भिक्षुओं। पैर के तलबों के ऊपर और शिरके केश के नीचे चाम से लपेटे हुए नाना प्रकार की गन्धियों का खाल करो। इस शरीर में हैं—केश, लोम, त्वक्, दन्त, च्चक्षु, मान, धमनियों, हड्डी, हड्डी की मज्जा, वक्त्र, हृदय, यकृत, हृदय की झिल्ली, तित्थी, फेफड़ा, आँत, घनी आँत, पेट, मूला, पित्त, कफ, पीब, लहू, पानी, चर्बी, आँसू, तेल, धूक, मेडा, लक्ष्मी, मूत्र। महाराज। यह भी कारण है कि यह नई उन्नत वाले भिक्षु ।

भारद्वाज। जिन भिक्षु ने काया, शील, चित्त और प्रज्ञा की भावना कर ली है उनके लिये तो यह सुकर हो सकता है। भारद्वाज। किन्तु, जिन भिक्षुओं ने ऐसी भावना नहीं कर ली है उनके लिये तो यह बड़ा दुष्कर है। भारद्वाज। कभी-कभी अशुभ की भावना करते करते शुभ की भावना होने लगती है। भारद्वाज। क्या कोई दूसरा कारण है जिससे यह नई उन्नत वाले भिक्षु ?

महाराज। सर्वज्ञ भगवान् ने कहा है—भिक्षुओं। तुम इन्द्रियों में सयत होकर विहार करो। चक्षु से रूप को देखकर मत ललच जाओ, मत उसमें स्वाद लेना चाहो। असयत चक्षु-इन्द्रिय से विहार करनेवाले के चित्त में लोभ, द्वेष, वीर्यमन्य और पापमय अकुशल धर्म पैदा होते हैं। इसके सवर के लिये यत्नशील बनो। चक्षु-इन्द्रिय की रक्षा करो।

श्रोत्र से शब्द सुन "मन से धर्मों को जान ।

महाराज। यह भी कारण है कि नई उन्नत वाले भिक्षु ।

भारद्वाज। आश्रय है, अधुभुत है ॥ उन सर्वज्ञ, सर्वज्ञ, अर्हत्, सम्यक् सम्बुद्ध भगवान् ने कितना अच्छा कहा है ॥ भारद्वाज। यही कारण है कि यह नई उन्नत वाले भिक्षु, कोमल, काले केशवाले, नई जवानों पाये, संसार के सुखों का बिना उपभोग किये अजीवन परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, और इस लक्ष्मी राह पर आ जाते हैं।

भारद्वाज। मैं भी जिस समय अरक्षित शरीर, वचन और मन में, अनुपस्थित स्मृति से, तथा असयत इन्द्रियों से अन्त पुर में पैठता हूँ, उस समय मेरा मन लोभ से असयत चंचल बना रहता है। और, जिस समय मैं रक्षित शरीर, वचन और मन से, उपस्थित स्मृति से, तथा सयत इन्द्रियों से अन्त पुर में पैठता हूँ, उस समय मेरा मन लोभ में नहीं पड़ता।

भारद्वाज। ठीक कहा है, बहुत ठीक कहा है ॥ भारद्वाज। जैसे उलटा को सीधा कर दे, ढंके को उधार दे, भटके को राह दिखा दे, अधकार में तेलप्रदीप उठा दे कि चक्षुवाले रूप देख लें, उसी तरह आप भारद्वाज ने अनेक प्रकार से धर्म को समझाया है। भारद्वाज। मैं भगवान् की शरण में जाता हूँ, धर्म की और भिक्षुत्व की। भारद्वाज। ज्ञान से अजन्म अपनी शरण आये मुझे उपायक स्वीकार करे।

### § ५. सोण सुत्त ( ३४. ३ ३ ५ )

इसी जन्म में निर्वाण-प्राप्ति का कारण

एक समय भगवान् राजगृह में त्रेलुवन कलम्बकनिवाप में विद्वत् करते थे।



तत्र गृहपतिपुत्र सोण बहो भगवान् य बहो आया । एक भार बँठ गृहपतिपुत्र सोण भगवान् से बोला मन्ते ! क्या कारण है कि कुछ सोण भजने देवते ही देवते परिधिर्वाल नहीं पा डेंते हैं । [ ईशो सू ३४ ३. ३ ५ ]

### ३ ६ पोसित सुच ( ३४ ३ ३ ६ )

#### धातुओं की विभिन्नता

एक समय आयुष्मान् भानम् कौशाग्नी के घोषिताराम में विहार करते थे ।

तत्र गृहपति घोषित बहो आयुष्मान् भानम् ने बहो आया ।

एक भार बँठ गृहपति घोषित आयुष्मान् भानम् ने बोला "मन्ते ! सायं धातुनामात् धातु नामात्" कहा करते हैं । मन्ते ! भगवान् ने धातुनामात् कैसे बताया है ?

गृहपति ! सुभाषणे बहुत धातुरूप बहुत विज्ञान और सुगवेदनीय स्वर्ग के प्रत्यय से सुल की वेदना उत्पन्न होती है । गृहपति ! अथिष बहुतपायुरूप यजुर्विज्ञान और दुग्भवेदनीय स्वर्ग के प्रत्यय से दुग् की वेदना उत्पन्न होती है । गृहपति ! उपेक्षित यजुर्वायुरूप यजुर्विज्ञान और अनुत्क-सुग वेदनीय स्वर्ग के प्रत्यय से अनुत्क-सुग वेदना उत्पन्न होती है ।

आश्रयात् मनोवात् ।

गृहपति ! भगवान् ने धातुनामात् को पर्ये ही समझाया है ।

### ३ ७ इतिहक सुच ( ३४ ३ ३ ७ )

#### प्रतीत्य समुत्थाय

एक समय आयुष्मान् महाशारदायन अयस्ती में सुररथर पथ पर विहार करते थे ।

तत्र गृहपति इतिहकानि जौ आयुष्मान् महाशारदायन ने बहो आया ।

एक भार बँठ गृहपति इतिहकानि आयुष्मान् महाशारदायन से बोला "मन्ते ! भगवान् ने बताया है कि धातुनामात् के प्रत्यय से स्वर्ग-नामात् उत्पन्न होता है । स्वर्गनामात् के प्रत्यय से वेदना नामात् उत्पन्न होता है । मन्ते ! कैसे धातुनामात् के प्रत्यय से स्वर्गनामात् और स्वर्गनामात् के प्रत्यय से वेदना-नामात् उत्पन्न होता है ।

गृहपति ! धिष्ठ यजु म थिष रूप को देव यह सुगवेदनीय यजुर्विज्ञान है तथा दावता है । स्वर्ग के प्रत्यय से सुगवेदनीय वेदना उत्पन्न होती है । यजु से ही अथिष रूप को देव यह दुग्भवेदनीय यजुर्विज्ञान है तथा दावता है । दुग्भवेदनीय स्वर्ग के प्रत्यय से दुग् वेदना उत्पन्न होती है । यजु से ही उपेक्षित यजु का देव यह अनुत्क-सुगवेदनीय यजुर्विज्ञान है तथा दावता है । अनुत्क-सुगवेदनीय स्वर्ग के प्रत्यय से अनुत्क सुग वेदना उत्पन्न होती है ।

गृहपति ! धोत्र म शरद सुच म म यमो य। वात् । ५

गृहपति ! इती शरद धातुनामात् के प्रत्यय से स्वर्गनामात् और स्वर्गनामात् के प्रत्यय से वेदना-नामात् उत्पन्न होता है ।

### ३ ८ ननुमपिता सुच ( ३४ ३ ३ ८ )

#### इती जग्म में निघण्टु प्राति का प्राणन

एक समय भगवान् जग्म में सुनुमावित म धातुनामात् सुगवेदनीय में विहार करने थे ।

तत्र गृहपति ननुमपिता बहो भगवान् ने बहो आया । एक भार बँठ गृहपति ननुमपिता भगवान् से बोला "मन्ते ! क्या कारण है [ ईशो सू ३४ ३ ३ ८ ]

### § ९. लोहिच्च सुत्त ( ३४. ३. ३ ९ )

प्राचीन और नवीन ब्राह्मणों की तुलना, इन्द्रिय-सयम

एक समय आयुष्मान् महा-कात्यायन अवन्ती में मक्करकट आरण्य में कुटी लगाकर विहार करते थे ।

तब, लोहिच्च ब्राह्मण के कुछ शिष्य लकड़ी चुनते हुये उस आरण्य में जहाँ आयुष्मान् महा-कात्यायन की कुटी थी वहाँ पहुँचे । आकर, कुटी के चारों ओर ऊषम मचाने लगे, जोर जोर से हल्ला करने लगे, और आपस में धर-पकड़ की खेल खेलने लगे—ये मधुमुण्डे नकली साधु बुरे, कुरूप, ब्रह्मा के पैर से उत्पन्न हुये, इन बुरे लोगों से संकृत, गुरुकृत, सम्मानित और पूजित है ।

तब, आयुष्मान् महाकात्यायन विहार से निकल, उन लडकों से बोले—लडके ! हल्ला मत करो, मैं दुम्हें धर्म बताता हूँ ।

ऐसा कहने पर वे लडके झुप हो गये ।

तब, आयुष्मान् महा-कात्यायन उन लडकों से गाथा में बोले—

बहुत पहले के ब्राह्मण अच्छे शीलवाले थे,  
जो अपने पुराने धर्म का स्मरण रखते थे,  
उनकी इन्द्रियों सयत और सुरक्षित थीं,  
उन लोगोंने अपने शोध को जीत लिया था ॥१॥  
धर्म और ध्यान में वे रत रहते थे,  
वे ब्राह्मण पुराने धर्म का स्मरण रखते थे,  
यह उन सत्कर्मों को छोड़, गोत्र का रट लगाते हैं,  
[ दारीर, वचन, मनसे ] ढलटा पुलटा आचरण करते हैं ॥२॥  
गुस्ते से बूढ़, धमण्ड से बिल्कुल पँडे,  
स्थावर और जगम को सताते,  
असयत फिज़ल के होते हैं,  
स्वप्न में पाये धनके समान ॥३॥  
उपवास करने वाले, कड़ी जमीन पर सोने वाले,  
प्रात काल में स्नान, और तीन वेद,  
रुखड़े भजिन, जटा और भस्म,  
मन्त्र, शीलव्रत, और तपस्या ॥४॥  
डोंगी, और टेढ़ा दण्ड,  
और जल का आचमन लेना,  
ब्राह्मणों के यही सामान हैं,  $\frac{5}{4}$   
जोड़ने बढोरने के जाल फैलाये हैं ॥५॥  
और खुसमाहित चित्त,  
बिल्कुल प्रसन्न और निर्मल,  
सभी जीवों पर प्रेम रखना,  
यही ब्राह्मण की प्राप्ति का मार्ग ॥६॥

तब, वे लडके क्रुद्ध और असंतुष्ट हो जहाँ लोहिच्च ब्राह्मण था वहाँ गये । जाकर लोहिच्च ब्राह्मण से बोले—हे ! आप जानते हैं, भ्रमण महा-कात्यायन ब्राह्मणों के वेद को बिल्कुल नीचा दिग्ना कर तिरस्कार कर रहा है ।

इस पर लोहित माहात्म्य का कुछ भार अर्भवत हुआ ।

तब लोहित माहात्म्य के मनमें यह हुआ— कबका की बात को केवल सुनकर मुझे प्रमत्त महा-  
अत्यायन को कुछ ठीका सीधा कहना उचित नहीं । तो मैं स्वयं चक्रवर्त बनते पहुँचें ।

तब लोहित माहात्म्य उन कबका के साथ अहाँ आमुष्मान् महाकाल्यायन में बहाँ गया । चक्रवर्त,  
कुशास-मत्स्य पहुँचने के बाद एक ओर बँट गया ।

एक ओर बँट लोहित माहात्म्य न मुष्मान् महा-अत्यायन में बाँका—इं कात्यायन । क्या मीरे  
कुछ शिल्प लकड़ी चुबने इधर भाव में ?

हाँ माहात्म्य ! भाव में ।

हे कात्यायन ! क्या आपकी उम्र कबका से कुछ बातचीत भी हुई थी ?

हाँ माहात्म्य ! मुझ उम्र कबका से कुछ बातचीत भी हुई थी ।

हे कात्यायन ! आपकी उम्र कबका से क्या बातचीत हुई थी ?

हे माहात्म्य ! मुझे उम्र कबका से यह बातचीत हुई थी—

पशुत पहले के माहात्म्य अच्छे शीकबाजे थे

[ ऊपर बीसा ही ]

पहले माहात्म्य की प्राप्ति का मार्ग है तादृश

हे कात्यायन ! आपने जो 'इन्द्रिया में (ज्वारों में) अर्भवत कहा है जो 'इन्द्रिया म अर्भवत'  
वैसे होता है ?

माहात्म्य ! कोई पशु से रूप को रूप प्रिय क्या के प्रति मूर्च्छित हो जाता है । अग्नि कर्णों के  
प्रति चिन्त जाता है । अनुपस्थित स्थिति में क्लेशमुक्त चित्तबाका होकर विहार करता है । वह केतोविमुक्ति  
या प्रज्ञाविमुक्ति की वशावैत नहीं जानता है । इसमें उसके उत्पन्न पापमय अनुसक्त धर्म विरुद्ध  
विरुद्ध नहीं होते हैं ।

और से साथ सुन मम से घमों की जान ।

माहात्म्य ! इसी तरह 'इन्द्रियों में अर्भवत' होता है ।

कात्यायन ! अर्भवत है अनुसक्त है !! आपने 'इन्द्रिया म अर्भवत' कहा होता है ठीक बताया ।  
कात्यायन ! आपने इन्द्रिया में अर्भवत कहा है जो 'इन्द्रियों में अर्भवत' कैसे होता है ?

माहात्म्य ! पशु पशु से रूप को रूप प्रिय कर्णों के प्रति मूर्च्छित नहीं जाता है । अग्नि क्या के  
प्रति चिन्त नहीं जाता है । उपस्थित स्थिति में उत्पन्न क्लेशबाका होकर विहार करता है । वह केतोविमुक्ति  
और प्रज्ञाविमुक्ति का वशावैत जानता है । इससे उसके उत्पन्न पापमय अनुसक्त धर्म विरुद्ध विरुद्ध  
हो जाते हैं ।

भाव में पशु सुन मम से घमों की जान ।

माहात्म्य ! इसी तरह इन्द्रियों में अर्भवत होता है ।

हे कात्यायन ! आपने ही अनुसक्त है !! आपने इन्द्रियों में अर्भवत कहा होता है ठीक बताया ।

कात्यायन ! ठीक क्या है अनुसक्त कहा है !! कात्यायन ! जैसे उलटा को सीधा कर दे ।  
कात्यायन ! अत्र में आरम्भ अपनी प्राय आपने मुझ स्वीकार करें ।

कात्यायन ! जैसे आप महारुद्र में अपने उपायकों के घर पर आते हैं जैसे ही लोहित माहात्म्य के  
घर पर भी आते हैं । अहाँ जो कर्ण-कल्पितों हैं या आपका प्रणाम करेंगी आपकी सहा करेंगी  
अपना या अत्र में पहुँचें । उमरा वह चित्तहाल मर दिना और मुझ के लिये होगा ।

## § १०. वेरहचानि सुत्त ( ३४. ३. ३. १० )

## धर्म का सत्कार

एक समय आयुष्मान् उदायी कामण्डा में तोद्रेष्ठ्य ब्राह्मण के आश्रम में विहार करते थे ।

तब, वेरहचानि गोत्र की ब्राह्मणी का गिप्य जहाँ आयुष्मान् उदायी थे वहाँ आया और कुशल क्षेम पूछ कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर घटे उस लड़के को आयुष्मान् उदायी ने धर्मोपदेश कर दिखा दिया, धता दिया, उत्साहित कर दिया और प्रसन्न कर दिया ।

तब वह लड़का आसन से उठ जहाँ वेरहचानि-गोत्रको ब्राह्मणी थी वहाँ आया और बोला—हे ! आप जानती हैं, श्रमण उदायी धर्म का उपदेश करते हैं—आदि-कल्याण, मध्य-कल्याण, पर्यवसान-कल्याण, श्रेष्ठ, त्रिकुल पूर्ण, परिशुद्ध ब्रह्मचर्य को धता रहे हैं ।

लड़के ! तो, तुम मेरी ओर से फल के लिये श्रमण उदायी को भोजन का निमन्त्रण दे आओ ।

‘बहुत अच्छा !’ कह वह लड़का ब्राह्मणी को उत्तर दे जहाँ आयुष्मान् उदायी थे वहाँ गया और बोला—भन्ते ! फल के लिये मेरी आचार्याणी का निमन्त्रण कृपया स्वीकार करें ।

आयुष्मान् उदायी ने छुप रहकर स्वीकार कर लिया ।

तब, दूसरे दिन आयुष्मान् उदायी पूर्वाह्न समय पहन, और पात्र-चीवर ले जहाँ ब्राह्मणी का घर था वहाँ गये और बिछे आसन पर बैठ गये ।

तब, ब्राह्मणी ने अपने हाथ से अच्छे-अच्छे भोजन परोस कर उदायी को खिलाया ।

तब, आयुष्मान् उदायी के भोजन कर लेने और पात्र से हाथ फेर लेने पर, ब्राह्मणी पीढ़े से एक ऊँचे आसन पर चढ़ बैठी और शिर ढँक कर आयुष्मान् उदायी से बोली—श्रमण ! धर्म कहो ।

“बहिन ! जब समय होगा तब” कह, आयुष्मान् उदायी आसन से उठ कर चले गये ।

दूसरी बार भी लड़का ब्राह्मणी से बोला, “हे ! जानती हैं, श्रमण उदायी धर्म का उपदेश कर रहे हैं ।”

लड़के ! तुम तो श्रमण उदायी की इतनी प्रशंसा कर रहे हो, किंतु “श्रमण धर्म कहो” कहे जाने पर वे “बहिन ! जब समय होगा तब” कह, उठकर चले गये ।

आप ऊँचे आसन पर चढ़ बैठीं और शिर ढँक कर बोलीं—श्रमण धर्म कहो ! धर्म का मान-सत्कार करना चाहिये ।

लड़के ! तब, तुम मेरी ओर से फल के लिये श्रमण उदायी को भोजन का निमन्त्रण दे आओ ।

तब, आयुष्मान् उदायी के भोजन कर लेने और पात्र में हाथ फेर लेने पर ब्राह्मणी पीढ़े से एक नीच आसन पर बैठ, शिर खोलकर आयुष्मान् उदायी से बोली—भन्ते ! किसके होने से अर्हत् लोग सुख-दुःख का होना बताते हैं, और किसके नहीं होने से सुख-दुःख का नहीं होना बताते हैं ?

बहिन ! चक्षु के होने से अर्हत् लोग सुख-दुःख का होना बताते हैं, और चक्षु के नहीं होने से सुख-दुःख का नहीं होना बताते हैं ।

श्रोत्रके होने से मन के होने से ।

इस पर, ब्राह्मणी आयुष्मान् उदायी से बोली—भन्ते ! ठीक कहा है, जैसे उलटा को सीधा कर दे बुद्ध की शरण ।

गृहपति चर्म समाप्त

## चौथा भाग

### देवदह दर्श

४ १ देवदहखण सुच ( २४ ३ ४ १ )

अप्रमाद के साथ बिहारना

एक समय भगवान् साक्यों के देवदह नामक कस्बे में बिहार करते थे ।

वहाँ भगवान् ने मिथुओं को आमन्त्रित किया—मिथुओं ! मैं सभी मिथुओं को छा: स्वर्गापतनों में अप्रमाद से रहने को नहीं कहता थीर व मैं सभी मिथुओं को छा: स्वर्गापतना में अप्रमाद से नहीं रहने का कहता ।

मिथुओं ! जो मिथु अर्थात् हां तुके हैं—झीणाअन बिबडा महाचर्म पूरा हो गया है कृतकृत्य जिनके मार की कठार दिया है जिनके परमार्थ पा किया है जिनके मन्त्रसंयोजन छीन हो चुके हैं जो पूर्ण ज्ञान से विमुक्त हो चुके हैं—उन्हें मैं छा: स्वर्गापतनों में अप्रमाद से रहने को नहीं कहता । तो क्यों ? अप्रमाद को तो उन्होंने जीत लिया है वे अब प्रमाद नहीं कर सकते ।

मिथुओं ! जो शैशव मिथु हैं जिनके अपने पर पूरी विजय नहीं पायी है जो अनुत्तर योगदान की खोज में ( अविर्वाण की खोज में ) बिहार कर रहे हैं उन्हें को मैं छा: स्वर्गापतनों में अप्रमाद से रहने को कहता हूँ ।

ओइबिजेव सन् मनीविजैय धर्म ।

मिथुओं ! अप्रमाद के इसी रूप को देख मैं उन मिथुओं को छा: स्वर्गापतनों में अप्रमाद से रहने को कहता हूँ ।

४ २ सगम सुच ( २४ ३ ४ २ )

मिथु जीवन की प्रार्सा

मिथुओं ! तुम्हें ज्ञान हुआ क्या काम हुआ कि महाचर्मवास का अवकाश मिला ।

मिथुओं ! हमने छा: स्वर्गापतनिक नाम के मन्त्र देखे हैं । वहाँ बहुत से जो रूप देखता है सभी अविद्य रूप ही देखता है इह रूप नहीं । अनुत्तर ही देखता है सुन्दर नहीं । अविद्य रूप ही देखता है प्रिय रूप नहीं ।

वहाँ शीघ्र से जो पाप्म सुनता है मन्त्रों को धर्म आनता है ।

मिथुओं ! तुम्हें ज्ञान हुआ क्या काम हुआ कि महाचर्मवास का अवकाश मिला ।

मिथुओं ! हमने छा: स्वर्गापतनिक नाम के स्वर्ग देखे हैं । वहाँ बहुत से जो रूप देखता है सभी इह रूप ही देखता है अविद्य रूप नहीं । सुन्दर रूप ही देखता है अनुत्तर रूप नहीं । मिथ रूप ही देखता है अविद्य रूप नहीं ।

वहाँ आज से जो पाप्म सुनता है । मन्त्रों का धर्म आनता है इह धर्म ही आनता है अविद्य धर्म नहीं ।

मिथुओं ! तुम्हें ज्ञान हुआ क्या काम हुआ कि महाचर्मवास का अवकाश मिला ।

### § ३. अगल्य सुत्त ( ३४. ३ ४ ३ )

#### समल का फेर

भिक्षुओ ! देवता और मनुष्य रूप चाहनेवाले, और रूपसे प्रसन्न रहनेवाले हैं । भिक्षुओ ! रूपां के बदलने और नष्ट होने से देवता और मनुष्य दुःखपूर्वक विहार करते हैं । शब्द \* । गन्ध \* । रस \* । स्पर्श \* । धर्म \* ।

भिक्षुओ ! तथागत अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध रूप के समुदय, अस्त होने, आस्वाद, दोष, और मोक्ष को यथार्थ जान रूपचाहने वाले नहीं होते हैं, रूप में रत नहीं होते हैं, रूप में प्रसन्न रहने वाले नहीं होते हैं । रूपके बदलने और नष्ट होने से बुद्ध सुख-पूर्वक विहार करते हैं । शब्द के समुदय \* । गन्ध \* । रस \* । स्पर्श \* । धर्म \* ।

भगवान् ने यह कहा । यह कह कर बुद्ध फिर भी बोले —

रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्पर्श और सभी धर्म,

जब तक जैसे अभीष्ट, सुन्दर और लुभावने कहे जाते हैं, ॥१॥

सो देवताओं के साथ सारे ससार का सुख समझा जाता है,

जहाँ वे निरुद्ध हो जाते हैं उसे वे दुःख समझते हैं ॥२॥

किंतु, पण्डित लोग तो सत्काय के निरोध को सुख समझते हैं,

ससार की समझ से उनकी समझ कुछ उलटी होती है ॥३॥

जिसे दूसरे लोग सुख कहते हैं, उसे पण्डित लोग दुःख कहते हैं,

जिसे दूसरे लोग दुःख कहते हैं, उसे पण्डित लोग सुख कहते हैं ॥४॥

दुर्ज्ञेय धर्म को देखो, मूढ़ अविद्वानों में,

कलेशावरण में पड़े अज्ञ लोगों को यह अन्धकार होता है ॥५॥

ज्ञानी सन्तों को यह सुखा प्रकाश होता है,

धर्म न जानने वाले पास रहते हुये भी नहीं समझते हैं ॥६॥

भवराग में लीन, भवश्रोत में रहते,

मार के वश में पड़े, धर्म को ठीक ठीक नहीं जान सकते ॥७॥

पण्डितों को छोड़, भला कौन सम्बुद्ध-पद का योग्य हो सकता है !

जिस पद को ठीक से जान, अनाश्रय निर्वाण पा लेंते हैं ॥८॥

\* रूप के बदलने और नष्ट होने से बुद्ध सुखपूर्वक विहार करते हैं ।

### § ४. पठम पलासी सुत्त ( ३४ ३ ४ ४ )

#### अपनत्व-रहित का त्याग

भिक्षुओ ! जो तुम्हारा नहीं है उसे छोड़ दो । उसे छोड़ देना तुम्हारे हित और सुख के लिये होगा । भिक्षुओ ! तुम्हारा क्या नहीं है ?

भिक्षुओ ! कुछ तुम्हारा नहीं है, उसे छोड़ दो । उसे छोड़ देना तुम्हारे हित और सुख के लिये होगा । श्रोत्र मन ।

भिक्षुओ ! जैसे यदि इस जेतवन के वृण-काष्ठ-शाखा-पलास को लोग चाहे ले जायें, जला दें या जो हच्छा करें, तो क्या तुम्हारे मन में ऐसा होगा—ये हमें ले जा रहे हैं, या जला रहे हैं, या जो हच्छा कर रहे हैं

नहीं मन्ता ।

सो क्यों ?

मन्ता । क्योंकि यह म का मेरा भाग्य है म अपना है ।

मिथुभो ! मैं ही बहुत तुम्हारा नहीं हूँ उसे छोड़ दो । उसे छोड़ देना तुम्हारे हित और सुख के लिये होगा । भोग्य - मग ।

### § ५ द्वितीय पलासी सुप्त ( ३४ ३ ४ ५ )

अपमत्स्य-रहित का त्याग

[ ऊपर मैसा ही ]

### § ६ पठम अज्ज्ञस्य सुप्त ( ३४ ३ ४ ६ )

अनित्य

मिथुभो ! यत्तु अनित्य है । यत्तु की उत्पत्ति का जो हेतु = प्रत्यय है वह भी अनित्य है ।

मिथुभो ! अनित्य से उत्पन्न होने वाला यत्तु कहीं से नित्य होगा ?

आर । 'मन कश्चित्प ह । मन प्री उत्पत्ति का जो हेतु = प्रत्यय है वह भी अनित्य है ।

मिथुभा ! अनित्य से उत्पन्न होने वाला मन कहीं से नित्य होगा ?

मिथुभो ! इस बात परित्यक्त आर्यभाष्यक 'जाति क्षीण दुर्ह' काक करता है ।

### § ७ द्वितीय अज्ज्ञस्य सुप्त ( ३४ ३ ४ ७ )

दुःख

मिथुभा ! यत्तु दुःख है । यत्तु की उत्पत्ति का जो हेतु = प्रत्यय है वह भी दुःख है । मिथुभो !

दुःख से उत्पन्न होनेवाला यत्तु कहीं से सुख होगा ?

आर । सब दुःख से उत्पन्न होनेवाला मन कहीं से सुख होगा ?

मिथुभा ! इस बात परित्यक्त आर्यभाष्यक 'जाति क्षीण दुर्ह' काक करता है ।

### § ८ तृतीय अज्ज्ञस्य सुप्त ( ३४ ३ ४ ८ )

अमार्ग

मिथुभा ! यत्तु अमार्ग है । यत्तु की उत्पत्ति का जो हेतु = प्रत्यय है वह भी अमार्ग है ।

मिथुभो ! अमार्ग से उत्पन्न होनेवाला यत्तु कहीं से भाग्य होगा ?

आर । मग ।

मिथुभा ! इस बात परित्यक्त आर्यभाष्यक 'जाति क्षीण दुर्ह' काक करता है ।

### § ९-११ पठम द्वितीय-तृतीय पाहिर सुप्त ( ३४ ३ ४ ९-११ )

अनित्य दुःख अमार्ग

मिथुभा ! सब अनित्य है । सब की उत्पत्ति का जो हेतु = प्रत्यय है वह भी अनित्य है ।

मिथुभा ! अनित्य से उत्पन्न होनेवाला सब कहीं से नित्य होगा ?

आर । मग - मग । मग । मग । मग ।

मिथुभा ! सब दुःख है ।

मिथुभा ! सब अमार्ग है ।

मिथुभो ! इस बात परित्यक्त आर्यभाष्यक 'जाति क्षीण दुर्ह' काक करता है ।

द्वन्द्व द्वन्द्व द्वन्द्व

## पाँचवाँ भाग

### नवपुराण वर्ग

§ १. कम्म सुत्त ( ३४. ३. ५. १ )

#### नया और पुराना कर्म

भिक्षुओ ! नये-पुराने कर्म, कर्म निरोध, और कर्म निरोधगामी मार्ग का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओ ! पुराने कर्म क्या हैं ? भिक्षुओ ! चक्षु पुराना कर्म है (=पुराने कर्म से उत्पन्न), अभि-संस्कृत (=कारण से पैदा हुआ), अभिसञ्चेतयित (=चेतना से पैदा हुआ), और वेदना का अनुभव करने वाला । श्रोत्र मन । भिक्षुओ ! इसी को कहते हैं 'पुराना कर्म' ।

भिक्षुओ ! नया कर्म क्या है ? भिक्षुओ ! जो इस समय मन, वचन या शरीर से करता है वह नया कर्म कहलाता है ।

भिक्षुओ ! कर्मनिरोध क्या है ? भिक्षुओ ! जो शरीर, वचन और मन से किये गये कर्मों के निरोध से विमुक्ति का अनुभव करता है, वह कर्मनिरोध कहा जाता है ।

भिक्षुओ ! कर्मनिरोधगामी मार्ग क्या है ? यही आठ अष्टांगिक मार्ग—जो, (१) सम्यक् दृष्टि, (२) सम्यक् सकल्प, (३) सम्यक् वचन, (४) सम्यक् कर्मान्त, (५) सम्यक् आजीव, (६) सम्यक् ज्ञायाम, (७) सम्यक् स्मृति, और (८) सम्यक् समाधि । भिक्षुओ ! इसी को कहते हैं कर्म-निरोध-गामी मार्ग ।

भिक्षुओ ! इस तरह, मैंने पुराने कर्म का उपदेश दे दिया, नये कर्म का उपदेश दे दिया, कर्म-निरोध का उपदेश दे दिया, कर्म-निरोधगामी मार्ग का उपदेश दे दिया ।

भिक्षुओ ! जो एक हितैषी दबालू शास्ता (=गुरु) को अपने श्रावकों के प्रति झुपा करके करना चाहिये मैंने तुम्हें कर दिया ।

भिक्षुओ ! यह वृक्ष-मूल है, यह ज्ञान्यागार है । भिक्षुओ ! ध्यान लगाओ । मत प्रमाद करो । पीछे पश्चात्ताप नहीं करना । तुम्हारे लिये मेरा यही उपदेश है ।

§ २. पठम सप्पाय सुत्त ( ३४. ३. ५. २ )

#### निर्वाण-साधक मार्ग

भिक्षुओ ! मैं तुम्हें निर्वाण के साधक मार्ग का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओ ! निर्वाण का साधक मार्ग क्या है ? भिक्षुओ ! भिक्षु देखता है कि चक्षु अनित्य है, रूप अनित्य है, चक्षु-विज्ञान अनित्य है, चक्षुसस्पर्श अनित्य है, और जो चक्षु सस्पर्श के प्रत्यय से सुख, दुःख या अदुःख-सुख वेदना उत्पन्न होती है वह भी अनित्य है ।

श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन ।

भिक्षुओ ! निर्वाण-साधन का यही मार्ग है ।



## § ३-४ वृत्तिय तृतीय सप्ताय सुत्त ( ३४ ३ ५ ३-४ )

## निर्घाण-साधक माग

मिथुओ ! मिथु वेणटा इ कि चत्तु दुत्त ई [ उपर प्रमा ]

मिथुओ ! मिथु वेणटा ई कि चत्तु अत्ताप्प ई ।

मिथुओ ! निर्घाण-साधन का पही मार्ग है ।

## § ५ चतुत्थ सप्ताय सुत्त ( ३४ ३ ५ ५ )

## निर्घाण-साधक माग

मिथुओ ! निर्घाण-साधन के मार्ग का उपदेश करूँगा । उस सुत्तो ।

मिथुओ ! निर्घाण-साधन का मार्ग क्या है ?

मिथुओ ! क्या समझते हो चत्तु नित्य है वा अनित्य ?

अनित्य मन्ते ।

ओ अनित्य है वह दुत्त न है वा सुत्त ?

सुत्त मन्ते ।

ओ अनित्य दुःख आर परिवर्तनशील है उस क्या प्रमा समझना चाहिये—वह मेरा है पर मैं हूँ, वह मेरा आरमा है ?

मही मन्ते ।

कप नित्य है वा अनित्य है ?

चत्तुविज्ञान । चत्तुसंस्पर्स । वेदना ।

ओत्त । प्राण । विद्या । क्वापा । मज्ज ।

मिथुओ ! इमे ज्ञान परिहृत आर्यशास्त्र वाति क्षीय हूँ वाच सेता है ।

मिथुओ ! निर्घाण-साधन का पही मार्ग है ।

## § ६ अन्तेवासी सुत्त ( ३४ ३ ५ ६ )

## पिन्ना अन्तेवासी और आचार्य के विद्वरना

मिथुओ ! पिन्ना अन्तेवासी<sup>१</sup> आर पिन्ना आचार्य के ब्रह्मचर्य का पाठन किया जाता है ।

मिथुओ ! अन्तेवासी और आचार्य वाक्का मिथु दुत्त से विद्वर करता है सुत्त से नहीं ।

मिथुओ ! पिन्ना अन्तेवासी आर आचार्य का मिथु सुत्त से विद्वर करता है ।

मिथुओ ! अन्तेवासी आर आचार्यवाक्का मिथु कमे दुत्त से विद्वर करता है सुत्त से नहीं ?

मिथुओ ! चत्तु से कप देय मिथु को पापमय चत्तु संरक्षण वाले संवीजन में वाचने वाले अज्ञानक धर्म उदरक हाते हैं । वह अज्ञानक धर्म उनके अन्त उरम के बनते हैं । इसकिये वह अन्तेवासी वाक्का कहा जाता है । से पापमय अज्ञानक धर्म उनके माच समुदाचारम करते हैं । इसकिये वह आचार्य वाक्का कहा जाता है ।

ओत्त से धरद सुत्त मन से चमों का ज्ञान ।

मिथुओ ! इम तरह अन्तेवासी और आचार्यवाक्का मिथु दुत्त से विद्वर करता है सुत्त से नहीं ।

मिथुओ ! पिन्ना अन्तेवासी और आचार्यवाक्का मिथु कमे सुत्त से विद्वर करता है ?

१ अन्तेवासी = ( गावारवाच्य ) टिप्पण । 'अ-वाग्गम से ददने वाला कथ' — अरदकवा ।

२ आचार्य = 'आचरण करने वाला कथ' — अरदकवा ।

भिक्षुओं ! चक्षु से रूप देख, भिक्षु का पापमय अनुग्रह धर्म नहीं उपाय करते हैं। यह अनुग्रह धर्म उसके अन्तःकरण में नहीं प्रयत्न है, इसलिये वह 'बिना अन्तेपार्सी वाला' कहा जाता है। ये पापमय अनुग्रह धर्म उसके साथ समुत्तरण नहीं करते हैं, इसलिये वह 'बिना आचार्यवाला' कहा जाता है।

श्रोत्र से शब्द सुन मन में धर्मों को जन ।

भिक्षुओं ! इस तरह, बिना अन्तेपार्सी और आचार्यवाला भिक्षु सुगम में विहार करता है।

### § ७ किमतिथय सुत्त ( ३४, ३ ५, ७ )

दुःख विनाश के लिये ब्रह्मचर्य पालन

भिक्षुओं ! यदि तुम्हें दूसरे मतवाले मनुष्यों से—आयुष्य ! किन्तु अभिप्राय से श्रमण गौतम के शासन में ब्रह्मचर्य पालन करना है—तो तुम्हें उसका इस तरह उत्तर देना चाहिये —

आयुष्य ! दुःख की परिज्ञा के लिये भगवान् के शासन में ब्रह्मचर्य पालन किया जाता है।

भिक्षुओं ! यदि तुम्हें दूसरे मतवाले मनुष्यों से—आयुष्य ! वह कौन सा दुःख है जिसकी परिज्ञा के लिये भगवान् के शासन में ब्रह्मचर्य पालन किया जाता है—तो तुम्हें उसका इस तरह उत्तर देना चाहिये —

आयुष्य ! चक्षु दुःख है, इसकी परिज्ञा के लिये भगवान् के शासन में ब्रह्मचर्य पालन किया जाता है। रूप दुःख है । चक्षुःविज्ञान ।

चक्षुस्स्पर्श । वेदना ।

श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन ।

आयुष्य ! यही दुःख हैं जिसकी परिज्ञा के लिये भगवान् के शासन में ब्रह्मचर्य पालन किया जाता है।

भिक्षुओं ! दूसरे मतवाले मनुष्यों से पूछे जाने पर तुम ऐसा ही उत्तर देना ।

### § ८ अतिथि नु खो परियाय सुत्त ( ३४ ३ ५, ८ )

आत्म-ज्ञान कथम को कारण

भिक्षुओं ! क्या कोई ऐसा कारण है जिससे भिक्षु बिना श्रद्धा, रुचि, अनुश्रवण, आकारपरिवर्तक और इष्टिनिष्ठान क्षान्ति के परम ज्ञान से ऐसा कहे—जति क्षीण हो गई, ब्रह्मचर्य पूरा हो गया ?

नन्ते ! धर्म के मूल भगवान् ही ।

हाँ भिक्षुओं ! ऐसा कारण है जिससे भिक्षु बिना श्रद्धा के जाति क्षीण हो गई जान लेता है।

भिक्षुओं ! वह कारण क्या है ?

भिक्षुओं ! चक्षु से रूप देख यदि अपने भीतर राग-द्वेष-मोह होवे तो भिक्षु जानता है कि मेरे भीतर राग-द्वेष-मोह हैं। यदि अपने भीतर राग नहीं हो तो भिक्षु जानता है कि मेरे भीतर राग नहीं है।

भिक्षुओं ! ऐसी अवस्था में क्या वह भिक्षु श्रद्धा से, या रुचि से धर्मों को जगता है ?

नहीं नन्ते !

भिक्षुओं ! क्या यह धर्म प्रज्ञा से देख कर जाने जाते हैं ?

हाँ नन्ते !

भिक्षुओं ! यही कारण है जिससे भिक्षु बिना श्रद्धा, रुचि के परम ज्ञान से ऐसा कहता है—जति क्षीण हो गई ।

आत्र । प्राण । विद्वान् । वापा । मन ।

### § ६ इन्द्रिय सुप्त ( ३४ ३ ५ ९ )

इन्द्रिय सम्पन्न कौन ?

एक ओर बैठ वह मिष्ठु भगवान् से बोला 'मम्ते ! छोड़ो 'इन्द्रियसम्पन्न इन्द्रियसम्पन्न' कहा करते हैं । मम्ते ! इन्द्रियसम्पन्न कैसा होता है ?

मिष्ठु ! अशु-शुभ्रिय में उत्पत्ति और विनाश का वेपने वाला अशु इन्द्रिय में निर्बन्ध करता है । प्रीति । प्राण ?

निर्बन्ध क्रम से रागरहित होता है । रागरहित होने से विमुक्त हो जाता है । जाति क्षीन हुई — जान छूटा है ।

मिष्ठु ! ऐसे ही इन्द्रियसम्पन्न होता है ।

### § १० कथिक सुप्त ( ३४ ३ ५ १० )

धर्मकथिक कौन ?

एक ओर बैठ वह मिष्ठु भगवान् से बोला 'मम्ते ! कारा 'धर्मकथिक धर्मकथिक' कहते हैं । मम्ते ! धर्मकथिक कैसा होता है ?

मिष्ठु ! यदि अशु के निर्बन्ध बराम्ब और निरोध के लिये धर्म का उपद्रव करता है । तो इतने से वह धर्मकथिक कहा जा सकता है । यदि अशु के निर्बन्ध पराम्ब और निरोध के लिये धर्महीन हो तो इतने से वह धर्मानुधर्मविपन्न कहा जा सकता है । यदि अशु के निर्बन्ध बराम्ब और निरोध से क्या रागरहित बन विमुक्त हा गया हा ता कहा जा सकता है कि हमने अपने इतने ही इतने निर्बन्ध का लिया है ।

आत्र । प्राण । विद्वान् । वापा । मन ।

नवपुराण वर्ग समाप्त  
द्वितीय पण्णासक समाप्त ।

# चतुर्थ पण्णासक

## पहला भाग

### तृष्णा-क्षय वर्ग

#### § १. पठम नन्दिकखय सुत्त ( ३४ ४. १ १ )

##### सम्यक् दृष्टि

भिक्षुओ ! जो अनित्य चक्षु को अनित्य के तौर पर देखना है, वही सम्यक् दृष्टि है । सम्यक् दृष्टि होने से निर्वेद करता है । तृष्णा के क्षय से राग का क्षय होता है, राग का क्षय होने से तृष्णा का क्षय होता है । तृष्णा और राग के क्षय होने से चित्त विमुक्त हो गया—ऐसा कहा जाता है ।

श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन ।

#### § २. दुतिय नन्दिकखय सुत्त ( ३४ ४ १ २ )

##### सम्यक् दृष्टि

[ ऊपर जैसा ही ]

#### § ३ ततिय नन्दिकखय सुत्त ( ३४. ४. १. ३ )

##### चक्षु का चिन्तन

भिक्षुओ ! चक्षु का ठीक से चिन्तन करो । चक्षु की अनित्यता को यथार्थ रूप में देखो । भिक्षुओ ! इस तरह, भिक्षु चक्षु में निर्वेद करता है । तृष्णा के क्षय से राग का क्षय होता है [ शेष ऊपर जैसा ही ] ।

#### § ४ चतुत्थ नन्दिकखय सुत्त ( ३४ ४ १ ४ )

##### रूप-चिन्तन से मुक्ति

भिक्षुओ ! रूप का ठीक से चिन्तन करो । रूप की अनित्यता को यथार्थ रूप में देखो । भिक्षुओ ! इस तरह, भिक्षु रूप में निर्वेद करता है । तृष्णा के क्षय से राग का क्षय होता है, राग के क्षय से तृष्णा का क्षय होता है । तृष्णा और राग के क्षय होने से चित्त विमुक्त हो गया—ऐसा कहा जाता है ।

शब्द । गन्ध । रस । स्पर्श । धर्म\*\* ।

#### § ५ पठम जीवकम्भवन सुत्त ( ३४ ४. १ ५ )

##### समाधि-भावना करो

एक समय भगवान् राजगृह में जीवक के आश्रय में विहार करते थे ।

वहाँ, भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया —भिक्षुओ ! समाधि की भावना करो ।

भिक्षुओ ! समाहित भिक्षु को यथार्थ-ज्ञान हो जाता है । किसका यथार्थ-ज्ञान हो जाता है ?

बहु भवित्य ई—इसका पर्याय-ज्ञान हो जाता है । रूप भवित्य ई—इसका पर्याय-ज्ञान हो जाता है । बहु विज्ञान । बहु संस्कार । वेदना ।

प्राण । प्राण । विद्या । काया । मन ।

मिथुभो ! तमाधि की भावना कर । मिथुसो ! समाहित मिथु को पर्याय-ज्ञान हो जाता है ।

### § ६ दुविय जीवकम्बयन सुत्त ( ३४ ४ १ ६ )

#### एकान्त चिन्तन

मिथुभो ! एकान्त चिन्तन में लग जाओ । मिथुभो ! एकान्त चिन्तन में रह मिथु को पर्याय-ज्ञान हो जाता है । कियक पर्याय-ज्ञान हो जाता है ?

बहु भवित्य [ ऊपर जैसा ही ]

मिथुसो ! एकान्त चिन्तन में लग जाओ ।

### § ७ पठम कोट्टिस सुत्त ( ३४ ४ १ ७ )

#### भवित्य से इच्छा का त्याग

एक ओर धैर्य आधुनामम महाकाट्टिन मगवाप् स बोव—मग्गे ! मगवाप् सुप्प संसप स धमं क्क उपत्ता वरें ।

कोट्टिन ! जो भवित्य है उसके प्रति अपनी इच्छा को इरादा । कोट्टिन ! क्या भवित्य है ?

कोट्टिन ! बहु भवित्य है उसके प्रति अपनी इच्छा को इरादा । रूप बहुविज्ञान । बहु संस्कार । वेदना ।

प्राण । प्राण । विद्या । काया । मन ।

कोट्टिन ! जो भवित्य है उसके प्रति अपनी इच्छा को इरादा ।

### § ८-९ दुविय तथिय कोट्टिस सुत्त ( ३४ ४ १ ८-९ )

#### दुग्ध से इच्छा का त्याग

कोट्टिन ! जो दुग्ध है उसके प्रति अपनी इच्छा को इरादा ।

कोट्टिन ! जो भवित्य है उसके प्रति अपनी इच्छा का इरादा ।

### § १० मिप्पादिट्ठि सुत्त ( ३४ ४ १ १० )

#### मिप्पादिट्ठि का प्रदान कीम

एक ओर पठ यह मिथु मगवाप् से बोवा । 'मग्गे ! क्या जान भीर देवहर मिप्पादिट्ठि प्रदीप होती है ?

मिथु ! बहु को भवित्य जान भीर देवहर मिप्पादिट्ठि प्रदीप होती है । रूप । बहु-विज्ञान । बहुसंस्कार । वेदना । प्राण मन ।

मिथुसो ! इस जान भीर देवहर मिप्पादिट्ठि प्रदीप होती है ।

### § ११ म्पकाय सुत्त ( ३४ ४ १ ११ )

#### साकायदिट्ठि का प्रदान कीम

प्राण मन मन भीर देवहर म्पकायदिट्ठि प्रदीप होती है ।

भिक्षु ! चक्षु को दुःखवाला जान और देखकर सत्कायदृष्टि प्रहीण होती है । रूप । चक्षु-विज्ञान । चक्षु-स्पर्श । वेदना । श्रोत्र मन ।

भिक्षु ! इसे जान और देखकर सत्कायदृष्टि प्रहीण होती है ।

### § १२. अक्ष सुत्त ( ३४. ४ १ १२ )

आत्मदृष्टि का प्रहाण कैसे ?

भन्ते ! क्या जान आर देखकर आत्मानुदृष्टि प्रहीण होती है ?

भिक्षु ! चक्षु को अनात्म जान और देखकर आत्मानुदृष्टि प्रहीण होती है । रूप । चक्षु-विज्ञान । चक्षु-स्पर्श । वेदना । श्रोत्र मन ।

भिक्षु ! इसे जान और देखकर आत्मानुदृष्टि प्रहीण होती है ।

नन्दिशय चर्ग समाप्त

## दूसरा भाग

### सद्वि पेय्याल

§ १ पठम छन्द सुच ( ३४ ४ ० १ )

#### इच्छा को द्वाभा

मिथुओ ! जो अनित्य है उसके प्रति अपनी इच्छा को द्वाभाओ । मिथुओ ! क्या अनित्य है ?  
मिथुओ ! बहुत अनित्य है उसके प्रति अपनी इच्छा को द्वाभाओ । भोज । प्राण । जिह्वा ।  
कष्या । मन ।

§ २ ३ द्विविय-तविय छन्द सुच ( ३४ ४ ० २ ३ )

#### राग का द्वाभा

मिथुओ ! जो अनित्य है उसके प्रति अपने राग को द्वाभाओ ।  
मिथुओ ! जो अनित्य है उसके प्रति अपने छन्द-राग को द्वाभाओ ।

§ ४-६ छन्द सुच ( ३४ ४ २ ४-६ )

#### इच्छा को द्वाभा

मिथुओ ! जो अनित्य है उसके प्रति अपनी इच्छा ( छन्द ) को द्वाभाओ ।  
मिथुओ ! जो अनित्य है उसके प्रति अपने राग को द्वाभाओ ।  
मिथुओ ! जो अनित्य है उसके प्रति अपने छन्द-राग को द्वाभाओ ।  
बहु । भोज । प्राण । जिह्वा । कष्या । मन ।

§ ७-९ छन्द सुच ( ३४ ४ ० ७-९ )

#### इच्छा को द्वाभा

मिथुओ ! जो अनित्य है उसके प्रति अपनी इच्छा को द्वाभाओ । राग को द्वाभाओ । छन्द-राग  
का द्वाभाओ ।

मिथुओ ! क्या अनित्य है ?

मिथुओ ! क्या अनित्य है ? शब्द अनित्य है । गन्ध । रस । स्पर्श । धर्म ।

§ १०-१२ छन्द सुच ( ३४ ४ ० १०-१२ )

मिथुओ ! जो अनित्य है उसके प्रति अपनी इच्छा का द्वाभाओ । राग का द्वाभाओ । छन्द-राग का  
द्वाभाओ ।

मिथुओ ! क्या अनित्य है ?

मिथुओ ! क्या अनित्य है ? शब्द अनित्य है । गन्ध । रस । स्पर्श । धर्म ।

§ १३-१५ छन्द सुच ( ३४ ४ ० १३-१५ )

#### इच्छा को द्वाभा

मिथुओ ! जो अनित्य है उसके प्रति अपनी इच्छा को द्वाभाओ । राग का द्वाभाओ । छन्द-राग  
का द्वाभाओ ।

मिथुओ ! क्या अनित्य है ?

मिथुओ ! क्या अनित्य है ? शब्द । गन्ध । रस । स्पर्श । धर्म ।

## § १६-१८, छन्द सुत्त ( ३४. ४ २. १६-१८ )

इच्छा की द्याना

भिक्षुओ ! जो अनात्म है उसके प्रति अपनी इच्छा को द्याओ । राग को द्याओ । छन्दराग को द्याओ ।

भिक्षुओ ! क्या अनात्म है ?

भिक्षुओ ! रूप अनात्म है । शब्द ' । गन्ध ' । रस ' । स्पर्श ' । धर्म ' ।

## § १९, अतीत सुत्त ( ३४ ४. २ १९ )

अनित्य

भिक्षुओ ! अतीत चक्षु अनित्य है । श्रोत्र ' । घ्राण ' । जिह्वा ' । काया । मन ' ।

भिक्षुओ ! इस ज्ञान, पण्डित आर्यश्रावक चक्षु में भिन्न करता है । श्रोत्र में 'मन में ' । भिन्न करने से राग-रहित हो जाता है । ' जाति क्षीण हुई ' जान लेता है ।

## § २०, अतीत सुत्त ( ३४ ४ २ २० )

अनित्य

भिक्षुओ ! अनागत चक्षु अनित्य है । श्रोत्र । मन ' ।

भिक्षुओ ! इसे ज्ञान, पण्डित आर्यश्रावक ' जाति क्षीण हुई ' जान लेता है ।

## § २१, अतीत सुत्त ( ३४. ४ २. २१ )

अनित्य

भिक्षुओ ! वर्तमान चक्षु अनित्य है ' । श्रोत्र ' मन ' ।

भिक्षुओ ! इसे ज्ञान, पण्डित आर्यश्रावक ' जाति क्षीण हुई ' जान लेता है ।

## § २२-२४, अतीत सुत्त ( ३४. ४. २. २२-२४ )

दुःख अनात्म

भिक्षुओ ! अतीत चक्षु दुःख है ' ।

भिक्षुओ ! अनागत चक्षु दुःख है ' ।

भिक्षुओ ! वर्तमान चक्षु दुःख है ।

भिक्षुओ ! इसे ज्ञान, पण्डित आर्यश्रावक ' जाति क्षीण हुई ' जान लेता है ।

## § २५-२७, अतीत सुत्त ( ३४. ४ २ २५-२७ )

अनात्म

भिक्षुओ ! अतीत चक्षु अनात्म है

भिक्षुओ ! अनागत चक्षु अनात्म है ।

भिक्षुओ ! वर्तमान चक्षु अनात्म है ' ।

भिक्षुओ ! इसे ज्ञान, पण्डित आर्यश्रावक ' जाति क्षीण हुई ' जान लेता है ।

## § २८-३०, अतीत सुत्त ( ३४ ४ २ २८-३० )

अनित्य

भिक्षुओ ! अतीत ' । अनागत । वर्तमान रूप अनित्य है । शब्द ' । गन्ध ' । रस ' । स्पर्श ' । धर्म ' ।

भिक्षुओ ! इसे ज्ञान, पण्डित आर्यश्रावक ' जाति क्षीण हुई ' जान लेता है ।



§ ३१-३३ अतीत सुप्त ( ३४ ४ ० ३१-३३ )

दुःख

मिथुभा ! अतीत । अनागत । वर्तमान रूप दुःख है । शब्द धर्म ।  
मिथुभो ! इसे जान पण्डित आर्यशास्त्र जाति क्षीण हुई जान होता है ।

§ ३४-३६ अतीत सुप्त ( ३४ ४ ० ३४-३६ )

अनात्म

मिथुभो ! अतीत । अनागत । वर्तमान रूप अनात्म है । शब्द धर्म ।  
मिथुभा ! इस जान पण्डित आर्यशास्त्र जाति क्षीण हुई जान होता है ।

§ ३७ यदनिष्प सुप्त ( ३४ ४ ० ३७ )

अनिरय, दुःख अनात्म

मिथुभो ! अतीत अन्तु अनिरय है । जो अनिरय है वह दुःख है । जो दुःख है वह अनात्म है । जो  
अनात्म है वह न मेरा है न मैं हूँ, और न मेरा आत्मा है । इसे यथार्थतः प्रज्ञापूर्वक जान लेना चाहिये ।  
अतीत मात्र । प्रण । विद्व । ज्ञाया । मग ।

मिथुभा ! इसे जान पण्डित आर्यशास्त्र जाति क्षीण हुई जान होता है ।

§ ३८ यदनिष्प सुप्त ( ३४ ४ २ ३८ )

अनिरय

मिथुभा ! अनागत अन्तु अनिरय है । जो अनिरय है वह दुःख है । जो दुःख है वह अनात्म है ।  
जो अनात्म है वह न मेरा है न मैं हूँ, और न मेरा आत्मा है । इसे यथार्थतः प्रज्ञापूर्वक जान  
लेना चाहिये ।

अनागत मात्र । प्रण । विद्व । ज्ञाया । मग ।

मिथुभो ! इसे जान पण्डित आर्यशास्त्र जाति क्षीण हुई जान होता है ।

§ ३९ यदनिष्प सुप्त ( ३४ ४ ० ३९ )

अनिरय

मिथुभा ! वर्तमान अन्तु अनिरय है । जो अनिरय है वह दुःख है । जो दुःख है वह अनात्म है ।  
जो अनात्म है वह न मेरा है न मैं हूँ, और न मेरा आत्मा है । इसे यथार्थतः प्रज्ञापूर्वक जान  
लेना चाहिये ।

वर्तमान मात्र । प्रण । विद्व । ज्ञाया । मग ।

मिथुभा ! इसे जान पण्डित आर्यशास्त्र जाति क्षीण हुई जान होता है ।

§ ४०-४२ यदनिष्प सुप्त ( ३४ ४ ० ४०-४२ )

दुःख

मिथुभा ! वर्तमान । अनागत । वर्तमान अन्तु दुःख है । जो दुःख है वह अनात्म है । जो  
अनात्म है वह न मेरा है न मैं हूँ, और न मेरा आत्मा है । इसे यथार्थतः प्रज्ञापूर्वक जान लेना चाहिये ।

वर्तमान मात्र । प्रण । विद्व । ज्ञाया । मग ।

मिथुभो ! इसे जान पण्डित आर्यशास्त्र जाति क्षीण हुई जान होता है ।

§ ४३-४५ यदनिष्प सुप्त ( ३४ ४ ० ४३-४५ )

अनात्म

मिथुभा ! अतीत । अनागत । वर्तमान अन्तु अनात्म है । जो अनात्म है वह न मेरा है न  
मैं हूँ, और न मेरा आत्मा है । इसे यथार्थतः प्रज्ञापूर्वक जान लेना चाहिये ।

श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक जाति क्षीण हुई जान लेता है ।

§ ४६-४८ यदनिच्च सुत्त ( ३४ ४ २ ४६-४८ )

अनित्य

भिक्षुओ ! अतीत । अनागत । वर्तमान रूप अनित्य है । ' शब्द । गन्ध ' । रस ।

धर्म ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक जाति क्षीण हुई जान लेता है ।

§ ४९-५१. यदनिच्च सुत्त ( ३४. ४. २ ४९-५१ )

अनात्म

भिक्षुओ ! अतीत । अनागत । वर्तमान रूप दुःख है । ' शब्द धर्म ' ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक ।

§ ५२-५४. यदनिच्च सुत्त ( ३४ ४ २. ५२-५४ )

अनात्म

भिक्षुओ ! अतीत । अनागत । वर्तमान रूप अनात्म है । जो अनात्म है वह न मेरा है, न मैं हूँ, न मेरा आत्मा है । इसे यथार्थत प्रज्ञापूर्वक जान लेना चाहिये ।

शब्द धर्म ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक जाति क्षीण हुई जान लेता है ।

§ ५५. अज्झत्त सुत्त ( ३४ ४. २. ५५ )

अनित्य

भिक्षुओ ! चक्षु अनित्य है । श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक ।

§ ५६. अज्झत्त सुत्त ( ३४ ४. २ ५६ )

दुःख

भिक्षुओ ! चक्षु दुःख है । श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक ।

§ ५७ अज्झत्त सुत्त ( ३४ ४ २ ५७ )

अनात्म

भिक्षुओ ! चक्षु अनात्म है । श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक ।

§ ५८-६० बाहिर सुत्त ( ३४ ४ २. ५८-६० )

अनित्य, दुःख, अनात्म

भिक्षुओ ! रूप अनित्य । दुःख । अनात्म । शब्द । गन्ध । रस । स्पर्श ।

धर्म ।

भिक्षुओ ! इसे जान, पण्डित आर्यश्रावक जाति क्षीण हो गई जान लेता है ।

सद्धि-पेठ्याल समाप्त

## तीसरा भाग

### समुद्र वर्ग

§ १ पठम समुद्र सुप्त ( ३४ ४ ३ १ )

#### समुद्र

मिथुनी ! अथ एषकञ्चल 'समुद्र' समुद्र कहा करते हैं । मिथुनी ! आर्यविभव में यह समुद्र नहीं कहा जाता । यह तो केवल एक महा उदक-राशि है ।

मिथुनी ! प्रलय का समुद्र तो बहुत है, रूप विपका वेग है । मिथुनी ! जो उस रूप-मय वेग को सह लेता है वह कहा जाता है कि इसमें अहर-अहर-माह (= पत्तरे का स्थान) — राक्षस बाके बहुत समुद्र को पार कर किचा है । विप्याय हो स्थल पर लड़ा है ।

श्लोक ' १ प्राण । विह्वल ' १ काया । मन ।

मगधान् मे यह कहा :—

जो इस सप्ताह सराक्षस समुद्र को  
उसके मयबाके दुस्तर को पार कर चुका है  
वह शानी विसका महापथे पूरा हो गया है  
कोर के अन्त को प्राप्त पारंगत कहा जाता है ॥

§ २ द्वितीय समुद्र सुप्त ( ३४ ४ ३ २ )

#### समुद्र

मिथुनी ! यह तो केवल एक महा उदक-राशि है ।

मिथुनी ! बहुविधोप रूप असीध गुण्डर है । मिथुनी ! आर्यविभव में इसी को समुद्र कहते हैं । बही वेध भार और महा के साथ यह कोक, अमल और आक्षय के साथ यह यका ईशता मनुष्य सभी विप्लव होने बुने हैं अत्यन्त-व्यक्त हो रहे हैं । विह्व-मिथ हो रहे हैं बास पाव बीसे हो रहे हैं । वे बार बार तरक में हुरीति को प्राप्त हो संसार से नहीं छूटते ।

श्लोक । प्राण । विह्वल । काया । मन ।

§ ३ त्रालिसिफ सुप्त ( ३४ ४ ३ ३ )

#### उप वसिपार्

जिसके राग ईश और अविद्या छुर जाती हैं वह इस पाह-नाशय-वर्मिभय वाले दुस्तर समुद्र को पार कर जाता है ।

लंग-रहित मनुष्य की पीठ देनेवाला उपाधि-रहित  
दुःख की पीठ की फिर उल्टा नहीं हो सकता  
अन्य हो गया उमरी कोई दण नहीं

वह मार (= मृत्युराज) को भी टका देने वाला है,  
ऐसा मैं फाटता हूँ ॥

भिक्षुओ ! जैसे, बंसी फेंकने वाला चारा लगाकर बंसी को किसी गहरे पानी में फेंके। तब, कोई मछली चारे की झालघ से उसे निगल जाय। भिक्षुओ ! इस प्रकार, वह मछली बंसी फेंकने वाले के हाथ पकड़कर बड़ी विपत्ति में पड़ जाय। बंसी फेंकने वाला जैसी इच्छा हो उम्मे करे। भिक्षुओ ! वेम्मे ही, लोगों को विपत्ति में डालने के लिये संसार में छ बंसी हैं। कौन से छ ?

भिक्षुओ ! चक्षुर्विज्ञेय रूप अर्भाष्ट, सुन्दर है। यदि कोई भिक्षु उनका अभिनन्दन करता है, उनमें लग्न हाँके रहता है, तो कहा जाता है कि उसने बंसी को निगल लिया है। मार के हाथ में आ वह विपत्ति में पड़ चुका है। पापी मार जैसी इच्छा उठे करेगा।

श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काना । मन ।

भिक्षुओ ! चक्षुर्विज्ञेय रूप अर्भाष्ट, सुन्दर है। यदि कोई भिक्षु उनका अभिनन्दन नहीं करता है, तो कहा जाता है कि उसने मार की बंसी को नहीं निगला है। उसने बंसी को काट दिया। वह विपत्ति में नहीं पड़ा है। पापी मार उसे जैसी इच्छा नहीं कर सकेगा।

श्रोत्र 'मन' ।

### ५ ४. खीररुक्ख सुत्त ( ३४. ४ ३ ४ )

#### आसक्ति के कारण

भिक्षुओ ! भिक्षु या भिक्षुणी का चक्षुर्विज्ञेय रूपों में राग लगा हुआ है, द्वेष लगा हुआ है, मोह लगा हुआ है, राग प्रहीण नहीं हुआ है, द्वेष प्रहीण नहीं हुआ है, मोह प्रहीण नहीं हुआ है। यदि कुछ भी रूप उसके सामने आते हैं तो वह श्रद्ध आसक्त हो जाता है, किसी विशेष का तो कहना ही क्या ?

सो क्यों ? क्योंकि उसके राग, द्वेष और मोह अभी लगे ही हुये हैं, प्रहीण नहीं हुये हैं।

श्रोत्र मन ।

भिक्षुओ ! जैसे, कोई दूध से भरा पीपल, या बड़, या पाकड़, या गूलर का नया कोमल वृक्ष हो। उसे कोई पुरुष एक तेज कुठार से जहाँ जहाँ मारे तो क्या वहाँ वहाँ दूध निकले ?

हाँ भन्ते !

सो क्यों ?

भन्ते ! क्योंकि उसमें दूध भरा है।

भिक्षुओ ! वैसे ही, भिक्षु या भिक्षुणी का चक्षुर्विज्ञेय रूपों में राग लगा हुआ है प्रहीण नहीं हुआ है। यदि कुछ भी रूप उसके सामने आते हैं तो वह श्रद्ध आसक्त हो जाता है, किसी विशेष का तो कहना ही क्या ?

सो क्यों ? क्योंकि उसके राग, द्वेष और मोह अभी लगे ही हुये हैं, प्रहीण नहीं हुये हैं।

श्रोत्र मन ।

भिक्षुओ ! भिक्षु या भिक्षुणी का चक्षुर्विज्ञेय रूपों में राग नहीं है, द्वेष नहीं है, मोह नहीं है, राग प्रहीण हो गया है, द्वेष प्रहीण हो गया है, मोह प्रहीण हो गया है। यदि विशेष रूप भी उसके सामने आते हैं तो वह आसक्त नहीं होता, कुछ का तो कहना ही क्या ?

सो क्यों ? क्योंकि उसके राग, द्वेष और मोह नहीं हैं, बिल्कुल प्रहीण हो गये हैं। श्रोत्र

मन ।

भिक्षुओ ! जैसे, कोई वृद्ध, सूखा-साखा पीपल, या बड़, या पाकड़, या गूलर का वृक्ष हो। उसे कोई पुरुष एक तेज कुठार से जहाँ जहाँ मारे तो क्या वहाँ वहाँ दूध निकलेगा ?

महीं मन्ते ।

तो क्यों ?

मन्ते ! क्योंकि उसमें रूप नहीं है ।

मिथुनो ! जैसे ही मिथु या मिथुनी का बहुबिम्बेय रूपों में राग महीं है । यदि विद्येय रूप में उसके सामन आते है तो वह भासक महीं होता कुछ का तो कहना ही क्या ?

तो क्यों ? क्योंकि उसके राग द्वेय भीर मोह महीं है ।

### § ५ कोट्टित सुच ( ३४ ४ ३ ५ )

#### छन्दराग ही बन्धन है

एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र भीर आयुष्मान् महाकोट्टित धाराणसी के पास क्षपिपतन मृगाशाय म विहार करते थे ।

तब आयुष्मान् महाकाट्टित संध्या समय प्नाम स उठ जहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र ये वहाँ जाने भार कुपाक-शेभ पृष्कर एक भीर बैठ गये ।

एक भीर बैठ आयुष्मान् महा कोट्टित आयुष्मान् सारिपुत्र से बोले आयुस ! क्या बहुत रूपों का बन्धन (उत्सपोवन) है या रूप ही बहुत के बन्धन है ? भोज ? क्या मम धर्मों का बन्धन है वा धर्म ही मम के बन्धन है ?

आयुस कोट्टित ! न बहुत रूपों का बन्धन है न रूप ही बहुत के बन्धन है । न मम धर्मों का बन्धन है, न धर्म ही मम के बन्धन है । किन्तु जो यहाँ दोनों के प्रत्यय से छन्दराग उत्पन्न होता है वही यहाँ बन्धन है ।

आयुस ! जब एक कड़ा रोक और एक उजड़ा रोक एक साथ रन्नी से बँधे हा । तब यदि कोई बड़े कि कड़ा रोक उचले बैल का बन्धन है या उजड़ा रोक कड़े बैल का बन्धन है तो क्या वह हीन कहता है ?

महीं आयुस ।

आयुस ! न तो काला रोक उचले रोक का बन्धन है भीर न उजड़ा रोक कड़े रोक का । किन्तु, ये पृष्ठ ही रस्ती के साथ बँधे है जो यहाँ बन्धन है ।

आयुस ! जैसे ही न तो बहुत रूपों का बन्धन है और न रूप ही बहुत के बन्धन है । किन्तु, जो यहाँ दोनों के प्रत्यय से छन्द राग उत्पन्न होते हैं वही यहाँ बन्धन है ।

जैसे ही न तो भोज धर्मों का बन्धन है । न तो मम धर्मों का बन्धन है । किन्तु जो यहाँ दोनों के प्रत्यय से छन्द राग उत्पन्न होते हैं वही यहाँ बन्धन है ।

आयुस ! यदि बहुत रूपों का बन्धन होता वा रूप बहुत के बन्धन होते तो गुणा के विस्तृत रूप के विद्ये महाकर्षवास सार्थक नहीं समझा जाता ।

आयुस ! क्योंकि बहुत रूपों का बन्धन महीं है और न रूप बहुत के बन्धन है इसीकिने दुर्गों के विस्तृत रूप के विद्ये महाकर्षवास ही सिद्धा ही जाती है ।

भोज । प्राण 'मिद्धा' । काया 'मम' ।

आयुस ! इस तरह ही उजड़ा पादित कि न तो बहुत रूपों का बन्धन है और न रूप बहुत के बन्धन है । किन्तु, दोनों के प्रत्यय से जो छन्दराग उत्पन्न होता है वही यहाँ बन्धन है ।

भोज मम ।

आयुस ! भयगात् का भी बहुत है । भयगात् बहुत स रूप जो देखते है । किन्तु, भयगात् जो कोई छन्दराग नहीं होता । भयगात् का बिल अपनी तरह किन्तु है ।

भगवान् जो धीर भी है । भगवान् जो मन भी है । भगवान् मन में धर्मों का जानते हैं ।  
हिन्दु, भगवान् को कोई छन्दोगम नहीं होता । भगवान् का चित्त अचरी तरह विमुक्त है ।

आहुय ! इमं तस्मै भां जानता वारिण् कि न ता चक्षु रूपो का चन्द्रम है आर न रूप चक्षु के चन्द्रम है । विन्दु, दोनों के प्रत्यय में जो छन्दोगम उत्पन्न होता है वही वहाँ चन्द्रम है ।

धोत्र ।" मन ।

### § ६. कामभू सुत्त ( ३४ ४. ३ ६ )

छन्दोगम ही चन्द्रम ह

एक समय आयुमान् आनन्द और आयुमान् कामभू कौशाम्बी में घोषितागम में विहार करते थे ।

तत्र, आयुमान् कामभू सध्या समय यान में उठ जाते आयुमान् आनन्द ये वहाँ आये, आर शुक्ल श्रेम पूट पर एक और बैठ गये ।

एक ओर बैठ, आयुमान् कामभू आयुमान् आनन्द से बोले, "आहुय ! क्या चक्षु रूपों का चन्द्रम है, या रूप ही चक्षु के चन्द्रम है ? आत्र मन ?"

[ ऊपर जया ली—'भगवान् का' उदाहरण छोड़कर ]

### § ७ उदायी सुत्त ( ३४ ४ ३ ७ )

विज्ञान भी अनात्म है

एक समय आयुमान् आनन्द आर आयुमान् उदायी कौशाम्बी में घोषितागम में विहार करते थे ।

तत्र, आयुमान् उदायी सध्या समय ।

एक ओर बैठ, आयुमान् उदायी आयुमान् आनन्द से बोले, "आहुय ! जैसे भगवान् ने इम शरीर को अनेक प्रकार से विटकुल माफ-माफ रोलर अनात्म कह दिया है, वैसे ही क्यों विज्ञान को भी विटकुल माफ-माफ अनात्म कह कर बताया जा सकता है ?

आहुय ! चक्षु और रूप के प्रत्यय से चक्षुविज्ञान उत्पन्न होता है ।

हाँ आहुय !

चक्षुविज्ञान की, उत्पत्ति का जो हेतु = प्रत्यय है, यदि वह विटकुल सदा के लिए एकदम निरुद्ध हो जाय तो क्या चक्षुविज्ञान का पता रहेगा ?

नहीं आहुय !

आहुय ! इस तरह भी भगवान् ने बताया और समझाया है कि विज्ञान अनात्म है ।

धोत्र । ज्ञान । जिह्वा । काया ।

मनोविज्ञान की उत्पत्ति का जो हेतु = प्रत्यय है यदि वह विटकुल सदा के लिए एकदम निरुद्ध हो जाय तो क्या चक्षुविज्ञान का पता रहेगा ?

नहीं आहुय !

आहुय ! इस तरह भी भगवान् ने बताया और समझाया है कि विज्ञान अनात्म है ।

आहुय ! जैसे, कोई पुरुष हीर का चाहने वाला, हीर की रोज में घूमते हुये तेज कुठार लेकर यन में पड़े । वह वहाँ एक बड़े केल के पेड़ को देखे—सीधा, नया, कोमल । उसे वह अकम्मे काट दे । बड़ से काट कर आगे काटे । आगे काट कर थिलका-थिलका उखाड़ दे । वह वहाँ कच्ची लकड़ी भी नहीं पाये, हीर की तो बात ही क्या ?

आधुस ! मैं ही मिश्र रूप छ स्वर्णापतनों में न भारता भीर न आत्मीय देवता है । उपादान नहीं करने से उस प्राप्त नहीं होता है । प्राप्त नहीं होने से अपने भीतर ही भीतर परिनिर्वाण पा लेता है । जाति क्षीण हुई अपन लेता लेता है ।

### ४८ आदिश सुच ( ३४ ४ ३ ८ )

#### इन्द्रिय-संयम

मिश्रभो ! आदीश पाकी पात का उपदेश करूँगा । उस सुभो । मिश्रभो ! आदीश पाकी पात क्या है ?

मिश्रभो ! कड़कड़ा कर जकती हुई काक कोह की सलाई से बहुत-इन्द्रिय को बाह देना अशुभ है किन्तु कल्पविशेष रूप में काकच करना और स्वाद देना अशुभ नहीं ।

मिश्रभा ! जिस समय काकच करता या स्वाद देता रहता है उस समय मर जाने से किसी की हो ही गतिमें जाती है—बा तो मरने में पक्का है या तिरहचीन ( = मृत ) योगि में पैदा होता है ।

मिश्रभा ! इसी सुरार्द्र को देख कर मैं ऐसा कहता हूँ । मिश्रभो ! कड़कड़ा कर जकती हुई, तेज कोह की धँकुरी से अनेक-इन्द्रिय को कका मच कर देना अशुभ है किन्तु प्राणविशेष प्राणों में काकच करना और स्वाद देना अशुभ नहीं । या तिरहचीन योगि में पैदा होता है ।

मिश्रभो ! इसी सुरार्द्र को देख कर मैं ऐसा कहता हूँ । मिश्रभो ! कड़कड़ा कर जकती हुई तेज कोह की मरहन्नि से अनेक-इन्द्रिय को कका मच कर देना अशुभ है किन्तु प्राणविशेष प्राणों में काकच करना और स्वाद देना अशुभ नहीं । या तिरहचीन योगि में पैदा होता है ।

मिश्रभा ! इसी सुरार्द्र को देख कर मैं ऐसा कहता हूँ । मिश्रभो ! कड़कड़ा कर जकती हुई, तेज कोह की धुरी से अनेक-इन्द्रिय काट काकचा अशुभ है किन्तु विद्याविशेष रसों में काकच करना और स्वाद देना अशुभ नहीं । या तिरहचीन योगि में पैदा होता है ।

मिश्रभो ! इसी सुरार्द्र को देख कर मैं ऐसा कहता हूँ । मिश्रभो ! कड़कड़ा कर जकती हुये तेज कोह के साक से काया-इन्द्रिय को छेद काकचा अशुभ है, किन्तु कल्पविशेष रूपों में काकच करना और स्वाद देना अशुभ नहीं । या तिरहचीन योगि में पैदा होता है ।

मिश्रभो ! इसी सुरार्द्र को देख कर मैं ऐसा कहता हूँ । मिश्रभो ! सोचा रहना अशुभ है । मिश्रभो ! सोचे हुये का मैं भीस भीषित कहता हूँ निष्कण भीषित कहता हूँ सोह में पका भीषण कहता हूँ अथवा बीसे बित्त मच छाये जिससे छेद में मृत कर से ।

मिश्रभा ! वहाँ पवित्र आर्यप्राणक ऐसा क्लिप्त करता है ।

कड़कड़ा कर जकती हुई काक कोह की सलाई से बहुत-इन्द्रिय को बाह देना से क्या मरकर ? मैं ऐसा मन में जाता हूँ—बहु अहित्य है । रूप अहित्य है । अशुभिकाण । अशुभस्पर्श । वेदना । भीषण अहित्य है, सप्त अहित्य है । । अथ अहित्य है । धर्म अहित्य है । मनोविकाण । यत्न संस्पर्श । वेदना ।

मिश्रभो ! इन्से जान पवित्र अर्यप्राणक 'अ ति क्षीण हुई जान लेता है ।

मिश्रभा ! आदीश पाकी वही पात है ।

### ४९ पठम इत्यपादुपम सुच ( ३४ ४ ३ ९ )

#### हाथ पीर की उपमा

मिश्रभो ! हाथ के होने से अना-दना समझा जाता है । पीर के होने से अना-दना समझा जाता है । जोर के होने से अना-दना समझा जाता है । पीर के होने से अना-दना समझा जाता है ।

भिक्षुओ ! इत्थी तरए, चक्षु के होने से चक्षुसंस्पर्श के प्रत्ययसे आध्यात्मिक सुख-दुःख होते हैं '।...मनके होने से मन संस्पर्श के प्रत्ययसे आध्यात्मिक सुख-दुःख होते हैं ।

भिक्षुओ ! हाथ के नहीं होने से लेना-देना नहीं समझा जाता है । पर के नहीं होने से आना-जाना नहीं समझा जाता है । जोड़ के नहीं होने से समेटना-पसारना नहीं समझा जाता है । पेट के नहीं होने से भूख-प्यास नहीं समझी जाती है ।

भिक्षुओ ! इत्थी तरए, चक्षु के नहीं होने से चक्षुसंस्पर्श के प्रत्यय से आध्यात्मिक सुख-दुःख नहीं होता है । ' । मन के नहीं होने से मन संस्पर्श के प्रत्यय से आध्यात्मिक सुख-दुःख नहीं होता है ।

### § १०. द्वितीय हृत्थपादुपम सुत्त ( ३४ ४ ३. १० )

#### हाथ-पैर की उपमा

भिक्षुओ ! हाथ के होने से लेना-देना होता है ।

[ 'समझा जाता है' के बदले 'होता है' करके शेष ऊपर जैसा ही ]

समुद्रवर्ग समाप्त



आहुस ! बस ही भिद्यु इन छः स्वर्गायतनों में न आत्मा और न आत्मीय देखता है । उपादान नहीं करने से उस प्रास नहीं होता है । प्रास नहीं होने से अपने भीतर ही भीतर परिनिर्वाण पा लेता है । जाति क्षीय हुई जान लेता छटा है ।

§ ८ आदिच सुच ( ३४ ४ ३ ८ )

इन्द्रिय-संयम

भिद्युओ ! आदीस पाकी पात क्य उपदेश करूँगा । उसे सुनो । भिद्युओ ! आदीस पाकी पात क्या है ?

भिद्युओ ! छहलहा कर जकती हुई फाक छोड़े की मकई से चहु-इन्द्रिय को बाह देना अय्य है किनु चहु-विशेष कर्षों में स्याल्य करना और स्वाद् देयना अय्य नही ।

भिद्युओ ! जिस समय फाक्य करता या स्वाद् देखता रहता है उस समय मर जाने से किसी की हो ही गतिर्षी होती है—या तो मर्य में पचता है या तिरहणीन ( = पद्य ) पाणि में पैदा होता है ।

भिद्युओ ! इसी सुराई को देख कर मैं पैमा कहता हूँ । भिद्युओ ! छहलहा कर जकती हुई तेज लोहे की भैकुमी से और इन्द्रिय से बका नष्ट कर देना अय्य है किनु अविशेष दार्यों में फाक्य करना और स्वाद् देयना अय्य नही । या तिरहणीन पाणि में पैदा होता है ।

भिद्युओ ! इसी सुराई का देख कर मैं पैमा कहता हूँ । भिद्युओ ! छहलहा कर जकती हुई, तेज लोहे की तरहनि से प्राण इन्द्रिय को बका नष्ट कर देना अय्य है किनु प्राणविशेष गम्यों में स्याल्य करना और स्वाद् देयना अय्य नही । या तिरहणीन पाणि में पैदा होता है ।

भिद्युओ ! इसी सुराई को देख कर मैं पैमा कहता हूँ । भिद्युओ ! छहलहा कर जकती हुई, तेज लोहे की सुरी से अिद्य-इन्द्रिय फाट बाकना अय्य है किनु अिद्यविशेष रसों में स्याल्य करना और स्वाद् देयना अय्य नही । या तिरहणीन पाणि में पैदा होता है ।

भिद्युओ ! इसी सुराई का देख कर मैं पैमा कहता हूँ । भिद्युओ ! छहलहा कर जकते हुये तेज लोहे के भास से काया इन्द्रिय को छद् बाकना अय्य है, किनु अविशेष स्वसों में स्याल्य करना और स्वाद् देयना अय्य नही । या तिरहणीन पाणि में पैदा होता है ।

भिद्युओ ! इसी सुराई का देख कर मैं पैमा कहता हूँ । भिद्युओ ! मोबा रहना अय्य है । भिद्युओ ! माये हुये को मैं बौस जीवित कहता हूँ निपक्य जीवित कहता हूँ मोह में पदा बीषन कहता हूँ सबसे बेने कितने सत साथे जिसय संघ में पूट कर दे । ..

भिद्युओ ! बहो परिहत आर्षेबावक पैमा पित्तन करना है । छहलहा कर जकती हुई फाक छोड़े की मकई से चहु इन्द्रिय को बाह देने से क्या मतलब ? मैं पैमा मन में करता हूँ—चहु अति प ई । रूप अति प ई । चहुविजात । चहुमररई । बेदुवा । आंज अति प ई दार्य अति प ई । मन अति प ई । धर्म अति प ई । मनोविजात । मन मररई । .. बेदुवा ।

भिद्युओ ! इस जान परिहत आर्षेबावक 'जति क्षीय हुई जान लेता है । भिद्युओ ! आदीस पाकी नही पात है ।

§ ९ पठम इत्यपादुपम सुच ( ३४ ४ ३ ९ )

दाघ पेट की उपमा

भिद्युओ ! दाघ के होने से क्या देना समझा जाता है । पेट के होने से क्य-जाया समझा जाता है । दाघ के होने से समैतन बनारना समझा जाता है । पेट के होने से अणु क्या समझी जाती है ।

भिक्षुओ ! इसी तरह, चक्षु के होने से चक्षुसस्पर्श के प्रत्ययसे आध्यात्मिक सुख-दुःख होते हैं । मनके होने से मन सस्पर्श के प्रत्ययसे आध्यात्मिक सुख-दुःख होते हैं ।

भिक्षुओ ! हाथ के नहीं होने से लेना-देना नहीं समझा जाता है । पैर के नहीं होने से आना-जाना नहीं समझा जाता है । जोड़ के नहीं होने से समेटना-पसारना नहीं समझा जाता है । पेट के नहीं होने से भूख-प्यास नहीं समझी जाती है ।

भिक्षुओ ! इसी तरह, चक्षु के नहीं होने से चक्षुसस्पर्श के प्रत्यय से आध्यात्मिक सुख-दुःख नहीं होता है । मन के नहीं होने से मन सस्पर्श के प्रत्यय से आध्यात्मिक सुख-दुःख नहीं होता है ।

### § १०. दुतिय हत्थपाटुपम सुत्त ( ३४ ४ ३. १० )

#### हाथ-पैर की उपमा

भिक्षुओ ! हाथ के होने से लेना-देना होता है • ।

[ 'समझा जाता है' के बदले 'होता है' करके शेष ऊपर जैसा ही ]

समुद्रवर्ग समाप्त

छप करता है, नई वेदना उत्पन्न नहीं करेगा। मेरा जीवन कर धारणा निर्दोष और सुख से विहार करते।

मिथुनो ! जैसे काँड़ पुरुष बाब पर मजहम लगाता है बाब की अप्पन करने ही के लिए। जैसे दुँगे की बघाला है मार पार करने ही के लिए। मिथुनो ! जैसे ही मिथु लच्छी तरह मजल करके मोजन करता है— निर्दोष और सुख से विहार करते।

मिथुनो ! इसी तरह मिथु मोजन में मात्रा का धाननेवाला होता है।

मिथुनो ! मिथु कैसे जागरणसीक होता है ?

मिथुनो ! मिथु दिन में बंक्रमण कर और बैठ कर आचरण में डालनेवाले धर्मों से अपने चित्त को छुद्र करता है। रात के प्रथम धाम में बंक्रमण कर और बैठकर आचरण में डालनेवाले धर्मों से अपने चित्त को छुद्र करता है। रात के मध्यम धाम में बाहिनी करबड सिंह-सखवा कगा पैर पर पैर रच स्थितिमान संमश और उपस्थित संका बाधा होता है। रात के पश्चिम धाम में बठ बंक्रमण कर और पैर कर आचरण में डालनेवाले धर्मों से अपने चित्त को छुद्र करता है।

मिथुनो ! इसी तरह मिथु जागरणसीक होता है।

मिथुनो ! इसी तीन धर्मों से सुख ही मिथु अपने देखते ही देखते बने सुख और औसमत्व से विहार करता है मार उसके आचरण छप होने लगते हैं।

### ३३ कुम्भ सुच ( ३४ ४ ४ ३ )

#### कण्डूये को समान इन्द्रिय-रक्षा करो

मिथुनो ! बहुत पहल किसी दिन एक कण्डूया संभा समक नदी के तीर पर आहार की खोज में निकला हुआ था। एक सिंघार भी उसी समय नदी के तीर पर आहार की खोज में आया हुआ था।

मिथुनो ! कण्डूय ने दूर ही से सिंघार को आहार की खोज में आये देखा। देखते ही अपने बर्तों को अपनी ओपही में समेट कर निस्तब्ध हो रहा।

मिथुनो ! सिंघार ने भी दूर ही से कण्डूये का देखा। देख कर वहाँ कण्डूया का नहीं गया। उसके कण्डूये पर दबि कगाये लडा रहा—जैसे ही वह कण्डूया अपने किसी जंग को निकलकेगा जैसे ही मैं एक झण्डे में और दूर चला कर काटेगा।

मिथुनो ! कण्डूयि कण्डूये ने अपने किसी जंग को नहीं निकाला इसकिये सिंघार अपना दबि बूक ठहाम बना गया।

मिथुनो ! जैसे ही मार तुम पर कदा समी ओर दबि कगाये रहता है—जैसे इन्हीं कण्डू की दबि से परहूँ जैसे मन की दबि से परहूँ।

मिथुनो ! इसकिये तुम अपनी इन्द्रिया को समेट कर रहते।

कण्डू मैं कर देर कर मत रुकनी मत उसमें रजाह देजो। कर्तबल कण्डू-इन्द्रिय से विहार करने से कोम हेप अजुगाम धर्म चित्त में पैठ आते हैं। इसकिये, उनका संयम करो। कण्डू-इन्द्रिय की रक्षा करो।

औप । मजल । चिदा । वाया ।

मजये धर्मों को जल मत रुकनी "मज-इन्द्रिय की रक्षा करो।

मिथुनो ! यदि तुम भी अपनी इन्द्रिया की समेट कर रुकनी तो पापी मार उसी सिंघार की तरह दबि बूक तुम्हारी ओर से उचाल ही कर हड आकाया।

जैसे कण्डूया अपने बर्तों को अपनी ओपही में

अपने वित्तों को मिथु रक्षात हुए

बलेजरहित हो, मूसरे फों न मताते हुण,  
परिनिर्णत, किस्सी फों भी शिकायत नहीं करता ॥

### § ४ षष्ठम दारुक्खण्ड सुत्त ( ३४. ४ ४ ४ )

सम्यक् दृष्टि निर्वाण तक जाती है

एक समय, भगवान् पौशाब्बी में गंगानदी के तीरे पर विहार करते थे ।

भगवान् ने गंगानदी की धारा में बहते हुए एक बड़े लकड़ी के कुन्डे को देखा । देव कर, भिक्षुओं को आमन्त्रित किया—भिक्षुओं ! गंगानदी की धारा में बहते हुए इस बड़े लकड़ी के कुन्डे को देखते हो ? हों भन्ते !

भिक्षुओं ! यदि वह लकड़ी का टुकड़ा न इस पार लगे, न उस पार लगे, न बीच में दूब जाय, न जमीन पर चढ़ जाय, न किसी मनुष्य या अमनुष्य से छान लिया जाय, न किसी भँवर में पड़ जाय, और न कहीं बीच ही में रुक जाय, तो यह समुद्र ही म जाकर गिरेगा । क्या क्या ?

भिक्षुओं ! क्योंकि गंगानदी की धारा समुद्र ही तक आती है, समुद्र ही में गिरती है, समुद्र ही में जा लगती है ।

भिक्षुओं ! वैसे ही, यदि तुम भी न इस पार लगे, न उस पार लगे, न बीच में दूब जाओ, न जमीन पर चढ़ जाओ न किसी मनुष्य या अमनुष्य से छान लिये जाओ, न किसी भँवर में पड़ जाओ, और न कहीं बीच में ही रुक जाओ, तो तुम भी निर्वाण में ही जा लगोगे । सो क्या ?

भिक्षुओं ! क्योंकि सम्यक् दृष्टि निर्वाण तक ही जाती है, निर्वाण ही में जा लगती है ।

यह कहने पर, कोई भिक्षु भगवान् से बोला—भन्ते ! इस पार क्या है, उस पार क्या है, बीच में दूब जाना क्या है, जमीन पर चढ़ जाना क्या है, किसी मनुष्य या अमनुष्य से छान लिया जाना क्या है, और बीच में रुक जाना क्या है ?

भिक्षुओं ! इस पार से छ अभिप्रायिक आयतनों का अभिप्राय है ।

भिक्षुओं ! उस पार से छ वायु आयतनों का अभिप्राय है ।

भिक्षुओं ! बीच में दूब जानेसे नृपणा-राग का अभिप्राय है ।

भिक्षुओं ! जमीन पर चढ़ जाने से अस्मि-मान का अभिप्राय है ।

भिक्षुओं ! मनुष्य से छान लिया जाना क्या है ? कोई भिक्षु गृहस्थों के समर्ग में बहुत रहता है । उनके आनन्द में आनन्द मनाता है, उनके शोक में शोक करता है, उनके सुखी होने पर सुखी होता है, उनके दुःखित होने पर दुःखित होता है, उनके इधर-उधर के काम आ पढ़ने पर न्यय भी लग जाता है । भिक्षुओं ! इसी को कहते हैं मनुष्य से छान लिया जाना ।

भिक्षुओं ! अमनुष्य से छान लिया जाना क्या है ? कोई भिक्षु अमुक न अमुक देवलोक में उत्पन्न होने के लिए ब्रह्मचर्य-वास करता है । मैं हूँ शील से, व्रत से, तप से, या ब्रह्मचर्य से कोई देव हो जाऊँगा । भिक्षुओं ! इसी को कहते हैं अमनुष्य से छान लिया जाना ।

भिक्षुओं ! भँवर से पाँच काम-गुणों का अभिप्राय है ।

भिक्षुओं ! बीच ही में रुक जाना क्या है ? कोई भिक्षु दुःशील होता है—पापमय धर्मोंवाला, अपवित्र, बुरे आचार का, भीतर-भीतर बुरा काम करनेवाला, अश्रमण, अग्रहचारी, झूठ में श्रमण या ब्रह्मचारी का ढोंग रचनेवाला, भीतर क्लेश से भरा हुआ । भिक्षुओं ! इसी को बीच में रुक जाना कहते हैं ।

उस समय, नन्द गवाला भगवान् के पास ही खड़ा था ।

देव रिक्त नहीं जाता है। वह भावविम्वन करते अग्रमत्त चित्त स विहार करता है। वह सेतोविमुक्ति और प्रज्ञाविमुक्ति को ब्यार्थता जानता है। वो उसके पापमत्त अङ्गुलक धर्म हैं विद्वत्त विरक्त हो करते हैं। अत्र । मन ।

आहुस ! वह मिथु पञ्चविद्येय रूपो में अनवसुत कहा जाता है मनोविज्ञेय धर्मों में अनवसुत कहा जाता है।

आहुस ! ऐसे मिथु पर यदि मार चण्ड की राह से भी जाता है तो वह भीत नहीं सकता। मनकी राह से भी जाता है तो वह भीत नहीं सकता है।

आहुस ! जैसे मिथी का बना गीका छेपवाका कूटागर या कूटागरवाका। उसे दूरच परिष्कन उचर, विलिन किसी भी विधाने कोई पुरुष आकर यदि पास की बध्ती सुभारी लमा दे, तो आग उसे पकड़ गही सकेगी।

आहुस ! बैम ही ऐसे मिथुपर यदि मार चण्ड की राह से भी जाता है तो वह भीत नहीं सकता। मन की राह से भी जाता है तो वह भीत नहीं सकता।

आहुस ! ऐसे मिथु रूप को हरा देते हैं रूप उन्हें नहीं हराता। गन्ध । रस । स्पर्श । आहुस ! ऐसा मिथु रूप को भीता धर्म को भीता कहा जाता है। बार बार अम्म में आने वाले मनपूर्ण दुःखद् अमवाके सविष्य म बरामरन देने वाले संश्लेष पापमत्त अङ्गुलक धर्मों को उसने भीत किया है।

आहुस ! हम तरह अनवसुत होता है।

तब भगवान् ने उठकर महा भोगाकाण को आसक्तिरित किया—बाह मोमास्त्रान ! तुमने मिथुओं को अनवसुत और अनवसुत की बात का अर्था उपदेश दिया।

आहुप्मान् मोमास्त्रान यह वाले। उह प्रमत्त हुये। संसृष्ट हो मिथुना ने अहुप्मान् महत्त मोमास्त्रान के कहे का अनिवाचन किया।

### § ७ दुक्खधम्म सुत्त ( ३४ ४ ४ ७ )

#### संयम और अर्हत्पम

मिथुनों ! अब मिथु सभी दुःख-धर्मों के समुदय और अस्त होने को ब्यार्थता भाव देता है तो कामों के प्रति उसकी प्रती दृष्टि होती है कि कामों को देनेसे उसे उन्हे प्रति उसके रिक्त में कोई अम्बल्लेहम्मत्त—परिहाह नहीं होने पाता। उसका ऐसा व्याचार-विचार होता है जिससे तोय सौमं गन्ध इत्यादि पापमत्त अङ्गुलक धर्म उसमें नहीं पैठ सकते।

मिथुनों ! मिथु जैसे सभी दुःख-धर्मों के समुदय और अस्त होने को ब्यार्थता जानता है। यह रूप है, यह रूप का समुदय है यह रूपका अस्त हो जाना है। यह वैदर । यह संस्कार । यह विज्ञान । मिथुनों ! इसी तरह, मिथु सभी दुःख-धर्मों के समुदय और अस्त होने को ब्यार्थता जानता है।

मिथुनों ! जैसे मिथु को कामों के प्रति ऐसी दृष्टि होती है कि कामों को देनेसे मैं उन्हे प्रति उसके रिक्त में कोई अम्बल्लेहम्मत्त—परिहाह नहीं होता ?

मिथुनों ! जैसे दूध पोरन की अधिक पुरी सुरमती और लहरती आग की रेत हो। तब कोई पुरुष जबै भी जीना चाहता हो मरना नहीं सुक चाहता हो दुःख से बचना चाहता हो। तब तो बलवाक् पुरुष उम होना कोई पक्क कर आय में के कार्य। वह जय तिम प्रबै रारि को मिथुनें। सो क्यों ? मिथुनों ! क्योंकि यह जानता है कि मैं हम आय में गिरना चाहता हूँ, जिससे मैं जर्जराता या मरने के समान दुःख भोगूँगा।

भिक्षुओ ! इसी तरह, भिक्षु को आग की ढेर जैसा कामों के प्रति दृष्टि होती है जिसमें कामों को देख उसे उनमें उन्मद् = स्नेह = मूर्च्छा = परिहास नहीं होता है ।

भिक्षुओ ! कैसे भिक्षु का ऐसा आचार-विचार होता है जिससे लोभ, दौर्मनस्य इत्यादि पापमय अकुशल धर्म उसमें नहीं पैठ सकते ? भिक्षुओ ! जैसे, कोई पुरुष एक कण्ठकमय वन में पड़े । उसके आगे-पीछे, दायें-बायें, ऊपर-नीचे कोंटे ही कोंटे हों । वह हिले-डोले भी नहीं—कहीं मुझे कोंटा न चुभे ।

भिक्षुओ ! इसी तरह, सत्तार के जो प्यारे और लुभावने रूप हैं आर्यचिन्तन में कण्ठक कहे जाते हैं ।

इसे जान, संयम और असयम जानने चाहिये ।

भिक्षुओ ! कैसे असयत होता है ? भिक्षुओ ! भिक्षु चक्षु से प्रिय रूप देख उसके प्रति मूर्च्छित हो जाता है । अप्रिय रूप देख खिन्न होता है । आत्मचिन्तन न करते हुए चंचल चित्त से विहार करता है । वह चेतोविमुक्ति और प्रज्ञाविमुक्ति को यथार्थत नहीं जानता है, जिससे उत्पन्न पापमय अकुशल धर्म बिल्कुल निरुद्ध हो जाते हैं । श्रोत्र से शब्द सुन मन से धर्मों को जान । भिक्षुओ ! इस तरह असयत होता है ।

भिक्षुओ ! कैसे सयत होता है ? भिक्षुओ ! भिक्षु चक्षु से प्रिय रूप देख उनके प्रति मूर्च्छित नहीं होता है । अप्रिय रूप देख खिन्न नहीं होता है । आत्म-चिन्तन करते हुए अग्रमत्त चित्त से विहार करता है । वह चेतोविमुक्ति और प्रज्ञाविमुक्ति को यथार्थत जानता है जिससे उत्पन्न पापमय अकुशल धर्म बिल्कुल निरुद्ध हो जाते हैं । श्रोत्र मन । भिक्षुओ ! इस तरह, सयत होता है ।

भिक्षुओ ! इस प्रकार रहते हुए, कभी कहीं असावधानी से वन्यन में डालनेवाले, चंचल सकटप वाले, पापमय अकुशल धर्म उत्पन्न होते हैं, तो वह शीघ्र ही उन्हें निकाल देता है, मिटा देता है ।

भिक्षुओ ! जैसे कोई पुरुष दिन भर तपपथे हुए लोहे के कबाह में दो या तीन पानी के छिंटे डे दे । भिक्षुओ ! कबाह में छिंटे पड़ते ही सूखकर उड़ जायें ।

भिक्षुओ ! जैसे ही, कभी कहीं असावधानी से वन्यन में डालनेवाले, चंचल सकटपवाले, पापमय अकुशल धर्म उत्पन्न होते हैं, तो वह शीघ्र ही उन्हें मिटा देता है ।

भिक्षुओ ! ऐसा ही भिक्षु का आचार-विचार होता है जिससे लोभ, दौर्मनस्य इत्यादि पापमय अकुशल धर्म उसमें नहीं पैठ सकते हैं । भिक्षुओ ! यदि इस प्रकार विहार करने वाले भिक्षु को राजा, मन्त्री, मित्र, सलाहकार या सम्मन्थी सासारिक लोभ देकर बुलायें—भरे ! पीले कपड़े में क्या रक्खा है, माया मुड़ा कर फिरने से क्या ! आओ, गृहस्थ वन संसार का भोग करो और पुण्य कमाओ—तो वह शिक्षा को छोड़ गृहस्थ बन जायगा—ऐसा सम्भव नहीं ।

भिक्षुओ ! जैसे, गंगा नदी पूरव की ओर बहती है । तब, कोई एक बड़ा जन-समुदाय कुटाल और टोकरी लेकर आवे कि—इस गंगा नदी को पच्छिम की ओर बहा देंगे । भिक्षुओ ! तो क्या समझते हो, वे गंगा नदी को पच्छिम की ओर बहा सकेंगे ?

नहीं भन्ते !

तो क्या ?

भन्ते ! गंगा नदी पूरव की ओर बहती है, उसे पच्छिम की ओर बहाना आसान नहीं । उस जन-समुदाय का परिश्रम व्यर्थ जायगा, उन्हें विरासत हीना पड़ेगा ।

भिक्षुओ ! वैसे ही यदि इस प्रकार विहार करने वाले भिक्षु को राजा, मन्त्री, सलाहकार या मन्थी सासारिक भोगों का लोभ देकर बुलायें—भरे ! पीले कपड़े में क्या रक्खा है, माया मुड़ा करने से क्या ! आओ गृहस्थ वन संसार का भोग करो और पुण्य कमाओ—तो वह शिक्षा को छोड़

वेग रिक्त नहीं होता है। वह आत्मविस्तार करते अग्रमण चित्त से विहार करता है। वह चेतोविमुक्ति और प्रज्ञाविमुक्ति को पदार्थतः जानता है। जो उसके पापमय अकुशल धर्म हैं विरुद्ध निरद हो जाते हैं। शोक । मन ।

आहुत ! वह मिथु यक्षुविशेष रूपों में अनवभुत कहा जाता है । मधोविशेष धर्मों में अनवभुत कहा जाता है ।

आहुत ! ऐसे मिथु पर यदि मार-बहुत की राह से भी जाता है तो वह जीत नहीं सकता ।

मनकी राह से भी जाता है तो वह जीत नहीं सकता है ।

आहुत ! जैसे मिथु का वमा गीका केपवाका कृशगार वा कृशगारकाका । उसे पूरा परिष्कृत उत्तर वृष्टिपत किसी भी दिसासे कोई पुरुष आकर यदि बात की जरूरी सुभारी क्या है तो भाग उसे पकड़ नहीं सकेगी ।

आहुत ! जैसे ही ऐसे मिथुपर यदि मार-बहुत की राह से भी जाता है तो वह जीत नहीं सकता । मन की राह से भी जाता है तो वह जीत नहीं सकता ।

अहुत ! ऐसे मिथु रूप को हरा देते हैं रूप उन्हें नहीं हराता । गन्ध । रस । स्पर्श ।

अहुत ! ऐसा मिथु रूप को जीता धर्म को जीता कहा जाता है । बार बार अहम में डालने वाले मयपूर्व दुःखर फलवाले भवित्य में अरामरण देने वाले संश्लेष पापमय अकुशल धर्मों को उसने जीत लिया है ।

अहुत ! इस तरह अनवभुत होता है ।

तब भगवान् ने उठकर महा-योगशाला को आमंत्रित किया — वाह भोगशाला ! तुमने मिथुओं को अनवभुत और अनवभुत की बात का अर्थ उल्टेस दिया ।

आपुष्मान् भोगशाला यह बाड़े । उह प्रसन्न हुये । संतुष्ट हो मिथुओं ने आपुष्मान् महा मामात्मान क बड़े का अभिनन्दन किया ।

### ४ ७ दुःखलघुस्य सुत ( ३४ ४ ४ ७ )

#### संयम और असंयम

मिथुओ ! अब मिथु सभी दुःख धर्मों के समुदाय और अस्त होने को पदार्थतः जान लेता है ना कामों के प्रति उसकी देवी दृष्टि होती है कि कामों को देखने से उनके प्रति उसके चित्त में कोई उन्मत्तमेह-अन्मत्तमेह-अन्मत्तमेह नहीं होने पाता । उसका ऐसा आचार-विचार होता है जिससे जो भी धर्म गन्ध इत्यादि पापमय अकुशल धर्म उसमें नहीं पैदा करते ।

मिथुओ ! मिथु जैसे सभी दुःख-धर्मों के समुदाय और अस्त होने को पदार्थतः जानता है !

यह रूप है, यह रूप का समुदाय है यह रूपका अस्त हो जाता है । वह वेदन । वह संता । यह संतरकर । यह विज्ञान । मिथुओ ! इसी तरह मिथु सभी दुःख-धर्मों के समुदाय और अस्त होने का पदार्थतः जानता है ।

मिथुओ ! जैसे मिथु को कामों के प्रति ऐसी दृष्टि होती है कि कामों को देखने से उनके प्रति उसके चित्त में कोई उन्मत्तमेह-अन्मत्तमेह-अन्मत्तमेह नहीं होता ?

मिथुओ ! जैसे वह धर्मों में अधिक दूरी सुभारती और सुभारती भाग की देर हो । तब कोई दुःख कार्य जो जीता चाहता हो मरना नहीं सुख चाहता हो दुःख से बचना चाहता हो । तब ही धर्मयान् पुरुष जब हीनों कोई पकड़ कर अहम में के जाये । वह जैसे जैसे अपने धर्मों को सिकोरे । तो क्यों ? मिथुओ ! क्योंकि वह जानता है कि मैं इस भाग में गिरना चाहता हूँ, मियसे मर जाऊँगा वा मरने के समान दुःख भोगूँगा ।

भिक्षु ! इसी तरह, उन मय्युरूपों की जैसी जैसी अपनी पहुँच थी वैया ही दर्शन का शुद्ध होना वतलाया ।

भिक्षु ! जैसे राजा का सीमा पर का नगर छ तरबाजों वाला, सुदृढ़ आकार और तोरण वाला हो । उसका दौवारिक ब्रह्म चतुर और समझदार हो । अनजान लोगों को भीतर आने से रोक देता हो, और जाने लोगों को भीतर आने देता हो । तत्र, पूरव दिशा से कोई राजकीय द्रो दूत आकर दौवारिक से कहें, 'हे पुरुष । इस नगर के स्वामी कहाँ हैं ?' वह ऐसा उत्तर दे, "वे विचली चोंक पर बैठे हैं ।" तब, वे दूत नगर-स्वामी के सन्चे समाचार को जान जिधर से आये थे उधर ही लौट जायँ । पश्चिम दिशा उत्तर दिशा ।

भिक्षु ! मैंने कुछ बात समझाने के लिये यह उपमा कही है । भिक्षु ! बात यह है ।

भिक्षु ! नगर से चार महाभूतों से बने इस शरीर का अभिप्राय है—मात-पिता से उत्पन्न हुआ, मात-दाल से पला-पोसा, अनिश्च जिमे नहाते धोते और मलते हैं, और नष्ट हो जाना जिमका धर्म है ।

भिक्षु ! छ दरबाजों से छ आध्यात्मिक अव्यक्तियों का अभिप्राय है ।

भिक्षु ! दौवारिक से स्मृति का अभिप्राय है ।

भिक्षु ! दो दूतों से समय और विदर्शना का अभिप्राय है ।

भिक्षु ! नगर-स्वामी से विज्ञान का अभिप्राय है ।

भिक्षु ! विचली चोंक से चार महाभूतों का अभिप्राय है । पृथ्वी, जल, तेज और वायु ।

भिक्षु ! सबों बात से निर्वाण का अभिप्राय है ।

भिक्षु ! जिधर से आये थे, इसमें आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभिप्राय है । सम्यक् दृष्टि ... सम्यक् समाधि ।

## § ९. वीणा सुत्त ( ३४ ४ ४ ९ )

### रूपादि की खोज निरर्थक, वीणा की उपमा

भिक्षुओ ! जिस किसी भिक्षु या भिक्षुणी को चक्षुर्विज्ञेय रूपों में उन्मद्, राग, द्वेष, मोह, ईर्ष्या उत्पन्न होती हैं उनसे चित्त को रोकना चाहिये । यह मार्ग भयवाला है, कष्टकवाला है बड़ा गहन है, दखदा-खवदा है, कुमार्ग है, और खतरावाला है । यह मार्ग तुरे लोगों से सेवित है, अच्छे लोगों से नहीं । यह मार्ग तुम्हारे योग्य नहीं है । उन चक्षुर्विज्ञेय रूपों से अपने चित्त को रोको ।

श्रोत्रविज्ञेय शब्दों में मनोविज्ञेय धर्मों में ।

भिक्षुओ ! जैसे किसी लगे खेत का रखवाला आलसी हो तब कोई परका बैल छूट कर एक खेत से दूसरे खेत में धान खाय । भिक्षुओ ! इसी तरह कोई अज्ञ पृथक् जन छ स्पर्शायतनो में अत्यन्त पाँच कामगुणों में छूट कर मतवाला हो जाय ।

भिक्षुओ ! जैसे किसी लगे खेत का रखवाला सावधान हो । तब कोई परका बैल धान खाने के लिए खेत में उतरे । खेत का रखवाला उसके नथ को पकड़कर उम्मे ऊपर ले आवे और अच्छी तरह लाठी से पीटकर छोड़ दे ।

भिक्षुओ ! दूसरी बार भी ।

भिक्षुओ ! तीसरी बार भी । ...लाठी से पीटकर छोड़ दे ।

भिक्षुओ ! तब वह, बैल गाँव में या जंगल में चरा करे या बैठा रहे, किन्तु उस लगे खेत में कभी न पड़े । उसे लाठी की पीट बराबर याव रहे ।

भिक्षुओ ! इसी तरह, जब भिक्षु का चित्त छ स्पर्शायतनों में सीधा हो जाता है, तो वह आध्यात्म में ही रहता या बँधता है । उन्का चित्त एकत्र समाधि के योग्य होता है ।



मिथुनो ! जैसे किसी राजा या सन्नी ने पहले वीणा कभी नहीं सुनी हो। वह वीणा की आवाज सुने। वह ऐसा कहे—भरे ! यह कैसी आवाज है इतनी अच्छी इतनी सुन्दर इतना मत्वाका घना देने वाली इतना मूर्च्छित कर देने वाली इतना शिथ को खींच देने वाली ?

उत्ते लोग कहे—भस्ते ! यह वीणा की आवाज है जो इतना शिथ को खींच देने वाली है।

यह पूसा कहे—बाबो उस वीणा को के बाबो।

भोग उसे वीणा छा कर दे और कहे—भस्ते ! यह नहीं वीणा है जिसकी आवाज इतना शिथ को खींच देने वाली है।

यह पूसा कहे—मुझे उस वीणा से डरकर नहीं मुझे यह आवाज का हो।

लोग उसे कहे—भस्ते ! वीणा के अनेक सम्भार हैं। अनेक सम्भारों के लक्ष्म पर वीणा स आवाज निकलती है। वैसे शोषी चर्म बन्ध उपपन्न तार और वजन वाले पुष्प के व्यापाम के मायब से वीणा बनती है।

यह उस वीणा को घस या सी टुकड़ों में काट दे। काट कर उसे छोटे छोटे टुकड़े कर दे। छोटे छोटे टुकड़े करके भाग में बका दे। बका कर उसे राख बना दे। राख बना कर उसे हवा में बका दे या नदी की धारा में बहा दे।

यह पूसा कहे—भरे ! वीणा रही वीणा ही। लोग इसके पीछे अर्ध में इतना मुग्ध हैं।

मिथुनो ! जैसे ही मिथु रूप की जोख करता है। जब तक रूप की गति है। वेदना। संज्ञा। संस्कार। विज्ञान। इस मन्त्र उसके अहंकार मर्मकार और अस्मिता नहीं रह पाती है।

### ५ १० छपाय सुच ( ३४ ४ ४ १० )

#### संयम और असंयम छ' जीवों की उपमा

मिथुनो ! जैसे कोई बाग से मरा पके शरीर बाका पुष्प सरकी के अंगक में पड़े। उसके पैर में कुछ-कॉटि गढ़ जार्थ पाव से परा लरिर छित आय। मिथुनो ! इस तरह उसे बहुत कष्ट सहना पड़े।

मिथुनो ! जैसे ही कोई मिथु गॉब में या आरुण्य में कहीं सी किसी व किसी से बात सुनता ही है—इससे ऐसा बिबा है इसकी पूसी बाक-बलन है यह नीच गॉब का मानो कौटा है। इसे देख, उसके संयम का असंयम का पता लगा देना चाहिये।

मिथुनो ! कैसे असंयत होता है ? मिथुनो ! मिथु चन्द्र से रूप देख मिथ रूपों के प्रति मूर्च्छित हो जाता है [ देखो ३४ ४ ४ १० ] यह वेदोबिमुक्ति और प्रज्ञाबिमुक्ति को पचाधरत। नहीं जानता है जिससे उत्पन्न पापमय अमुक्तक चर्म विवृणुच निरुद्ध हो जाते हैं।

मिथुनो ! जैसे कोई पुष्ट्य का प्राधिपा को के मिथ मिथ क्वाल पर रस्ती स कस कर बाँध दे। सॉप को पकड़ रस्ती से कसकर बाँध दे। सुसुमार (= अंगर) का पकड़ रस्ती से कसकर बाँध दे। पही को। कुचा को। सिवार को। बातर को।

रस्ती से कसकर बाँध नीच में गॉडि देकर छोड़ दे। मिथुनो ! तब, ये का प्राणी अपने अपने स्थान पर भाग जाता चाहे। सॉप बध्मीक में धुम जाता चाहे सुसुमार पाभी में पैड जाता चाहे पही व्याकाल में डढ़ जाता चाहे कुचा गॉब में भाग जाता चाहे सिवार इमसाल में भागता चाहे बातर अंगक में भाग जाता चाहे।

मिथुनो ! जब नमी रूप तरह बड़ जार्थ तो शेष उसी के पीछे चर्मों की सर्धों में बलवाला हो—उगी के बर में हो जार्थ।

मिथुनो ! जैसे ही जिसकी बाधगता-व्युक्ति गुनागिन = अन्वसा नहीं होती है उसे चन्द्र मिथ

रूपों की ओर ले जाता है और अभिप्रिय रूपों से हटाता है । मन प्रिय धर्मों की ओर ले जाता है और अभिप्रिय धर्मों से हटाता है ।

भिक्षुओ ! इसी तरह अमंगल होता है ।

भिक्षुओ ! कैसे संयत होता है ? भिक्षुओं ! भिक्षु चक्षु से रूप केवल प्रिय रूपों के प्रति मस्तिष्क नहीं होता है । [ देवो ३४. ४. ४. ७ ] पर चेतोविमुक्ति और प्रज्ञाविमुक्ति का यथार्थत जानता है, जिसमें उपमा पापमय अकुशल धर्म विरुद्ध निरुद्ध हो जाते हैं ।

भिक्षुओ ! जैसे [ छ. प्राणियों की उपमा ऊपर जैसी ही ]

भिक्षुओ ! वैसे ही, जिसकी कार्यगता-रमृति सुभावित = अन्यगत होती है, उसे चक्षु प्रिय रूपों की ओर नहीं ले जाता है और अभिप्रिय रूपों से नहीं हटाता है । मन प्रिय धर्मों की ओर नहीं ले जाता है और अभिप्रिय धर्मों से नहीं हटाता है ।

भिक्षुओ ! इसी तरह मंगल होता है ।

भिक्षुओ ! 'एद मील मे' या समझे में इयमे कार्यगता रमृति का अभिप्राय है । भिक्षुओ ! इयन्विये तुम्हें स्वीयता चाहिये—आयगता रमृति की भावना करूँगा, अभ्याय करूँगा अनुष्ठान करूँगा, परिचय करूँगा । भिक्षुओं ! तुम्हें ऐमः स्वीयता चाहिये ।

## § ११ यवकलापि सुत्त ( ३४. ४ ४ ११ )

सूर्य यव के समान पीटा जाता है

भिक्षुओ ! जैसे, यव के बोझों बीच चौराहों में पड़े हैं । तब छ. पुरुष हाथ में डण्डा [ लिये आते ] वे छ डण्डों से यव के बोझों को पीटते । भिक्षुओ ! इस प्रकार, यव के बोझों छ डण्डों से सूत्र पीट जाते । तब, एक सातवीं पुरर भी हाथ में डण्डा लिये आये वह उस यव के बोझों को सातवें डण्डे से पीटते । भिक्षुओं ! इस प्रकार, यव का बोझ सातवें डण्डे में और भी अच्छी तरह पीट जाय ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, अज्ञ पृथक् जन प्रिय-अप्रिय रूपों में चक्षु में पीटा जाता है । प्रिय-अप्रिय धर्मों में मन में पीटा जाता है, भिक्षुओ ! यदि वह अज्ञ पृथक् जन इस पर भी भविष्य में देने रहने की इच्छा करना है, तो इस तरह का सूर्य और भी पीटा जाता है, जैसे यव का बोझ उस सातवें डण्डे से ।

भिक्षुओ ! पूर्व काल में देवासुर-संग्राम छिड़ा था । तब, वेपचित्ति असुरेन्द्र ने असुरों को आमन्त्रित किया—हे असुरों ! यदि इस संग्राम में देवों की हार हो और असुर जीत जायें, तो तुम में जो सके देवेन्द्र शक्र को गले में पाँचवीं फाँस लगाकर असुर-पुर पकड़ ले आवे । भिक्षुओ ! देवेन्द्र शक्र ने भी देवों को आमन्त्रित किया—हे देवों ! यदि इस संग्राम में असुरों की हार हो और देव जीत जायें, तो तुममें जो सके असुरेन्द्र वेपचित्ति को गले में पाँचवीं फाँस लगाकर सुधर्मा देवसभा में ले आवे ।

उस संग्राम में देवों की जीत हुई और असुर हार गये । तब त्रयस्त्रिंशत् देव असुरेन्द्र वेपचित्ति को गले में पाँचवीं फाँस लगा कर देवेन्द्र शक्र के पास सुधर्मा देवसभा में ले आवे ।

भिक्षुओ ! वहाँ, असुरेन्द्र वेपचित्ति गले में पाँचवीं फाँस से बँधा था । भिक्षुओ ! जब असुरेन्द्र वेपचित्ति के मन में यह होता था—यह असुर अधार्मिक है, देव धार्मिक है, मैं इसी देवपुर में रहूँ—तब वह अपने को गले की पाँचवीं फाँस से मुक्त पाता था । दिव्य पाँच कामगुणों का भोग करने लगता था । और जब उसके मन में देवा होता था—असुर धार्मिक है, देव अधार्मिक है, मैं असुरपुर चल चढूँ—तब वह अपने को गले की पाँचवीं फाँस से बँधा पाता था । वह दिव्य पाँच कामगुणों से गिर जाता था ।

⊗ व्यामङ्गिहत्था—वैहंगी हाथ में लिये हुए —अट्टकथा ।

। काट कर रखा यव का ढेर —अट्टकथा ।

मिथुनो ! बेपश्चिन्नि की कौंस हूवनी सूक्ष्म थी । किन्तु मार की कौंस उससे कहीं अधिक सूक्ष्म है । केवल कुछ मात्र खेने से ही मार की फौंस में पड़ जाता है और केवल कुछ नहीं मानने से ही उसकी कौंस से छूट जाता है । मिथुनो ! 'मैं हूँ' ऐसा मान खेने से "पह मैं हूँ" ऐसा मान खेने से "पह हूँगा" ऐसा मान खेने से 'पह नहीं हूँगा' ऐसा मान खेने से 'रूप बाका हूँगा' ऐसा मान खेने से 'बिना रूप बाका हूँगा' ऐसा मान खेने से 'संज्ञाबाका बिना संज्ञा बाका' व संज्ञा बाका और न बिना संज्ञा बाका मिथुनो ! इसलिये बिना मनमें ऐसा कुछ माने बिहार करो ।

मिथुनो ! तुम्हें ऐसा ही सीखना चाहिये— 'मैं हूँ' पह मैं हूँ' व संज्ञा बाका और न बिना संज्ञा बाका हूँ' यह सब केवल मनकी चंचलता मात्र है । मिथुनो ! तुम्हें चंचलता वाले मनमें बिहार करना नहीं चाहिये । मिथुनो ! तुम्हें ऐसा ही सीखना चाहिये— "न संज्ञा बाका और न बिना संज्ञा बाका हूँ" यह सब शून्य जंदा है । मिथुनो ! तुम्हें जंदा में पड़े बिच से बिहार करना नहीं चाहिये । यह सब शून्य प्रपञ्च है । मिथुनो ! तुम्हें प्रपञ्च में पड़े बिच से बिहार करना नहीं चाहिये । यह सब शून्य अभिमान है । मिथुनो ! तुम्हें अभिमान में पड़े बिच से बिहार करना नहीं चाहिये ।

मिथुनो ! तुम्हें ऐसा ही सीखना चाहिये ।

आशीर्षिय यर्ग समाप्त  
अतुर्ग्यं पण्णासक समाप्त ।

# दूसरा परिच्छेद

## ३४. वेदना-संयुक्त

### पहला भाग

#### सगाथा वर्ग

#### § १. समाधि सुत्त ( ३४ ५. १ १ )

##### तीन प्रकार की वेदना

भिक्षुओ ! वेदना तीन हैं । कौन सी तीन ? सुख देनेवाली वेदना, दुःख देनेवाली वेदना, न दुःख न सुख देनेवाली ( = अदुःख-सुख ) वेदना । भिक्षुओ ! यही तीन वेदना हैं ।

समाहित, सप्रज्ञ, स्मृतिमान् बुद्ध का श्रावक,  
वेदना को जानता है, और वेदना की उत्पत्ति को ॥१॥

जहाँ ये निरुद्ध होती हैं उसे, और क्षयगामी मार्ग को,  
वेदनाओं के क्षय होने से, भिक्षु त्रितृष्ण ही परिनिर्वाण पा लेता है ॥२॥

#### § २. सुखाय सुत्त ( ३४ ५ १ २ )

##### तीन प्रकार की वेदना

भिक्षुओ ! वेदना तीन हैं ।

सुख, या यदि दुःख, या अदुःख-सुख वाली,  
आध्यात्म, या बाह्य, जो कुछ भी वेदना है ॥१॥

सभी को दुःख ही जान, विनाश होनेवाले, उखड़ जाने वाले,  
इसे अनुभव कर करके उससे विरक्त होता है ॥२॥

#### § ३. पहाण सुत्त ( ३४ ५ १ ३ )

##### तीन प्रकार की वेदना

भिक्षुओ ! वेदना तीन हैं

भिक्षुओ ! सुख देनेवाली वेदना के राग का प्रहाण करना चाहिये । दुःख देनेवाली वेदना की विवक्षता ( = प्रतिषेध ) का प्रहाण करना चाहिये । अदुःख-सुख वेदना की अविषया का प्रहाण करना चाहिये ।

भिक्षुओ ! जब भिक्षु इस प्रकार प्रहाण कर वेता है तो वह प्रहीण-रागानुशय, डीक डीक देखनेवाला, और तृष्णा को काट देनेवाला कहा जाता है । उसने ( दस प्रकार के ) संयोजनों को निर्मूल कर दिया । अच्छी तरह मान को पहचान दुःख का अन्त कर दिया ।

सुख वेदना का अनुभव करने वाले, वेदना को नहीं जानने वाले,  
तथा मोक्ष को नहीं देखने वाले का वह रागानुशय होता है ॥१॥

हुस बेदना का समुभव करन बाके बेदना का नहीं जानने बाके तथा मोक्ष को नहीं देखने बाके धा वह प्रतिभानुसूत्र (=रेप=विषयता) होता है ३३॥  
 अनुसूत्र-सुषुप्त, महाज्ञानी ( बुद्ध ) से उपदेश किया गया उसका भी जो अभिनमन्युन करता है वह हुस सं नहीं सूझता ३३॥  
 जब मिथु छेसों को उपदेश बासा संमज-भाव को नहीं छोड़ता है तब वह पण्डित सभी बेदना को जान सेता है ३४॥  
 वह बेदनाओं को जाय बनने देखते ही देखते अनाश्रय हा धर्मरत्ना पण्डित मरन के बाद फिर राग द्वेष वा मोह में नही पड़ता ३५॥

### ३४ पाताल सुप्त ( ३४ ५ १ ४ )

पाताल क्या है ?

मिथुभा ! अथ दृष्यक जन ऐसा कहा करते हैं— 'महासमुद्र में पाताल (=जिसका तल नहीं हो) है । मिथुभा ! अथ दृष्यकजन का ऐसा कहना झूठ है । पदार्थतः यह समुद्र में पाताल कोई चीज नहीं ।

मिथुमी ! पाताल सं शारीरिक हुस बेदना का ही अभिप्राय है ।

मिथुमी ! अथ दृष्यकजन शारीरिक हुस बेदना से पीड़ित हो शोक करता है परन्तुण होता है, रोता पीड़ता है छाती पीट पीट कर रोता है सम्मोहन को प्राप्त होता है । मिथुभा ! इसी को कहते हैं कि अथ-दृष्यकजन पाताल में जा गया उसे पाह नहीं मिला ।

मिथुमी ! पण्डित आर्षेयवाक्य शारीरिक हुस बेदना से पीड़ित हो शोक नहीं करना है सम्मोह का नहीं प्राप्त होता है । मिथुमी ! इसी को कहते हैं कि पण्डित आर्षेयवाक्य पाताल में जा गया और वसने पाह पा किया ।

जो उत्पन्न हुस हुस बेदनाओं को नहीं सह सेता है

शारीरिक प्राण हरनेवाली जिनसे पीड़ित हो काँपता है ।

अधीर दुर्बल रोता है और काँपता है

वह पाताल में क्या पाह नहीं पाता है ३३॥

जो उत्पन्न हुस हुस बेदनाओं को सह सेता है

शारीरिक प्राण हरनेवाली जिनसे पीड़ित हा नहीं काँपता है ।

वह पाताल में क्या पाह पा सेता है ३४॥

### ३५ दृष्टव्य सुप्त ( ३४ ५ १ ५ )

तीन प्रकार की बेदना

मिथुमी ! पदना तीन है । काम भी तीन ? सुप्त बेदना दुःख बेदना अनुसूत्र सुप्त बेदना । मिथुमी ! सुप्त बेदना को दुःख के तीर पर समझना चाहिये । दुःख बेदना को प्राण के तीर पर समझना चाहिये । अ दुःख-सुप्त बेदना को अन्तिय के तीर पर समझना चाहिये ।

मिथुमी ! हम प्रकार समझने से वह मिथु डीक डीक बेगनेवाला कहा जाता है—उसने मुख्य को काट दिया संभोजनी का हाथ दिया प्राण को पूरा पूरा काट दुःख का अन्त कर दिया ।

जिनसे सुप्त को दुःख कर के जाया और दुःख को प्राण कर के जाया

शान्त अनुसूत्र सुप्त को अन्तिय कर के देना

वही मिथु डीक डीक बेगनेवाला है बेदनाओं का कहना जाता है

वह वेदनाओं को जान, अपने देगते देरते अनाश्रवणं,  
जानी, धर्मात्मा, मरने के वाय गग, हेप, और मोह में नहीं पड़ता ॥

### § ६. सल्लत्त सुत्त ( ३४. ५. १ ६ )

#### पण्डित और मूर्ख का अन्तर

भिक्षुओ । अज्ञ पृथक् जन सुग्ग वेदना का अनुभव करता है । दुःख वेदना का अनुभव करता है, अदुःख-सुग्ग वेदना का अनुभव करता है ।

भिक्षुओ । पण्डित आर्यश्रावक भी सुग्ग वेदना का अनुभव करता है, दुःग्ग वेदना का अनुभव करता है, अदुःख-सुग्ग वेदना का अनुभव करता है ।

भिक्षुओ । तो, पण्डित आर्यश्रावक और अज्ञ पृथक् जन में क्या भेद हुआ ?

मन्ते । धर्म के मूल भगवान् ही ।

भिक्षुओ । अज्ञ पृथक् जन दुःख वेदना से पीड़ित होकर शोक करता है सम्मोह को प्राप्त होता है । ( इस तरह, ) वह दो वेदनाओं का अनुभव करता है—शारीरिक और मानसिक ।

भिक्षुओ । जैसे, कोई पुरुष भाला से छिद्र जाय । उसे कोई दूसरा भाला भी मार दे । भिक्षुओ । इसी तरह वह दो दुःख वेदनाओं का अनुभव करता है ।

भिक्षुओ । जैसे ही, अज्ञ पृथक् जन दुःख वेदना से पीड़ित होकर शोक करता है सम्मोह को प्राप्त होता है । इस तरह, वह दो वेदनाओं का अनुभव करता है—शारीरिक और मानसिक । उसी दुःख वेदना से पीड़ित होकर खिन्न होता है । वह दुःख वेदना से पीड़ित हो काम-सुख पाना चाहता है । सो क्यों ? भिक्षुओ । क्योंकि अज्ञ पृथक् जन काम-सुख को छोड़ दूसरा दुःख से छूटने का उपाय नहीं जानता है । काम-सुख चाहते हुये उसे सुख वेदना में राग पैदा हो जाता है । वह उन वेदनाओं के समुदय, अस्त होने, आस्वाद्य, दोष और मोक्ष को यथार्थत नहीं जानता है । इस तरह, उसे अदुःख-सुख की जो अविद्या है वह होती है । वह दुःख, सुख या अदुःख-सुख वेदना का अनुभव आसक्त हो कर करता है । भिक्षुओ । इसी को कहते हैं कि अज्ञ पृथक् जन जाति, मरण, शोक, परिदेव, दुःख, दोर्मनस्य और उपायास से संयुक्त है ।

भिक्षुओ । पण्डित आर्यश्रावक दुःख वेदना से पीड़ित हो शोक नहीं करता सम्मोह को नहीं प्राप्त होता । वह एक ही वेदना का अनुभव करता है—शारीरिक का, मानसिक का नहीं ।

भिक्षुओ । जैसे, कोई पुरुष भाला से छिद्र जाय । उसे कोई दूसरा भी भाला न मारे । इस तरह, वह एक ही दुःख वेदना का अनुभव करता है ।

भिक्षुओ । जैसे ही, पण्डित आर्यश्रावक दुःख वेदना से पीड़ित हो शोक नहीं करता सम्मोह को नहीं प्राप्त होता । वह एक ही वेदना का अनुभव करता है—शारीरिक का, मानसिक का नहीं । वह दुःख वेदना से पीड़ित हो कर खिन्न नहीं होता है । वह दुःख वेदना से पीड़ित हो काम-सुख पाना नहीं चाहता है । सो क्यों ? भिक्षुओ । क्योंकि, पण्डित आर्यश्रावक काम-सुख को छोड़ दूसरा दुःख से छूटने का उपाय जानता है । काम-सुख नहीं चाहते हुये उसे सुख वेदना में राग पैदा नहीं होता । वह उन वेदनाओं के समुदय, अस्त होने, आस्वाद्य, दोष और मोक्ष को यथार्थत जानता है । इस तरह, उसे अदुःख-सुख की जो अविद्या है वह नहीं होती । वह दुःख, सुख, या अदुःख-सुख वेदना का अनुभव अनासक्त होकर करता है । भिक्षुओ । इसी को कहते हैं कि अज्ञ पृथक् जन जाति उपायास से असंयुक्त है ।

भिक्षुओ । पण्डित आर्यश्रावक और पृथक् जन में यही भेद है ।

प्रज्ञवान् बहुश्रुत सुख या दुःख वेदना के अनुभव में नहीं पड़ता, ..

धीर पुरुष और पृथक् जन में यही एक यद्वा भेद है ॥

पण्डित विमल धर्म का नाम लिया है  
 साक की धार इसके पार की कात को दल लिया है  
 उसक बिच को जमीन बसे बिचलित नहीं करत  
 भविष्य धर्मों में भी वह गिरन नहीं हाता ॥  
 उसके अनुशास स भयबा विरास स  
 उसके परमार्थ भर नहीं है  
 विमल शीकरहित पद का नाम  
 वह संसार के पार की मण्डी तरह ज्ञान बना है ॥

दु ७ पठम गोलच्छ सुच ( १४ ५ १ ७ )

समय की प्रतीक्षा कर

एक समय भगवान् यशोदाली में महापुत्र की सूटागात्रदाक्षा में विहार करत थे ।

तब भगवान् संधा समय ध्यान से उठ जहाँ ग्लानदाक्षा (भरागियों क हस्ते का पर ) की वहाँ गये । आकर बिठ आसन पर बैठ गये । बहकर, भगवान् न भिक्षुओं का आमन्त्रित किया—  
 भिक्षुमा ! भिक्षु स्मृतिमान् भार संयज हा अपने समय का प्रशाक्षा करे । वही मरी सिद्धा है ।

भिक्षुमा ! कैसे भिक्षु स्मृतिमान् हाता है ?

भिक्षुमी ! भिक्षु कावा में कषानुदर्शी इकर विहार करता है—अपन कलशों का लवानेगला संयज स्मृतिमान् संयज क लभ और श्रीमन्मय का एवावर । वेदना में वेदनानुदर्शी बिच में— परम में परमानुदर्शी— । भिक्षुमा ! हरी तरह भिक्षु स्मृतिमान् हाता है ।

भिक्षुमा ? भिक्षु कैय संयज हाता है ?

भिक्षुमा ! भिक्षु काक-कामे में मचन रहता है खुने भाजने में मचन रहता है । ममरने परमा-  
 हने में मचन रहता है । मच ही पाव आर पावर धारन करने में मचन रहता है । परमा-वशाव करने में मचन रहता है । कामे मच होने केने माल जगल करने और रहते मचन रहता है । भिक्षुमी !  
 इम तरह भिक्षु संयज हाता है ।

भिक्षुमा ! भिक्षु स्मृतिमान् भार संयज हा अपन मज्ज की प्रतीक्षा करे । वही मरी सिद्धा है ।

भिक्षुमी ! इम प्रकार विहार करमवान् भिक्षु का मुन्य वेदनामें उणच हागी है । तब कावता है—मुने वर मुन्य वेदना उणच हो रही है । वर किरी मणच ( म काव ) म ही बिना मणच के नहीं । बिगड मणच में ? हरी कावा के मच में । वर कावा भविष्य संयज ( म वना हुआ ) विगी मच में ही उणच हुआ है । भविष्य और मोहन कावा के मणच म उणच हुने मुन्य-वेदना कैय नि प हागी ? अत वर कावा में और मुन्य वेदना में भविष्य-बुद्धि मणता है के वर ही उणच-भी है—वेदना मममता है । उमड मनि व म दिन हाता है । के विरू हा कावैशली है—वेदना मममता है । इम प्रकार विहार करे में उणका कावा और मुन्य वेदना में म । म है वर प्रतीक्षा हो जता है ।

भिक्षुमा ! इम प्रकार विहार करन कामे भिक्षुका मुन्य-वेदनामें उणच हागी है । वर कावता है—मुने वर मुन्य वेदना उणच हो रही है । वर किरी मणच म ही । अत वर कावा में म । मुन्य वेदना में म मच-बुद्धि मणता है । इम प्रकार विहार करे में उणका कावा और मुन्य वेदना में म मचन है वर महीन ही जनी है ।

भिक्षुमी ! इम प्रकार विहार करनेवत भिक्षु का मुन्य वेदनामें उणच हागी है । अत वर कावता में मच मच म मुन्य वेदना में भविष्य-बुद्धि मणता है । इम प्रकार विहार करे में उणका कावा और मुन्य वेदना में म मचन है वर महीन ही जनी है ।

यदि वह सुख वेदना का अनुभव करता है तो जानता है कि यह अनित्य है । उगमें नहीं लगना चाहिये—यह जानता है । इसका अभिनन्दन नहीं करना चाहिये—यह जानता है ।

यदि वह दुःख वेदना का अनुभव करता है तो जानता है ।

यदि वह अदुःख-सुख वेदना का अनुभव करता है तो जानता है ।

यदि वह मुग्ध, दुःख या अदुःख-सुख वेदना का अनुभव करता है तो अनासक्त होकर ।

वह शरीर भर की वेदना का अनुभव करते जानता है कि मैं शरीर भर की वेदना का अनुभव कर रहा हूँ । जीवित पर्यन्त वेदना का अनुभव करते जानता है कि मैं जीवित पर्यन्त वेदना का अनुभव कर रहा हूँ । मरने के बाद यही सभी वेदनायें ठंडी होकर रह जायेंगी—यह जानता है ।

भिक्षुओ ! जैसे, तेल और घृती के प्रथय से तेल-प्रदीप जलता है । उर्मा तेल और घृती के नहीं जलने से प्रदीप बुझ जायगा ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, भिक्षु शरीर भर की वेदना का अनुभव करते जानता है कि मैं शरीर भर की वेदना का अनुभव कर रहा हूँ । मरने के बाद यही सभी वेदनायें ठंडी होकर रह जायेंगी—यह जानता है ।

### § ८. दुतिय गेलञ्ज सुत्त ( ३४ ५.१. ८ )

समय की प्रतीक्षा करे

[ 'काया' के बदले "स्पर्श" करके ऊपर जैसा ही ]

### § ९. अनिञ्च सुत्त ( ३४ ५.१. ९ )

तीन प्रकार की वेदना

भिक्षुओ ! यह तीन वेदनायें अनित्य, संस्कृत, कारण से उत्पन्न (=प्रतीत्य समुत्पन्न), क्षयधर्मा, ध्वयधर्मा, विराग धर्मा और निरोध-धर्मा हैं ।

कौन-सी तीन ? सुखवेदना, दुःखवेदना, अदुःख-सुख वेदना ।

भिक्षुओ ! यह तीन वेदनायें अनित्य ।

### § १०. फस्तमूलक सुत्त ( ३४ ५.१. १० )

स्पर्श से उत्पन्न वेदनायें

भिक्षुओ ! यह तीन वेदनायें स्पर्श से उत्पन्न होती हैं, स्पर्श ही इनका मूल है, स्पर्श ही इनका निदान = प्रत्यय है ।

भिक्षुओ ! सुखवेदनीय स्पर्श के प्रथय से सुखवेदना उत्पन्न होती है । उसी सुखवेदनीय स्पर्श के निरोध से उससे उत्पन्न होनेवाली सुखवेदना निरुद्ध हो जाती है । वह शान्त हो जाती है ।

भिक्षुओ ! दुःखवेदनीय स्पर्श के प्रथय से दुःखवेदना उत्पन्न होती है । उसी दुःखवेदनीय स्पर्श के निरोध से उससे उत्पन्न होनेवाली दुःखवेदना निरुद्ध हो जाती है । वह शान्त हो जाती है ।

भिक्षुओ ! अदुःख-सुखवेदनीय स्पर्श के प्रथय से अदुःख-सुख वेदना उत्पन्न होती है । उसी अदुःख-सुखवेदनीय स्पर्श के निरोध से उससे उत्पन्न होनेवाली अदुःख-सुख वेदना निरुद्ध हो जाती है । वह शान्त हो जाती है ।

भिक्षुओ ! इस तरह, यह तीन वेदनायें स्पर्श से उत्पन्न होती हैं । उस-उस स्पर्श के प्रथय से वह वह वेदना उत्पन्न होती है । उस-उस स्पर्श के निरोध से उस-उस से उत्पन्न होनेवाली वेदना निरुद्ध हो जाती है ।

समाथा वर्ग समाप्त



## दूसरा भाग

### रहोगत वर्ग

§ १ रहोगतक मुक्त ( २४ ५ २ १ )

संस्कारों का निरोध क्रमशः

—पुरुष और ब्रह्म यह मिथु भगवान् से बोला 'भस्ते ! एकान्त में बैठ ध्यान करते समय मेरे मन में यह चिंतक उठता—भगवान् ने तीन वेदान्तों का उपदेश किया है बुद्धवेदान्त दुःखवेदान्त और अदुःख-सुख वेदान्त। भगवान् ने साय-मान यह भी कहा है जितनी वेदान्तों हैं सभी को दुःख ही समझना चाहिये। सो भगवान् ने यह किस मतकब से कहा है कि जितनी वेदान्तों हैं सभी को दुःख ही समझना चाहिये ?

मिथु ! सीक है मीने ऐसा कहा है। मिथु ! यह मीने संस्कारों की अभावता का कल्प में रख कर कहा है कि जितनी वेदान्तों हैं सभी को दुःख ही समझना चाहिये। मिथु ! मीने यह संस्कारों के क्षण-स्वभाव ध्यय स्वभाव विनाश-स्वभाव निरीध-स्वभाव भीर विपरिणाम-स्वभाव को कल्प में रख कर कहा है कि जितनी वेदान्तों हैं सभी को दुःख ही समझना चाहिये।

मिथु ! मीने सिलसिलत स संस्कारों का निरोध बताया है। प्रथम ध्यान पाये हुये की बाधी निदर हो जाती है। द्वितीय ध्यान पाये हुये के चित्त और विचार निरह हो जाते हैं। तृतीय ध्यान पाये हुये की प्रीति निरह हो जाती है। चतुर्थ ध्यान पाये हुये के आश्वास-अश्वास निदर हो जाते हैं। आकाशात्मक पापतन पाये हुये की क-सजा निदर होती है। विशावात्मकपापतन पाये हुये की अकाशात्मक पापतन-संज्ञा निदर हो जाती है। आकिञ्चनपापतन पाये हुये की विशावात्मकपापतन-संज्ञा निरह हो जाती है। ईषमंज्ञात्मक पाये हुये की आकिञ्चनपापतन-संज्ञा निरह हो जाती है। संज्ञावेकवित निरोध पाये हुये की संज्ञा और वेदान्त निदर हो जाती है। क्षीणात्मक मिथु का राग निदर हो जाता है द्वेष निदर हो जाता है मोह निदर हो जाता है।

मिथु ! मीने निरमयिक से संस्कारों का हम तरह व्युत्पन्न बताया है। प्रथम ध्यान पाये हुये की बाधी व्युत्पन्न हो जाती है। क्षीणात्मक मिथु का राग व्युत्पन्न हो जाता है द्वेष व्युत्पन्न हो जाता है मोह व्युत्पन्न हो जाता है।

मिथु ! प्रथमिषर्षो एः है। प्रथम ध्यान पाये हुये की बाधी प्रथम हो जाती है। द्वितीय ध्यान पाये हुये के चित्त और विचार प्रथम हो जाते हैं। तृतीय ध्यान पाये हुये की प्रीति प्रथम हो जाती है। चतुर्थ ध्यान पाये हुये के आश्वास-अश्वास प्रथम हो जाते हैं। संज्ञावेकवित निरोध पाये हुये की संज्ञा और वेदान्त प्रथम हो जाती है। क्षीणात्मक मिथु का राग प्रथम हो जाता है द्वेष प्रथम हो जाता है मोह प्रथम हो जाता है।

§ २ एतम आकास मुक्त ( २४ ५ २ २ )

विदिध बापु की भाँति पदान्तों

निधुर्षो ! मीने आकास में विदिध बापु रहती है। एतम की बापु रहती है। विदिध की ...

## § ९. पञ्चकङ्क सुत्त ( ३४ ५ २. ९ )

### तीन प्रकार की वेदनायें

तब, पञ्चकङ्क कारीगर ( थपति । ) जहाँ आयुष्मान् उदायी थे वहाँ आया और उनका अभिवादन कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, पञ्चकङ्क कारीगर आयुष्मान् उदायी से बोला, “भन्ते ! भगवान् ने कितनी वेदनायें बतलायी हैं ?

कारीगर जो ! भगवान् ने तीन वेदनायें बतलाई हैं । सुख वेदना, दुःख वेदना, और अदुःख-सुख वेदना ।

इस पर पञ्चकङ्क कारीगर आयुष्मान् उदायी से बोला, “भन्ते ! भगवान् ने तीन वेदनायें नहीं बतलाई हैं । भगवान् ने दो ही वेदनायें बतलाई हैं—सुख और दुःख । भन्ते ! जो यह अदुःख-सुख वेदना है उसे भी शान्त और प्रणीत होने से भगवान् ने सुख ही बतलाया है ।

दूसरी बार भी आयुष्मान् उदायी पञ्चकङ्क कारीगर से बोले, “नहीं कारीगर जी ! भगवान् ने दो वेदनायें नहीं बतलाई हैं । भगवान् ने तीन वेदनायें बतलाई हैं—सुख, दुःख और अदुःख-सुख । भगवान् ने यह तीन वेदनायें बतलाई हैं ।”

दूसरी बार भी पञ्चकङ्क कारीगर आयुष्मान् उदायी से बोला, “भन्ते !” भगवान् ने तीन वेदनायें नहीं बतलाई हैं । भगवान् ने दो ही वेदनायें बतलाई हैं ।

तीसरी बार भी ।

आयुष्मान् उदायी पञ्चकङ्क कारीगर को नहीं समझा सके, और न पञ्चकङ्क कारीगर आयुष्मान् उदायी को समझा सका ।

आयुष्मान् आनन्द ने पञ्चकङ्क कारीगर के साथ आयुष्मान् उदायी के कथा-सलाप को सुना ।

तब, आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे वहाँ गये, और भगवान् का अभिवादन कर एक ओर बैठ गये । एक ओर बैठ, आयुष्मान् आनन्द ने पञ्चकङ्क कारीगर के साथ जो आयुष्मान् उदायी का कथा-सलाप हुआ था सभी भगवान् से कह सुनाया ।

आनन्द ! अपना खास दृष्टि-कोण रहने से ही पञ्चकङ्क कारीगर ने आयुष्मान् उदायी की बात नहीं मानी, और अपना खास दृष्टि-कोण रहने से ही आयुष्मान् उदायी ने पञ्चकङ्क कारीगर की बात नहीं मानी ।

आनन्द ! एक दृष्टि-कोण से मैंने दो वेदनायें भी बतलाई हैं । एक दृष्टि-कोण से मैंने तीन वेदनायें भी बतलाई हैं । एक दृष्टि-कोण से मैंने छ भी, अट्ठारह भी, छत्तीस भी, और एक सौ आठ भी वेदनायें बतलाई हैं । आनन्द ! इस तरह, मैं खास-खास दृष्टि-कोण से धर्म का उपदेश करता हूँ ।

आनन्द ! इस तरह, मेरे खास दृष्टि-कोण से उपदेश किये गये धर्म में जो लोग परस्पर की अच्छी कही हुई बात को भी नहीं समझेंगे वे आपस में लड़ झगड़ कर गाली-गालीज करेंगे ।

आनन्द ! पाँच काम-गुण हैं । कौन से पाँच ? चक्षु-विज्ञेय रूप अमीष्ट, सुन्दर, लुभावने, मिय, काम में डालने वाले, राग पैदा कर देने वाले । श्रोत्र-विज्ञेय शब्द प्राण विज्ञेय गन्ध । जिह्वा-विज्ञेय रस । काया-विज्ञेय स्पर्श । आनन्द ! इन पाँच काम-गुणों के प्रत्यय से जो सुख-सौमनस्य उत्पन्न होता है उसे ‘काम-सुख’ कहते हैं ।

आनन्द ! जो कोई कहे कि यह प्राणी परम सुख-सौमनस्य पाते है तो उसे मैं नहीं मानता ।

छंदेलो, यही सुत्त मज्झिम निकाय २ १ ९ ।

! थपति = स्थपति = ववाई = कारीगर ।

अर्थात् मार्ग ही वेदना-निरोध-नामी मार्ग है। जो सम्बन्ध रहि सम्बन्ध समाधि। जो वेदना के प्रारम्भ से मुक्त-सीमन्तव होता है वह वेदना का आम्बाहू है। वेदना अभिव्यक्त हुए और परिवर्तनशील है यह वेदना का शोष है। जो वेदना के उन्मत्त-राग का महान है वह वेदना का मोक्ष है।

आत्मन् ! मीने सिद्धसिद्धे से संस्कारों का निरोध बताया है। [देखा ३४ ५ १ १]

क्षीयात्त्व मिश्रक राग प्रथमव होता है श्रेय प्रथमव होता है मोक्ष प्रथमव होता है।

### ३६ तृतीय सन्तक सुप्त ( ३४ ५ २ ६ )

#### संस्कारों का निरोध क्रमशः

तव आमुष्मान् आत्मन् अर्हो भगवान् ये अर्हो जाय आर भगवान् का अभिवादन कर एक ओर बैठ गये।

एक ओर बैठे आमुष्मान् आत्मन् से भगवान् वाले आत्मन् ! वेदना क्या है ? वेदना का अनुदय क्या है ? वेदना का निरोध क्या है ? वेदना का निरोध-नामी मार्ग क्या है ? वेदना का आम्बाहू क्या है ? वेदना का शोष क्या है ? वेदना का मोक्ष क्या है ?

अन्ते ! धर्म के मूल भगवान् ही हैं, धर्म के नाशक भगवान् ही हैं, धर्म के अन्तर्ग भगवान् ही हैं। अन्तः होता कि भगवान् ही इस बात को समझते। भगवान् से सुनकर बीमा मिश्र धारण करेंगे।

आत्मन् ! तो सुनो। अन्ती तरह सब कहा भी। मैं कहूँगा।

"अन्ते ! बहुत अच्छा" कह आमुष्मान् आत्मन् से भगवान् को उत्तर दिया।

भगवान् बोले—

आत्मन् ! वेदना तीन है। सुख दुःख अदुःख-सुख। आत्मन् ! वही वेदना कहलाती है।

[ ऊपर बीमा ही ]

### ३७ पठम अङ्क सुप्त ( ३४ ५ २ ७ )

#### संस्कारों का निरोध क्रमशः

तव कुड मिश्र अर्हो भगवान् ये अर्हो जाये "।

एक ओर बैठ वे मिश्र भगवान् से बोले "अन्ते ! वेदना क्या है ? वेदना का मोक्ष क्या है ?

मिश्रभो ! वेदना तीन है। सुख दुःख अदुःख-सुख। मिश्रभो ! वही वेदना कहलाती है।

[ ऊपर बीमा ही ]

मिश्रभो ! मीने सिद्धसिद्धे से संस्कारों का निरोध बताया है। प्रथम पचास पाके हुये की चाली निरन्तर ही जाती है। [ देखो ३४ ५ २ १ ]

क्षीयात्त्व मिश्र का राग प्रथमव होता है, श्रेय प्रथमव होता है मोक्ष प्रथमव होता है।

### ३८ द्वितीय अङ्क सुप्त ( ३४ ५ २ ८ )

#### संस्कारों का निरोध क्रमशः

--एक ओर बैठे अब मिश्रभो से भगवान् बोले मिश्रभो ! वेदना क्या है ? वेदना का मोक्ष क्या है ?

अन्ते ! धर्म के मूल भगवान् ही ।

मिश्रभो ! वेदना तीन है। [ देखो ३४ ५ २ १ ]

‘सुख वेदना’ के विचार से वह सुख नहीं बताया है। आबुस ! जहाँ जहाँ और जिस जिस में सुख मिलता है, उसे बुद्ध सुख ही बताते हैं ।

### § १०. भिक्षु सुत्त ( ३४. ५. २ १० )

विभिन्न दृष्टिकोण से वेदनाओं का उपदेश

भिक्षुओ ! एक दृष्टि-कोण से मैंने दो वेदनायें भी बतलाई हैं । एक दृष्टि-कोण से मैंने तीन वेदनायें भी बतलाई हैं । पाँच वेदनायें भी बतलाई हैं । छ वेदनायें भी बतलाई हैं । अठारह वेदनायें भी बतलाई हैं । छत्तीस वेदनायें भी बतलाई हैं । एक सौ आठ वेदनायें भी बतलाई हैं ।

भिक्षुओ ! इस तरह मैंने खास-खास दृष्टि-कोण से उपदेश किये गये धर्म में जो लोग परस्पर की अच्छी कही हुई बात को भी नहीं सझेंगे वे आपस में लड़-झगड़ कर गाली-गलौज करेंगे ।

भिक्षुओ ! इस तरह, मेरे इस खास दृष्टि-कोण से उपदेश किये गये धर्म में जो लोग परस्पर की अच्छी कही हुई बात को समझेंगे, उसका अभिगन्दन और अनुसोदन करेंगे, वे आपस में मिल से दूध-पानी होकर प्रेम-पूर्वक रहेंगे ।

भिक्षुओ ! यह पाँच काम गुण हैं

[ ऊपर जैसा ही ]

जानन्द ! यह कहने वाले दूसरे मत के साधुओं को यह कहना चाहिये — आबुस ! भगवान् ने ‘सुख-वेदना के’ विचार से वह सुख नहीं बताया है। आबुस ! जहाँ जहाँ और जिस जिस में सुख मिलता है, उसे बुद्ध सुख ही बताते हैं ।

रहोगत वर्ग समाप्त

७ “जिस जिस स्थान में वेदयित सुख या अवेदयित सुख मिलते हैं उन सभी को ‘निर्दुःख’ होने से सुख ही बताया जाता है ।”

सो क्यों ? आत्मन् ! क्योंकि उस सुख से दूसरा सुख कहीं भयंका और बड़ा बड़ा है । आत्मन् ! इस सुख से दूसरा भयंका और बड़ा बड़ा सुख क्या है ?

आत्मन् ! मिथु काम और अक्रमक धर्मों से हट, विचरक और विचार बाके तथा विवेक से उत्पन्न प्रीति सुख बाके प्रथम ध्यान का प्राप्त होकर विहार करता है । आत्मन् ! इसका सुख उस सुख से कहीं भयंका और बड़ा बड़ा है ।

आत्मन् ! यदि कोई कहे कि बस यही परम सुख है तो मैं नहीं मानता ।

आत्मन् ! मिथु विचरक और विचार के शब्द हो जाने से अन्त्यायन प्रसाद बाका विस्त की पुराणप्रदा बाका विचरक और विचार से रहित समधि से उत्पन्न प्रीतिसुख बाका द्वितीय ध्यान को प्राप्त कर विहार करता है । आत्मन् ! इसका सुख उस सुख से कहीं भयंका और बड़ा बड़ा है ।

आत्मन् ! यदि कोई कहे कि बस यही परम सुख है तो मैं नहीं मानता ।

आत्मन् ! मिथु प्रीति से हट उपेक्षा-पूर्वक विहार करता है—स्थितिमान् और संयम और शरीर स सुख का अनुभव करता है । जिसे परिहृत कोग कहते हैं—यह स्थितिमान् उपेक्षा पूर्वक सुख से विहार करता है । उसे तृतीय ध्यान को प्राप्त होकर विहार करता है । आत्मन् ! इसका सुख उस सुख से कहीं भयंका और बड़ा बड़ा है ।

आत्मन् ! यदि कोई कहे कि बस यही परम सुख है तो मैं नहीं मानता ।

आत्मन् ! मिथु सुख और सुख के प्राण हो जाने से पहले ही सामन्त्य और हीनमन्य के भक्त हो जाने से अनुपम सुख उपेक्षा-स्थिति से परिहृत चतुर्थ ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है । आत्मन् ! इसका सुख उसके सुख से कहीं भयंका और बड़ा बड़ा है ।

आत्मन् ! यदि कोई कहे कि 'बस यही परम सुख है' तो मैं नहीं मानता ।

आत्मन् ! मिथु सभी तरह से रूप-संज्ञा को पार कर अतिब्रह्मण के भक्त हो जाने से नानाधर्म संज्ञा का मन में न करने से 'अकाम भक्त है' ऐसा अविद्याभक्त्यात्मन को प्राप्त हो विहार करता है । आत्मन् ! इसका सुख उसके सुख से कहीं भयंका और बड़ा बड़ा है ।

आत्मन् ! यदि कोई कहे कि 'बस यही परम सुख है तो मैं नहीं मानता' ।

आत्मन् ! मिथु सभी तरह से आत्मसात्मन्यात्मन का अतिब्रह्मण कर विद्यात्म भक्त्य ह देना विद्यात्मन्यात्मन का प्राप्त हो विहार करता है । आत्मन् ! इसका सुख उसके सुख से कहीं भयंका और बड़ा बड़ा है ।

आत्मन् ! यदि कोई कहे कि बस यही परम सुख है तो मैं नहीं मानता ।

आत्मन् ! मिथु सभी तरह से विद्यात्मन्यात्मन का अतिब्रह्मण कर 'बुद्ध नहीं है' ऐसा अकिञ्चन्यात्मन को प्राप्त हो विहार करता है । आत्मन् ! इसका सुख उसके सुख से कहीं भयंका और बड़ा बड़ा है ।

आत्मन् ! यदि कोई कहे कि बस यही परम सुख है तो मैं नहीं मानता ।

आत्मन् ! मिथु सभी तरह से अकिञ्चन्यात्मन का अतिब्रह्मण कर नवमंशा-नार्मशा भावतम को प्राप्त हो विहार करता है । आत्मन् ! इसका सुख उसके सुख से कहीं भयंका और बड़ा बड़ा है ।

आत्मन् ! यदि कोई कहे कि 'बस यही परम सुख है तो मैं नहीं मानता' ।

आत्मन् ! मिथु सभी तरह से नवमंशा-नार्मशा भावतम का अतिब्रह्मण कर संज्ञावर्धित-वितोष का प्राप्त हो विहार करता है । आत्मन् ! इसका सुख उसके सुख से कहीं भयंका और बड़ा बड़ा है ।

आत्मन् ! यह शक्य है कि दूसरे मन बाका साधु कहे—धर्मण गीतम मयावर्धित-वितोष

वचन ह अत्र कथ्ये कि यह सुख है । आत्मन् ! यह क्या है यह क्या है ?  
आत्मन् ! यह कथ्ये कथं दूसरे मन के साधुओं का यह कथना कथितो—अधुना ! आत्मन् !

‘सुख वेदना’ के विचार से वह सुख नहीं बताया है। आबुस ! जहाँ जहाँ और जिस जिस में सुख मिलता है, उसे बुद्ध सुख ही बताते हैं ।

### § १०. भिक्षु सुत्त ( ३४. ५. २ १० )

विभिन्न दृष्टिकोण से वेदनाओं का उपदेश

भिक्षुओ ! एक दृष्टि-कोण से मैंने दो वेदनायें भी बतलाई हैं । एक दृष्टि-कोण से मैंने तीन वेदनायें भी बतलाई हैं । पाँच वेदनायें भी बतलाई हैं । छ. वेदनायें भी बतलाई हैं । अट्ठारह वेदनायें भी बतलाई हैं । छत्तीस वेदनायें भी बतलाई हैं । एक सौ आठ वेदनायें भी बतलाई हैं ।

भिक्षुओ ! इस तरह मैंने खास-खास दृष्टि-कोण से उपदेश किये गये धर्म में जो लोग परस्पर की अच्छी कही हुई बात को भी नहीं सझेंगे वे आपस में लड़-झगड़ कर गाली-गलौज करेंगे ।

भिक्षुओ ! इस तरह, मेरे इस खास दृष्टि-कोण से उपदेश किये गये धर्म में जो लोग परस्पर की अच्छी कही हुई बात को समझेंगे, उसका अभिनन्दन और अनुमोदन करेंगे, वे आपस में मेल से दूध-पानी होकर प्रेम-पूर्वक रहेंगे ।

भिक्षुओ ! यह पाँच काम गुण है

[ ऊपर जैसा ही ]

जानन्द ! यह कहने वाले दूसरे मत के साधुओं को यह कहना चाहिये —आबुस ! भगवान्‌ने ‘सुख-वेदना के’ विचार से वह सुख नहीं बताया है। आबुस ! जहाँ जहाँ और जिस जिस में सुख मिलता है, उसे बुद्ध सुख ही बताते हैं ।

रहोगत वर्ग समाप्त

ॐ “जिस जिस स्थान में वेदयित सुप्त या अवेदयित सुप्त मिलते हैं उन सभी को ‘मिहुं स’ होने से सुप्त ही बताया जाता है ।”

## तीसरा भाग

### धट्टस्तत पारयाय वर्ग

§ १ सीबक सुघ ( ३४ ५ ३ १ )

समी वेदनायें पृथक्कृत कर्म के कारण नहीं

एक समय भगवान् राजशुद्ध के यजुस्य कच्छम्बक निवाय में बिहार करत थ ।

तब मोक्षिय-सीबक परिभाषक जहाँ भगवान् ने बर्हो जाया भीर बुझल-अम पूछ कर एक बार बैठ गया ।

एक बार बैठ मोक्षिय-सीबक परिभाषक भगवान् स बोध "गीतम ! कुछ समय भीर माझण यह सिद्धान्त मानन बाके हैं—पुण्य जो कुछ भी सुख दुःख या अदुःख-सुख वेदना का अनुभव करता है सभी अपने किये कर्म के कारण ही । इस पर आप गीतम का क्या कहण है ?

सीबक ! यहाँ विषय के प्रकोप से भी कुछ वेदनायें उत्पन्न होती हैं । सीबक ! इस तो तुम स्वयं भी जान सकते हो । सीबक ! जोर भी यह मानता है कि विषय के प्रकोप से कुछ वेदनायें उत्पन्न होती हैं ।

सीबक ! तो जो समय भीर माझण यह सिद्धान्त मानने बाके हैं—पुण्य जो कुछ भी सुख दुःख या अदुःख-सुख वेदना का अनुभव करता है सभी अपने किये कर्म के कारण ही—ने अपने विषय के अनुभव के विरुद्ध जाते हैं और जोक तिम विषय बात का मायता है उसके भी विरुद्ध जाते हैं । इसलिये मैं कहता हूँ कि उन समय माझणों का वैसा समझना गकत है ।

सीबक ! कप के प्रकोप से भी । बाबु के प्रकोप से भी । मञ्जिपाय के कारण भी । पात के बदलने से भी । उरुद्व-पकटा जा केने से भी । भीर भी उपपन्न से ।

सीबक ! कर्म के विषय से भी कुछ वेदनायें होती हैं । सीबक ! इसे तुम स्वयं भी जान सकते हो और संसार भी इसे मानता है ।

सीबक ! तो जो समय भीर माझण यह सिद्धान्त माननेबाके हैं—पुण्य जो कुछ भी सुख दुःख या अदुःख-सुख वेदना का अनुभव करता है सभी अपने किये कर्म के कारण ही—ने अपने विषय के अनुभव के विरुद्ध जाते हैं और संसार विषय बात को मानता है उसके भी विरुद्ध जाते हैं । इसलिये मैं कहता हूँ कि उन समय माझणों का वैसा समझना गकत है ।

इस पर मोक्षिय सीबक परिभाषक भगवान् स बोध— " गीतम ! इसे जान से कर्म भर के विषय अपनी शरत में जाने अपना उपायक स्वीकार करें ।

पित कच भीर बाबु,

मञ्जिपाय भीर जग,

उरुद्व-पकटी उपपन्न

भीर भाइयें कर्म विषय से ॥

## § २. अट्टसत्त सुत्त ( ३४. ५. ३. २ )

## एक सौ आठ वेदनायें

भिक्षुओ ! एक सौ आठ वात का धर्मोपदेश करूँगा । उमे सुनो । "

भिक्षुओ ! एक सौ आठ वात का धर्मोपदेश क्या है ? एक दृष्टिकोण से मैंने दो वेदनायें भी बतलाई हैं । तीन वेदनायें भी । पाँच वेदनायें भी । छ वेदनायें भी । अट्टारह वेदनायें भी । छत्तीस वेदनायें भी । एक सौ आठ ( = अष्टसत्त ) वेदनायें भी ।

भिक्षुओ ! दो वेदनायें कौन हैं ? (१) प्राणिक, और (२) मानसिक । भिक्षुओ ! यही दो वेदनायें हैं ।

भिक्षुओ ! तीन वेदनायें कौन हैं ? (१) सुख वेदना, (२) दुःख वेदना, और (३) अदुःख-सुख वेदना । भिक्षुओ ! यही तीन वेदनायें हैं ।

भिक्षुओ ! पाँच वेदनायें कौन हैं ? (१) सुखेन्द्रिय, (२) दुःखेन्द्रिय, (३) सौमनस्येन्द्रिय, (४) दोर्मनस्येन्द्रिय, और (५) उपेक्षेन्द्रिय । भिक्षुओ ! यही पाँच वेदनायें हैं ।

भिक्षुओ ! छ वेदना कौन हैं ? (१) चक्षुस्पर्शजा वेदना, (२) श्रोत्र , (३) घ्राण , (४) जिह्वा , (५) काया , (६) मनसस्पर्शजा वेदना । भिक्षुओ ! यही छ वेदनायें हैं ।

भिक्षुओ ! अट्टारह वेदना कौन हैं ? छ सौमनस्य के विचार से, छ दोर्मनस्य के विचार से, और छ उपेक्षा के विचार से । भिक्षुओ ! यही अट्टारह वेदनायें हैं ।

भिक्षुओ ! छत्तीस वेदना कौन हैं ? छ गृहसम्बन्धी सौमनस्य, छ नैष्कर्म ( = त्याग ) सम्बन्धी सौमनस्य, छ गृहसम्बन्धी दोर्मनस्य, छ नैष्कर्म-सम्बन्धी दोर्मनस्य, छ गृहसम्बन्धी उपेक्षा, छ नैष्कर्म-सम्बन्धी उपेक्षा । भिक्षुओ ! यही छत्तीस वेदनायें हैं ।

भिक्षुओ ! एक सौ आठ वेदना कौन हैं ? अतीत छत्तीस वेदना, अनागत छत्तीस वेदना, वर्तमान छत्तीस वेदना । भिक्षुओ ! यही एक सौ आठ वेदनायें हैं ।

भिक्षुओ ! यही हैं अष्टसत्त वात का धर्मोपदेश ।

## § ३. भिक्षु सुत्त ( ३४ ५ ३ ३ )

## तीन प्रकार की वेदनायें

'एक ओर बैठ, वह भिक्षु भगवान् से बोला, "अन्ते ! वेदना क्या है ? वेदना का समुदय क्या है ? वेदना का समुदय-नामी मार्ग क्या है ? वेदना का निरोध क्या है ? वेदना का निरोध-नामी मार्ग क्या है ? वेदना का आस्वाद क्या है ? वेदना का द्रोप क्या है ? वेदना का मोक्ष क्या है ?

भिक्षु ! वेदना तीन हैं । सुख, दुःख, और अदुःख-सुख । भिक्षु ! यही तीन वेदना हैं ।

स्पर्श के समुदय से वेदना का समुदय होता है । तृष्णा ही वेदना का समुदय-नामी मार्ग है । स्पर्श के निरोध से वेदना का निरोध होता है । यह आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग ही वेदना का निरोध-नामी मार्ग है । जो, सम्बन्ध दृष्टि सम्बन्ध मनाधि ।

जो वेदना के प्रत्यय से सुख-सौमनस्य उत्पन्न होते हैं यही वेदना का आस्वाद है । वेदना जा अनित्य, दुःख और परिवर्तनशील है यही वेदना का द्रोप है । जो वेदना के छन्द-राग का ग्रहण है यही वेदना का मोक्ष है ।



३४ पुण्येमान सुप्त ( ३४ ५ ३ ४ )

वेदना की उत्पत्ति और निरोध

वेदना का उत्पन्न होना करने के पहले बोधिसत्त्व रहते ही भरे मन में यह हुआ—वेदना क्या है? वेदना का समुद्भव क्या है? वेदना का निरोध क्या है? वेदना का कारण क्या है? वेदना का निरोध क्या है? वेदना का कारण क्या है? वेदना का निरोध क्या है?

सो, भरे मनमें यह हुआ—वेदना तीन है जो वेदना के उद्भव-राग का प्रदरम है वह वेदना ही है।

वेदना ही है—ऐसा पहले कभी नहीं सुने गये धर्मों में बहुत उत्पन्न हुआ गाय उत्पन्न हुआ।

वेदना का समुद्भव है—ऐसा पहले कभी नहीं सुने गये धर्मों में बहुत उत्पन्न हुआ प्रशा उत्पन्न हुई, विद्या उत्पन्न हुई आशोक उत्पन्न हुआ।

वेदना का समुद्भव-गामी मार्ग ।

वेदना का निरोध है ।

वेदना का निरोधगामी मार्ग है ।

वेदना का आत्मा है ।

वेदना का दोष है ।

वेदना का मोक्ष है—ऐसा पहले कभी नहीं सुने गये धर्मों में बहुत उत्पन्न हुआ प्रशा उत्पन्न हुई आशोक उत्पन्न हुआ ।

३५ भिक्षु सुप्त ( ३४ ५ ३ ५ )

तीन प्रकार की वेदनायें

भिक्षु नहीं भगवान् से नहीं जाने और भगवान् का अधिवाहक कर एक और वेदना भगवान् से बोले "भन्ते! वेदना क्या है? वेदना का समुद्भव क्या है? वेदना का निरोध क्या है? वेदना का कारण क्या है? वेदना का निरोध क्या है? वेदना का कारण क्या है? वेदना का निरोध क्या है?"

सुक्त हुआ और बहु-सुक्त जो वेदना के उद्भव-राग का प्रधान है

पठम समणभाक्षण सुप्त ( ३४ ५ ३ ६ )

वेदनाओं के ज्ञान से ही धमण या प्राज्ञण

वेदना ही है। ज्ञान से तीन? सुक्त वेदना हुआ वेदना बहु-सुक्त वेदना ।

वेदना ही है जो धमण वा प्राज्ञण इन तीन वेदनाओं के समुद्भव उत्पन्न होने, आत्मा, दोष और मोक्ष को बर्णन नहीं आसते । वह धमण वा प्राज्ञण धमण से अपने नाम के अधिकारी नहीं है । न वेदना ही धमण वा प्राज्ञण के परमार्थ को अपने सामने ज्ञान कर साक्षात् कर या प्राप्त कर विहाय करते हैं ।

वेदना ही है जो धमण वा प्राज्ञण इन तीन वेदनाओं के समुद्भव और मोक्ष को बर्णन: ज्ञानते हैं, वह धमण वा प्राज्ञण तब ही अपने नाम के अधिकारी हैं । वे आत्मा, दोष और मोक्ष को बर्णन-प्राप्त कर विहाय करते हैं ।

### § ७ दुतिय समणब्राह्मण सुत्त ( ३४ ५. ३ ७ )

वेदनाओं के ज्ञान से ही श्रमण या ब्राह्मण

भिक्षुओं । वेदना तीन है ।

[ ऊपर जैसा ही ]

### § ८ ततिय समणब्राह्मण सुत्त ( ३४ ५ ३ ८ )

वेदनाओं के ज्ञान से ही श्रमण या ब्राह्मण

भिक्षुओं । जो श्रमण या ब्राह्मण वेदना को नहीं जानते हैं, वेदना के समुदय को नहीं जानते हैं । प्राप्त कर विहार करते हैं ।

### § ९. सुद्धिक निरामिस सुत्त ( ३४. ५. ३. ९ )

तीन प्रकार की वेदनायें

भिक्षुओं । वेदना तीन है ।

भिक्षुओं । सामिप ( = सकाम ) प्रीति होती है । निरामिप ( = निष्काम ) प्रीति होती है । निरामिप से निरामिपतर प्रीति होती है । सामिप सुख होता है । निरामिप सुख होता है । निरामिप से निरामिपतर सुख होता है । सामिप उपेक्षा होती है । निरामिप उपेक्षा होती है । निरामिप से निरामिपतर उपेक्षा होती है । सामिप विमोक्ष होता है । निरामिप विमोक्ष होता है । निरामिप से निरामिपतर विमोक्ष होता है ।

भिक्षुओं । सामिप प्रीति क्या है ? भिक्षुओं । यह पाँच काम गुण है । कान में पाँच ? श्रुतिविज्ञेय रूप अभीष्ट, सुन्दर, लुभावने, प्रिय, काम में डालनेवाले, राग पैदा करनेवाले । श्रोत्रविज्ञेय शब्द । घ्राणविज्ञेय गन्ध । जिह्वाविज्ञेय रस । कायाविज्ञेय स्पर्श । भिक्षुओं । यह पञ्च कामगुण हैं ।

भिक्षुओं । इन पाँच काम-गुणों के प्रत्यय में प्रीति उत्पन्न होती है । भिक्षुओं । इसे सामिप प्रीति कहते हैं ।

भिक्षुओं । निरामिप प्रीति क्या है ? भिक्षुओं । भिक्षु विवेक से उत्पन्न प्रीति सुखवाले प्रथम ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है । भिक्षु समाधि से उत्पन्न प्रीति सुखवाले द्वितीय ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है । भिक्षुओं । इसे निरामिप प्रीति कहते हैं ।

भिक्षुओं । निरामिप से निरामिपतर प्रीति क्या है ? भिक्षुओं । जो क्षीणाश्रव भिक्षु का चित्त आत्मचिन्तन कर राग से विमुक्त हो गया है, द्वेष में विमुक्त हो गया है, मोह से विमुक्त हो गया है, उसे प्रीति उत्पन्न होती है । भिक्षुओं । इसी को निरामिप से निरामिपतर प्रीति कहते हैं ।

भिक्षुओं । सामिप सुख क्या है ?

भिक्षुओं । पाँच काम-गुण हैं । इन पाँच काम-गुणों के प्रत्यय से जो सुख-सौमनस्य उत्पन्न होता है उसे सामिप सुख कहते हैं ।

भिक्षुओं । निरामिप सुख क्या है ?

भिक्षुओं । भिक्षु विवेक से उत्पन्न प्रीति-सुखवाले प्रथम ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है । समाधि से उत्पन्न प्रीति सुखवाले द्वितीय ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है । जिसे पण्डित लोग कहते हैं, स्मृतिमान् उपेक्षा-पूर्वक सुख से विहार करता है—ऐसे तृतीय ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है । भिक्षुओं । इसे 'निरामिप सुख' कहते हैं ।

३४ पुण्येजान मुत्त ( ३४ ५ ३ ४ )

वेदना की उत्पत्ति और निरोध

भिक्षुओ ! बुद्धय नाम करमे क पदक बोधिसत्थ रहते ही मरे मन में यह हुआ—वेदना क्या है ? वेदना का समुत्पन्न क्या है ? वेदना का समुत्पन्न-गामी मार्ग क्या है ? वेदना का निरोध क्या है ? वेदना का निरोध-गामी मार्ग क्या है ? वेदना का मारवाप क्या है ? वेदना का दोष क्या है ? वेदना का मोक्ष क्या है ?

भिक्षुओ ! या मरे मनमें यह हुआ—वेदना तीन है जो वेदना के उत्पन्न-राग का महत्त्व है वह वेदना का मोक्ष है ।

भिक्षुओ ! यह वेदना है—तैसा पहले कमी नहीं सुने गये परों में यत्तु उत्पन्न हुआ तब उत्पन्न हुआ मग्ग उरुत्त दुई विद्या उत्पन्न हुई आलोक उत्पन्न हुआ ।

भिक्षुओ ! यह वेदना का समुत्पन्न है—तैसा पहले कमी नहीं सुने गये परों में यत्तु उत्पन्न हुआ तब उत्पन्न हुआ मग्ग उत्पन्न हुई विद्या उत्पन्न हुई आलोक उत्पन्न हुआ ।

भिक्षुओ ! यह वेदना का समुत्पन्न-गामी मार्ग ।

भिक्षुओ ! यह वेदना का निरोध है ।

भिक्षुओ ! यह वेदना का निरोध-गामी मार्ग है ।

भिक्षुओ ! यह वेदना का मारवाप है ।

भिक्षुओ ! यह वेदना का दोष है ।

भिक्षुओ ! यह वेदना का मोक्ष है—तैसा पहले कमी नहीं सुने गये परों में यत्तु उत्पन्न हुआ तब उत्पन्न हुआ मग्ग उरुत्त दुई आलोक उत्पन्न हुआ ।

३५ भिक्खु मुत्त ( ३५ १ ३ ५ )

ज्ञान प्रकाश की प्रदुर्भाव

तव क्व भिक्खु उरु भगवान् थ वरुं ज्ञान और भगवान् का भविष्यत्क वरुं ज्ञान की है मव ।

एक वरुं है भिक्खु भगवान् का जोसे "ज्जा ! वेदना क्या है ? वेदना का समुत्पन्न क्या है ?" वेदना का मोक्ष क्या है ?

भिक्षुओ ! वेदना तीन है । गुण तुल भी अटुल गुण ज्ञान वेदना के उत्पन्न-राग का महत्त्व है वरुं वेदना का मोक्ष है ।

३६ पत्तम मयथासाक्षण मुत्त ( ३६ ५ ३ ६ )

पदमाओं का प्राप्त वरुं ही भयल या प्राप्ति

भिक्षुओ ! वेदना काण है । काण का मीण ? गुण वेदना तुल वेदना अटुल गुण वेदना ।

भिक्षुओ ! जो उत्पन्न का उत्पन्न हुए मीण वेदना-म के समुत्पन्न काण हीने आत्तव वीण का मोक्ष का उत्पन्न वरुं काण है वह उत्पन्न का उत्पन्न मव मे आने काण क भविष्यती वरुं है । म को के काण-काण का उत्पन्न के काण-को काण-काण-काण का उत्पन्न वरुं काण का उत्पन्न वरुं वेदना काण है ।

भिक्षुओ ! जो उत्पन्न का उत्पन्न हुए मीण वेदना-म के समुत्पन्न भी उत्पन्न का उत्पन्न वरुं है वह उत्पन्न का उत्पन्न मव मे आने काण के भविष्यती है । वे समुत्पन्न-काण का उत्पन्न-काण का उत्पन्न वरुं वेदना काण है ।

# तीसरा परिच्छेद

## ३५. मातुगाम संयुक्त

### पहला भाग

#### पंच्याल चर्ग

#### § १. मनापामनाप सुत्त ( ३५. १. १ )

##### पुरुष को लुभाने वाली स्त्री

मिथुओ ! पाँच अंगों में युक्त होने में स्त्री पुरुष को बिल्कुल लुभाने वाली नहीं होती है । किन्तु पाँच में ? (१) रूप वाली नहीं होती है, (२) धन वाली नहीं होती है, (३) शील वाली नहीं होती है, (४) आलसी होती है, (५) गर्भ धारण नहीं करती है । मिथुओ ! इन्हीं पाँच अंगों में युक्त होने में स्त्री पुरुष को बिल्कुल लुभाने वाली नहीं होती है ।

मिथुओ ! पाँच अंगों से युक्त होने में स्त्री पुरुष को अत्यन्त लुभाने वाली होती है । किन्तु पाँच में ? (१) रूप वाली होती है, (२) धन वाली होती है, (३) शील वाली होती है, (४) दक्ष होती है, (५) गर्भ धारण करती है । मिथुओ ! इन्हीं पाँच अंगों में युक्त होने में स्त्री पुरुष को बिल्कुल लुभाने वाली होती है ।

#### § २. मनापामनाप सुत्त ( ३५. १. २ )

##### स्त्री को लुभाने वाला पुरुष

मिथुओ ! पाँच अंगों में युक्त होने से पुरुष स्त्री को बिल्कुल लुभाने वाला नहीं होता है । किन्तु पाँच में ? (१) रूप वाला नहीं होता है, (२) धन वाला नहीं होता है, (३) शील वाला नहीं होता है, (४) आलसी होता है, (५) गर्भ देने में समर्थ नहीं होता है । मिथुओ ! इन्हीं पाँच अंगों से युक्त होने से पुरुष स्त्री को बिल्कुल लुभाने वाला नहीं होता है ।

मिथुओ ! पाँच अंगों में युक्त होने से पुरुष स्त्री को अत्यन्त लुभाने वाला होता है । किन्तु पाँच में ? (१) रूप वाला होता है, (२) धन वाला होता है, (३) शील वाला होता है, (४) दक्ष होता है, (५) गर्भ देने में समर्थ होता है । मिथुओ ! इन्हीं पाँच अंगों से युक्त होने से पुरुष स्त्री को बिल्कुल लुभाने वाला होता है ।

#### § ३. आवेणिक सुत्त ( ३५. १. ३ )

##### स्त्रियों के अपने पाँच दुःख

मिथुओ ! स्त्री के अपने पाँच दुःख हैं, जिन्हें केवल स्त्री ही अनुभव करती है, पुरुष नहीं। कौन से पाँच ?

मिथुओ ! स्त्री अपनी छोटी ही आंख में पति-कुल चली जाती है, यन्त्रियों को छोड़ देना होता है मिथुओ ! स्त्री का अपना यह पहला दुःख है, जिसे केवल स्त्री ही अनुभव करती है, पुरुष नहीं ।

मिथुना ! निरामिय से निरामियतर मुक्त क्या है ? मिथुनो ! जो क्षीणाभव मिथु का चित्त आत्म-चिन्तन-द्वारा से विमुक्त हो गया है द्वेष से विमुक्त हो गया है मोह से विमुक्त हो गया है उसे मुक्त-सौमनस्य उत्पन्न होता है । मिथुनो ! इसी को निरामिय से निरामियतर प्रीति कहते हैं ।

मिथुनो ! मामिय उपेक्षा क्या है ?

मिथुनो ! पौष काम गुण है । इस पौष काम गुणों के प्रत्यक्ष से जो उपेक्षा उत्पन्न होती है, उसे सामिय उपेक्षा कहते हैं ।

मिथुना ! निरामिय उपेक्षा क्या है ? मिथुन उपेक्षा भार स्मृति की परिशुद्धि-बाधे चतुर्भुजा का प्रास हो विहार करता है । मिथुना ! इन्से निरामिय उपेक्षा कहते हैं ।

मिथुना ! निरामिय से निरामियतर उपेक्षा क्या है ? मिथुनो ! जो क्षीणाभव मिथु का चित्त आत्म-चिन्तन कर राग, संविमुक्त हो गया है द्वेष से विमुक्त हो गया है मोह से विमुक्त हो गया है उसे उपेक्षा उत्पन्न होती है । मिथुनो ! इसी को निरामिय से निरामियतर उपेक्षा कहते हैं ।

मिथुनो ! मामिय विमोक्ष क्या है ? रूप से क्या हुआ विमोक्ष सामिय होता है । अरूप में क्या हुआ विमोक्ष निरामिय होता है ।

मिथुनो ! निरामिय से निरामियतर विमोक्ष क्या है ? मिथुनो ! जो क्षीणाभव मिथु का चित्त आत्म-चिन्तन कर राग से विमुक्त हो गया है द्वेष से विमुक्त हो गया है मोह से विमुक्त हो गया है उसे विमोक्ष उत्पन्न होता है । मिथुनो ! इसी को निरामिय से निरामियतर विमोक्ष कहते हैं ।

भट्टस्यपरियाय नग समाप्त

वदना संयुक्त समाप्त

# तीसरा परिच्छेद

## ३५. मातुगाम संयुक्त

### पहला भाग

### पेट्याल वर्ग

#### § १. मनापामनाप सुत्त ( ३५ १ १ )

##### पुरुष को लुभाने वाली स्त्री

मिथुओ ! पाँच अंगों से युक्त होने में स्त्री पुरुष को बिल्कुल लुभाने वाली नहीं होती है। किन पाँच से ? (१) रूप वाली नहीं होती है, (२) धन वाली नहीं होती है, (३) शील वाली नहीं होती है, (४) आलसी होती है, (५) गर्भ धारण नहीं करती है। मिथुओ ! इन्हीं पाँच अंगों से युक्त होने से स्त्री पुरुष को बिल्कुल लुभाने वाली नहीं होती है।

मिथुओ ! पाँच अंगों से युक्त होने से स्त्री पुरुष को अत्यन्त लुभाने वाली होती है। किन पाँच से ? (१) रूप वाली होती है, (२) धन वाली होती है, (३) शील वाली होती है, (४) दक्ष होती है, (५) गर्भ धारण करती है। मिथुओ ! इन्हीं पाँच अंगों से युक्त होने में स्त्री पुरुष को बिल्कुल लुभाने वाली होती है।

#### § २. मनापामनाप सुत्त ( ३५. १ २ )

##### स्त्री को लुभाने वाला पुरुष

मिथुओ ! पाँच अंगों से युक्त होने में पुरुष स्त्री को बिल्कुल लुभाने वाला नहीं होता है। किन पाँच से ? (१) रूप वाला नहीं होता है, (२) धन वाला नहीं होता है, (३) शील वाला नहीं होता है, (४) आलसी होता है, (५) गर्भ देने में समर्थ नहीं होता है। मिथुओ ! इन्हीं पाँच अंगों से युक्त होने से पुरुष स्त्री को बिल्कुल लुभाने वाला नहीं होता है।

मिथुओ ! पाँच अंगों से युक्त होने से पुरुष स्त्री को अत्यन्त लुभाने वाला होता है। किन पाँच से ? (१) रूप वाला होता है, (२) धन वाला होता है, (३) शील वाला होता है, (४) दक्ष होता है, (५) गर्भ देने में समर्थ होता है। मिथुओ ! इन्हीं पाँच अंगों से युक्त होने से पुरुष स्त्री को बिल्कुल लुभाने वाला होता है।

#### § ३. आवेणिक सुत्त ( ३५ १ ३ )

##### स्त्रियों के अपने पाँच दुःख

मिथुओ ! स्त्री के अपने पाँच दुःख हैं, जिन्हें केवल स्त्री ही अनुभव करती है, पुरुष नहीं। कौन से पाँच ?

मिथुओ ! स्त्री अपनी छोटी ही आयु में पति-खुल चली जाती है, वन्दुओं को छोड़ देना होता है। मिथुओ ! स्त्री का अपना यह पहला दुःख है, जिसे केवल स्त्री ही अनुभव करती है, पुरुष नहीं।

मिथुनो ! फिर भी कर्तवी होती है । 'यह दूसरा हुआ' ।  
 मिथुनो ! फिर भी गर्भिणी होती है । 'यह तीसरा हुआ' ।  
 मिथुनो ! फिर भी कथा जननी है । 'यह चौथा हुआ' ।  
 मिथुनो ! फिर भी जो अपने पुरुष की सेवा करती होती है । 'यह पाँचवाँ हुआ' ।  
 मिथुनो ! परी की के अपने पाँच हुआ हैं किन्तु केवल भी ही अनुभव करती है पुरुष नहीं

### § ४ तीसरी सुप्त ( ३५ १ ४ )

तीन घातों से स्त्रियों की दुर्गति

मिथुनो ! तीन घातों से युक्त होने से भी मरने के बाद नरक में गिर दुर्गति को प्राप्त होती है ।  
 किन तीन से ?

मिथुनो ! श्री पूर्वाह्न समय कृपणता से मर्कित चित्तवाली होकर घर में रहती है । मध्याह्न समय ईर्ष्या से युक्त चित्तवाली होकर घर में रहती है । सायंक समय काम-राग से युक्त चित्तवाली हाकर घर में रहती है ।

मिथुनो ! इन्हीं तीन घातों से युक्त होने से भी मरने के बाद नरक में गिर दुर्गति को प्राप्त होती है ।

### § ५ क्रोधन सुप्त ( ३५ १ ५ )

पाँच घातों से स्त्रियों की दुर्गति

एक अशुभ्याम् अनुदत्त बर्हो मगवात् ये बर्हो अप्ये भैर मगवात् का भविष्यत् कर एक धोर बँड गय ।

एक धोर बँड का शुभ्याम् अनुदत्त भगवात् से बोले आते ! ये आते विषय मिथुन अमाशुपित्त यस्तु मन्त्री का मरण के बाद नरक में गिर दुर्गति को प्राप्त होती है। अन्त ! किन घातों से युक्त होने से भी मरण के बाद नरक में गिर दुर्गति को प्राप्त होती है ?

अनुदत्त ! पाँच घातों से युक्त होने से भी मरने के बाद नरक में गिर दुर्गति को प्राप्त होती है । किन पाँच से ?

अज्ञा-रहित होती है । निर्मल होती है । निर्मल ( रूपय करने में निर्मल ) होती है । प्रोधी जाती है । मूर्ख होती है ।

अनुदत्त ! इन पाँच घातों से युक्त होने से भी मरण के बाद नरक में गिर दुर्गति को प्राप्त होती है ।

### § ६ उपनाही सुप्त ( ३५ १ ६ )

निसञ्ज

अनुदत्त ! 'अज्ञा-रहित होती है । निर्मल होती है । निर्मल होती है । अज्ञानवाली जाती है । मूर्ख होती है । दुर्गति को प्राप्त होती है ।

### § ७ इन्धुकी सुप्त ( ३५ १ ७ )

ईर्ष्यांगु

अनुदत्त ! अज्ञा-रहित होती है । ईर्ष्यांगु होती है । मूर्ख होती है । दुर्गति को प्राप्त होती है ।

## § ८. मच्छरी सुत्त ( ३५. १. ८ )

कृपण

अनुरुद्ध ! ...श्रद्धा-रहित होती है । निर्लज्ज होती है । निर्भय होती है । कृपण होती है । मूर्खा होती है ।

अनुरुद्ध ! इन पाँच धर्मों से युक्त होने से स्त्री मरने के बाद नरक में गिर दुर्गति को प्राप्त होती है ।

## § ९. अतिचारी सुत्त ( ३५. १. ९ )

कुलटा

अनुरुद्ध ! श्रद्धा-रहित होती है । कुलटा होती है । मूर्खा होती है । ...दुर्गति को प्राप्त होती है ।

## § १०. दुस्शील सुत्त ( ३५ १ १० )

दुराचारिणी

अनुरुद्ध ! ...दुःशील होती है । मूर्खा होती है । दुर्गति को प्राप्त होती है ।

## § ११. अप्पस्सुत्त सुत्त ( ३५ १. ११ )

अल्पश्रुत

अनुरुद्ध ! ...अल्पश्रुत होती है । मूर्खा होती है । ...दुर्गति को प्राप्त होती है ।

## § १२. कुसीत सुत्त ( ३५ १. १२ )

आलसी

अनुरुद्ध ! कुसीत (=उत्साह-हीन) होती है । मूर्खा होती है । ...दुर्गति को प्राप्त होती है ।

## § १३. म्मुट्टस्सति सुत्त ( ३५. १. १३ )

भोंदी

अनुरुद्ध ! ...मूढ़ स्मृति (=भोंदी) होती है । मूर्खा होती है । दुर्गति को प्राप्त होती है ।

## § १४. पञ्चवेर सुत्त ( ३५. १. १४ )

पाँच अधर्मों से युक्त की दुर्गति

अनुरुद्ध ! पाँच धर्मों से युक्त होने से स्त्री मरने के बाद नरक में गिर दुर्गति को प्राप्त होती है । किन पाँच से ?

जीव-हिंसा करने वाली होती है । चोरी करने वाली होती है । व्यभिचार करने वाली होती है । शूद्र बोलने वाली होती है । सुरा द्रव्यादि नशीली वस्तुओं का सेवन करने वाली होती है ।

अनुरुद्ध ! इन पाँच धर्मों से युक्त होने से स्त्री मरने के बाद नरक में गिर दुर्गति को प्राप्त होती है ।



## § ७ बहुस्तुत सुत्त ( ३५. २. ७ )

बहुधुत

" बहुधुत होती है । प्रज्ञा-सम्पन्न होती है । "

## § ८. त्रिरिय सुत्त ( ३५. २. ८ )

परिश्रमी

उत्साह-शील होती है । प्रज्ञा-सम्पन्न होती है । "

## § ९. मति सुत्त ( ३५. २. ९ )

तीव्र-बुद्धि

" तेज होती है । प्रज्ञा-सम्पन्न होती है । "

## § १०. पञ्चशील सुत्त ( ३५. २. १० )

पञ्चशील-युक्त

" जीव-हिंसा न विरत रहती है । चोरी करने से विरत रहती है । व्यभिचार से विरत रहती है । मद्य-बोले से विरत रहती है । मुरा इ यादि नशीली पशुजा के सेवन से विरत रहती है ।

अनुत्त । इन पाँच वर्गों से युक्त होने से स्त्री मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होती है ।

पेटपाल वर्ग समाप्त

---

## तीसरा भाग

### बल वर्ग

ॐ १ विस्तार सुप्त ( ३५ ३ १ )

स्त्री को पॉच बलों से प्रसन्नता

मिथुनो ! स्त्री के पॉच बल होते हैं । जौन से पॉच ?

रूप-बल धन-बल शक्ति-बल पुत्र-बल और शौक-बल । मिथुनो ! स्त्री के पच पॉच बल होते हैं ।

मिथुनो ! इन पॉच बलों से युक्त स्त्री प्रसन्नता-पूर्वक घर में रहती है ।

ॐ २ पसल सुप्त ( ३५ ३ २ )

स्वामी को घष्ट में करना

मिथुनो ! इन पॉच बलों से युक्त स्त्री अपने स्वामी को बस में रखकर घर में रहती है ।

ॐ ३ अभिसुप्त सुप्त ( ३५ ३ ३ )

स्वामी को दूषा कर रखना

मिथुनो ! इन पॉच बलों से युक्त स्त्री अपने स्वामी को दूषा कर घर में रहती है ।

ॐ ४ एक सुप्त ( ३५ ३ ४ )

स्त्री को दूषाकर रखना

मिथुनो ! एक बल से युक्त स्त्री ने प्रत्य स्त्री को दूषा कर रहता है । किस एक बल से ? वैरवर्धक बल से ।

मिथुनो ! वैरवर्धक से दूषाई गई स्त्री को न तो रूप-बल युक्त काम देता है न धन-बल न पुत्र-बल और न शौक-बल ।

ॐ ५ मङ्ग सुप्त ( ३५ ३ ५ )

स्त्री के पॉच बल

मिथुनो ! स्त्री के पॉच बल होते हैं । जौन से पॉच ? रूप-बल धन-बल शक्ति-बल पुत्र-बल और शौक-बल ।

मिथुनो ! यदि स्त्री रूप-बल से सम्पन्न हो किन्तु धन-बल से नहीं तो वह कम अंग से नहीं नहीं होती । यदि स्त्री रूप-बल से सम्पन्न हो और धन-बल से भी तो वह कम अंग से पूरी होती है ।

मिथुनो ! यदि स्त्री रूप-बल से और धन-बल से सम्पन्न हो किन्तु शक्ति-बल से नहीं तो वह

उस अंग में पूरी नहीं होती। यदि स्त्री रूप-बल में, धन-बल में और ज्ञाति-बल में भी सम्पन्न हो, तो वह उस अंग से पूरी होती है।

भिक्षुओ ! यदि स्त्री रूप-बल से, धन-बल से और ज्ञाति-बल में सम्पन्न हो, किन्तु पुत्र-बल में नहीं, तो वह स्त्री उम्र अंग से पूरी नहीं होती। यदि स्त्री रूप-बल से, धन-बल से, ज्ञाति-बल से और पुत्र-बल में भी सम्पन्न हो, तो वह उम्र अंग से पूरी होती है।

भिक्षुओ ! यदि स्त्री रूप-बल से, धन-बल से, और ज्ञाति-बल से और पुत्र-बल से सम्पन्न हो, किन्तु शील-बल में नहीं, तो वह उम्र अंग से पूरी नहीं होती। यदि स्त्री रूप-बल से, धन-बल से, ज्ञाति-बल से, पुत्र-बल से और शील-बल से भी सम्पन्न हो, तो वह उस अंग से पूरी होती है।

भिक्षुओ ! स्त्री के यही पाँच बल हैं।

### § ६. नासेति सुच ( ३५. ३ ६ )

#### स्त्री को कुल से हटा देना

भिक्षुओ ! स्त्री के पाँच बल होते हैं।

भिक्षुओ ! यदि स्त्री रूप-बल में सम्पन्न हो, किन्तु शील-बल में नहीं, तो उसे कुल से लोग हटा देते हैं, बुलाते नहीं हैं।

भिक्षुओ ! यदि स्त्री रूप-बल से और धन-बल में सम्पन्न हो, किन्तु शील-बल से नहीं, तो उसे कुल से लोग हटा देते हैं, बुलाते नहीं हैं।

भिक्षुओ ! यदि स्त्री रूप-बल से, धन-बल से, और ज्ञाति-बल से सम्पन्न हो, किन्तु शील-बल से नहीं, तो उसे कुल से लोग हटा देते हैं, बुलाते नहीं हैं।

भिक्षुओ ! यदि स्त्री रूप-बल से, धन-बल से, ज्ञाति-बल से और पुत्र-बल से सम्पन्न हो, किन्तु शील-बल से नहीं, तो उसे कुल से लोग हटा देते हैं, बुलाते नहीं हैं।

भिक्षुओ ! यदि स्त्री शील-बल से सम्पन्न हो, रूप-बल से नहीं, धन-बल से नहीं, ज्ञाति-बल से नहीं, पुत्र-बल से नहीं, तो उसे कुल में लोग बुलाते ही हैं, हटाते नहीं।

भिक्षुओ ! स्त्री के यही पाँच बल हैं।

### § ७. हेतु सुच ( ३५. ३ ७ )

#### स्त्री-बल से स्वर्ग-प्राप्ति

भिक्षुओ ! स्त्री के पाँच बल हैं।

भिक्षुओ ! स्त्री न रूप-बल से, न धन-बल से, न ज्ञाति-बल से और न पुत्र-बल से मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होती है।

भिक्षुओ ! शील-बल से ही स्त्री मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होती है।

भिक्षुओ ! स्त्री के यही पाँच बल हैं।

### § ८ ठान सुच ( ३५ ३ ८ )

#### स्त्री की पाँच दुर्लभ बातें

भिक्षुओ ! उस स्त्री के पाँच स्थान दुर्लभ होते हैं जिसने पुण्य नहीं किया है। कौन से पाँच ?

अच्छे कुल में उत्पन्न हो उस स्त्री का वह प्रथम स्थान दुर्लभ होता है जिसने पुण्य नहीं किया है।

अच्छे कुल में उत्पन्न हो कर भी अच्छे कुल में जाय। उस स्त्री का यह क्षमता स्थान दुर्लभ होता है।

अच्छे कुल में उत्पन्न हो कर भीर अच्छे कुल में जाकर भी बिना सीत के घर में रहे। उस स्त्री का यह क्षमता स्थान दुर्लभ।

अच्छे कुल में उत्पन्न हो अच्छे कुल में जा और बिना सीत के रह भीर पुत्रवती होय उस स्त्री का यह क्षमता स्थान दुर्लभ होता है।

अच्छे कुल में उत्पन्न हो अच्छे कुल में जा बिना सात के रह भीर पुत्रवती भी अपने स्वामी को बना स रखे; उस स्त्री का यह पौत्रवर्ष स्थान दुर्लभ होता है जिसने पुत्र्य नहीं किया है।

मिश्रमा ! इस स्त्री के यह पौत्र स्थान दुर्लभ होते हैं जिसने पुत्र्य नहीं किया है।

मिश्रभो ! इस स्त्री के पौत्र स्थान सुकम होता है जिसने पुत्र्य किया है। कौम स पौत्र ?

[ ऊपर के ही कहे पौत्र स्थान ]

### § ९ विषारद सुप्त ( ३५ ३ ९ )

विषारद स्त्री

मिश्रमा ! पौत्र धर्मों स सुक हो स्त्री विषारद हो कर घर स रहती है। किन पौत्र स ?

जीव-हिंसा स बिरत रहती है चोरी करने स बिरत रहती है स्पमिचार से बिरत रहती है ऋषि वाग्ने स बिरत रहती है सुरा इत्यादि मादक द्रव्या का संभोग नहीं करती है।

मिश्रभो ! इन पौत्र धर्मों स सुक हो स्त्री विषारद हो कर घर स रहती है।

### § १० वद्धि सुप्त ( ३५ ३ १० )

पौत्र वार्ता से वृद्धि

मिश्रमा ! पौत्र वृद्धियों स बढ़ती हुई आप्रधायिका नृप बनती है प्रसन्न और स्वस्थ रहती है। किन पौत्र स ?

अज्ञा स दण्ड से बिद्या स स्थान स भीर प्रज्ञा से।

मिश्रभो ! इन पौत्र वृद्धिया से बढ़ती हुई आप्रधायिका नृप बनती है प्रसन्न और स्वस्थ रहती है।

मातृगाम संयुक्त समाप्त

# चौथा परिच्छेद

## ३६. जम्बुखादक संयुक्त

§ १ निर्वान सुत्त ( ३६. १ )

निर्वाण क्या है ?

एक समय आयुमान् सारिपुत्र मगध में नालकग्राम में विहार करते थे।

तब, जम्बुखादक परित्राजक जहाँ आयुमान् सारिपुत्र ने वहाँ आया और कुशलक्षेम पूछ कर एक ओर चैठ गया।

एक ओर चैठ, जम्बुखादक परित्राजक आयुमान् सारिपुत्र से बोला, "आयुम सारिपुत्र ! लोग 'निर्वाण, निर्वाण' कहा करते हैं। आयुम ! निर्वाण क्या है ?

आयुम ! जो राग-क्षय, द्वेष-क्षय और मोह-क्षय है, यही निर्वाण कहा जाता है।

आयुम सारिपुत्र ! निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये क्या मार्ग है ?

हाँ आयुम ! निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये मार्ग है।

आयुम ! निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये कौन सा मार्ग है ?

आयुम ! निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये यह आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग है। जो, सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वचन, सम्यक् कर्मान्त, सम्यक् अजीव, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति, सम्यक् समाधि। आयुम ! निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये यही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग है।

आयुम ! निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये सब में यह वदम सुन्दर मार्ग है। आयुम ! प्रमाद नहीं करना चाहिये।

§ २. अर्हत्त सुत्त ( ३६. २ )

अर्हत्त्व क्या है ?

आयुस सारिपुत्र ! लोग 'अर्हत्त्व, अर्हत्त्व' कहा करते हैं। आयुम ! अर्हत्त्व क्या है ?

आयुस ! जो राग-क्षय, द्वेष-क्षय, और मोह क्षय है यही अर्हत्त्व कहा जाता है।

आयुस ! अर्हत्त्व के साक्षात्कार करने के लिये क्या मार्ग है ?

आयुस ! यही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग।

• आयुम ! प्रमाद नहीं करना चाहिये।

§ ३ धम्मवादी सुत्त ( ३६. ३ )

धर्मवाद कौन है ?

आयुम सारिपुत्र ! ससार में धर्मवादी कौन है, ससार में सुप्रतिपत्त ( = अच्छे मार्ग पर आरुढ़ ) कौन है, ससार में सुगत ( = अच्छी गति को प्राप्त ) कौन है ?

आयुम ! जो राग के प्रहाण के लिये, द्वेष के प्रहाण के लिये, अर मोह के प्रहाण के लिये धर्मो-पदेश करते हैं, वे ससार में धर्मवादी हैं।

आयुस ! जो राग के महाज के किये श्रेय के महाज के लिये, और मोह के महाज के लिये कर्म हैं वे संसार में सुप्रतिपक्ष हैं ।

आयुस ! जिसके राग श्रेय और मोह प्रहीण हो गम है, उचिष्ठ-मूक सिर कटे ताप के वेप बेसा मित्र दिये गये हैं अक्षिप में कभी उत्पन्न नहीं होमेकाक कर दिये गये हैं वे संसार में सुगत हैं ।

आयुस ! उस राग श्रेय और मोह के महाज के लिये क्या मार्ग है ?

आयुस ! यही मार्ग अष्टांगिक मार्ग ।

आयुस ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

### ३४ किपरिथ सुत्त ( ३६४ )

दुःख की पहचान के लिए महाधर्म-वासन

आयुस सारियुत्त ! अन्न-मात्स्य के शासन में किस किये महाधर्म-वासन किया जाता है ?

आयुस ! दुःख की पहचान के लिये महाधर्म के शासन में महाधर्म-वासन किया जाता है ।

आयुस ! उस दुःख की पहचान के लिये क्या मार्ग है ?

आयुस ! यही मार्ग अष्टांगिक मार्ग ।

आयुस ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

### ३५ अस्तास सुत्त ( ३६५ )

आश्वासन प्राप्ति का मार्ग

आयुस सारियुत्त ! आग आश्वासन पाया हुआ आश्वासन पाया हुआ कहते हैं । आयुस ! आश्वासन पाया हुआ कैसे होता है ?

आयुस ! जो मित्र छः रक्षणियों के समुदाय अथवा हमारे आश्वासन श्रेय और मोह का पर्याप्तता प्राप्त है वह आश्वासन पाया हुआ होता है ।

आयुस ! आश्वासन के साक्षात्कार के लिये क्या मार्ग है ?

आयुस ! यही मार्ग अष्टांगिक मार्ग ।

आयुस ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

### ३६ परमस्मान सुत्त ( ३६६ )

परम आश्वासन प्राप्ति का मार्ग

[ आश्वासन के बन्धन बन्धन आश्वासन करने हीक ऊपर गया ही ]

### ३७ पंदना सुत्त ( ३६७ )

पंदना क्या है ?

आयुस सारियुत्त ! आग करना करना कहा करते हैं । आयुस ! पंदना क्या है ?

आयुस ! पंदना हीन है । मूल दुःख अनुत्पन्न-पंदना । आयुस ! यही पंदना है ।

आयुस ! इस पंदना को बन्धन न के लिये क्या मार्ग है ?

आयुस ! यही मार्ग अष्टांगिक मार्ग ।

आयुस ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

## § ८. आश्रय सुक्त ( ३६. ८ )

आश्रय क्या है ?

आहुस सारिपुत्र ! लोग 'आश्रय, आश्रय' कहा करते हैं । आहुस ! आश्रय क्या है ?  
आहुस ! आश्रय तीन है । काम-आश्रय, भय-आश्रय और अविद्या-आश्रय । आहुस ! यही तीन  
आश्रय है ।

आहुस ! इन आश्रयों के प्रहाण के लिये क्या मार्ग है ?

• 'आहुस ! यही आर्य अष्टांगिक मार्ग' ।

• 'आहुस ! प्रमाद नहीं करना चाहिये' ।

## § ९. अविज्ञा सुक्त ( ३६. ९ )

अविद्या क्या है ?

आहुस सारिपुत्र ! लोग 'अविद्या, अविद्या' कहा करते हैं । आहुस ! अविद्या क्या है ?  
आहुस ! जो दुःख का अज्ञान, दुःख-समुद्र का अज्ञान, दुःखनिरोध का अज्ञान, दुःख का  
निरोधगामी मार्ग का अज्ञान । आहुस ! इसी को कहते हैं 'अविद्या' ।

आहुस ! उम अविद्या के प्रहाण के लिये क्या मार्ग है ?

• 'आहुस ! यही आर्य अष्टांगिक मार्ग' ।

• 'आहुस ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

## § १०. तृष्णा सुक्त ( ३६. १० )

तीन तृष्णा

आहुस सारिपुत्र ! लोग 'तृष्णा, तृष्णा' कहा करते हैं । आहुस ! तृष्णा क्या है ?  
आहुस ! तृष्णा तीन है । काम-तृष्णा, भय-तृष्णा, विभव-तृष्णा । आहुस ! यही तीन तृष्णा है ।  
आहुस ! उम तृष्णा के प्रहाण के लिये क्या मार्ग है ?

• 'आहुस ! यही आर्य अष्टांगिक मार्ग' ।

आहुस ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

## § ११. ओष सुक्त ( ३६. ११ )

चार वाद

आहुस सारिपुत्र ! लोग 'वाद, वाद' कहा करते हैं । आहुस ! वाद क्या है ?  
आहुस ! वाद चार है । काम-वाद, भय-वाद, दृष्टि-वाद, अविद्या-वाद । आहुस ! यही चार वाद है ।  
आहुस ! इन वाद के प्रहाण के लिये क्या मार्ग है ?

आहुस ! यही आर्य अष्टांगिक मार्ग है ।

आहुस ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

## § १२ उपादान सुक्त ( ३६. १२ )

चार उपादान

आहुस ! लोग 'उपादान, उपादान' कहा करते हैं । आहुस ! उपादान क्या है ?  
आहुस ! उपादान चार है । काम-उपादान, दृष्टि-उपादान, शीलमत-उपादान, आमवाद-उपादान  
आहुस ! यही चार उपादान है ।

आहुस ! इन उपादानों के प्रहाणका क्या मार्ग है ?

• देखो पृष्ठ १, चार वादों की व्याख्या ।

आहुम ! यही आर्ये अष्टांगिक मार्ग ।

आहुम ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

### § १३ मन् सुच ( ३६ १३ )

तीन मन्

आहुम सारिपुत्र ! मन् 'मन् मन्' कहा करते हैं । आहुम ! मन् क्या है ?

आहुम ! मन् तीन हैं । काम-मन् रूप-मन् भक्षण-मन् । आहुम ! यही तीन मन् हैं ।

आहुम ! इन मन् के ग्रहण के लिये क्या मार्ग है ?

आहुम ! यही आर्ये अष्टांगिक मार्ग ।

आहुम ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

### § १४ दुग्ध सुत्त ( ३६ १४ )

तीन दुग्ध

आहुम सारिपुत्र ! काग 'दुग्ध दुग्ध' कहा करते हैं । आहुम ! दुग्ध क्या है ?

आहुम ! दुग्ध तीन हैं । दुग्ध-दुग्धता संस्कार-दुग्धता विपरिणाम दुग्धता ।

आहुम ! इन दुग्धों के ग्रहण के लिये क्या मार्ग है ?

आहुम ! यही आर्ये अष्टांगिक मार्ग ।

आहुम ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

### § १५ सक्काय सुत्त ( ३६ १५ )

सक्काय क्या है ?

आहुम सारिपुत्र ! काग 'सक्काय सक्काय' कहा करते हैं । आहुम ! सक्काय क्या है ?

आहुम ! सक्काय न इन पाँच उपादान-स्कन्धों को सक्काय बताया है । जैसे रूप उपादानस्कन्ध

रस रज्जा रसहार -- विज्ञान उपादान-स्कन्ध ।

न दुग्ध ! इन सक्काय की पहचान के लिये क्या मार्ग है ?

आहुम ! यही आर्ये अष्टांगिक मार्ग ।

आहुम ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

### § १६ बुक्कर सुत्त ( ३६ १६ )

बुक्कम में क्या बुक्कर है ?

आहुम सारिपुत्र ! इस धर्म-विषय में क्या बुक्कर है ?

आहुम ! इस धर्म-विषय में प्रकृत्या बुक्कर है ।

आहुम ! प्रकृतित ही ज्ञान से क्या बुक्कर है ?

आहुम ! प्रकृत ज्ञान ही ज्ञान से ज्ञान प्रकृत में मन् लगते रहने बुक्कर है ।

आहुम ! ज्ञान लगत रहने से क्या बुक्कर है ?

आहुम ! मन् कर्तते रहने से धर्मानुष्ठान आचरण बुक्कर है ।

आहुम ! धर्मानुष्ठान आचरण कर्म से अर्हन् हान न कियते देह लगते है ?

आहुम ! कुछ देह नहीं ।

अध्यात्मिक संयुक्त समाप्त



# पाँचवाँ परिच्छेद

## ३७. सामण्डक संयुक्त

§ १ निव्वान सुत्त ( ३७ १ )

निर्वाण क्या है ?

एक समय आयुमान् सारिपुत्र वज्जी ( जनपद ) के उक्कात्तेल में गंगा नदी के तीर पर विहार करते थे ।

तब, सामण्डक परित्राजक जहाँ आयुमान् सारिपुत्र थे वहाँ आया, और कुशल-क्षेम पूछ कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, सामण्डक परित्राजक आयुमान् सारिपुत्र से बोला, “आबुस ! लोग ‘निर्वाण, निर्वाण’ कहा करते हैं । आबुस ! निर्वाण क्या है ?

आबुस ! जो राग-क्षय, द्वेष-क्षय, और मोह-क्षय है, यही निर्वाण कहा जाता है ।

आबुस सारिपुत्र ! क्या निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये मार्ग है ?

हाँ आबुस ! निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये मार्ग है ।

आबुस ! निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये कौन सा मार्ग है ?

आबुस ! निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये यह आर्य आष्टागिक मार्ग है । जो, सम्यक्-दृष्टि, सम्यक्-संकल्प, सम्यक्-वचन, सम्यक्-कर्मान्त, सम्यक्-भाजीव, सम्यक्-व्यायाम, सम्यक्-स्मृति, सम्यक्-समाधि । आबुस ! निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये यही आर्य आष्टागिक मार्ग है ।

आबुस ! निर्वाण के साक्षात्कार करने के लिये सच में यह वक्रा सुन्दर मार्ग है । आबुस ! प्रमाद नहीं करना चाहिये ।

§ २-१६. सब्बे सुत्तन्ता ( ३७ २-१६ )

[ शेष जम्बुखण्डक संयुक्त के पेसा ही ]

सामण्डक संयुक्त समाप्त

# छठाँ परिच्छेद

## ३८ मोग्गल्लान संयुत्त

§ १ सवित्तक सुत्त ( ३८ १ )

प्रथम प्यान

एक समय आबुप्फान् महा-मोमाह्वान आचरती में अनापयिषिद्धक के आराम जेतवन में विहार करते थे ।

आबुप्फान् महा-मोमाह्वान बोले 'आबुस ! एकान्त में ध्यान करते समय मेरे मन में यह चित्त उदय होगा प्रथम प्यान प्रथम प्याव कहा करते हैं सो यह प्रथम प्यान क्या है ?'

आबुस ! तब मेरे मन में यह हुआ :—मिथु काम और अनुसस जनों से हट चित्त और विचार बाधे विवेक से उत्पन्न प्रीतिसुख बाध प्रथम प्यान को प्राप्त हो विहार करता है । इसे प्रथम प्यान कहते हैं ।

आबुस ! सो मैं प्रथम प्यान को प्राप्त हो विहार करता हूँ । आबुस ! इस प्रकार विहार करते मेरे मन में काम-सहगत संज्ञा उठती है ।

आबुस ! तब अदि से महाबाह् मेरे पास आ कर बोले, "मोमाह्वान ! मोग्गल्लान ! विप्याप प्रथम प्यान में प्रमाद मत करो प्रथम प्याव में चित्त स्थिर करो प्रथम प्यान में चित्त एकाम करो प्रथम प्यान में चित्त को समाहित करो ।

आबुस ! तब मैं काम और अनुसस जनों से हट चित्त और विचार बाधे विवेक से उत्पन्न प्रीतिसुख बाधे प्रथम प्यान को प्राप्त हो विहार करने लगा ।

आबुस ! जो मुझे ठीक से कहने बाका वह सकता है—उन्ह से सीखा हुआ भाषक वही ज्ञान का प्राप्त करता है ।

§ २ अचित्तक सुत्त ( ३८ २ )

द्वितीय प्यान

'योग द्वितीय प्यान द्वितीय प्याव कहा करते हैं । यह द्वितीय प्यान क्या है ?

आबुस ! तब मेरे मनमें यह हुआ :—मिथु चित्त और विचार के शान्त हो जाने से आध्यात्म प्रसाद बाधे चित्त की एकप्रता बाधे चित्त और विचार से रहित समाधि से उत्पन्न प्रीति-मुच बाधे द्वितीय प्यान को प्राप्त हो विहार करता हूँ । इसे द्वितीय प्यान कहते हैं ।

आबुस ! सो मैं द्वितीय प्यान को प्राप्त हो विहार करता हूँ । आबुस ! इस प्रकार विहार करते मेरे मनमें चित्त-सहगत संज्ञा उठती है ।

आबुस ! तब अदि से महाबाह् मेरे पास आ कर बोले "मोमाह्वान ! मोग्गल्लान ! विप्याप द्वितीय प्यान में प्रमाद मत करो द्वितीय प्यान में चित्त को समाहित करो ।

आबुस ! तब मैं द्वितीय प्यान को प्राप्त हो विहार करने लगा ।

उन्ह से सीखा हुआ भाषक वही ज्ञान का प्राप्त करता है ।

### § ३. सुख सुक्त ( ३८. ३ )

#### तृतीय ध्यान

तृतीय ध्यान क्या है ?

आयुस ! तव, मेरे मनमें यह हुआ — भिक्षु प्रीति में विरक्त हो उपेक्षा-पूर्वक विहार करता है, स्मृतिमान् और स्वप्न हो शरीर से सुख का अनुभव करना है, जिसे पण्डित लोग कहते हैं— स्मृतिमान् जो उपेक्षा-पूर्वक सुखले विहार करता है। ऐसे तृतीय ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है। इसे तृतीय ध्यान कहते हैं।

आयुस ! सो मैं तृतीय ध्यान को प्राप्त हो विहार करता हूँ। आयुस ! इन प्रकार विहार करते मेरे मनमें प्रीति-सहस्रगत सज्ञा उत्पन्न होती है।

मोग्गल्लान ! तृतीय ध्यान में चित्त को समाहित करो।

बुद्ध से सीखा हुआ श्रावक यद्दे ज्ञान को प्राप्त करता है।

### § ४. उपेखक सुक्त ( ३८. ४ )

#### चतुर्थ ध्यान

चतुर्थ ध्यान क्या है ?

आयुस ! तव, मेरे मनमें यह हुआ — भिक्षु सुख और दुःख के प्रहाण हो जाने में, पहले ही मौमनस्व और मैमनस्य के अन्त हो जाने से, सुख और दुःख से रहित, उपेक्षा और स्मृति की परिशुद्धि वाले चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर विहार करता है। इसे कहते हैं चतुर्थ ध्यान।

आयुस ! सो मैं चतुर्थ ध्यान को प्राप्त हो विहार करता हूँ। आयुस ! इन प्रकार विहार करते मेरे मनमें सुग-सहस्रगत सज्ञा उठती है।

मोग्गल्लान ! चतुर्थ ध्यान में चित्त को समाहित करो।

बुद्ध से सीखा हुआ श्रावक यद्दे ज्ञान को प्राप्त करता है।

### § ५. आकास सुक्त ( ३८. ५ )

#### आकाशानन्त्यायतन

आकाशानन्त्यायतन क्या है ?

आयुस ! तव, मेरे मनमें यह हुआ — भिक्षु सभी तरह से रूप-संज्ञा का अतिक्रमण कर, प्रतिष-सज्ञा ( अनिरोध-सज्ञा ) के अन्त हो जाने से, नानात्व-सज्ञा के मन्त्रेण न लानेसे 'आकाश अनन्त है' ऐसा आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त हो विहार करता है। यही आकाशानन्त्यायतन कहा जाता है।

आयुस ! सो मैं आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त हो विहार करता हूँ। आयुस ! इस प्रकार विहार करते मेरे मनमें रूप-सहस्रगत संज्ञा उठती है।

मोग्गल्लान ! आकाशानन्त्यायतन में चित्त को समाहित करो।

बुद्ध से सीखा हुआ श्रावक बद्दे ज्ञान को प्राप्त करता है।

### § ६. विज्ञान सुक्त ( ३८. ६ )

#### विज्ञानानन्त्यायतन

विज्ञानानन्त्यायतन क्या है ?

आयुस ! तव, मेरे मनमें यह हुआ — भिक्षु सभी तरह से आकाशानन्त्यायतन का अतिक्रमण

# छठाँ परिच्छेद

## ३८ मोगल्लान संयुक्त

§ १ सचितक सुप्त ( ३८ १ )

प्रथम प्याण

एक समय आमुष्मात् महा-मोगल्लान धानवस्त्री में समापयिषिच्छक के आराम अंतर्गत में विहार करते थे ।

आमुष्मात् महा-मोगल्लान बोध 'आमुष्म ! पृथग्गत में प्याण करते समय मरे मय में यह चित्तक उद्य क्वाण 'प्रथम प्याण प्रथम प्याण कहा करते हैं तो यह प्रथम प्याण क्या है ?'

आमुष्म ! तब मेरे मय में यह बुद्धि :—निम्नु काम धार अउपपन्न धर्मो ते हए चित्तक धीर विचार बाध विनेक म उत्पन्न प्रतिमुत्तु बाधे प्रथम प्याण को प्राप्त हो विहार करता है । इसे प्रथम प्याण कहते हैं ।

आमुष्म ! तो मैं प्रथम प्याण का प्राप्त हो विहार करता हूँ । आमुष्म ! इस प्रकार विहार करने मर मय में काम-सहायक भंजा उठती है ।

आमुष्म ! तब अदि म भगवात् मरे पाम धा कर बोधे "मोगल्लान ! मोगल्लान ! विप्याण प्रथम प्याण में प्रमात् मय करो प्रथम प्याण में चित्त स्थिर करा प्रथम प्याण में चित्त मुक्ताय करो प्रथम प्याण में चित्त को समाहित करो ।

आमुष्म ! तब मैं काम धीर अउपपन्न धर्मो म हए चित्तक धीर विचार बाधे विनेक से उत्पन्न प्रतिमुत्तु बाधे प्रथम प्याण को प्राप्त हो विहार करने लगा ।

आमुष्म ! आ मुझे टीक से कहने वाला कह मज्जा है—बुद्ध से तीया हुआ आबक बने शाण का प्राप्त करता है ।

§ २ अचित्तक सुप्त ( ३८ २ )

द्वितीय प्याण

क्वाण 'द्वितीय प्याण द्वितीय प्याण बदा करण है । वह द्वितीय प्याण क्या है ?

आमुष्म ! तब मेरे मय में यह बुद्धि :—निम्नु पित्तक धीर विचार के अन्तर्गत ही जाने स आजीवम प्रसार बाधे चित्त की लक्षणा बाधे चित्तक धीर विचार से रहित समापि म उत्पन्न प्रतिमुत्तु बाधे द्वितीय प्याण को प्राप्त हो विहार करना है । इसे 'द्वितीय प्याण कहते हैं ।

आमुष्म ! तो मैं—द्वितीय प्याण को प्राप्त हो विहार करता हूँ । आमुष्म ! इस प्रकार विहार करने मर मय में चित्तक-सहायक भंजा उठती है ।

आमुष्म ! तब, अदि मे भगवात् मरे क्वाण धा कर बोधे "मोगल्लान ! मोगल्लान ! विप्याण द्वितीय प्याण में प्रमात् मय करा । द्वितीय प्याण में चित्त को समाहित करा ।

आमुष्म ! तब मैं—द्वितीय प्याण को प्राप्त हो विहार करने लगा ।

बुद्ध से तीया हुआ आबक बने शाण को प्राप्त करता है ।

## § ३. सुख सुत्त ( ३८. ३ )

## तृतीय ध्यान

• तृतीय ध्यान क्या है ?

आहुस ! तव, मेरे मनमें यह हुआ — भिक्षु प्रीति से विरक्त हो उपेक्षा-पूर्वक विहार करता है, स्मृतिमान् और संप्रज्ञ हो शरीर से सुख का अनुभव करता है, जिसे पण्डित लोग कहते हैं— स्मृतिमान् हो उपेक्षा-पूर्वक सुखसे विहार करता है । ऐसे तृतीय ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है । इसे तृतीय ध्यान कहते हैं ।

आहुस ! सो मैं तृतीय ध्यान को प्राप्त हो विहार करता हूँ । आहुस ! इस प्रकार विहार करते मेरे मनमें प्रीति-सहगत सज्ञा उत्पन्न होती है ।

मोग्गल्लान ! तृतीय ध्यान में चित्त को समाहित करो ।

उद्ध से सीखा हुआ श्रावक वड़े ज्ञान को प्राप्त करता है ।

## § ४. उपेक्षक सुत्त ( ३८ ४ )

## चतुर्थ ध्यान

चतुर्थ ध्यान क्या है ?

आहुस ! तव, मेरे मनमें यह हुआ — भिक्षु सुख और दुःख के प्रहाण हो जाने से, पहले ही सौमनस्य और दौर्मनस्य के अन्त हो जाने से, सुख और दुःख से रहित, उपेक्षा और स्मृति की परिशुद्धि वाले चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर विहार करता है । इसे कहते हैं चतुर्थ ध्यान ।

आहुस ! सो मैं चतुर्थ ध्यान को प्राप्त हो विहार करता हूँ । आहुस ! इस प्रकार विहार करते मेरे मनमें सुख-सहगत सज्ञा उठती है ।

मोग्गल्लान ! चतुर्थ ध्यान में चित्त को समाहित करो ।

उद्ध से सीखा हुआ श्रावक वड़े ज्ञान को प्राप्त करता है ।

## § ५. आकास सुत्त ( ३८ ५ )

## आकाशानन्त्यायतन

आकाशानन्त्यायतन क्या है ?

आहुस ! तव, मेरे मनमें यह हुआ — भिक्षु सभी तरह से रूप-सज्ञा का अतिक्रमण कर, प्रतिव-संज्ञा ( = निरोध-संज्ञा ) के अन्त हो जाने से, नानाध्व-सज्ञा के मनमें च लानेसे 'आकाश अनन्त है' ऐसा आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त हो विहार करता है । यही आकाशानन्त्यायतन कहा जाता है ।

आहुस ! सो मैं आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त हो विहार करता हूँ । आहुस ! इस प्रकार विहार करते मेरे मनमें रूप-सहगत सज्ञा उठती है ।

मोग्गल्लान ! आकाशानन्त्यायतन में चित्त को समाहित करो ।

उद्ध से सीखा हुआ श्रावक वड़े ज्ञान को प्राप्त करता है ।

## § ६. विज्ञान सुत्त ( ३८ ६ )

## विज्ञानानन्त्यायतन

विज्ञानानन्त्यायतन क्या है ?

आहुस ! तव, मेरे मनमें यह हुआ — भिक्षु सभी तरह से आकाशानन्त्यायतन का अतिक्रमण

कर विज्ञान अन्तर्गत है पंजा विज्ञानानुष्ठापन का प्रास हो विहार करता है। यही विज्ञान-  
गन्तव्य है।

आयुष ! सो मैं विज्ञानानुष्ठापन का प्रास हो विहार करता हूँ। आयुष ! इस प्रकार विहार  
करते मेरे मनमें आशादानानुष्ठापन सहगत संज्ञा उठती है।

सामाजिक ! विज्ञानानुष्ठापन में चित्त को समाहित करो।

तुझ से सीखा हुआ आवश्यक वही ज्ञान को प्रास करता है।

### § ७ आकिञ्चन्य सुप्त ( ३८ ७ )

#### आकिञ्चन्यसुप्त

आकिञ्चन्यसुप्त क्या है ?

आयुष ! तब मेरे मनमें यह हुआ :—मिथु सभी प्रकार से विज्ञानानुष्ठापन का अतिशय  
कर कुछ नहीं है केना आकिञ्चन्यसुप्त को प्रास हो विहार करता है। इसी को आकिञ्चन्यसुप्त।

आयुष ! सो मैं आकिञ्चन्यसुप्त को प्रास हो विहार करता हूँ। आयुष ! इस प्रकार विहार  
करते मेरे मनमें विज्ञानानुष्ठापन-सहगत संज्ञा उठती है।

सामाजिक ! आकिञ्चन्यसुप्त में चित्त को समाहित करो।

तुझ से सीखा हुआ आवश्यक वही ज्ञान को प्रास करता है।

### § ८ नेवसञ्ज सुप्त ( ३८ ८ )

#### नेवसञ्जानानुष्ठापन

नेवसञ्जानानुष्ठापन क्या है ?

आयुष ! तब मेरे मनमें यह हुआ :—मिथु सभी तरह आकिञ्चन्यसुप्त का अतिशय कर  
नेवसञ्जानानुष्ठापन को प्रास हो विहार करता है। इसी को नेवसञ्जानानुष्ठापन कहते हैं।

आयुष ! सो मैं नेवसञ्जानानुष्ठापन का प्रास हो विहार करता हूँ। इस तरह विहार करने  
मेरे मनमें आकिञ्चन्यसुप्त-सहगत संज्ञा उठती है।

सामाजिक ! नेवसञ्जानानुष्ठापन में चित्त को समाहित करो।

तुझ से सीखा हुआ आवश्यक वही ज्ञान को प्रास करता है।

### § ९ अनिमित्त सुप्त ( ३८ ९ )

#### अनिमित्त समाधि

अनिमित्त चित्त की समाधि क्या है ?

आयुष ! तब मेरे मनमें यह हुआ :—मिथु सभी वि ज्ञान को मनमें न कर अनिमित्त चित्त की  
समाधि का प्रास हो विहार करता है। इसी को अनिमित्त चित्त की-समाधि कहते हैं।

आयुष ! सो मैं अनिमित्त चित्त की समाधि का प्रास हो विहार करता हूँ। इस प्रकार  
विहार करने मुझे निमित्तानुष्ठापन विज्ञान होता है।

सामाजिक ! अनिमित्त चित्त की समाधि में लगे।

तुझ से सीखा हुआ आवश्यक वही ज्ञान को प्रास करता है।

## § १०. सक्क सुत्त ( ३८ १० )

बुद्ध, धर्म, सघ में दृढ श्रद्धा से सुगति

एक समय आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान श्रावस्ती में अनाश्रपिण्डिक के आराम जेतवन में विहार करते थे ।

तब, आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान जैसे कोई बलवान् पुरुष समझें वहाँ को प्यार दे और पसारी वहाँ को ममेट ले जैसे जेतवन में अन्तर्धान हो त्रयस्त्रिंशत् देवों के बीच प्रसन्न हुए ।

## ( क )

तब, देवेन्द्र शक्र पाँच सौ देवताओं के साथ जहाँ आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान थे वहाँ आया और आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान को अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया ।

एक ओर खड़े देवेन्द्र ने आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान बोले, "देवेन्द्र ! बुद्ध की शरण में जाना बड़ा अच्छा है । देवेन्द्र ! बुद्ध की शरण में जाने से कितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त करते हैं । धर्म की शरण में । सघ की शरण में ।

मारिय मोग्गल्लान ! सच है, बुद्ध की शरण में जाना बड़ा अच्छा है । बुद्ध की शरण में जाने से कितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त करते हैं । धर्म की शरण में । सघ की शरण में ।

तब, देवेन्द्र शक्र ७ सौ देवताओं के साथ

मात सौ देवताओं के साथ ।

आठ सौ देवताओं के साथ ।

अस्मी सौ देवताओं के साथ ।

मारिय मोग्गल्लान ! सच है, बुद्ध की शरण में जाना बड़ा अच्छा है । बुद्ध की शरण में जाने से कितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त करते हैं । धर्म की शरण में । सघ की शरण में ।

## ( ख )

तब देवेन्द्र शक्र पाँच सौ देवताओं के साथ जहाँ आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान थे वहाँ आया, और आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान को अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया ।

एक ओर खड़े देवेन्द्र से आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान बोले — देवेन्द्र ! बुद्ध में दृढ़ श्रद्धा का होना बड़ा अच्छा है कि, "ऐसे वे भगवान् अर्हत्, सम्यक् सम्बुद्ध, विद्या और चरण से सम्पन्न, अच्छी गति को प्राप्त, लोकविद्, अनुत्तर, पुरुषा को दमन करने में सारथी के समान, देवताओं और मनुष्यों के गुरु बुद्ध भगवान्" । देवेन्द्र ! बुद्ध में दृढ़ श्रद्धा के होने से कितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होते हैं ।

देवेन्द्र ! धर्म में दृढ़ श्रद्धा का होना बड़ा अच्छा है कि, "भगवान् ने धर्म बड़ा अच्छा बताया है, जिसका फल देखते ही देखते मिलता है, जो बिना देर किये सफल होता है, जिसे लोगों को तुला-तुलाकर दिखाया जा सकता है, जो निवाण की ओर ले जानेवाला है, जिसे विश्व लोग अपने भीतर ही भीतर जान सकते हैं ।" देवेन्द्र ! धर्म में दृढ़ श्रद्धा के होने से कितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होते हैं ।

कर विज्ञान अन्तर्गत है। ऐसा विज्ञानानुष्वापत्तन को प्राप्त हो विहार करता है। यही विज्ञानानुष्वापत्तन है।

आहुत ! सो मैं विज्ञानानुष्वापत्तन को प्राप्त हो विहार करता हूँ। आहुत ! इस प्रकार विहार करते मेरे मनमें आकाशात्म्यापत्तन सहस्राय संज्ञा उठती है।

मीमांसाक ! विज्ञानानुष्वापत्तन में चित्त को समाहित करो।

शुद्ध से सीधा हुआ आशक्त बने ज्ञान को प्राप्त करता है।

### § ७ आकिञ्चन्य सुप्त ( ३८ ७ )

#### आकिञ्चन्यापत्तन

आकिञ्चन्यापत्तन क्या है ?

आहुत ! तब मेरे मनमें यह हुआ।—भिष्णु सभी प्रकार से विज्ञानानुष्वापत्तन का अतिवृत्त कर 'शुद्ध नहीं है' ऐसा आकिञ्चन्यापत्तन को प्राप्त हो विहार करता है। इसीको कहते हैं आकिञ्चन्यापत्तन।

आहुत ! सो मैं आकिञ्चन्यापत्तन को प्राप्त हो विहार करता हूँ। आहुत ! इस प्रकार विहार करते मेरे मनमें विज्ञानानुष्वापत्तन-सहस्राय संज्ञा उठती है।

मीमांसाक ! आकिञ्चन्यापत्तन में चित्त को समाहित करो।

शुद्ध से सीधा हुआ आशक्त बने ज्ञान को प्राप्त करता है।

### § ८ नेवसम्पन्न सुप्त ( ३८ ८ )

#### नेवसम्पन्नानुष्वापत्तन

नेवसम्पन्नानुष्वापत्तन क्या है ?

आहुत ! तब मेरे मनमें यह हुआ।—भिष्णु सभी तरह आकिञ्चन्यापत्तन का अतिवृत्त कर नेवसम्पन्नानुष्वापत्तन को प्राप्त हो विहार करता है। इसीको नेवसम्पन्नानुष्वापत्तन कहते हैं।

आहुत ! सो मैं नेवसम्पन्नानुष्वापत्तन को प्राप्त हो विहार करता हूँ। इस तरह विहार करते मेरे मनमें आकिञ्चन्यापत्तन-सहस्राय संज्ञा उठती है।

मीमांसाक ! नेवसम्पन्नानुष्वापत्तन में चित्त को समाहित करो।

शुद्ध से सीधा हुआ आशक्त बने ज्ञान को प्राप्त करता है।

### § ९ अनिमित्त सुप्त ( ३८ ९ )

#### अनिमित्त समाधि

अनिमित्त चित्त की समाधि क्या है ?

आहुत ! तब मेरे मनमें यह हुआ।—भिष्णु सभी निमित्त को सर्वमें न का अनिमित्त चित्त की समाधि का प्राप्त हो विहार करता है। इसीको अनिमित्त चित्त की-समाधि कहते हैं।

आहुत ! सो मैं अनिमित्त चित्त की समाधि को प्राप्त कर विहार करता हूँ। इस प्रकार विहार करते मुझे विमिश्रानुभवाती विज्ञान होता है।

मीमांसाक ! अनिमित्त चित्त की समाधि में करो।

शुद्ध से सीधा हुआ आशक्त बने ज्ञान को प्राप्त करता है।



## § १०. सप्तक सुक्त ( ३८. १० )

बुद्ध, धर्म, सध में दृढ श्रद्धा से सुगति

एक समय आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान श्रावस्ती में अनाद्यपिण्डिक के आराम जेतवन में विहार करते थे ।

तब, आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान जैसे कोई यल्लान पुरुष समेटा घोट को पस्सर दे आर पस्सरी यहाँ को समेट ले जैसे जतवन में अन्तर्धान हो प्रयस्त्रिंशत् देवों के बीच प्रसन्न हुए ।

( क )

तब, देवेन्द्र प्राक् पाँच सा देवताओं के साथ जाँ आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान थे वहाँ आया और आयुष्मान् महा मोग्गल्लान को अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया ।

एक ओर सड़े देवेन्द्र से आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान बोले, "देवेन्द्र ! बुद्ध की शरण में जाना बड़ा अच्छा है । देवेन्द्र ! बुद्ध की शरण में जाने से कितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उरपन्न हो सुगति को प्राप्त करते हैं । धर्म की शरण में । सध की शरण में ।

सारिप मोग्गल्लान ! सच है, बुद्ध की शरण में जाना बड़ा अच्छा है । बुद्ध की शरण में जाने से कितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उरपन्न हो सुगति को प्राप्त करते हैं । धर्म की शरण में । सध की शरण में ।

तब, देवेन्द्र प्राक् छ साँ देवताओं के साथ

सात साँ देवताओं के साथ ।

•• आठ साँ देवताओं के साथ ।

अस्सी साँ देवताओं के साथ ।

सारिप मोग्गल्लान ! सच है, बुद्ध की शरण में जाना बड़ा अच्छा है । बुद्ध की शरण में जाने से कितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उरपन्न हो सुगति को प्राप्त करते हैं । धर्म की शरण में । सध की शरण में ।

( ख )

तब देवेन्द्र प्राक् पाँच साँ देवताओं के साथ जहाँ आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान थे वहाँ आया, और आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान को अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया ।

एक ओर सड़े देवेन्द्र से आयुष्मान् महा-मोग्गल्लान बोले — देवेन्द्र ! बुद्ध में दृढ़ श्रद्धा का होना बड़ा अच्छा है कि, "ऐसे वे भगवान् अर्हत्, सम्यक् सम्युद्ध, विद्या और शरण से सम्पन्न, अच्छी गति को प्राप्त, लोकविद्, अनुत्तर, पुरुषा को ठमन करने में सारथी के समान, देवताओं और मनुष्यों के गुरु बुद्ध भगवान्" । देवेन्द्र ! बुद्ध में दृढ़ श्रद्धा के होने से कितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उरपन्न हो सुगति को प्राप्त होते हैं ।

देवेन्द्र ! धर्म में दृढ़ श्रद्धा का होना बड़ा अच्छा है कि, "भगवान् ने धर्म बड़ा अच्छा बताया है, जिसका फल देखते ही देखते मिलता है, जो थिना देर किये सफल होता है, जिसे लोगों को बुला-बुलाकर दिखाया जा सकता है, जो निर्वाण की ओर ले जानेवाला है, जिसे विज्ञ लोग अपने भीतर ही भीतर जान सकते हैं" । देवेन्द्र ! धर्म में दृढ़ श्रद्धा के होने से कितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उरपन्न हो सुगति को प्राप्त होते हैं ।

देवेन्द्र ! संघ में एक अज्ञा का होना बड़ा अशुभ है कि भगवान् का आवरण-संघ अपने मार्ग पर आरुह्य है सीधे मार्ग पर आरुह्य है ज्ञान के मार्ग पर आरुह्य है बुद्धकृता के मार्ग पर आरुह्य है। जो बार पुनरा के बोधे भाट अज्ञा पुनरा है, वही भगवान् का आवरण संघ है। य आज्ञान करने के योग्य है के अतिशय-अज्ञान करने के योग्य है, ये अज्ञाना ज्ञान के योग्य है प्रणाम करने के योग्य है ये संसार के अस्वीकृत पुनरा-अज्ञा है। देवेन्द्र ! संघ में एक अज्ञा के होने से जितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगत को प्राप्त होते हैं।

देवेन्द्र ! एकता पूर्वक वीर्यों से पुनरा द्वारा अज्ञा है जो वीर्य अज्ञान अज्ञान बुद्ध, निर्मल, शिल्पकर्मण सेवनीय वीर्यों से प्रसन्नित अस्मिन्वित समानि के साथक। देवेन्द्र ! इन अज्ञा वीर्य से पुनरा होने से जितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगत को प्राप्त होते हैं।

भारिय मोमाहात ! एक है बुद्ध स एक अज्ञा का होना ? सुगत को प्राप्त होते हैं।

एक देवेन्द्र शक छः ही देवताओं के साथ ।

सात ही देवताओं के साथ ।

आठ ही देवताओं के साथ ।

अस्सी ही देवताओं के साथ ।

### ( ग )

एक देवेन्द्र शक वीर्य ही देवताओं के साथ वही आनुष्मान् महा-मोमाहात के वही अज्ञा और आनुष्मान् महा-मोमाहात को अस्मिन्वित कर एक और अज्ञा हो गया ।

एक और वही देवेन्द्र से आनुष्मान् महा-मोमाहात वीर्य—देवेन्द्र ! बुद्ध की शरण में आवरण अज्ञा है। देवेन्द्र ! बुद्ध की शरण में जाने से जितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगत को प्राप्त होते हैं। ये दूसरे देवा से इस बात में एक आते हैं—विश्व आनु से वीर्य से पुनरा स वन से आधिपत्य स रूप से अज्ञा स अज्ञा से एत से और विश्व स्वर्ग से। वीर्य की शरण में अज्ञा अज्ञा है । संघ की शरण में अज्ञा अज्ञा है ।

भारिय मोमाहात ! एक है बुद्ध की शरण में । वीर्य की शरण में । संघ की शरण में ।

एक देवेन्द्र शक छः ही देवताओं के साथ ।

सात ही देवताओं के साथ ।

आठ ही देवताओं के साथ ।

अस्सी ही देवताओं के साथ ।

### ( घ )

एक देवेन्द्र शक वीर्य ही देवताओं के साथ वही आनुष्मान् महा-मोमाहात के वही अज्ञा और आनुष्मान् महा-मोमाहात को अस्मिन्वित कर एक और अज्ञा हो गया ।

एक और वही देवेन्द्र से आनुष्मान् महा-मोमाहात वीर्य—देवेन्द्र ! बुद्ध में एक अज्ञा का होना बड़ा अज्ञा है कि देवताओं और अनुष्मान् के एक बुद्ध भगवान्। देवेन्द्र ! बुद्ध में एक अज्ञा के होने से जितने लोग मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगत को प्राप्त होते हैं। वही वे दूसरे देवा से इस बात में एक आते हैं ।

देवेन्द्र ! वीर्य में एक अज्ञा का होना ? वही वे दूसरे देवा से इस बात में एक आते हैं ।

देवेन्द्र ! संघ में एक अज्ञा का होना । वही वे दूसरे देवा से इस बात में एक आते हैं ।

मारिष मोग्गल्लान । तच्च हं ॥

तथ, देवेन्द्र शक छ सो देवताओं के साथ ।

• सात सौ देवताओं के साथ ।

• आठ सौ देवताओं के साथ ॥

• अग्नी सौ देवताओं के साथ ।

### § ११. चन्दन सुक्त ( ३८. ११ )

त्रिरत्न मे श्रद्धा से सुगति

तथ, देवपुत्र चन्दन [ देवेन्द्र शक की तरह विस्तार कर लेना चाहिये ]

तत्र, देवपुत्र सुयाम ॥

तथ, देवपुत्र संतुखित ।

तथ, देवपुत्र सुनिर्मित ।

तत्र, देवपुत्र घडावर्ता ॥

मोग्गल्लान-संयुक्त समाप्त

# सातवाँ परिच्छेद

## ३९ चित्त-सयुक्त

§ १ सम्बोजन युक्त ( ३९ १ )

उम्बराग ही बन्धन है

एक समय कुछ स्वविर मिथु मकिउकास्पण्ड में अन्वष्टक-धन में विहार करते थे ।

उस समय मिश्राटन स कीर भोजन करने के उपरान्त समागृह में प्रकृति हो बैठे हुये उन स्वविर मिथुभा के बीच यह बात बनी—भाबुस ! 'संबोजन और संयोजनीय-धर्म मित्र मित्र अर्थ वाले कीर मित्र मित्र अछर बाक है अथवा एक ही अर्थ को बताने वाले दो शब्द हैं ?

वहाँ कुछ स्वविर मिथु ऐसा कहते थे—भाबुस ! 'संबोजन और संयोजनीय-धर्म मित्र-मित्र अर्थ वाले कीर मित्र मित्र अछर बाक है ।

वहाँ कुछ स्वविर मिथु ऐसा कहते थे—भाबुस ! 'संबोजन और संयोजनीय-धर्म' एक ही अर्थ का बताने बाक दो शब्द हैं ।

उस समय गृहपति चित्र किसी काम से मृगपत्यक आवा हुआ था ।

गृहपति चित्र ने सुना—मिश्राटन स कीर भोजन करने के उपरान्त समागृह में अथवा एक ही अर्थ को बतानेवाले दो शब्द हैं ? वहाँ कुछ स्वविर मिथु ऐसा कहते थे ।

तब गृहपति चित्र जहाँ से स्वविर मिथु थे वहाँ आया और उन्हें अभिवादन कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ गृहपति चित्र उन स्वविर मिथुभा से बोला—अन्ते ! मैंने सुना है कि मिश्राटन स कीर भोजन करने के उपरान्त समागृह में अथवा एक ही अर्थ को बतानेवाले दो शब्द हैं ? वहाँ कुछ स्वविर मिथु ऐसा कहते थे ।

हाँ गृहपति ! ठीक बात है ।

अन्ते ! 'संबोजन' और 'संयोजनीय-धर्म' मित्र-मित्र अर्थवाले कीर मित्र मित्र अछर बाक है । अन्ते ! मैं एक उपासना कहता हूँ । उपासना न भी शिवनें मित्र लोग कहने के अर्थ को समझ लेते हैं ।

अन्ते ! जैसे कोई काका बक डिमि उजके बक के साथ एक रम्मी गे गीच दिया गया हो । तब यदि कोई कह कि काका बक उजके बक का बन्धन है या उजका बक काके बक का बन्धन है तो क्या वह ठीक समझा जायगा ?

वहाँ गृहपति ! न तो काका बक उजके बक का बन्धन है और न उजका बक काके बक का बन्धन है किन्तु जो दोनों एक रम्मी गे गीच हैं वही वहाँ बन्धन है ।

अन्ते ! वीम ही न चतु रत्नी का बन्धन है और न रूप चतु के बन्धन है किन्तु वहाँ जो दोनों के प्रायश्च न छन्द राग उपर्य होता है वही वहाँ बन्धन है । न धात्र सपरा का । न प्राय । न मिष्ट । न न्याया । न मन धर्मों का बन्धन है और न मन धर्मों के बन्धन है किन्तु वहाँ जो दोनों के प्रायश्च से छन्द-राग उत्पन्न होता है वही वहाँ बन्धन है ।

१ मृगपत्यक—गृहपति चित्र का आत्मा गीच या अन्वष्टक धन के पीछे ही था—अदृश्य ।

गृहपति । तुम चते भग्यवान हो, वि बुद्ध के उनने गम्भीर र्म में गुग्गुलु प्रजा-चक्षु पैटना ।

## § २. पठम इतिदत्त सुक्त ( ३९ ० )

### धातु की विभिन्नता

एक समय, कुछ स्थिर भिक्षु मच्छिकासण्ड म अम्घाटफवन म विहार करते थे ।

तब, गृहपति चित्र जहाँ वे राधिर भिक्षु थे चले गया, आर उन्हे अभिवादन कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, गृहपति चित्र उन स्थिर भिक्षुओं से बोला—“भन्ते बल सेरे यहाँ भोजन का निमन्त्रण स्वीकार करे ।

स्थिर भिक्षुओं ने चुप रह कर स्वीकार लिया ।

तब, चित्र गृहपति उनकी स्वीकृति को जान, अत्यन्त में उठ उठने प्रणाम-प्रदक्षिणा कर चला गया ।

तब, डस रात के तीन जाने पर दूसरे दिन पूर्वाह्न में वे स्थिर भिक्षु पहन ओर पाव-चीवर ले जहाँ गृहपति चित्र का घर था पहुँच गये । जा कर थिछे अत्यन्त पर बैठ गये ।

तब, गृहपति चित्र जहाँ वे स्थिर भिक्षु थे बसों गया और उन्हे अभिवादन कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, गृहपति चित्र आयुष्मान् स्थिर ने बोला—भन्ते ! लोग ‘धातु-नानात्व, धातु-नानात्व’ कहा करते हैं । भन्ते ! भगवान् ने धातु-नानात्व क्या बताया है ?

ऐसा कहने पर आयुष्मान् चुप रहे ।

दूसरी तर भी ।

तीसरी तर भी चुप रहे ।

उस समय, आयुष्मान् ऋषिदत्त उन भिक्षुओं में सयने नये थे ।

तब, आयुष्मान् ऋषिदत्त उन स्थिर आयुष्मान् से बोले —भन्ते ! यदि आज्ञा हो तो मैं गृह-पति चित्र के प्रश्न का उत्तर दूँ ।

हाँ ऋषिदत्त ! आप गृहपति चित्र के प्रश्न का उत्तर दें ।

गृहपति । तुम्हारा यही न पूछना है कि—भन्ते ! लोग ‘धातु-नानात्व, धातु-नानात्व’ कहा करते हैं । भन्ते ! भगवान् ने धातु-नानात्व क्या बताया है ?

हाँ भन्ते !

गृहपति ! भगवान् ने धातु-नानात्व यह बताया है—चक्षु-धातु, रूप-धातु, चक्षुविज्ञान-धातु मनो-धातु, वर्म-धातु, मनोविज्ञान-धातु । गृहपति ! भगवान् ने यही धातु-नानात्व बताया है ।

तब, गृहपति चित्र ने आयुष्मान् ऋषिदत्त के कहे का अभिनन्दन और अनुमोदन कर, स्थिर भिक्षुओं को अपने हाथ से परोस-परोस कर अच्छे-अच्छे भोजन खिलाये ।

तब, वे स्थिर भिक्षु यथेष्ट भोजन कर लेने के बाद आश्रम से उठे चले गये ।

तब, आयुष्मान् स्थिर आयुष्मान् ऋषिदत्त से बोले—आधुस ऋषिदत्त ! अच्छा हुआ कि इस प्रश्न का उत्तर आपको सुझ गया, सुझे तो नहीं सूझा था । आधुस ऋषिदत्त ! अच्छा हो कि भविष्य में भी ऐसे प्रश्न पूछे जाने पर आप ही उत्तर दिया करें

## § ३. द्वातिय इतिदत्त सुक्त ( ३९ ३ )

### सत्काय से ही मिथ्या दृष्टियों

[ ऊपर जैसा ही ]

एक ओर बैठ, गृहपति चित्र आयुष्मान्, स्थिर से बोला—भन्ते स्थिर ! जो मयार में नाना

तब आयुष्मान् महक बिहार में निकल गृहपति चित्र स बोले गृहपति ! भव बस रहे ।”  
हैं मन्ते महक ! भव बस रहे इतना काफी है । मन्ते ! आर्य महक मच्छिञ्जकामण्ड में सुख से  
रहे । अम्बाटकवन बड़ा हमनीय है । मैं आर्य महक की सेवा श्रीवरादि में करूँगा ।

गृहपति ! ठीक कहते हो ।

तब आयुष्मान् महक अपनी बिठावन समें, पात्र पीवर ले मच्छिञ्जकामण्ड स चले गये फिर  
कमी फोट कर वहीं धाये ।

### १५ पठम कामभू सुच ( ३९ ५ )

#### विस्तृत उपदेश

एक समय आयुष्मान् कामभू मच्छिञ्जकामण्ड में अम्बाटकवन में बिहार करत थे ।

तब गृहपति चित्र वहाँ आयुष्मान् कामभू थे वहाँ आया ।

एक धीर बैठे गृहपति चित्र को आयुष्मान् कामभू बोले—गृहपति ! कहा गया है—

विश्वोप इवेत आण्डावन वाका

एक भरावाका बन्ता रथ है ।

दु ख-रहित उलकी आते दुखो

बिसरवा बोध एक गया है और जो बन्धन से मुक्त है ॥

गृहपति ! इस संक्षेप से कह गये का बिस्तार स बस अर्ध समझना चाहिए ?

मन्ते ! क्या मगवाक ने ऐसा कहा है ?

हैं गृहपति !

मन्ते ! तो थोका ठहरें, मैं इस पर कुछ विचार कर हूँ ।

तब गृहपति चित्र कुछ समय तक चुप रहे आयुष्मान् कामभू स थोका—

मन्ते ! विश्वोप से सीक का अभिप्राय है ।

मन्ते ! 'इवेत आण्डावन स' विमुक्ति का अभिप्राय है ।

मन्ते ! एक भरा से' स्थिति का अभिप्राय है ।

मन्ते ! 'बलता से आया बन्ता धीर पीछे हटने का अभिप्राय है ।

मन्ते ! रथ स वह चार मठाभूतों के बने हुए शरीर स अभिप्राय है जो माता-पिता स उत्पन्न

हुना है मात-बाक से पका पोसा है अनिय, धोब मकबेवाका और मड शोभा बिसरवा स्वभाव है ।

मन्ते ! रथ स वह है द्वैय दुख है मोह दुख है । वे श्रीवाश्रय मिथु के प्रदीप हो जाते हैं ।

इसलिये श्रीवाश्रय मिथु दुख-रहित होता है ।

मन्ते ! आते' से अर्थ' का अभिप्राय है ।

मन्ते ! शीत से दुष्ठा का अभिप्राय है । वह श्रीवाश्रय मिथु की प्रदीप होती है । इसलिये

श्रीवाश्रय मिथु 'किञ्च-नीत' कहा जाता है ।

मन्ते ! रथ बन्धन है द्वैय बन्धन है मोह बन्धन है । वे श्रीवाश्रय मिथु के प्रदीप हो जाते

हैं । इसलिये श्रीवाश्रय मिथु अन्धकार नहीं आते हैं ।

मन्ते ! इसलिये मगवाक ने कहा है—

विश्वोप इवेत आण्डावन वाका

एक भरा वाका बन्ता रथ है ।

दुख रहित उलकी आते दुखो

बिसरवा बोध एक गया है और जो बन्धन से मुक्त है ॥

भन्ते ! भगवान् के इस संक्षेप से कहे गये का विस्तार में पूंमें ही अर्थ समझना चाहिये ।

गृहपति ! तुम बड़े भगवान् हो, जो भगवान् के इतने गम्भीर धर्म में तुम्हारा प्रज्ञा-चक्षु जाता है ।

### § ६. दुतिय कामभूसुत्त ( ३९ ६ )

#### तीन प्रकार के संस्कार

एक ओर बैठ, गृहपति चित्र आयुष्मान् कामभू से बोला—भन्ते ! संस्कार कितने हैं ?

गृहपति ! संस्कार तीन है । ( १ ) काय-संस्कार, ( २ ) वाक्-संस्कार, और ( ३ ) चित्त-संस्कार साधुकार दे, गृहपति चित्र ने आयुष्मान् कामभू के कहे गये का अभिनन्दन और अनुमोदन कर, आगे का प्रश्न पूछा ।

भन्ते ! कितने काय-संस्कार, कितने वाक्-संस्कार और कितने चित्त संस्कार हैं ?

गृहपति ! आश्वास-प्रश्वास काय-संस्कार है । वितर्क-विचार वाक्-संस्कार हैं । संज्ञा और वेदना चित्त-संस्कार हैं ।

साधुकार दे आगे का प्रश्न पूछा ।

भन्ते ! आश्वास-प्रश्वास क्यों काय-संस्कार है ? वितर्क-विचार क्यों वाक्-संस्कार हैं ? संज्ञा और वेदना क्यों चित्त-संस्कार हैं ?

गृहपति ! आश्वास-प्रश्वास काया के धर्म हैं, जो काया में लगे रहते हैं । इसलिये, आश्वास-प्रश्वास काय-संस्कार हैं ।

गृहपति ! पहले वितर्क और विचार करके पीछे कुछ बात बोली जाती है, इसलिये वितर्क-विचार वाक्-संस्कार हैं ।

गृहपति ! संज्ञा और वेदना चित्त के धर्म हैं, इसलिये संज्ञा और वेदना चित्त के संस्कार हैं ।

साधुकार दे आगे का प्रश्न पूछा ।

भन्ते ! संज्ञा-वेदयित-निरोध-समापत्ति कैसे होती है ?

गृहपति ! संज्ञा-वेदयित-निरोध को प्राप्त करने वाले भिक्षु को यह नहीं होता है—मैं संज्ञा-वेदयित-निरोध को प्राप्त करूँगा, या करता हूँ, या किया था । किंतु, उम्का चित्त पहले ही इतना भावित रहता है जो उसे धहाँ तक ले जाता है ।

साधुकार दे आगे का प्रश्न पूछा ।

भन्ते ! संज्ञा-वेदयित-निरोध प्राप्त करने वाले भिक्षु के सर्व-प्रथम तीन धर्म निरुद्ध होते हैं—काय-संस्कार, या वाक्-संस्कार, या चित्त-संस्कार ।

गृहपति ! संज्ञा-वेदयित-निरोध प्राप्त करनेवाले भिक्षु के सर्व-प्रथम वाक्-संस्कार निरुद्ध होते हैं । तत्र काय-संस्कार, तत्र चित्त-संस्कार ।

साधुकार दे आगे का प्रश्न पूछा ।

भन्ते ! जो मर गया है और जो संज्ञा-वेदयित-निरोध को प्राप्त हुआ है, हल दोनों में क्या भेद है ?

गृहपति ! जो मर गया है उम्का काय-संस्कार निरुद्ध हो गया है, प्रथम ही मर गया है, वाक्-संस्कार निरुद्ध हो गया है, प्रथम ही मर गया है, चित्त-संस्कार निरुद्ध हो गया है, प्रथम ही मर गया है, आयु समाप्त हो गई है, श्वास रुक गये हैं, इन्द्रियों छिन्न-भिन्न हो गई हैं । गृहपति ! जो भिक्षु संज्ञा-वेदयित-निरोध को प्राप्त हुआ है उसका काय-संस्कार निरुद्ध । वाक्-संस्कार निरुद्ध, चित्त-संस्कार निरुद्ध, आयु समाप्त हो गई है, श्वास रुक गये हैं, किन्तु इन्द्रियाँ विप्रसन्न रहती हैं ।

मिथ्या दृष्टियाँ उत्पन्न होती हैं कि लोक प्राप्त है लोक अशाश्वत है लोक मान्य है लोक अमन्य है, जो भीष है बही क्षीर है भीष वृषरा है भीर क्षीर वृषरा है तथागत ( = जीव ) मरने के बाद रहता है नहीं रहता है व रहता है भीर व नहीं रहता है भीर जो महाबाल स्व में बासठ मिथ्या-दृष्टियाँ कही गई हैं ' वह किसके होने से होती हैं और किसके नहीं होने से नहीं होती हैं ?

यह कहने पर आधुप्यान् स्वयिर हुए रहे ।

वृषरी बार भी ।

वीसरी बार भी हुए रहे ।

उस समय आधुप्यान् अपिदत्त उन मिथुनों में सबसे गये थे ।

तब आधुप्यान् अपिदत्त उभ स्वयिर आधुप्यान् ने बोले—मन्ते ! यदि आज्ञा हो तो मैं पुत्र पति धिन्न के प्रदत्त का उत्तर हूँ ।

हाँ अपिदत्त ! आप गृहपति धिन्न के प्रदत्त का उत्तर दें ।

गृहपति ! शुभहारा बही व पृष्ठमा है कि—मन्ते ! जो संसार में नामा मिथ्या दृष्टियाँ उत्पन्न होती हैं वह किसके होने से होती हैं और किसके नहीं होने से नहीं जाती हैं ?

हाँ मन्ते !

गृहपति ! जो संसार में नामा मिथ्या दृष्टियाँ उत्पन्न होती हैं वह सत्त्वाय-दृष्टि के हाने से होती हैं और सत्त्वाय-दृष्टि के नहीं होने से नहीं होती हैं ।

मन्ते ! सत्त्वाय-दृष्टि कैसे होती है ?

गृहपति ! जगत्पृथक् जन रूप को आत्मा करके जानता है आत्मा को रूपवात् आत्मा में रूप या रूप में आत्मा जानता है । वेदवा । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान को आत्मा करके जानता है आत्मा को विज्ञानवात् आत्मा में विज्ञान वा विज्ञान में आत्मा जानता है । गृहपति ! इस तरह सत्त्वाय-दृष्टि होती है ।

मन्ते ! कैसे सत्त्वाय-दृष्टि नहीं होती है ?

गृहपति ! परिदत्त आर्ष-ब्राह्मण व रूप को आत्मा करके जानता है व करमा का रूपवात्, व आत्मा में रूप व रूप में आत्मा जानता है । वेदवा । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान । गृहपति ! इस तरह सत्त्वाय दृष्टि नहीं जाती है ।

मन्ते ! आर्ष अपिदत्त कहीं से आते हैं ?

गृहपति ! मैं अद्यत्ती व आता हूँ ।

मन्ते ! अद्यत्ती में अपिदत्त नाम का दुस्तुष्ट एक दम स्तोत्रों का मिय रहता है जिसे हमने कभी नहीं देगा है और जो आजकल प्रसिद्ध हो गया है । आधुप्यान् ने उसे देता है ?

हाँ गृहपति ! देगा है ।

मन्त ! वे आधुप्यान् हम समय कहीं विहार करते हैं ?

इस पर, आधुप्यान् अपिदत्त हुए रहे ।

मन्ते ! क्या आर्ष ही अपिदत्त हैं ?

हाँ गृहपति !

मन्त ! आर्ष अपिदत्त इच्छित इच्छित में गुण व विद्वान् करें । अज्ञातकथन व वा समीप है । मैं आर्ष अपिदत्त की सेवा की-तादि में करूँगा ।

गृहपति ! शोक कहा है ।

तब गृहपति धिन्न ने आधुप्यान् अपिदत्त के कहने का अतिमन्त और अनुमान कर स्वयिर मिथुनों को अपने हाथ में कठोम-नराम कर अपने धीमन्त विचारों ।



तब, स्वधिर भिक्षु यथेष्ट भोजन कर आसन से उठ चले गये ।

तब, आयुष्मान् स्वधिर आयुष्मान् जपिदत्त से बोले—आवुम जपिदत्त ! अन्धा हुआ कि इम प्रश्न का उत्तर आपसे सूझ गया, मुझे तो नहीं मूढ़ा था । आवुम जपिदत्त ! अन्धा तो कि भयिग्य में भी ऐसे प्रश्न पूछे जाते पर आप ही उत्तर दिया करे ।

तब आयुष्मान् जपिदत्त अपनी मित्रायन उठा पात्र और घीवर ल सन्निहायण से चले गये, पात्रों किण्डाट दर नहीं आये ।

## § ४ महक सुत्त ( ३९ ४ )

### महक द्वारा ऋद्धि-प्रदर्शन

एक समय, कुछ स्वधिर भिक्षु मच्छिक्कासगइ में अम्वाटफवन में विहार करते थे ।

एक ओर बैठ, गृहपति चित्र उन स्वधिर भिक्षुओं से बोला—भन्ते ! कल मेरी गाँवाला में भोजन के लिये निमन्त्रण स्वीकार करें । ✓

स्वधिर भिक्षुओं ने चुपचाप कर स्वीकार कर लिया ।

“तब, स्वधिर भिक्षु यथेष्ट भोजन कर आसन से उठ चले गये ।

गृहपति चित्र ‘जबे चुबे को बोट दो’ कह, स्वधिर भिक्षुओं के पीछे पीछे हो लिया ।

उन समय बड़ी जलती हुई गर्मी पड़ रही थी । वे स्वधिर भिक्षु जड़े वृष्ट से आने जा रहे थे ।

उन समय आयुष्मान् महक उन भिक्षुओं में सबसे नये थे । तब, आयुष्मान् महक आयुष्मान् स्वधिर से बोले—गन्ने स्वधिर ! अन्धा होना कि ठड़ी वायु बहती, मेघ छा जाता और कुछ कुछ फूली पड़ने लगती ।

आयुष्म महक ! हाँ, अन्धा होता कि कुछ कुछ फूली पड़ने लगती ।

तब, आयुष्मान् महक ने ऐसी ऋद्धि लगाई कि ठड़ी वायु बहने लगी, मेघ छा गया, और कुछ कुछ फूली पड़ने लगी ।

तब, गृहपति चित्र के मन में यह हुआ—इन भिक्षुओं में जो जय से गया है उसी का यह ऋद्धि-अनुभाव है ।

तब, आरास पहुँच आयुष्मान् महक आयुष्मान् स्वधिर से बोले—भन्ते स्वधिर ! इतना ही धन रहे ।

हाँ आयुष्म महक ! इतना ही रहे । इतने से काम हो गया ।

तब, स्वधिर भिक्षु अपने-अपने स्थान पर चले गये, और आयुष्मान् महक भी अपने स्थान पर चले गये ।

तब, गृहपति चित्र जहाँ आयुष्मान् महक वे वहाँ गया, और उन्हें अभिवादन कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, गृहपति चित्र आयुष्मान् महक से बोला—भन्ते ! आर्य महक कुछ अपनी अलौकिक ऋद्धि दिखावें ।

गृहपति ! तो, आलिन्द में चादर बिछा कर उसपर घास-फूस बिखेर दो ।

“भन्ते ! बहुत अच्छा” कह, गृहपति चित्र ने आयुष्मान् महक को उत्तर दे आलिन्द में चादर बिछा कर उस पर घास-फूस बिखेर दिया ।

तब, आयुष्मान् महक ने बिहार में पैठ किवाड़ लगा बैसी ऋद्धि लगाई कि एक बड़ी आग की लहर उठी जिसने घास-फूस को जला दिया किन्तु चादर ज्यों की त्यों रही ।

तब, गृहपति चित्र अपनी चादर को हाथ, आश्चर्य से चकित हुये एक ओर खड़ा हो गया ।

तब आयुष्मान् महक बिहार से निकल गृहपति चित्र से बाँके 'गृहपति ! अब बम रह ।  
हो भस्ते महक ! धब बम रहे इतना काफ़ी है । भस्ते ! आर्य महक मच्छिकासण्ड में सुक से  
रहें । मच्छाटकथन बधा रमणीय है । मैं आर्य महक की सवा बीबरात्रि से करूँगा ।  
गृहपति ! ठीक कहत हो ।

तब आयुष्मान् महक अपनी बिछावन समेट पात्र-बीबर से मच्छिकासण्ड से चले गये फिर  
कमी काट कर नहीं भाये ।

### ६५ पठम कामभू सुध ( ३९. ५ )

#### बिस्तृत उपपद्य

एक समय आयुष्मान् कामभू मच्छिकासण्ड में मच्छाटकथन में बिहार करत थे ।

तब गृहपति चित्र जहाँ आयुष्मान् कामभू थे वहाँ आया ।

एक बार बँडे गृहपति चित्र को आयुष्मान् कामभू बोले — गृहपति ! कहा गया है—

निर्दोष इमेत आच्छादन वाला

एक अराबाका चपला रथ है ।

दुष्ट-रहित उमरों वाले देवी

जिसका कोल एक गया है और जो बन्धन से मुक्त है ॥

गृहपति ! इस संश्लेष में कह गये का बिस्तार से कैसे जय समझना चाहिये ?

भस्ते ! क्या भगवान् न देना कहा है ?

हाँ गृहपति !

भस्ते ! तो बाँका रहें मैं इस पर कुछ बिचार कर लूँ ।

तब गृहपति चित्र कुछ समय तक चुप रह आयुष्मान् कामभू से बोला—

भस्ते ! निर्दोष में चील का अभिप्राय है ।

भस्ते ! 'इमेत आच्छादन' से विमुक्ति का अभिप्राय है ।

भस्ते ! एक अरा से स्थिति का अभिप्राय है ।

भस्ते ! 'बन्धना से आग बधना' का पंखे इटने का अभिप्राय है ।

भस्ते ! 'रथ' में यह 'आर' महाभूतों के चले हुए शरिर से अभिप्राय है जो माता-पिता से उत्पन्न

हुआ है मात-पूत से पला पोसा है अल्पि योने मन्नेबाका और यह आत्मा जिसका स्वभाव है ।

भस्ते ! राग दुष्ट है डोष दुष्ट है मोह दुष्ट है । वे शीलाधर भिक्षु के प्रदीप हो जाते हैं ।

इसलिये शीलाधर भिक्षु दुष्ट रहित होया है ।

भस्ते ! आर्त से अर्हन् का अभिप्राय है ।

भस्ते ! शील से शून्ना का अभिप्राय है । यह शीलाधर भिक्षु की प्रदीप होती है । इसलिये

शीलाधर भिक्षु 'शिष्य-नील' कहा जाता है ।

भस्ते ! राग बन्धन है डोष बन्धन है मोह बन्धन है । वे शीलाधर भिक्षु के प्रदीप हो जाते

हैं । इसलिये शीलाधर भिक्षु 'अबन्धन' बडे जल है ।

भस्ते ! इसलिये भगवान् न कहा है—

निर्दोष इमेत आच्छादन वाला

एक अरा वाला चपला रथ है ।

दुष्ट रहित उमरों वाले देवी

जिसका कोल एक गया है और जो बन्धन से मुक्त है ॥

भन्ते ! भगवान् के इस संक्षेप से कहे गये का विस्तार से गुंमे ही अर्थ समझना चाहिये ।  
गृहपति ! तुम वदें भगवान् हो, जो भगवान् के इतने गम्भीर धर्म से तुम्हारा प्रजा-चक्षु  
जाता है ।

### § ६. द्वातिय कामभू सुत्त ( ३९ ६ )

#### तीन प्रकार के संस्कार

एक ओर बैठ, गृहपति चित्र आयुग्मान् कामभू से बोला—भन्ते ! संस्कार कितने हैं ?

गृहपति ! संस्कार तीन हैं । ( १ ) काय-संस्कार, ( २ ) वाक्-संस्कार, और ( ३ ) चित्त-संस्कार  
साधुकार वे, गृहपति चित्र ने आयुग्मान् कामभू के कहे गये का अभिनन्दन और अनुमोदन कर,  
आगे का प्रश्न पूछा ।

भन्ते ! कितने काय-संस्कार, कितने वाक्-संस्कार और कितने चित्त-संस्कार हैं ?

गृहपति ! आश्वास-प्रदवास काय-संस्कार हैं । वितर्क-विचार वाक्-संस्कार हैं । सज्ञा और वेदना  
चित्त-संस्कार हैं ।

साधुकार वे आगे का प्रश्न पूछा ।

भन्ते ! आश्वास-प्रदवास क्यों काय-संस्कार हैं ? वितर्क-विचार क्यों वाक्-संस्कार हैं ? सज्ञा और  
वेदना क्यों चित्त-संस्कार हैं ?

गृहपति ! आश्वास-प्रदवास काया के धर्म है, जो काया में लगे रहते हैं । इसलिये, आश्वास-  
प्रदवास काय-संस्कार हैं ।

गृहपति ! पहले वितर्क और विचार करके पीछे कुछ बात बोली जाती है, इसलिये वितर्क-विचार  
वाक्-संस्कार हैं ।

गृहपति ! सज्ञा और वेदना चित्त के धर्म हैं, इसलिये सज्ञा और वेदना चित्त के संस्कार हैं ।

साधुकार वे आगे का प्रश्न पूछा ।

भन्ते ! सज्ञा-वेदयित्त-निरोध-तमापत्ति कैसे होती है ?

गृहपति ! सज्ञा-वेदयित्त-निरोध को प्राप्त करने वाले भिक्षु को यह नहीं होता है—मैं सज्ञा-  
वेदयित्त-निरोध को प्राप्त करूँगा, या करता हूँ, या किया था । किंतु, उसका चित्त पहले ही इतना भावित  
रहता है जो उसे वहाँ तक ले जाता है ।

साधुकार वे आगे का प्रश्न पूछा ।

भन्ते ! सज्ञा-वेदयित्त-निरोध प्राप्त करने वाले भिक्षु के सर्व-प्रथम कौन धर्म निरुद्ध होते हैं—  
काय-संस्कार, या वाक्-संस्कार, या चित्त-संस्कार ।

गृहपति ! सज्ञा-वेदयित्त-निरोध प्राप्त करनेवाले भिक्षु के सर्व-प्रथम वाक्-संस्कार निरुद्ध होते हैं ।  
तब काय-संस्कार, तब चित्त-संस्कार ।

साधुकार वे आगे का प्रश्न पूछा ।

भन्ते ! जो मर गया है और जो सज्ञा-वेदयित्त-निरोध को प्राप्त हुआ है, इन दोनों में  
क्या भेद है ?

गृहपति ! जो मर गया है उसका काय-संस्कार निरुद्ध हो गया है, प्रश्रवण हो गया है, वाक्-  
संस्कार निरुद्ध हो गया है, प्रश्रवण हो गया है, चित्त-संस्कार निरुद्ध हो गया है, प्रश्रवण हो गया है,  
आयु समाप्त हो गई है, इवात्स रुक गये हैं, इन्द्रियाँ छिन्न-भिन्न हो गई हैं । गृहपति ! जो भिक्षु  
सज्ञा-वेदयित्त-निरोध को प्राप्त हुआ है उसका काय-संस्कार निरुद्ध । वाक्-संस्कार निरुद्ध, चित्त-  
संस्कार निरुद्ध, आयु समाप्त हो गई है, इवात्स रुक गये हैं, किन्तु इन्द्रियाँ विप्रमत्त रहती हैं ।

गृहपति ! जा मर गया है भार का संज्ञाबद्धित निराप का प्राप्त हुआ है इन दोनों में यही मरू है ।

सायुकार है भार का मरू पूजा ।

मन्त्रे ! संज्ञाबद्धित निराप की प्राप्ति के लिये क्या प्रयास होता है ?

गृहपति ! संज्ञाबद्धित-निराप का प्राप्ति के लिये प्रयास करते मिथु को पसा नहीं होता है कि—  
 श्री संज्ञाबद्धित निराप का प्राप्ति के लिये प्रयास करनेवा या कर रहा हूँ या किया था । किन्तु, उसका चित्त पहले ही दृढ़ता भावित रहता है जो उस नहीं कर सकता है ।

सायुकार है भार का मरू पूजा ।

मन्त्र ! संज्ञाबद्धित-निराप का प्राप्ति के लिये प्रयास करते मिथु के सर्व-प्रथम काम धर्म उपलब्ध होते हैं या काय-संस्कार या वाक्-संस्कार या चित्त-संस्कार ?

गृहपति ! संज्ञाबद्धित निराप की प्राप्ति के लिये प्रयास करते मिथु का सर्व-प्रथम चित्त संस्कार उपलब्ध होता है तब काय-संस्कार तब वाक्-संस्कार ।

सायुकार है भार का मरू पूजा ।

मन्त्रे ! संज्ञाबद्धित-निराप की प्राप्ति के लिये प्रयास करते मिथु को कितने स्वर्ग अनुभव होते हैं ?

गृहपति ! संज्ञाबद्धित निराप की प्राप्ति के लिये प्रयास करते मिथु का तीन स्वर्ग अनुभव होते हैं । प्रथम स्व स्वर्ग अविमिश्रित स्वर्ग अत्रिहित स्वर्ग ।

सायुकार है भार का मरू पूजा ।

मन्त्रे ! संज्ञाबद्धित-निराप का प्राप्ति के लिये प्रयास करते मिथु का चित्त कितने शुद्ध होता है ?

गृहपति ! मिथु का चित्त विषय की ओर मुका होता है ।

सायुकार है भार का मरू पूजा ।

मन्त्र ! संज्ञाबद्धित निराप की प्राप्ति के लिये प्रयास करते मिथु का काम धर्म साधक होते हैं ?

है गृहपति ! का पहले पूजा करिये या उग्र हुमने पाठे पूजा । जपना उगका उतर गता है ।

संज्ञाबद्धित निराप का प्राप्ति के लिये का धर्म अन्तःसाध्य है—समय भीतर विद्याका ।

३७ सादृश गुण ( ३७ )

एक मध गात्र विभिन्न शब्द

अनिमिषण पर 'कुट्ट नाहो'। ऐसा आरिउत्तरावत्तन को प्राप्त हो विहार करना है। भन्ते ! इसी को परते है 'अरिउत्तर-चेतोविमुक्ति'।

भन्ते ! अन्वता-चेतोविमुक्ति क्या है ? भन्ते ! निनु-आरण्य में, वृक्ष के नीचे, या अन्य-गृह में या ऐसा चिन्तन करता है—या आराम या आरामों में अन्व है। भन्ते ! इसी को प्राप्त है 'अन्वता-चेतोविमुक्ति'।

भन्ते ! अनिमिषण चेतोविमुक्ति क्या है ? भन्ते ! विद्यु मर्मा निमित्तों को मन म न ला अनिमिषण चित्त की समाधि को प्राप्त हो विहार करना है। भन्ते ! इसी को परते है 'अनिमिषण-चेतोविमुक्ति'।

भन्ते ! यही एक दृष्टि कोण है जिसमें ये धर्म भिन्न-भिन्न अर्थ और भिन्न अक्षर वाले हैं।

भन्ते ! किय दृष्टि हीन से या एक ही अर्थ को धराने वाले भिन्न-भिन्न शब्द हैं ?

भन्ते ! राम प्रमाण करनेवाला है, हेप , मोह । ये क्षीणाश्रय विद्यु के उच्छिन्न होते हैं।

भन्ते ! जितनी अप्रमाण चेतोविमुक्तियों हैं, उनी में अर्ह-उ-फल-चेतोविमुक्ति श्रेष्ठ है। यह अर्ह-उ-फल-चेतोविमुक्ति राम से अन्य है, हेप से अन्य, और मोह से अन्य है।

भन्ते ! राम विचन ( = कुट्ट ) है, हेप , मोह । ये क्षीणाश्रय विद्यु के उच्छिन्न होते हैं।

भन्ते ! जितनी आरिउत्तर-चेतोविमुक्तियों हैं, उनी में अर्ह-उ-फल-चेतोविमुक्ति श्रेष्ठ है।

भन्ते ! राम निमित्त-रूपण है, हेप , मोह । ये क्षीणाश्रय विद्यु के उच्छिन्न होते हैं।

भन्ते ! जितनी अनिमिषण चेतोविमुक्तियों हैं, उनी में अर्ह-उ-फल-चेतोविमुक्ति श्रेष्ठ है।

भन्ते ! हम दृष्टि-कोण से या एक ही अर्थ को धराने वाले भिन्न चिन्तन शब्द हैं।

## § ८. निगण्ठ सुत्त ( ३९. ८ )

ज्ञान बढ़ा है या श्रद्धा ?

उस समय निगण्ठ नातपुत्र मच्छिकासण्ड में अपनी यही मण्डली के साथ पहुँचा हुआ था।

गृहपति चित्र ने सुना कि निगण्ठ नातपुत्र मच्छिकासण्ड में अपनी यही मण्डली के साथ पहुँचा हुआ है।

तब, गृहपति चित्र कुछ उपासकों के साथ जहाँ निगण्ठ नातपुत्र था पहुँचा गया, और कुदाल-क्षेम पूछ कर एक ओर बैठ गया।

एक ओर बैठे गृहपति चित्र ने निगण्ठ नातपुत्र बोला—गृहपति ! तुम्हें क्या ऐसा विश्वास है कि श्रमण गौतम को भी अवितर्क अविचार समाधि लगती है, उसके चित्त और विचार का क्या निरोध होता है ?

भन्ते ! मैं श्रद्धा से ऐसा नहीं मानता हूँ कि भगवान् को अवितर्क अविचार समाधि लगती है, ।

इस पर, निगण्ठ नातपुत्र अपनी मण्डली को देख कर बोला—आप लोग देखें, गृहपति ! चित्र कियना सीधा है, सचा है, निष्कपट है !! चित्त और विचार का निरोध कर देना मानो हवा को जाल से बहाना है।

भन्ते ! क्या समझते हैं, ज्ञान बढ़ा है या श्रद्धा ?

गृहपति ! श्रद्धा से ज्ञान ही बढ़ा है।

भन्ते ! जब मेरी श्रद्धा होती है, मैं प्रथम ध्यान को प्राप्त होकर विहार करता हूँ, द्वितीय, ध्यान, तृतीय ध्यान, चतुर्थ ध्यान।

मम्ते ! जो मैं स्वयं ऐसा जान और देख रहा किसी भ्रमण या माहण की भ्रष्टा से ऐसा जानैगा कि अधिकतम अधिकार समाधि होती है, तथा पितरुं और विचार का निरोध होता है ॥

पंसा कहने पर निगण्ड नातपुत्र अपनी मण्डली को देखकर बोला—भाप कोग बुरे गृहपति चित्र कितना देना है यह है कपटी ह ॥

मम्ते ! अपनी दुरत ही आपने कहा था— गृहपति चित्र नितना सीधा है और अभी दुरत ही भाप कह रहे हैं— गृहपति चित्र कितना देना है ।

मम्ते ! यदि आपकी पहली बात सच है तो दूसरी बात झूठ और यदि दूसरी बात सच है तो पहली बात झूठ । मम्ते ! यह उस धर्म के प्रथम आते हैं । जब भाप इनका उत्तर जानें तो मुझे और अपनी मण्डली को बतायें । (१) जिसका प्रथम एक का हो और जिसका उत्तर भी एक का हो । (२) जिसका प्रथम दो का हो और जिसका उत्तर भी दो का हो । (३) जिसका प्रथम तीन का हो और जिसका उत्तर भी तीन का हो । (४) जिसका प्रथम चार का हो और जिसका उत्तर भी चार का हो । (५) जिसका प्रथम पाँच का । (६) जिसका प्रथम छः का । (७) जिसका प्रथम सात का । (८) जिसका प्रथम आठ का । (९) जिसका प्रथम नव का । (१०) जिसका प्रथम दस का हो और जिसका उत्तर भी दस का हो ।

तब गृहपति चित्र निगण्ड नातपुत्र से यह प्रश्न पूछ आसन से उठकर चला गया ।

### § ९ अनेक सुख ( ३९ ९ )

#### अनेक काश्यप की अर्थात् प्राप्ति

उस समय पहले गृहपति का मित्र अनेक काश्यप मच्छिकासण्ड में आया हुआ था ।

तब, गृहपति चित्र वहाँ अनेक काश्यप का वहाँ गया और कुसक-श्रेम पृथक् एक कोर बैठ गया ।

एक कोर बैठ गृहपति चित्र अनेक काश्यप से बोला—मम्ते काश्यप ! आपका प्रसक्ति हुये कितने दिन हुये ।

गृहपति ! मेरे प्रसक्ति हुये तीस वर्ष बीत गये ।

मम्ते ! इस अवधि में क्या आपने किसी अर्थीकिक श्रेष्ठ ज्ञान का दर्शन किया है ?

गृहपति ! मैंने इस अवधि में किसी अर्थीकिक श्रेष्ठ ज्ञान का दर्शन नहीं किया है केवल नंगा रहने माया सुवासे और श्राद्ध देने के ।

बह कहने पर गृहपति चित्र अनेक काश्यप से बोला—आजर्ष्य है र अर्धसुख है रे ! आपके धर्म की अपेक्षाई बड़ी है कि तीस वर्ष में भी आपने कोई अर्थीकिक श्रेष्ठ ज्ञान का दर्शन नहीं किया है केवल नंगा रहने माया सुवासे और श्राद्ध देने के !

गृहपति ! हमारे उपासक रहे कितने दिन हुये ?

मम्ते ! मेरे उपासक रहे भी तीस वर्ष हो गये ।

गृहपति ! इस अवधि में क्या तुमने किसी अर्थीकिक श्रेष्ठ ज्ञान का दर्शन किया है ?

मम्ते ! मुझे क्या बर्दा हुआ ॥ मम्ते ! मैं जब चाहता हूँ, प्रथम प्थान द्वितीय प्थान तृतीय प्थान चतुर्थ प्थान को प्राप्त कर विदार करता हूँ । मम्ते ! यदि मैं भगवान् के पहले मार्ग तो वह आकर्ष्य बर्दा कि भगवान् बर्दा कि ऐसा कोई संवीक्षण नहीं है जिससे गृहपति चित्र पुन ही फिर भी इस समार में आयेगा ।

बह कहने पर अनेक काश्यप गृहपति चित्र से बोला—आजर्ष्य है अर्धसुख है ॥ बाह रे धर्म की अपेक्षाई कि उन्मा कथना पहचाने बाका गृहपति भी इस प्रकार अर्थीकिक श्रेष्ठ ज्ञान का दर्शन कर लेता है !

गृहपति ! मैं भी इस धर्म-प्रिनय में प्रव्रज्या पाऊँ, उपमग्गटा पाऊँ ।

तब, गृहपति चित्र अचेल काटवप कां लें जातौ स्थगि भिक्षु थे चाँ गया और पोला—भन्ते ! यह अचेल काटवप मेरा पाए गृहस्थ का भित्र । इमे आप लोग प्रव्रज्या और उपमग्गटा दे । मैं चीवर आदि से उपवर्त्ता सेवा करूँगा ।

अचेल काटवप ने इस धर्म-प्रिनय में प्रव्रज्या और उपमग्गटा पाए । उपमग्गटा पाने ने वाउ ही आयुमान काश्यप ने अरेला, अग्ग, अममत्त राग 'जाति क्षीण दुर्त' जान लिया ।

आयुमान काटवप अर्त्ता ने एक हुये ।

## § १० गिलानदस्सन सुत्त ( ३९ १० )

### चित्र गृहपति की मृत्यु

उम समय, गृहपति चित्र यदा योमान पड़ा था ।

तब, कुछ आराम देवता, उन देवता, सुक्ष देवता, औपगि-गृण-गनम्पति ने रानेवाले देवता गृहपति चित्र के पास आकर बोले—गृहपति ! जीवित रहे, आगे चलकर आप चक्रवर्ती राजा होंगे ।

यह कहने पर, गृहपति चित्र उन देवताओं से बोला—तब भी अनिय है, वह भी अधुव है, वह भी छोड़ देने के योग्य है ।

यह कहने पर, गृहपति चित्र के भित्र और वन्दु वान्धव उसने बोले—आर्य ! स्मृतिमान होंवें, मत घबड़ायें ।

आप लोगों से मैं क्या कहता हूँ जो मुझे कहते हैं—आर्य ! स्मृतिमान होंवें, मत घबड़ायें ।

आर्य ! आप कहते हैं—वह भी अनिय है, वह भी अधुव है, वह भी छोड़ देने योग्य है ।

वह तो, आराम-देवता, वन-देवता 'आगे चलकर आप चक्रवर्ती राजा होंगे । उन्हें ही मैंने कहा था—तब भी अनिय है ।

आर्य ! क्या आप के पास आराम-देवता ने आकर कहा था आप चक्रवर्ती राजा होंगे ?

उन आराम-देवता' के मन में वह हुआ—यह गृहपति चित्र शीलवान्, धार्मिक है । यदि जीवित रहेगा तो चक्रवर्ती राजा होगा । शीलवान् अपने विशुद्ध-भाव से चित्तका प्रणिधान कर सकता है । धार्मिक-फल का स्मरण करेगा ।

वह आराम देवता कुछ अर्थ विन्दु होते देखकर ही बोले थे—गृहपति ! जीवित रहे, आगे चलकर आप चक्रवर्ती राजा होंगे । उन्हें मैं ऐसा कहता हूँ—वह भी अनिय है, वह भी अधुव है, वह भी छोड़ने योग्य है ।

आर्य ! मुझे भी कुछ उपदेश करें ।

तो, उन्हें ऐसा सीखना चाहिये—बुद्ध में मेरी दृढ़ श्रद्धा होगी—ऐसे वह भगवान् अर्हत् । धर्म में मेरी दृढ़ श्रद्धा होगी—भगवान् ने धर्म वड़ा अच्छा यतया है । म्च में मेरी दृढ़ श्रद्धा होगी । भगवान् का प्रायक-मन्च अच्छे मार्ग पर आरुह है । शीलवान् धार्मिक भिक्षुओं को पूरा दान देना ।

ऐसा ही मुझे सीखना चाहिये ।

तब, गृहपति चित्र अपने भित्र और वन्दु-जानियों को बुद्ध, धर्म और तब से श्रद्धालु होने तथा वनशील होने का उपदेश कर मर गया ।

चित्त संयुक्त समाप्त

# आठवाँ परिच्छेद

## ४० गामणी सयुक्त

§ १ चण्ड सुच ( ४० १ )

चण्ड और सूट कहलाने के कारण

एक समय भगवान् ध्यायस्ती में अमाघपिण्डिक के कारण जेतवन में विहार करते थे ।

एक चण्ड गामणी आई भगवान् से वहीं आया । एक ओर बैठ, चण्ड गामणी भगवान् से बोला—भग्ने ! क्या कारण है कि कुछ लोग 'चण्ड' कहे जाते हैं और कुछ लोग 'सूट' कहे जाते हैं ?

गामणी ! किसी का राग महीन नहीं होता है । इससे वह दूसरों से कोप करता है और कड़वाँ हाड़ा करता है । वह 'चण्ड' कहा जाने लगता है । होप । मोह । वह चण्ड कहा जाने लगता है ।

गामणी ! वही कारण है कि कोई 'चण्ड' कहा जाता है ।

गामणी ! किसी का राग महीन होता है । इससे वह दूसरों से कोप नहीं करता है और भीरु ब रूपता हायता है । वह 'सूट' कहा जाने लगता है । होप । मोह । वह सूट कहा जाने लगता है ।

गामणी ! वही कारण है कि कोई 'सूट' कहा जाता है ।

यह कहने पर चण्ड गामणी भगवान् से बाका—भग्ने ! तू बतलाता है तू बतलाता है !! भग्ने ! जब उच्छ्रित का सीधा कर नूँडे को छोड़ दे मरने को मार्ग बता दे या अन्धकार में तेजमहीन रूप से भीतबाले रूपों को धर लेंगे । भगवान् ने ऐसे ही अनेक प्रकार से धर्म समझाए । वह भी कुछ ही समय में जाता है, धर्म की रस्य की । भगवान् आज से जन्म मर के लिये मुक्त अपना सरलागत उपायक रचिरार करें ।

§ २ पुच सुच ( ४० २ )

मठ मरफ में उत्पन्न होते हैं

एक समय भगवान् राउण्ड में अनुगत कालिन्धक निवाप में विहार करते थे ।

एक क्षणपुत्र मठगामणी आई भगवान् से वहीं आया । एक ओर बैठ, कालिन्धक मठगामणी भगवान् से बोला—भग्ने ! मैंने अपने पुत्रों द्वारा तुम मर को कहते सुना है कि 'जो वह रंगमय पर सब के सामने सब का सब से छात्रों को हिंगता और बदनाम है वह मर के बाद प्रधान देवी के बीच उन्मथ जाता है । वहीं भगवान् का बग कहता है ?

गामणी ! रहने को मुझसे कह मत पूछो ।

दुसरी बार भी ।

मैं नहीं बार भी । वहीं भगवान् का क्या कहता है ?

मैं वह नहीं कहता । गामणी ! रहने को मुझसे कह मत पूछो । मैं तुम्हें उन्मथ दे हूँगा ।

गामणी ! वदत के जग बीतराग नहीं । मैं राग के अन्ध में हूँ । रंगमय पर सब के बीच उन्मथी गामणी कालिन्धक भीतने और भी अधिक राग उन्मथ कर देती थी ।



ग्रामणी ! पहले के लोग वीतद्वेष नहीं थे, वे द्वेष के बन्धन में बंधे थे । उनकी द्वेषमयी कौतुक क्रीड़ाएँ और भी अधिक द्वेष उत्पन्न कर देती थीं ।

ग्रामणी ! पहले के लोग वीतमोह नहीं थे, वे मोह के बन्धन में बंधे थे । उनकी मोहमयी कौतुक क्रीड़ाएँ और भी अधिक मोह उत्पन्न कर देती थीं ।

वे स्वयं मत्त प्रमत्त दो दूसरों को मत्त प्रमत्त कर मरने के बाद प्रहास नामक नरक में उत्पन्न होते थे । यदि कोई समझे कि 'जो नरक सूच या झूठ से लोगों को हँसाता और बहलता है वह मरने के बाद प्रहास देवों के बीच उत्पन्न होता है, तो उसका पेना समझना झूठ है । ग्रामणी ! मैं कहता हूँ कि ऐसे मनुष्य की दो ही गतियाँ हो सकती हैं—या तो नरक, या तिरश्चीन (=पशु) योनि ।

यह कहने पर तालपुत्र नटग्रामणी रोने लगा, आँसू बहाने लगा ।

ग्रामणी ! इसी से मैं इसे नहीं चाहता था—ग्रामणी ! रहने दो, मुझसे यह मत पूछो ।

भन्ते ! भगवान् ने ऐसा कह दिया, इसलिये मैं नहीं रोता हूँ । किन्तु, इसलिये कि मैं नटा से दीर्घकाल तक ठगा और धोखा दिया गया ।

भन्ते ! " जैसे उलटे को सीधा कर दे " । यह मैं भगवान् की शरण में जाता हूँ । धर्म की और सव की " । भन्ते ! मैं भगवान् के पास प्रव्रज्या पाऊँ, उपसम्पदा पाऊँ ।

तालपुत्र नटग्रामणी ने भगवान् के पास प्रव्रज्या पायी, उपसम्पदा पायी ।

" आशुमान् तालपुत्र अर्हता मे एक हुये ।

### § ३ मेधाजीव सुत्त ( ४० ३ )

#### सिपाहियों की गति

तव, योधाजीव ग्रामणी जहाँ भगवान् थे वहाँ आया ।

एक ओर बैठ, योधाजीव ग्रामणी भगवान् से बोला—भन्ते ! मैंने अपने दुर्गुरु दादा-गुरु सिपाहियों को कहते सुना है कि 'जो सिपाही समाज में वीरता दिखाता है वह शत्रुओं के हाथ मर कर सरजित देवताओं के बीच उत्पन्न होता है । यहाँ भगवान् का क्या कहना है ?

ग्रामणी ! रहने दो, मुझसे मत पूछो ।

दूसरी बार भी ।

तीसरी बार भी ।

ग्रामणी ! जो सिपाही समाज में वीरता दिखाता है, उसका चित्त पहले ही दूषित हो जाता है—मार दे, काट दे, भिटा दे, नष्ट कर दे, कि मत रहे । इस प्रकार उत्साह करते उसे शत्रु लोग मार देते हैं, वह मरने के बाद सरजिता नामक नरक में उपाप्न होता है ।

यदि कोई समझे कि ' वह शत्रुओं के हाथ मर कर सरजित देवताओं के बीच उत्पन्न होता है ' तो उसका समझना झूठ है । ग्रामणी ! मैं कहता हूँ कि ऐसे मनुष्य की दो ही गतियाँ हो सकती हैं—या तो नरक या चिरञ्जीव (=पशु) योनि ।

भन्ते ! भगवान् ने ऐसा कह दिया, इसलिये मैं नहीं रोता हूँ । किन्तु, इसलिये कि मैं दीर्घकाल तक ठगा और धोखा दिया गया ।

भन्ते ! मुझे उपासक स्वीकार करें ।

### § ४. हृत्थि सुत्त ( ४० ४ )

#### हथिसवार की गति

तव, हथिसवार ग्रामणी जहाँ भगवान् थे वहाँ आया ।

भन्ते ! मुझे उपासक स्वीकार करें ।

## § ५ अस्त सुच ( १० ५ )

## घोड़सवार की गति

तब घोड़सवार प्रामाणी बहाँ भगवान् प बहाँ जाता ।

एक धोर बैठ घोड़सवार प्रामाणी भगवान् से बोला—मन्ते ! मैंने अपने दुर्गम गुण दादा-गुरु

घोड़सवारों को कहते सुना है कि जो घोड़सवार संभाम में [ ऊपर बैसा ही ]

सरायिता नामक नरक में ।

‘मन्ते ! मुझे उपासक स्वीकार करें ।

## § ६ पच्छामूमक सुच ( ४० ६ )

## अपने कर्म से ही सुगति-दुर्गति

एक समय भगवान् मासम्बा में पाथारिक भाग्यवन में बिहार करते थे ।

तब अस्तिवन्दकपुत्र प्रामाणी बहाँ भगवान् से बहाँ जाता ’ । एक धोर बैठ, अस्तिवन्दकपुत्र प्रामाणी भगवान् से बोला—मन्ते ! माकम पहिलम भूमिवाकेके कमण्डलुवासे सेबाळ की माका पहवने वाके सर्ग सुबह पाणी में पठनेवाके अग्नि की परिचर्या करनेवाके मरे को बुकाते हैं चकाते हैं स्वर्ग में भेज दते हैं । मन्ते ! भगवान् आईए सम्पत् सम्पत् हैं । भगवान् ऐसा कर सकते हैं कि सारा लोक मरने के बाद स्वर्ग में उल्लस हो सुगति को प्राप्त होने ।

प्रामाणी ! तो मैं तुम्ही से पूछता हूँ, जसा मरसो उचर दो ।

प्रामाणी ! क्या समझते हो कोई पुरुष जीव-हिंसा करनेवाका चोरी करनेवाका अपसिचार करने-वाका ब्रूठ बोलनेवाका जुगप्पी खालेवाका कठोर बोलनेवाका गप्प हँसनेवाका कोमी दीव सिप्या-छिवाका हो । तब बहुत से लोग आकर उसकी प्रार्थना करें हाथ जोड़ें निवेदन करें—आप मरने के बाद स्वर्ग में उल्लस हो अर्जुनी गति को प्राप्त हों । प्रामाणी ! तो तुम क्या समझते हो वह पुरण मरने के बाद स्वर्ग में उल्लस हो अर्जुनी गति को प्राप्त होगा ?

नहीं मन्ते !

प्रामाणी ! जैसे कोई पुरण गहरे बकासप में एक बड़ा पत्थर छोब रे । उसे बहुत से लोग आकर उसकी प्रार्थना करें हाथ जोड़ें निवेदन करें—हे पत्थर ! ऊपर आर्ये उतरा आर्ये एक पर बके मार्गें । प्रामाणी ! तो तुम क्या समझते हो वह पत्थर एक पर बका आयेगा ?

नहीं मन्ते !

प्रामाणी ! जैसे ही जो पुरण जीव हिंसा करनेवाका है उसको बहुत से लोग आकर निवेदन करें भी तो वह मरने के बाद नरक में उल्लस हो दुर्गति को प्राप्त होगा ।

प्रामाणी ! क्या समझते हो कोई पुरण जीव हिंसा से बिरत रहनेवाका ही चोरी से बिरत रहने-वाका ही सम्पत् दखिवाका हो । तब बहुत से लोग आकर निवेदन करें—आप मरने के बाद नरक में उल्लस हो दुर्गति को प्राप्त हों । प्रामाणी ! तो तुम क्या समझते हो वह पुरण मरने के बाद नरक में उल्लस हो दुर्गति को प्राप्त होगा ?

नहीं मन्ते !

प्रामाणी ! जैसे कोई भी वा तेक के धरें को गहरे बकासप में डुबो कर लोड रे । तब उसमें जो कंजड़ पाकर हों नीचे डूब जायें । जो धी वा तेक हो सो ऊपर ऊका जाय । तब बहुत से लोग

एपभिम भूमि वै रहनेवाके—अटठरणा ।

निवेदन करें—हे धर्म, हे तेल ! आप दूब जायें, आप नीचे चले जायें। ग्रामणी ! तो, क्या समझते हो, वह घी या तेल दूब जायगा, नीचे चला जायगा ?

नहीं भन्ते !

ग्रामणी ! वैसे ही, जो पुरुष जीव-हिंसा से विरत रहता है “उसको बहुत से लोग आकर निवेदन करें भी” तो वह मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होगा।

ऐसा कहने पर, अस्त्रिबन्धकपुत्र ग्रामणी भगवान् से बोला— “मुझे उपासक स्वीकार करें।

### § ७. देसना सुत्त ( ४० ७ )

#### बुद्ध की दया सब पर

एक समय, भगवान् नालन्दा में पारिवारिक-आश्रयन में विहार करते थे।

तब, अस्त्रिबन्धकपुत्र ग्रामणी जहाँ भगवान् थे वहाँ आया। बोला—भन्ते ! भगवान् सभी प्राणियों के प्रति शुभेच्छा और दया में विहार करते हैं न ?

हाँ ग्रामणी ! बुद्ध सभी प्राणियों के प्रति शुभेच्छा और दया से विहार करते हैं।

भन्ते ! तो क्या बात है कि भगवान् किसी को तो बड़े प्रेम से धर्मोपदेश करते हैं, और किसी को उतने प्रेम से नहीं ?

ग्रामणी ! तो तुम ही से मैं पूछता हूँ, जेमा समझो कहो।

ग्रामणी ! किसी कृपक गृहस्थ के तीन खेत हैं—एक बड़ा अच्छा, एक मध्यम, और एक बड़ा बुरा, जहल, कसर। ग्रामणी ! तो, क्या समझते हो, वह कृपक गृहस्थ किस खेत में सर्व प्रथम बीज बोयेगा ?

भन्ते ! वह कृपक गृहस्थ सर्व-प्रथम पहले खेत में बीज बोयेगा। उसके बाद मध्यम खेत में। उसके बाद बुरे खेत में बोयेगा भी और नहीं भी बोयेगा। सो क्यों ? यदि कुछ नहीं तो कम से कम गाय-बैल की सानी तो निकल आवेगी न ?

ग्रामणी ! जैसे वह पहला खेत है वैसे ही मेरे भिक्षु-भिक्षुणियों है। उन्हें मैं धर्म का उपदेश करता हूँ—आदि-कल्याण, मध्य-कल्याण, अवसान-कल्याण। अर्थ और शब्द से बिल्कुल परिपूर्ण और परिशुद्ध ब्रह्मचर्य को प्रगट करता हूँ। सो क्यों ? क्योंकि ये मेरी ही शरण में अपना त्राण समझ कर विहार करते हैं।

ग्रामणी ! जैसे वह मध्यम खेत है वैसे ही मेरे उपासक-उपासिकायें हैं। उन्हें भी मैं धर्म का उपदेश करता हूँ—आदि-कल्याण। सो क्यों ? क्योंकि ये मेरी ही शरण में अपना त्राण समझ कर विहार करते हैं।

ग्रामणी ! जैसे वह अन्तिम बुरा खेत है, वैसे ही ये दूसरे मत वाले श्रमण, ब्राह्मण और परिव्राजक हैं। उन्हें भी मैं धर्म का उपदेश करता हूँ—आदि कल्याण। सो क्यों ? यदि वे कहीं एक बात भी समझ पाये तो यह दीर्घकाल तक उनके हित और सुख के लिये होगा।

ग्रामणी ! जैसे, किसी पुरुष को पानी के तीन मटके हों—एक बिना छेद वाला जिससे पानी बिल्कुल नहीं निकलता हो, एक बिना छेद वाला जिससे पानी कुछ कुछ निकल जाता हो, एक छेद वाला जिससे पानी बिल्कुल निकल जाता हो। ग्रामणी ! तो, क्या समझते हो, वह पुरुष सर्व-प्रथम किसमें पानी रक्षेगा ?

भन्ते ! वह पुरुष सर्व-प्रथम उस मटके में पानी रक्षेगा जो बिना छेद वाला है और जिससे पानी बिल्कुल नहीं निकलता है, उसके बाद दूसरे मटके में जो बिना छेद वाला होने पर भी उससे कुछ

कुछ पानी निकल जाता है और उसके बाद उस छेद वाले मटके में रस भी सड़ता है और नहीं भी। तो क्यों ? कुछ नहीं तो बर्तन धाने के छायाक पानी रह जायगा।

प्रासगी ! पहले मटके के समान हमारे मिष्ठु और मिष्ठुजिर्षों हैं। उन्हें ही धर्म का उपदेश करता हूँ [ कपर कैसा ही ]

प्रासगी ! दूसरे मटके के समान हमारे उपासक और उपासिकामें हैं।

प्रासगी ! तीसरे मटके के समान दूसरे मत वाले धर्मज जाहल और परिग्रामक हैं।

पह कहने पर अस्तिवन्धनपुत्र प्रासगी भगवान् से बोध्य—भन्ते ! सुखे उपासक स्वोत्तर करें।

### § ८ सङ्ग सुप्त ( ४० ८ )

#### निगण्डनातपुत्र की शिक्षा उन्नी

एक समय भगवान् नासङ्गना में पावारिक आश्रयन में निहार करते थे।

तब निगण्ड का श्रावक अस्तिवन्धनपुत्र प्रासगी बहो भगवान् से बहोँ जाया ।

एक बार बैठे अस्तिवन्धनपुत्र प्रासगी से भगवान् बोले—प्रासगी ! निगण्ड नातपुत्र अपने भाइयों को कैसे धर्मोपदेश करता है ?

भन्ते ! निगण्ड नातपुत्र अपने भाइयों को इस तरह धर्मोपदेश करता है—जो कोई जीव-हिंसा करता है वह मरक में पड़ता है जो कोई चोरी करता है जो व्यभिचार जो झूठ बोलता है ? जीव-हिंसा करता है कैसी ही उसकी गति होती है। भन्ते ! निगण्ड नातपुत्र इसी तरह अपने भाइयों को उपदेश करता है।

प्रासगी ! 'जो जो अधिक करता है कैसी ही उसकी गति होती है।' ऐसा होने से तो कोई भी मरक में नहीं पड़ेगा कैसी निगण्ड नातपुत्र की बात है।

प्रासगी ! क्या समझते हो जो रह-रहकर दिन में या रात में जीव-हिंसा किया करता है उसके जीव-हिंसा करने का समय अधिक है या जीव-हिंसा नहीं करने का ?

भन्ते ! उसके जीव-हिंसा करने के समय से अधिक जीव-हिंसा नहीं करने का ही समय है।

प्रासगी ! 'जीव-हिंसा अधिक करता है कैसी ही उसकी गति होती है।' तो ऐसा होने से कोई भी मरक में नहीं पड़ेगा कैसी निगण्ड नातपुत्र की बात है।

प्रासगी ! क्या समझते हो जो रह-रहकर दिन में या रात में चोरी करता है व्यभिचार करता है झूठ बोलता है, उसके झूठ बोलने का समय अधिक है या झूठ नहीं बोलने का ?

भन्ते ! उसके मरक बोलने के समय से अधिक झूठ नहीं बोलने ही का है।

प्रासगी ! 'जो-जो अधिक करता है कैसी ही उसकी गति होती है।' तो ऐसा होने से कोई भी मरक में नहीं पड़ेगा कैसी निगण्ड नातपुत्र की बात है।

प्रासगी ! कोई आचार्य ऐसा मानते और उपदेश देते हैं—जो जीव-हिंसा करता है वह मरक में पड़ता है जो झूठ बोलता है वह मरक में पड़ता है। प्रासगी ! जब आचार्य के प्रति श्रावक लाज को भङ्गानु हाते हैं ?

उसके मत में यह हाता है—अरे आचार्य ऐसा बताते हैं कि 'जो जीव-हिंसा करता है वह मरक में पड़ता है। यदि मैं जीव-हिंसा करूँगा तो मैं भी मरक में पड़ूँगा। जता हमारी बात को व छोड़ें हमने अज्ञान को व छोड़ें तो मैं अज्ञान मरक में पड़ूँगा। यदि मैं झूठ बोलूँगा तो मैं भी मरक में पड़ूँगा।

प्रासगी ! संसार में कुछ उपासक हाते हैं और श्रावक-अज्ञान विद्या-अज्ञान-अज्ञान गुणित को मरक मरकित अज्ञान पुत्रों को धर्म करने में मरक की के समान देवताओं और मनुष्यों के गुण

बुद्ध भगवान् । वे अनेक प्रकार से जीव-हिंसा की निन्दा करते हैं, और जीव-हिंसा से विरत रहने का उपदेश देते हैं । । वे अनेक प्रकार से झूठ बोलने की निन्दा करते हैं, और झूठ बोलने से विरत रहने का उपदेश देते हैं । ब्रामणी । उनके प्रति श्रावक श्रद्धालु होते हैं ।

वह श्रावक ऐसा सोचता है—“भगवान् ने अनेक प्रकार से जीव-हिंसा से विरत रहने का उपदेश दिया है । क्या मैंने कभी कुछ जीव-हिंसा की है ? वह झूठा नहीं, उचित नहीं । उसके कारण मुझे पश्चात्ताप करना पड़ेगा । मैं उस पाप से अछूता नहीं रहूँगा ।” ऐसा विचार कर वह जीव-हिंसा छोड़ देता है । भविष्य में जीव-हिंसा से विरत रहता है । इस प्रकार, वह पाप से बच जाता है ।

“भगवान् ने अनेक प्रकार से चोरी की निन्दा की है , व्यभिचार की , झूठ बोलने की ।

वह जीव-हिंसा छोड़, जीव-हिंसा से विरत रहता है ।’ । झूठ बोलना छोड़, झूठ बोलने से विरत रहता है । जुगली खाना छोड़ । कटोर बोलना छोड़ । गण-सडाका छोड़ । लोभ छोड़ । द्वेष छोड़ । मिथ्या दृष्टि छोड़, सम्यक् दृष्टि वाला होता है ।

ब्रामणी । ऐसा वह आर्यश्रावक लोभ-रहित, द्वेष-रहित, असम्मूढ, सप्रज्ञ, स्मृतिमान्, मैत्री-सहगत चित्त से एक विद्या को व्यास कर, वैसे ही दूसरी विद्या को, तीसरी , चौथी , ऊपर, नीचे, देहे-मेहे, सभी तरफ, सारे लोक को विपुल, अप्रमाण मैत्री-सहगत चित्त से व्यास कर विहार करता है ।

ब्रामणी । जैसे, कोई बलवान् शङ्ख झुकनेवाला थाड़ा जोर लगा चारों दिशाओं को गुंजा दे । ब्रामणी । वैसे ही, मैत्री चेतोविमुक्ति का अभ्यास कर लेने से जो सकीर्णता में डालनेवाले कर्म हैं वे नहीं उठरने पाते ।

ब्रामणी । ऐसा वह आर्यश्रावक लोभ-रहित, द्वेष-रहित, असम्मूढ, सप्रज्ञ, स्मृतिमान्, करुणा-सहगत चित्त से , मुदिता-सहगत चित्त से , उपेक्षा-सहगत चित्त से ।

यह कहने पर, असिबन्धकपुत्र ब्रामणी भगवान् से बोला—भन्ते ! ‘ उपासक स्वीकार करें ।

## § ९ कुल सुत्त ( ४० ९ )

### कुलों के नाश के आठ कारण

एक समय, भगवान् कोशल में चारिका करते हुए बड़े निधु-सब के साथ जहाँ नालन्दा है वहाँ पहुँचे । वहाँ, नालन्दा में पावारिक आश्रम में भगवान् विहार करते थे ।

उस समय, नालन्दा में दुर्भिक्ष पड़ा था । आजकल में लोगों के प्राण निकल रहे थे । मरे हुए मनुष्यों की उजली-उजली हड्डियाँ बिखरी हुई थी । लोग सूखकर सलाई बन गये थे ।

उस समय, निगण्ड नातपुत्र अपनी बड़ी मण्डली के साथ नालन्दा में ठहरा हुआ था ।

तब, असिबन्धकपुत्र ब्रामणी, निगण्ड नातपुत्र का श्रावक जहाँ निगण्ड नातपुत्र था वहाँ गया, और अभिवादन कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठे असिबन्धकपुत्र ब्रामणी से निगण्ड नातपुत्र बोला—ब्रामणी । सुनो, तुम जाकर श्रमण गौतम के साथ वाद करो, इससे तुम्हारा पत्रा नाम हो जायगा—असिबन्धकपुत्र इतने महानुभाव श्रमण गौतम के साथ वाद कर रहा है ।

भन्ते ! इतने महानुभाव श्रमण गौतम के साथ मैं कैसे वाद करूँ ?

ब्रामणी । सुनो, जहाँ श्रमण गौतम है वहाँ जाओ और बोलो—भन्ते ! भगवान् अनेक प्रकार से कुलों के उदय, रक्षा और अनुकम्पा का वर्णन करते हैं न ?

ब्रामणी । यदि श्रमण गौतम कहेंगे, कि हों ब्रामणी ! बुद्ध अनेक प्रकार से कुलों के उदय, रक्षा और अनुकम्पा का वर्णन करते हैं, तो तुम कहना—भन्ते ! तो क्यों भगवान् इस दुर्भिक्ष में इतने बड़े रूप के साथ चारिका कर रहे हैं ? कुलों के नाश और अहित के लिये भगवान् तुले हैं ।

प्रासणी ! इस प्रकार हा तरफा प्रश्न पूछा जाकर असम गीतस न ता उगाव सरेगा और म निगल मरगा ।

“मम ! बहुत मरडा” कह अभिव्यक्तपुत्र प्रासणी निगल नातपुत्र को उतर दे आसन स उद निगल नातपुत्र को प्रणाम-प्रकृषिणा कर वहाँ भगवान् से वहाँ गया, अर मगबाह को अभिवादन कर एक ओर बट गया ।

एक ओर बैठ अभिव्यक्तपुत्र प्रासणी मगबाह से बोला—भक्त ! भगवान् जनेक प्रकार से तुम्हो के उदय रक्षा और अनुकम्पा का वजन करते हैं न ?

हाँ प्रासणी ! कुछ अनक प्रकार से तुम्हो के उदय रक्षा और अनुकम्पा का वर्णन करते हैं ।

आत ! ता क्या भगवान् इस बुद्धि में इतने बड़े संघ के-साव चारिका कर रहे हैं ? तुम्हो के मास और अहित क किसे भगवान् तुम्हें हैं ।

प्रासणी ! यह मैं इकालक कम्पा की बात स्मरण कर रहा हूँ किन्तु कमी मी निम्नी कुछ का घर के एक माजम में स कुछ मिछा दू देने के कारण यह होतै नहीं देगा । और मी आ बद् धनी मार मगसिसार्या कुछ है वह उसके बाल मण और संवस का ही फल है ।

प्रासणी ! कुछ क मास इमे क भाद हेतु है । (१) राजा के द्वारा कोई कुछ मर कर दिया जाता है । (२) चारा के द्वारा कुछ मर कर दिया जाता है । (३) अहित के द्वारा । (४) पानी के द्वारा । (५) छिप गजाल महीं ज्ञानम म । (६) बहक कर अपने काम छोड़ देने से । (७) कुछ में कुकीगर उत्पन्न होने म आ सारी मगसि का फूँक रता है उचा रता है । और (८) आदमी अनिबता क कारण । प्रासणी ! पुत्र के मास हाग के यहाँ भाद हुतु है ।

प्रासणी पसी बात होने पर मुझे यह कहनेवाला—भगवान् तुम्हो के मास और अहित के मिय एक दुख है—बदि उय व न और विचार को नहीं छोड़ता है तो अक्षय मरक में पड़ेगा ।

यह कहने पर अभिव्यक्तपुत्र प्रासणी मगबाह स बोला “भक्त ! मुझ अपायक स्वीकार करें ।

दु १० मणिवुल मुच ( ४० १० )

अमणों क मिय क्षान्त-चौरी विहित नहीं

एक समय मगबाह राजपूट में यदुपल क लम्बकमियाप में विहार करत थ ।

उस समय राज प्रयस में परकित हो कर बड़े दुख राजकीय मभासका के बीच यह बात कनी-अमल शाकपुत्रों का क्या सोचा चौरी प्रश्न करना विहित है ? अमल शाकपुत्र क्या माना-चौरी चारत है प्रदल करते है ?

उस समय मणिवुलक प्रासणी आ उम मभा में बैठा था ।

तब मणिवुलक प्रासणी उम मभा स बोला—आप माना केरी बाल मल कह । अमल शाकप पुत्रों का माना-चौरी प्रदल करना विहित नहीं है । अमल शाकपुत्र सोचा-चौरी नहीं चारत है नहीं प्रश्न करते है । अमल शाकपुत्र ना अजि-मुबल माना-चौरी का स्वाद कर चुक है । इस तरह मणिवुलक प्रासणी उम मभा का मममम में मचल हुआ ।

तब मणिवुलक प्रासणी उहाँ भगवान् थ वहाँ भावा और भगवान् का अभिवादन कर एक मी ( बैठ गया ।

इ मर बैठ मणिवुलक प्रासणी भगवान् से बोला—भक्त ! अभी राज अदत में मरकित हाकर बड़े दुख राजकीय मभासकी क थ यह बाल कनी । अमल ! इस तरह मैं उम मभा का ममममे में मचल हुआ ।

अमल ! इस प्रश्न पर वर दिन भगवान् के कनी मिकुल का अभिवादन किया म --)

हो ग्रामर्णा ! इस प्रकार कह कर तुमने मेरे यथार्थ मिद्धान्त का प्रतिपादन किया है... ।

श्रमण शाक्यपुत्रों को मोना-चौड़ी ग्रहण करना विहित नहीं । श्रमण शाक्य-पुत्र सोना-चौड़ी नहीं चाहते हैं, नहीं ग्रहण करते हैं । श्रमण शाक्यपुत्र तो मणि-सुवर्ण सोना-चौड़ी का त्याग कर चुके हैं ।

ग्रामर्णा ! जिसे मोना-चौड़ी विहित है, उसे पञ्च काम-गुण भी विहित होंगे । ग्रामर्णा ! जिसे पाँच काम-गुण विहित होते हैं, समझ लेना कि उसका व्यवहार श्रमण शाक्यपुत्र के अनुकूल नहीं ।

ग्रामणी ! मेरी तो यह शिक्षा है—तृण चाहनेवाले को तृण की खोज करनी चाहिये । लकड़ी चाहने वाले को लकड़ी की खोज करनी चाहिये । गाड़ी चाहनेवाले को गाड़ी की खोज करनी चाहिये । पुरुष चाहनेवाले को पुरुष की खोज करनी चाहिये ।

ग्रामणी ! किसी भी हालत में मैं सोना-चौड़ी की इच्छा करने या खोज करने का उपदेश नहीं देता ।

## § ११. भद्र सुक्त ( ४० ११ )

### तृष्णा दुःख का मूल है

एक समय, भगवान् मरुल (जनपद) के उरुवेल-कल्प नामक मरुलों के कस्बे में विहार करते थे ।

तब, भद्रक ग्रामणी जहाँ भगवान् थे वहाँ आया । एक ओर बैठ, भद्रक ग्रामणी भगवान् से बोला—भन्ते ! कृपा कर भगवान् मुझे दुःख के समुद्रय और अस्त होने का उपदेश करें ।

ग्रामणी ! यदि मैं तुम्हें अतीतकाल के दुःख के समुद्रय और अस्त होने का उपदेश करूँ तो तुम्हारे मन में शायद कुछ शङ्का या विमति रह जाय । ग्रामणी ! यदि मैं तुम्हें भविष्यकाल के दुःख के समुद्रय और अस्त होने का उपदेश करूँ तो भी तुम्हारे मन में शायद कुछ शङ्का या विमति रह जाय । इसलिये, ग्रामणी, यहाँ बैठे हुये तुम्हारे दुःख के समुद्रय और अस्त हो जाने का उपदेश करूँगा । उसे सुनो, अच्छी तरह मन लगाओ । मैं कहता हूँ ।

“भन्ते ! बहुत अच्छा” कह, भद्रक ग्रामणी ने भगवान् को उत्तर दिया ।

भगवान् बोले—ग्रामणी ! क्या समझते हो, उरुवेल में क्या कोई ऐसे मनुष्य है जिनके वध, बन्धन, जुमाना, या अप्रतिष्ठा से तुम्हें शोक, परिदेव उपायास उत्पन्न हो ?

हाँ भन्ते ! उरुवेल कल्प में ऐसे मनुष्य हैं ।

ग्रामणी ! क्या समझते हो, उरुवेलकल्प में क्या कोई ऐसे मनुष्य है जिनके वध, बन्धन, जुमाना, या अप्रतिष्ठा से तुम्हें शोक, परिदेव उपायास कुछ नहीं हो ?

हाँ भन्ते ! उरुवेलकल्प में ऐसे मनुष्य हैं जिनके वध, बन्धन से मुझे शोक, परिदेव उपायास कुछ नहीं हो ।

ग्रामणी ! क्या कारण है कि एक के वध, बन्धन से तुम्हें शोक, परिदेव उपायास होते हैं, और एक के वध, बन्धन से नहीं होते हैं ?

भन्ते ! उनके प्रति मेरा छन्द-राग ( तृष्णा ) है, जिनके वध, बन्धन से मुझे शोक, परिदेव होते हैं । भन्ते ! और, उनके प्रति मेरा छन्द-राग नहीं है, जिनके वध, बन्धन से मुझे शोक, परिदेव नहीं होते हैं ।

ग्रामणी ! ‘उनके प्रति छन्द-राग है, और उनके प्रति छन्द-राग नहीं है’ इसी भेद से तुम स्वयं देखकर यहाँ समझ लो कि यही बात अतीत और भविष्यकाल में भी लागू होती है । जो कुछ अतीत काल में हुआ उत्पन्न हुये हैं, सभी का मूल-निदान “छन्द” ही था । जो कुछ भविष्यकाल में हुआ

उत्पन्न होगा सभी का मूक-निदान 'छन्द' ही होगा। 'छन्द' (=इच्छा=वृष्णा) ही बुद्ध का मूक है।  
मन्ते ! आश्चर्य है अस्मृत है !! जो भगवान् से इच्छता अच्छा समझता।

मन्ते ! चिरवासी नामका मेरा एक पुत्र गगर के बाहर रहता है। मन्ते ! सी में तबने ही  
उठकर किसी को कहता हूँ—जामो चिरवासी कुमार को देकर जामो। मन्ते ! अब तक वह पुत्र ही  
नहीं आता हूँ मुझे भी नहीं पड़ती है—चिरवासी कुमार का कुछ कह नहीं आ पड़ा हो।

ग्रामणी ! क्या समझते हो चिरवासी कुमार को वध बन्धन से तुम्हें सोक परिवेष्ट  
उत्पन्न होने ?

हाँ मन्ते ! चिरवासी कुमार के वध बन्धन से मेरे प्राणों को क्या-क्या न हो जाय सोक  
परिवेष्ट की बात क्या !!

ग्रामणी ! इससे भी तुम्हें समझना चाहिये—जो कुछ बुद्ध उत्पन्न होते हैं सभी का मूक-निदान  
छन्द ही है। छन्द ही बुद्ध का मूक है।

ग्रामणी ! क्या समझते हो अब तुम चिरवासी की माता को देख या सुन भी नहीं पायेगे अब  
समय तुम्हें उसके प्रति छन्द=राग=द्वेष था ?

हाँ मन्ते !

ग्रामणी ! अब चिरवासी की माता तुम्हारे पाम पकी आई तो तुम्हें उसके प्रति छन्द=राग=द्वेष  
बुझा या नहीं ?

बुझा मन्ते !

ग्रामणी ! क्या समझते हो चिरवासी की माता के वध बन्धन से तुम्हें सोक, परिवेष्ट  
उत्पन्न हुये या नहीं ?

मन्ते ! चिरवासी की माता के वध बन्धन से मेरे प्राणों को क्या-क्या न हो जाय सोक  
परिवेष्ट की बात क्या !!

ग्रामणी ! इससे भी तुम्हें समझना चाहिये—जो कुछ बुद्ध उत्पन्न होते हैं सभी का मूक-निदान  
छन्द ही है। छन्द (=इच्छा=वृष्णा) ही बुद्ध का मूक है।

### ४१२ राक्षस युद्ध ( ४० १२ )

#### मध्यम मार्ग का उपदेश

तब राक्षस ग्रामणी आई भगवान् ने कहा 'आया'। पूरु और बैठ राक्षस ग्रामणी भगवान् से  
बोला—मन्ते ! मैंने सुना है कि अमर्य गीता सभी उपरवासी की निम्न करते हैं। अगर सभी उपरवासी  
में अमर्यजीव की सबसे अधिक निम्न करते हैं। मन्ते ! जो लोग ऐसा कहते हैं क्या वे भगवान् के बर्ण  
सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं ?

हाँ ग्रामणी ! जो ऐसा कहते हैं वे मेरे बर्ण सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं करते मुझ पर इन्हीं  
बात बोलते हैं।

### ( क )

ग्रामणी ! प्रकृतिक ही अन्तों का आकर्षण न करे। जो काम-सुख में किन्तु कम था—वह  
हीव प्रान्त एवञ्जना के अनुच्छ अन्तों अन्तों करने बाका है। जो जो आध्य-इमवानुचोग (=अर्थात्  
इच्छा से धारण की कष्ट देवः) है—गुण्ड, अन्तों और अन्तों करते बाका।

ग्रामणी ! इन दो अन्तों को छोड़ कर जो मध्यम-मार्ग का परम-ज्ञान बुझा है—जो बुझाने-बन्धन  
न न उत्पन्न कर हैमि बाका परम-शक्ति के किने अशिक्षा ने किने संशोध के किने जोर विचार के  
किने है।



ब्रामणी ! तू कान से मध्यम-मार्ग वा परम-ज्ञान युद्ध को हुआ है—जो मुझने वाला "१" नहीं आर्य-अष्टांगिक मार्ग ! जो, स्वयंके दृष्टि, स्वयंके स्वयं, स्वयंके स्वयं । ब्रामणी ! इसी मध्यम-मार्ग वा परम-ज्ञान युद्ध को हुआ है—जो मुझने वाला, ज्ञान उत्पन्न कर देने वाला, परम भ्रान्ति के लिये, अभिजा के लिये, संयोग के लिये, और निराण के लिये है ।

## ( ख )

ब्रामणी ! स्वयं से काम-भोगी तीन प्रकार के हैं । कान से तीन ?

### ( १ )

ब्रामणी ! कोई काम-भोगी अधर्म से और हृदय-हीनता से भोगों को पाने की कोशिश करता है इस प्रकार कोशिश कर न तो वह अपने को सुखी बनाता है, न आपस में बाँटता है, और न कोई पुण्य करता है ।

### ( २ )

ब्रामणी ! कोई काम-भोगी अधर्म से और हृदय-हीनता से भोगों को पाने की कोशिश करता है । इस प्रकार कोशिश कर वह अपने को सुखी बनाता है, किन्तु न तो आपस में बाँटता है, और न पुण्य करता है ।

### ( ३ )

ब्रामणी ! कोई काम-भोगी अधर्म से और हृदय-हीनता से भोगों को पाने की कोशिश करता है । इस प्रकार कोशिश कर वह अपने को सुखी बनाता है, आपस में बाँटता भी है, और पुण्य भी करता है ।

### ( ४ )

ब्रामणी ! कोई काम-भोगी धर्म-अधर्म से... । न अपने को सुखी बनाता है, न आपस में बाँटता है, और न कोई पुण्य करता है ।

### ( ५ )

ब्रामणी ! कोई काम-भोगी धर्म-अधर्म से... । वह अपने को सुखी बनाता है, किन्तु न तो आपस में बाँटता है और न कोई पुण्य करता है ।

### ( ६ )

ब्रामणी ! कोई काम-भोगी धर्म-अधर्म से । वह अपने को सुखी बनाता है, आपस में बाँटता भी है और पुण्य भी करता है ।

### ( ७ )

ब्रामणी ! कोई काम-भोगी धर्म से । वह न अपने को सुखी बनाता है, न आपस में बाँटता है, और न पुण्य करता है ।

### ( ८ )

ब्रामणी ! कोई काम-भोगी धर्म से । वह अपने को सुखी बनाता है, किन्तु आपस में नहीं बाँटता है, और न पुण्य करता है ।

( ९ )

प्रासणी ! कोई काम-भोगी जर्म से । वह अपने को सुखी बनाता है आपस में बँटता भी है और पुण्य भी करता है । वह कामाभिभूत मूर्च्छित हो बिना उनका शोष देखे मोक्ष की बात को विना समझे भोग करता है ।

( १० )

प्रासणी ! कोई काम-भोगी जर्म से । वह अपने को सुखी बनाता है आपस में बँटता भी है और पुण्य भी करता है । वह कामाभिभूत मूर्च्छित नहीं होता है उनका शोष देखने और मोक्ष की बात को समझते हुए भोग करता है ।

( ग )

( १ )

प्रासणी ! जो काम-भोगी अपने से न अपने को सुखी बनाता है न आपस में बँटता है और न पुण्य करता है वह तीन स्थान से निन्द्य समझा जाता है । किन तीन स्थानों से ? अचर्म और इक्षय हीनता से भोगी की लोच करता है—इस पहले स्थान से निन्द्य समझा जाता है । न अपने को सुखी बनाता है—इस दूसरे स्थान से निन्द्य समझा जाता है । न आपस में बँटता है और न पुण्य करता है—इस तीसरे स्थान से निन्द्य समझा जाता है ।

प्रासणी ! यह काम भोगी तीन स्थान से निन्द्य समझा जाता है ।

( २ )

प्रासणी ! जो काम भोगी अचर्म से अपने को सुखी बनाता है किन्तु न तो आपस में बँटता है और न कोई पुण्य करता है वह दो स्थानों से निन्द्य समझा जाता है और एक स्थान से प्रशंस्य । किन दो स्थानों से निन्द्य होता है ? अचर्म से — इस पहले स्थान से निन्द्य होता है । न तो आपस में बँटता है और न कोई पुण्य करता है—इस दूसरे स्थान से निन्द्य होता है ।

किन्तु एक स्थान से प्रशंस्य होता है ? अपने को सुखी बनाता है—इस एक स्थान से प्रशंस्य होता है ।

प्रासणी ! यह काम-भोगी इन दो स्थानों से निन्द्य होता है और इन एक स्थान से प्रशंस्य ।

( ३ )

प्रासणी ! जो काम-भोगी अचर्म से अपने को सुखी बनाता है आपस में बँटता भी है और पुण्य भी करता है वह एक स्थान से निन्द्य समझा जाता है और दो स्थानों से प्रशंस्य ।

किन्तु एक स्थान से निन्द्य होता है ? अचर्म से — इस एक स्थान से निन्द्य होता है ।

किन्तु दो स्थानों से प्रशंस्य होता है ? अपने को सुखी बनाता है—इस पहले स्थान से प्रशंस्य होता है । आपस में बँटता है और पुण्य करता है—इस दूसरे स्थान से प्रशंस्य होता है ।

प्रासणी ! यह काम भोगी इन एक स्थान से निन्द्य होता है और इन दो स्थानों से प्रशंस्य ।

( ४ )

प्रासणी ! जो काम-भोगी जर्म से न अपने को सुखी बनाता है न आपस में बँटता है और न कोई पुण्य करता है वह एक स्थान से प्रशंस्य और तीन स्थानों से निन्द्य समझा जाता है ।

किस स्थान में प्रशस्य होता है ? धर्म से भोगों की खोज करता है—इस एक स्थान में प्रशस्य होता है ।

किन तीन स्थानों से निन्द्य होता है ? अधर्म से... , न अपने को सुखी बनाता है , और न आपस में बाँटता है, न पुण्य करता है ।

ब्रामणी ! यह काम-भोगी इस एक स्थान से प्रशस्य होता है, और इन तीन स्थानों में निन्द्य ।

( ५ )

ब्रामणी ! जो काम-भोगी धर्म-अधर्म से , अपने को सुखी बनाता है, किन्तु न तो आपस में बाँटता है और न पुण्य करता है, वह दो स्थानों में प्रशस्य होता है और दो स्थानों से निन्द्य ।

किन दो स्थानों से प्रशस्य होता है ? धर्म से । और अपने को सुखी बनाता है ।

किन दो स्थानों से निन्द्य होता है ? अधर्म से \* । और न आपस में बाँटता है, न पुण्य करता है ।

ब्रामणी ! यह काम-भोगी इन दो स्थानों से प्रशस्य होता है, और इन दो स्थानों से निन्द्य ।

( ६ )

ब्रामणी ! जो काम-भोगी धर्म-अधर्म से । अपने को सुखी बनाता है, आपस में बाँटता भी है और पुण्य भी करता है, वह तीन स्थानों से प्रशस्य होता है और एक स्थान से निन्द्य ।

किन तीन स्थानों से प्रशस्य होता है ? धर्म से , अपने को सुखी बनाता है , आपस में बाँटता है तथा पुण्य करता है ।

किस एक स्थान से निन्द्य होता है ? अधर्म से ।

ब्रामणी ! यह काम-भोगी इन तीन स्थानों से प्रशस्य होता है, और इस एक स्थान से निन्द्य ।

( ७ )

ब्रामणी ! जो काम-भोगी धर्म से , न अपने को सुखी बनाता है, न आपस में बाँटता है, न कोई पुण्य करता है, वह एक स्थान से प्रशस्य और दो स्थानों से निन्द्य होता है ।

किस एक स्थान से प्रशस्य होता है ? धर्म से ।

किन दो स्थानों से निन्द्य होता है ? न अपने को सुखी बनाता है , और न आपस में बाँटता है, न पुण्य करता है ।

ब्रामणी ! यह काम-भोगी इस एक स्थान से प्रशस्य होता है, और इन दो स्थानों से निन्द्य ।

( ८ )

ब्रामणी ! जो काम-भोगी धर्म से अपने को सुखी बनाता है, किन्तु न तो आपस में बाँटता है और न पुण्य करता है, वह दो स्थानों से प्रशस्य तथा एक स्थान से निन्द्य होता है ।

किन दो स्थानों से प्रशस्य होता है ? धर्म से , और अपने को सुखी बनाता है ।

किस एक स्थान से निन्द्य होता है । न तो आपस में बाँटता है और न पुण्य करता है ।

ब्रामणी ! यह काम-भोगी इन दो स्थानों से प्रशस्य होता है और इस एक स्थान से निन्द्य ।

( ९ )

ब्रामणी ! जो काम-भोगी धर्म से , अपने को सुखी बनाता है, आपस में बाँटता है, और पुण्य भी करता है, किन्तु लोभाभिभूत हो , वह तीन स्थानों से प्रशस्य होता है तथा एक स्थान से निन्द्य ।

किन्तु तीस स्थानों से प्रशस्त्व होता है ? धर्म से , अपने को सुखी बनाता है और आपस में बाँटता है ।

किस एक स्थान से विन्य होता है ? क्षोमाभिभूत ।

ग्रामणी ! वह काम-भोगी इन तीस स्थानों से प्रशस्त्व होता है और इस एक स्थान से विन्य ।

( १० )

ग्रामणी ! जो काम-भोगी धर्म से अपने को सुखी बनाता है आपस में बाँटता है पुण्य करता है और क्षोमाभिभूत नहीं हो उनके दोष का न्यास करते भोग करता है वह चारों स्थानों से प्रशस्त्व होता है ।

किन्तु चारों स्थानों से प्रशस्त्व होता है ? धर्म से अपने को सुखी बनाता है आपस में बाँटता है क्षोमाभिभूत नहीं हो उनके दोष का न्यास करते भोग करता है—इस चौथे स्थान से वह प्रशस्त्व होता है ।

ग्रामणी ! यही काम-भोगी चारों स्थानों से प्रशस्त्व होता है ।

( घ )

ग्रामणी ! संसार में कसातीची तपस्वी तीन होते हैं ? कीन से तीन ?

( १ )

ग्रामणी ! कोई कसातीची तपस्वी अज्ञानपूर्वक धर से बेबर हो प्रवृत्त हो जाता है—कुशल धर्मों का काम नहीं अर्थात्किन्तु धर्म तथा परम ज्ञान का साक्षात्कार नहीं । वह अपने को कष्ट पीका देता है । किन्तु, न तो वह कुशल धर्मों का काम करता है और न अर्थात्किन्तु धर्म तथा परम ज्ञान का साक्षात्कार करता है ।

( २ )

ग्रामणी ! कोई कसातीची तपस्वी अज्ञानपूर्वक धर से बेबर हो प्रवृत्त हो जाता है । वह कुशल धर्मों का काम ही कर लेता है किन्तु अर्थात्किन्तु धर्म तथा परम ज्ञान का साक्षात्कार नहीं कर पाता ।

( ३ )

ग्रामणी ! अज्ञानपूर्वक । वह कुशल धर्मों का काम कर लेता है और अर्थात्किन्तु धर्म तथा परम ज्ञान का भी साक्षात्कार कर लेता है ।

( ङ )

( १ )

[ 'घ' का पहला प्रकार ] वह तीन स्थानों से विन्य होता है । कीन तीन स्थानों से ? अपने को कष्ट-पीका देता है—इस पहले स्थान से विन्य होता है । कुशल धर्मों का काम नहीं करता—इस दूसरे स्थान से विन्य होता है । परम-ज्ञान का साक्षात्कार नहीं करता—इस तीसरे स्थान से विन्य होता है ।

ग्रामणी ! यह कसातीची तपस्वी इन तीन स्थानों से विन्य होता ।

( २ )

[ 'घ' का दूसरा ] वह दो स्थानों से निन्द्य होता है, और एक स्थान से प्रशंस्य ।

किन दो स्थानों से निन्द्य होता है ? अपने को कष्ट-पीडा देता है , और परम-ज्ञान का साक्षात्कार नहीं करता \* ।

किस एक स्थान से प्रशंस्य होता है ? कुशल धर्मों का लाभ कर लेता है ।

ग्रामणी ! यह रूक्षाजीवी तपस्वी इन दो स्थानों से निन्द्य होता है, और इस एक स्थान से प्रशंस्य ।

( ३ )

[ 'घ' का तीसरा ] वह एक स्थान से निन्द्य होता है और दो स्थानों से प्रशंस्य ।

किस एक स्थान से निन्द्य होता है ? अपने को कष्ट-पीडा देता है—इस एक स्थान से निन्द्य होता है ।

किन दो स्थानों से प्रशंस्य होता है ? कुशल धर्मों का लाभ कर लेता है , और परम ज्ञान का साक्षात्कार कर लेता है ।

ग्रामणी ! यह रूक्षाजीवी तपस्वी इस एक स्थान से निन्द्य होता है, और इन दो स्थानों से प्रशंस्य ।

( च )

ग्रामणी ! निर्जर (= जीर्णत-प्राप्त) तीन हैं, जो यहीं प्रत्यक्ष किये जा सकते हैं, जो विना विलम्ब के फल लेते हैं, जिन्हें लोगों को बुला-बुलाकर दिखाया जा सकता है, जो निर्वाण की ओर ले जाते हैं, जिन्हें विज्ञ पुरुष अपने भीतर ही भीतर जान लेते हैं । कौन से तीन ?

( १ )

राग से रक्त पुरुष अपने राग के कारण अपना भी अहित-चिन्तन करता है, पर का भी अहित-चिन्तन करता है, दोनों का अहित-चिन्तन करता है । राग के प्रहीण हो जाने से न अपना अहित-चिन्तन करता है, न पर का अहित चिन्तन करता है, न दोनों का अहित-चिन्तन करता है । यह निर्जर यही प्रत्यक्ष किये जा सकते हैं विज्ञ पुरुष अपने भीतर ही भीतर जान सकते हैं ।

( २ )

द्वेषी पुरुष अपने द्वेष के कारण द्वेष के प्रहीण हो जाने से न अपना अहित-चिन्तन करता है । यह निर्जर यहीं प्रत्यक्ष किये जा सकते हैं विज्ञ पुरुष अपने भीतर ही भीतर जान सकते हैं ।

( ३ )

मूढ़ पुरुष अपने मोह के कारण । मोह के प्रहीण हो जाने से । यह निर्जर यहीं प्रत्यक्ष किये जा सकते हैं विज्ञ पुरुष अपने भीतर ही भीतर जान सकते हैं ।

ग्रामणी ! यही तीन निर्जर हैं जो यहीं प्रत्यक्ष \* \* \* ।

यह कहने पर, राशिय ग्रामणी भगवान् से बोला— भन्ते ! मुझे उपासक स्वीकार करें ।

§ १३. पाटलि सुत्त ( ४०. १३ )

बुद्ध माया जानते हैं

एक समय, भगवान् कोलिय ( जनपद ) में उत्तर नामक कश्ये में बिहार करते थे ।

तब पाटलि ग्रामणी जहाँ भगवान् ये बहौं आया । एक बार बठ पाटलि ग्रामणी भगवान् मे बासा—मन्ते ! मैंने सुना है कि भ्रमण गातम माया जानते हैं । मन्ते ! जा ऐसा कहते है कि भ्रमण गातम माया जानते है क्या वे भगवान् के अनुकूल वास्तव है वहाँ भगवान् पर शक्ति बात ता नहीं पापत है ?

ग्रामणी ! जा ऐसा कहत है कि भ्रमण गातम माया जानत है ये मर अनुकूल ही वास्तव है सुख पर बड़ी बात वहाँ पापत है ।

उन आंवा की इस बात को मैं मरप नहीं स्वीकार करता कि भ्रमण गातम माया जानते है इसलिये वे 'मायावी' हैं ।

ग्रामणी ! जो कहते है कि मैं माया जानता हूँ, वे ऐसा भी कहते है कि मैं मायावी हूँ, परा जो सुगत है वही भगवान् भी है । ग्रामणी ! तौ मैं तुम्हीं स पूछता हूँ, जैसा समझा क्या—

( क )

मायावी दुर्गति को प्राप्त होता है

( १ )

ग्रामणी ! कोकिया के कम्बे-कम्बे बाकबाके सिपाहियों को जानते हो ?

हाँ मन्ते ! मैं उन्हें जानत हूँ ।

ग्रामणी ! कोकियों के कम्बे-कम्बे बाकबाके वे सिपाही किमखिय रूपत गये है ?

मन्ते ! चौरा से पहरा देने के लिये और तूत का काम करने के लिये वे रूपते गये है ।

ग्रामणी ! क्या तुम्हें माया है वे सिपाही शीकपाहूँ है पर दुर्गति ?

हाँ मन्ते ! मैं जानता हूँ, वे बड़े दुर्गति-पापी हैं । संसार स कितने काग दुर्गति-पापी है वे जन्म एक है ।

ग्रामणी ! तब यदि कोई बड़े—पाटली ग्रामणी काकियों के कम्ब-कम्ब बाकबाके दुर्गति-पापी सिपाहियों का जानता है इसलिये वह भी दुर्गति-पापी है तो वह शीक कहने-नाम होगा ?

वहाँ मन्ते ! मैं दूसरा हूँ और वे सिपाही दूसर है मेरी बात दूसरी है और उन सिपाहियों की बात दूसरी है ।

ग्रामणी ! जब पाटली ग्रामणी उन दुर्गति-पापी सिपाहियों को जानकर उन्हें दुर्गति-पापी नहीं होता है ता कुछ माया को क्या बर्बाकर मायावी नहीं हो सकते है ?

ग्रामणी ! मैं माया को जानता हूँ, और माया के कुछ को भी । मायावी मरने के बाद मरक म कल्प हो दुर्गति को प्राप्त होता है यह भी जानता हूँ ।

( २ )

ग्रामणी ! मैं जीव-हिंसा को भी जानता हूँ और जीव-हिंसा के कुछ को भी । जीव हिंसा करने-पत्ता मरने के बाद मरक मे कल्प हो दुर्गति को प्राप्त होता है यह भी जानता हूँ ।

ग्रामणी ! मैं चोरी को भी । चोरी करने बाका दुर्गति को प्राप्त होता है यह भी जानता हूँ ।

ग्रामणी ! मैं बर्बाचार को भी । बर्बाचारी दुर्गति को प्राप्त होता है यह भी जानता हूँ ।

ग्रामणी ! मैं शूठ बीकने को भी । शूठ बाकने बाका दुर्गति को प्राप्त होता है यह भी जानता हूँ ।

प्रासर्णा ! मे सुमर्त्या करने तो भी । सुमर्त्या करने वाला 'दुर्गति को प्राप्त होता है', यह भी जानना है ।

प्रासर्णा ! मैं रटोर बोलने को भी । रटोर बोलने वाला 'दुर्गति को प्राप्त होता है', यह भी जानना है ।

प्रासर्णा ! मैं मय होवने को भी । मय होवने वाला 'दुर्गति को प्राप्त होता है', यह भी जानना है ।

प्रासर्णा ! मैं लोभ को भी । लोभ करने वाला 'दुर्गति को प्राप्त होता है', यह भी जानता है ।

प्रासर्णा ! मैं पर-द्वेष को भी । पर-द्वेष करने वाला 'दुर्गति को प्राप्त होता है', यह भी जानता है ।

प्रासर्णा ! मे मिथ्या-दृष्टि को भी जानना है, और मिथ्या-दृष्टि के फल को भी । मिथ्या-दृष्टि करने वाला अपने के ज्ञान नरह में डगधग हो 'दुर्गति को प्राप्त होता है', यह भी जानता है ।

## (ख)

### मिथ्यादृष्टि वालों का विश्राम नहीं

'प्रासर्णा ! कुछ श्रमण और ब्राह्मण ऐसा करने और मानते हैं—जो जीव-हिंसा करता है वह अपने देखते देखते कुछ दुःख-दोर्मनस्य का भोग कर लेता है । जो चोरी , प्यभिचार , मद्र बोलता है, वह अपने देखते देखते कुछ दुःख-दोर्मनस्य का भोग कर लेता है ।

## (१)

प्रासर्णा ! ऐसे मनुष्य भी देखे जा सकते हैं जो माला और कुण्डल पहन, स्नान कर, लेप लगा, बाल बनवा, स्त्रियों के बीच बड़े भेद-आराम में रहते हैं । तब, कोई पूछे, "इसने क्या किया था कि यह माला और कुण्डल पहन भेद-आराम से राता है?" उसे लोग कहें "इसने राजा के शत्रुओं को हरा कर मार डाला था, जिससे राजा ने प्रसन्न हो उसे इतना भेद-आराम दिया है ।"

## (२)

प्रासर्णा ! ऐसे भी मनुष्य देखे जाते हैं, जिन्हें मजबूत रस्सी में दोनों हाथ पीछे बाँध, माथा मुड़वा, बड़े स्वर में डोल पीटते, एक गली में दूसरी गली, एक चौराहे में दूसरे चौराहे ले जा दक्खिन दरवाजे से निकाल, नगर की दक्खिन ओर शिर काट देते हैं ।

तब, कोई पूछे, "अरे ! इसने क्या किया था कि हमें मजबूत रस्सी से दोनों हाथ पीछे बाँध शिर काट देते हैं ?"

उसे लोग कहें, "अरे ! यह राजा का वैरी है, इसने सी या पुण्य को जान से मार डाला था, इसी से राजा ने हमें यह दण्ड दिया है ।

प्रासर्णा ! तुमने ऐसा कभी देखा या सुना है ?

हाँ भन्ते ! मैंने ऐसा देख-सुना है, और बात में भी सुनूँगा ।

प्रासर्णा ! तो, जो श्रमण या ब्राह्मण ऐसा कहते और मानते हैं कि—जो जीव-हिंसा करता है वह अपने देखते ही देखते कुछ दुःख-दोर्मनस्य भोग लेता है, वे मच हुये या शूद्र ?

शूद्र, भन्ते !

जो मूच्छ शूद्र बोलते हैं, वे शीलवान हुये या हु शील ?

हु-पीछ मन्ते !

को बुझाई-वापी है वे सुरे मार्ग पर आकर है या अच्छे मार्ग पर ?

मन्ते ! वे सुरे मार्ग पर आकर है ।

को सुरे मार्ग पर आकर है वे मिथ्या-दृष्टि वाले हुये या सम्मत् दृष्टि वाले ?

मन्ते ! वे मिथ्या-दृष्टि वाले हुये ।

को मिथ्या-दृष्टि वाले है उनमें क्या विश्वास करना चाहिये ?

वही मन्ते !

( ३ )

[ १ के समान ] उसे लोग कहें 'इसने राजा के पाशुओं को दूरा कर उनका हल पीन किया था जिससे राजा ने प्रसन्न हो उसे इतना वेतन भराया दिया है ।

( ४ )

ग्रामणी ! ऐसे भी मनुष्य ऐसे जाते हैं जिन्हें मजदूर रस्ती से दोमों हाथ पीछे बाँध शिर काट देते हैं ।

उसे लोग कहें "अरे ! इसने गाँव या भगर में बोरी कौ भी इन्हीं का राजा ने इतने धर दण्ड दिया है ।

ग्रामणी ! तुमने ऐसा कभी देखा था सुना है ?

को मिथ्या-दृष्टिवाले है उनमें क्या विश्वास करना चाहिये ?

वही मन्ते !

( ५ )

ग्रामणी ! ऐसे भी मनुष्य ऐसे जाते हैं जो माला और कुण्डक पहन ।

उसे लोग कहें "इसने राजा के पाशु की शिपों के साथ स्वमिथार किया था जिससे राजा ने प्रसन्न हो उसे इतना वेतन भराया दिया है ।

( ६ )

ग्रामणी ! ऐसे भी मनुष्य ऐसे जाते हैं जिन्हें मजदूर रस्ती से दोमों हाथ पीछे बाँध शिर काट देते हैं ।

उसे लोग कहें "अरे ! इसने कुछ भी शिपों या कुमारियों के साथ स्वमिथार किया है इसी का राजा ने इतने धर दण्ड दिया है ।

ग्रामणी ! तुमने कभी देखा था सुना है ?

को मिथ्या-दृष्टिवाले है उनमें क्या विश्वास करना चाहिये ?

वही मन्ते !

( ७ )

ग्रामणी ! ऐसे भी मनुष्य ऐसे जाते हैं जो माला और कुण्डक पहन ।

उसे लोग कहें "इसने मर कर कर राजा का बिलोह किया था जिससे राजा ने प्रसन्न हो उस इतना वेतन भराया दिया है ।



( ८ )

प्राणजी । ऐसे भी मनुष्य होने जाये है, जिन्हें मनुष्य शक्ति से लोका प्राप्त नहीं, प्राण  
द्वारा प्राप्त होने हैं ।

उसमें लोका होते, "धरे । इसमें मृदुपति या मृदुपति पुत्र ही एक एक पर बनती नहीं, प्राणि  
पशु-पक्षी है, इसी से रक्षा में होने या उपद्रव किया है ।

प्राणजी ! तुमने कभी ऐसा देखा या सुना है ?

... जो विद्या-रहि पाते हैं उनमें क्या विद्यात्म शक्ति प्राणियों ?

नहीं बन्ते ।

( ९ )

### विभिन्न मतवाद

भाने । आचार्य है, "मनुष्य है ।"

बन्ते । मेरी अवस्था एक भ्रम-जाल है । यहाँ मनु भी है, प्राण भी है, प्राणी या मनुष्य भी  
है, परलोक भी है । प्राण जो भ्रमण या साक्षात्कार द्वारे हैं उनमें से व साक्षात्कार सेवा करता है ।

बन्ते । एक दिन, विभिन्न मत और विचार प्राणों चार आचार्य आकर उठते ।

( १ )

### अच्छेदवाद

एक आचार्य ऐसा कहता और मानता था — "मनु, यज्ञ, होम, या अच्छे-पुरे कर्मों के कोई फल  
नहीं होते । न सा लोका है, न परलोक है, न साक्षात्कार है, न विद्या है, और न स्वयम्भू (= औपपत्तिक )  
प्राणी है । इस संसार में कोई भ्रमण या साक्षात्कार सच्चे मार्ग पर आकर नहीं है, जो लोक-परलोक को  
स्वयं जान और साक्षात्कार कर उपदेश देते हैं ।"

( २ )

एक आचार्य ऐसा कहता और मानता था — "मनु, यज्ञ, होम, या अच्छे-पुरे कर्मों के फल होते  
हैं । वह लोक भी है, परलोक भी है, साक्षात्कार भी है, विद्या भी है और स्वयम्भू (= औपपत्तिक सत्त्व = जो  
साक्षात्कार के मध्योक्त नहीं बल्कि आप ही उपपन्न होते हैं ) प्राणी भी है । इस संसार में ऐसे भ्रमण  
और साक्षात्कार हैं जो लोक-परलोक को स्वयं जान और साक्षात्कार कर उपदेश देते हैं ।"

( ३ )

### अक्रियवाद

एक आचार्य ऐसा कहता और मानता था — "रुते-रुतवाते, काटते-फटवाते, पकाते-पकवाते, सोचते-  
सोचवाते, तक्रलीफ उठवाते, तक्रलीफ उठवाते, चंचल होते, चंचल कराते, प्राणी मरवाते, जोरी करते,

अज्ञित केन्द्रमूल का मत । देखो, दीध नि १ २

संभ मारते छूट पाद करते रहजनी करते स्वमिचार करते भीर झूठ पांम्मे कुछ पाप नहीं करता ।  
 त्रेत्र बार बाके चक्र म गृहणी पर के प्राणिया को मार कर यदि सोम की एक डर लगा दे तो भी डममें  
 कोई पाप नहीं है । गङ्गा के दक्षिण तीर पर भी कोई जाय मारते-मारवाते काटते-काटवाते पकवाते  
 पकवाते तो भी उसे कोई पाप नहीं । गङ्गा के उत्तर तीर पर भी । दाम संयम भीर मत्प-वापिता से  
 कोई पुण्य नहीं होता । ७

( ४ )

एक आचार्य पूमा कहता भीर मानता था—डरते-डरवाते काटते-काटवाते स्वमिचार करते भीर  
 भीर झूठ बोझते पाप करता है । सोम की एक डर लगा दे तो डममें पाप है । गङ्गा के दक्षिण तीर  
 उत्तर तीर पाप है । दाम संयम भीर मत्प-वापिता से पुण्य होता है ।

मन्ते । तब मेरे मन में राज-विचिकित्सा जाने लगी । इन अमण-प्राणियों में किसने सच कहा  
 और किसने झूठ ?

प्रामजी ! ठीक है, इस स्वाम पर तुम्हें राजा करना स्वामाधिक ही था ।

मन्ते ! मुझे भगवान् के प्रति बड़ी प्रज्ञा है । भगवान् मुझे धर्मोपदेश कर मेरी रक्षा कर  
 सकते हैं ।

( ५ )

### धर्म की समाधि

प्रामजी ! धर्म की समाधि होती है । यदि तुम्हारे चित्त ने उसमें समाधि काम कर लिया तो  
 तुम्हारी रक्षा वृद्ध हो जायगी । प्रामजी ! वह धर्म की समाधि क्या है ?

( १ )

प्रामजी ! कार्य-प्रारम्भ बीच-हिंसा बीच बीच-हिंसा से विरत रहता है । चोरी करने से विरत  
 रहता है । स्वमिचार से विरत रहता है । झूठ बोझने से विरत रहता है । जुगली करने से—  
 कपूर बोझने से—, गप होझने से । ओम बीच विर्येय होता है । बैर-द्वेष से रहित होता है ।  
 मित्वा-दृष्टि ओम सम्बन्ध-दृष्टिवाका होता है ।

प्रामजी ! वह कार्य-प्रारम्भ दृष्ट प्रकार विर्येय बैर-द्वेष से रहित मोह-रहित संयम और स्पृष्टि  
 भाव हो मीठी-सद्भाव चित्त से एक दिशा की व्याप्त कर बिहार करता है ।

वह येमा विन्यास करता है “ओ आचार्य पूमा कहता भीर मानता है—दाम अल्पे-सुरे धर्मों  
 के कीर्त फल नहीं होते —यदि असक्य कहना सच ही है तो मैं मेरी कोई बात नहीं है जो मैं किसी  
 को पीका नहीं पहुँचाया । इस तरह शीत और से मैं बचा हूँ । मैं शरीर, बचन और मन से संवत  
 रहता हूँ । मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुदृष्टि को प्राप्त करूँगा ।” इससे उस प्रमोद उत्पन्न होता  
 है । मनुष्य होने से प्रीति उत्पन्न होती है । प्रीति पुण्य होने से बसना शरीर प्रसन्न हो जाता है ।  
 शरीर प्रसन्न होने से उसे सुख होता है ।

प्रामजी ! वही धर्म की समाधि है । यदि तुम्हारे चित्त ने इस समाधि का कथन कर लिया तो  
 तुम्हारी रक्षा वृद्ध हो जायगी ।

( २ )

ब्रामणी ! वह आर्यश्रावक मैत्री-सहगत चित्त से एक दिशा को व्याप्त कर विहार करता है । वह ऐसा चिन्तन करता है, "जो आचार्य ऐसा कहता और मानता है—दान , अष्टौ-बुधे कर्मों के फल होते हैं , यदि उसका कहना सच है तो भी मेरी कोई हानि है ।" इससे उसे प्रमोद उत्पन्न होता है ।

( ३ )

ब्रामणी ! वह आर्यश्रावक मैत्री-सहगत चित्त से एक दिशा को व्याप्त कर विहार करता है । वह ऐसा चिन्तन करता है, "जो आचार्य ऐसा कहता और मानता है—करते-करवाते व्यभिचार करते और झूठ बोलते पाप नहीं करता है । दान, सयम और सत्यवादिता से पुण्य नहीं होता है, यदि उसका कहना सच है तो मेरी कोई हानि नहीं है ।" इससे उसे प्रमोद उत्पन्न होता है ।

( ४ )

ब्रामणी ! वह आर्यश्रावक मैत्री-सहगत चित्त से एक दिशा को व्याप्त कर विहार करता है । वह ऐसा चिन्तन करता है, "जो आचार्य ऐसा कहता और मानता है—करते-करवाते व्यभिचार करते और झूठ बोलते पाप करता है ", यदि उसका कहना सच है तो मेरी कोई हानि नहीं है ।" इससे उसे प्रमोद उत्पन्न होता है ।

ब्रामणी ! यही धर्म की समाधि है । यदि तुम्हारे चित्त ने इस समाधि का लाभ कर लिया तो तुम्हारी शका दूर हो जायगी ।

( ५ )

ब्रामणी ! वह आर्यश्रावक वरुणा-सहगत चित्त से , मुदिता-सहगत चित्त से , उपेक्षा-सहगत चित्त से एक दिशा को व्याप्त कर विहार करता है ।

वह ऐसा चिन्तन करता है— [ 'व' के १, २, ३, ४ के समान ही ] इससे उसे प्रमोद उत्पन्न होता है । प्रमुदित होने से प्रीति उत्पन्न होती है । प्रीतियुक्त होने से उसका शरीर प्रश्रब्ध होने से उसे सुख होता है ।

ब्रामणी ! यही धर्म की समाधि है । यदि तुम्हारे चित्त ने इस समाधि का लाभ कर लिया तो तुम्हारी शका दूर हो जायगी ।

यह कहने पर, पाटलिय ब्रामणी भगवान् से बोला—भन्ते ! मुझे अपना उपासक स्वीकार करें ।

ब्रामणी सयुक्त समाप्त

# नवाँ परिच्छेद

## ४१ असङ्गत-सयुक्त

### पहला भाग

#### पहला वर्ण

### § १ काय सुच ( ४१ १ १ )

#### निर्याण और निर्वोषगामी मार्ग

मिथुभो ! असंस्कृत (= अकृत = निर्वाण ) और असंस्कृतगामी मार्ग का उपदेश करेगा ।  
उसे सुनो ।

मिथुभो ! असंस्कृत क्या है ? मिथुभो ! जो राग द्वेष द्वेष-द्वेष और मोह द्वेष है इसे असंस्कृत कहते हैं ।

मिथुभो ! असंस्कृतगामी मार्ग क्या है ? अज्ञानता रक्षित । मिथुभो ! इसे असंस्कृतगामी मार्ग कहते हैं ।

मिथुभो ! इस प्रकार मैंने असंस्कृत और असंस्कृतगामी मार्ग का उपदेश कर दिया ।

मिथुभो ! छुनेषु और अनुकम्पक पुत्र को जो अपने धावका के प्रति करवा या मँगे कर दिया ।

मिथुभो ! यह ब्रह्म-मूल है यह दाम्ब-मूल है ध्यान करो प्रमाद मत करो , ऐसा न हो कि पीठे पश्चात्ताप करता पड़े ।

तुम्हारे किये मेरा यही उपदेश है ।

### § २ सामय सुच ( ४१ १ ० )

#### समय विज्ञानता

[ ऊपर पन्ना ही ]

मिथुभो ! असंस्कृतगामी मार्ग क्या है ? समय और विद्वानता ।

मिथुभो ! यह ब्रह्म-मूल है यह दाम्ब-मूल है ध्यान करो प्रमाद मत करो ।

### § ३ पितृ सुच ( ४१ १ ३ )

#### समाधि

मिथुभो ! असंस्कृतगामी मार्ग क्या है ? अवितर्क-अविचार समाधि अवितर्क-विचार मात्र समाधि अवितर्क-अविचार समाधि ।

मिथुभो ! यह ब्रह्म-मूल है यह दाम्ब-मूल है ध्यान करो प्रमाद मत करो ।

## § ४. सुञ्जता सुत्त ( ४१. १. ४ )

समाधि

• भिक्षुओ ! असंस्कृतगामी मार्ग क्या है ? शून्य की समाधि, अनिमित्त की समाधि, अप्रणिहित की समाधि ।

## § ५. सतिपट्ठान सुत्त ( ४१. १. ५ )

स्मृतिप्रस्थान

भिक्षुओ ! असंस्कृतगामी मार्ग क्या है ? चार स्मृतिप्रस्थान ।

## § ६. सम्मपधान सुत्त ( ४१. १. ६ )

सम्यक् प्रधान

भिक्षुओ ! असंस्कृत गामी मार्ग क्या है ? चार सम्यक् प्रधान

## § ७. इन्द्रिपाद सुत्त ( ४१. १. ७ )

ऋद्धि-पाद

भिक्षुओ ! असंस्कृत-गामी मार्ग क्या है ? चार ऋद्धियाँ ।

## § ८. इन्द्रिय सुत्त ( ४१. १. ८ )

इन्द्रिय

भिक्षुओ ! असंस्कृत-गामी मार्ग क्या है ? पाँच इन्द्रियों ।

## § ९. बल सुत्त ( ४१. १. ९ )

बल

• भिक्षुओ ! असंस्कृत-गामी मार्ग क्या है ? पाँच बल ।

## § १०. धोञ्झङ्ग सुत्त ( ४१. १. १० )

धोध्यङ्ग

• भिक्षुओ ! असंस्कृत-गामी मार्ग क्या है ? सात धोध्यङ्ग ।

## § ११. मग्न सुत्त ( ४१. १. ११ )

आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग

भिक्षुओ ! असंस्कृत-गामी मार्ग क्या है ? आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग ।

भिक्षुओ ! यह वृक्ष-मूल हैं, यह शूल-गृह हैं, ध्यान करो, मत प्रमाद करो, ऐसा नहीं कि पीछे पश्चात्ताप करना पड़े ।

तुम्हारे लिये मेरा यही उपदेश है ।

पहला वर्ग समाप्त

## दूसरा भाग

### दूसरा धर्म

§ १ असकृत सुच ( ४१ < )

#### समथ

मिथुभो ! असकृत भार असकृत-गामी मार्ग का उपदेश करेगा । उसे सुना ।

मिथुभो ! असकृत क्या है ? मिथुभो ! जो राग-द्वय द्वेष-द्वय मोह-द्वय है इसी को असकृत करते हैं ।

मिथुभा ! असकृत-गामी मार्ग क्या है ? समथ । मिथुभो ! इसे असकृत-गामी मार्ग कहते हैं ।

मिथुभो ! इस प्रकार मैं तुम्हें असकृत का उपदेश कर दिया और असकृत-गामी मार्ग का भी ।

मिथुभो ! सुमनस्य अनुकम्पक बुद्ध को जो अपने धारकों के प्रति करता चाहिये मीचे कर दिया ।

मिथुभो ! वह बुद्ध-भूक है वह शून्य गृह है ध्यान करो प्रमाद मत करो ऐसा नहीं कि पीछे पराधापाप करना पड़े ।

तुम्हारे किये मरा नहीं उपदेश है ।

#### विदर्शना

मिथुभो ! असकृत-गामी मार्ग क्या है ? विदर्शना ।

#### छ समाधि

- (१) मिथुभो ! अमस्कृत-गामी मार्ग क्या है ? सचित्त-सचिचार समाधि ।
- (२) मिथुभो ! असकृत-गामी मार्ग क्या है ? सचित्त-सचिचारमात्र समाधि ।
- (३) -- मिथुभो ! अमस्कृत-गामी मार्ग क्या है ? सचित्त-सचिचार समाधि ।
- (४) मिथुभो ! अमस्कृत-गामी मार्ग क्या है ? शून्यता की समाधि ।
- (५) मिथुभो ! अमस्कृत-गामी मार्ग क्या है ? अभिमित्त समाधि ।
- (६) मिथुभो ! अमस्कृत-गामी मार्ग क्या है ? अप्रतिहित समाधि ।

#### चार स्मृति प्रम्दान

(१) मिथुभो ! अमस्कृत गामी मार्ग क्या है ? मिथुभो ! मिथु काका में कापालुपद्धि होकर विहार करना है अपने कर्मा को तपाता है ( अजातायी ) मीमंसा स्मृतिमात्र ही संसार में अभिपत्ता और हीमनस्य का द्वापर । मिथुभा ! इन्हीं कहते हैं अमस्कृत-गामी मार्ग ।

(२) मिथुभा ! मिथु वेदना में वेदनासुखरथा कारण विहार करना है । मिथुभो ! हमको कहते हैं अमस्कृत-गामी मार्ग ।

- (१) भिक्षुओं ! भिक्षु चित्त में धितानुपपत्तौ लोह्य विहार करता है ।  
 (५) भिक्षुओं ! भिक्षु धर्मों में वनानुपपत्तौ लोह्य विहार करता है ।

### चार अमृतक प्रधान

(१) भिक्षुओं ! अमृतक नामों मार्ग क्या है ? भिक्षुओं ! भिक्षु अनुपपन्न पाप-भय अकुशल धर्मों के अनुपाद के लिये दृष्टा करता है, फोडिश करता है, उ मया करता है, मन देता है । भिक्षुओं ! इसे करते हैं अमृतक-नामों मार्ग ।

(२) भिक्षुओं ! भिक्षु उपपन्न पाप-भय अकुशल धर्मों के प्रमाण के लिये दृष्टा करता है, फोडिश करता है । भिक्षुओं ! इसे करते हैं अमृतक-नामों मार्ग ।

(३) भिक्षुओं ! भिक्षु अनुपपन्न कुशल धर्मों के उत्पाद के लिये दृष्टा करता है ।

(५) भिक्षुओं ! अमृतक नामों मार्ग क्या है ? भिक्षुओं ! भिक्षु उपपन्न कुशल धर्मों की निवृत्ति के लिये घटती रोकने के लिये, दुद्धि करने के लिये, उनका अभ्यास करने के लिये, तथा उन्हे पूर्य करने के लिये दृष्टा करता है, फोडिश करता है ।

### चार ऋद्धि-पाद

(१) भिक्षुओं ! अमृतक-नामों मार्ग क्या है ? भिक्षुओं ! भिक्षु उच्छ-समाधि-प्रधान-संस्कार वाले ऋद्धि-पाद की भावना करता है ।

(२) भिक्षुओं ! भिक्षु वीर्य-समाधि-प्रधान-संस्कार वाले ऋद्धि-पाद की भावना करता है ।

(३) भिक्षुओं ! भिक्षु चित्त-समाधि-प्रधान-संस्कार वाले ऋद्धि-पाद की भावना करता है ।

(५) भिक्षुओं ! भिक्षु समीप-समाधि-प्रधान-संस्कार वाले ऋद्धि-पाद की भावना करता है ।

### पाँच इन्द्रियाँ

(१) भिक्षुओं ! अमृतक-नामों मार्ग क्या है ? भिक्षुओं ! भिक्षु विवेक, विराग, निरोध, तथा त्याग में लगाने वाले श्रद्धेन्द्रिय की भावना करता है ।

(२) वीर्येन्द्रिय की भावना करता है ।

(३) स्मृतीन्द्रिय की भावना करता है ।

(५) समाधीन्द्रिय की भावना करता है ।

(५) प्रज्ञेन्द्रिय की भावना करता है ।

### पाँच बल

(१) भिक्षुओं ! अमृतक-नामों मार्ग क्या है ? भिक्षुओं ! भिक्षु विवेक में लगानेवाले श्रद्धा-बल की भावना करता है ।

(२) वीर्य-बल की भावना करता है ।

(३) स्मृति-बल की भावना करता है ।

(५) समाधि-बल की भावना करता है ।

(५) प्रज्ञा-बल की भावना करता है ।

### सात बोध्यङ्ग

(१) भिक्षुओं ! अमृतक-नामों मार्ग क्या है ? भिक्षुओं ! भिक्षु विवेक में लगानेवाले स्मृति-सबोध्या की भावना करता है ।

- (३) धर्म-विषय-संबंधी भाषना करता है ।
- (३) धर्म-संबंधी भाषना करता है ।
- (४) प्रीति-संबंधी भाषना करता है ।
- (५) प्रथम-संबंधी भाषना करता है ।
- (६) समाधि-संबंधी भाषना करता है ।
- (७) उपेक्षा-संबंधी भाषना करता है ।

### अष्टाङ्गिक भाग

- (१) विद्युत् : अस्मिन्-भाषना भाग बना है ? विद्युत् : विद्युत् विद्ये में लगायेगी भाषना यदि ही भाषना करता है ।
- (२) मन्त्र-भाषना की
- (३) मन्त्र-भाषना की
- (४) मन्त्र-भाषना की
- (५) मन्त्र-भाषना की
- (६) मन्त्र-भाषना की
- (७) मन्त्र-भाषना की
- (८) मन्त्र-भाषना की

### ५ ० अन्त गुण ( १८ - १ )

#### अन्त भाग अन्तभाषना भाग

विद्युत् : अन्त भाग अन्त भाषना भाग बना है । अन्त गुण ।  
 विद्युत् : अन्त भाग  
 [ अन्त भाग अन्त भाषना भाग बना है ]

### ५ ३ अन्त गुण ( १९ - ३ )

#### अन्त भाग अन्तभाषना भाग

विद्युत् : अन्त भाग अन्त भाषना भाग बना है । अन्त गुण ।

### ५ ४ अन्त गुण ( २० - ४ )

#### अन्त भाग अन्तभाषना भाग

विद्युत् : अन्त भाग अन्त भाषना भाग बना है । अन्त गुण ।

### ५ ५ अन्त गुण ( २१ - ५ )

#### अन्त भाग अन्तभाषना भाग

विद्युत् : अन्त भाग अन्त भाषना भाग बना है । अन्त गुण ।

### ५ ६ अन्त गुण ( २२ - ६ )

#### अन्त भाग अन्तभाषना भाग

विद्युत् : अन्त भाग अन्त भाषना भाग बना है । अन्त गुण ।



## § ७ सुदुद्दस सुत्त ( ४१. २ ७ )

## सुदुर्दर्शगामी मार्ग

भिक्षुओ ! सुदुर्दर्श और सुदुर्दर्श-गामी मार्ग का उपदेश करूँगा ।

## § ८-३३. अज्जर सुत्त ( ४१ २ ८-३३ )

## अजर्जरगामी मार्ग

- अजर्जर और अजर्जर-गामी मार्ग का  
श्रुव और श्रुव-गामी मार्ग का  
अपलोकित और अपलोकित-गामी मार्ग का  
अनिदर्शन  
निष्प्रपञ्च \*  
शान्त  
वमृत
- प्रणीत  
शिव  
क्षेम  
वृष्णा-क्षय  
भाब्यर्थ  
अज्जुत  
अनीतिक (=निर्दु ख)  
निर्दु ख धर्म
- निर्वाण  
निद्वेष  
विराग  
शुद्धि
- मुक्ति \*  
अनालय  
द्वीप  
लेण (= गुफा)  
व्राण \*  
शरण  
परायण

[ इन सभी का असस्कृत के समान विन्तार कर लेना चाहिये ]

असङ्गत-समुत्त समाप्त

# दसवाँ परिच्छेद

## ४२ अव्याकृत-संयुक्त

§ १ खेमा घेरी सुच ( ४० १ )

अव्याकृत क्यों ?

एक समय मगवाह् आघन्ती में अनाद्यपिण्डिक के अराम जेतवन में बिहार करते थे । उस समय खेमा मिथुणी कोराछ में चारिअ करती हुई आघन्ती और साजेठ के बीच तोरण वस्तु में ठहरी हुई थी ।

उब कोराछराज प्रसेनजित् माकेठ स आघन्ती जाते हुये बीच ही तोरणवस्तु में एक रात के छिये रुक गया था ।

उब कोराछराज प्रसेनजित् ने अपने एक पुत्रय को आमन्त्रित किया है पुत्रय ! जाकर तोरण-वस्तु में खेमा कोई ऐसा अमन या आछन है जिनके साथ आज मैं सत्संग कर सकूँ ।

“देव ! बहुत अच्छा” कह उस पुत्रय ने राजा को उत्तर न सारे तोरणवस्तु में बहुत खीब करने पर भी बीसे किसी अमन या आछन को नहीं पाया जिसके साथ कोराछराज प्रसेनजित् सत्संग कर सके ।

उस पुत्रय ने तोरणवस्तु में ठहरी हुई खेमा मिथुणी को देखा । देखकर बहों कोराछराज प्रसेनजित् या बहों गया और बोला “देव ! तोरणवस्तु में बीसा कोई भी अमन या आछन नहीं है जिनके साथ देव सत्संग कर सके । उब जहाँए समय-समय मगवाह् की एक आबिका दोमा मिथुणी बहों ठहरी हुई है जिनका बका पस केका हुआ है—परिहत है प्यक मेबाबिनी बिजुपी बोकने में बनुर और अच्छी सुसबाकी । देव उमी का सत्संग करे ।”

तब कोराछराज प्रसेनजित् बहों खेमा मिथुणी की बहों गया और अभिवादन कर पुन और बीठ गया ।

एक जोर बँड कोराछराज प्रसेनजित् खेमा मिथुणी स बोका भायें ! क्या लबागत मरने के बाद रहते है ?

महाराज ! मगवाह् ने ह्य मस को अव्याकृत ( अजिसका उत्तर हों वा ‘ना’ नहीं दिया अ मकना है ) बताया है ।

आयें ! क्या लबागत मरने के बाद नहीं रहते है ?

महाराज ! इसे भी मगवाह् ने अव्याकृत बताया है ।

आयें ! क्या लबागत मरने के बाद रहते भी है और नहीं भी ?

महाराज ! इसे भी मगवाह् ने अव्याकृत बताया है ।

आयें ! क्या लबागत मरने के बाद न रहते है और न नहीं रहते है ?

महाराज ! इसे भी मगवाह् ने अव्याकृत बताया है ।

आयें ! या क्या कारण है कि मगवाह् ने सभी का अव्याकृत बताया है ?

महाराज ! मैं आज ही से जानती हूँ कि मगवाह् ने बताया है ।

महाराज ! आप क्या समझते हैं, कोई ऐसा गिननेवाला पुरुष है जो गङ्गा के बालुकों को गिनकर कह सके, ये इतने हैं, इतने सौ हैं, इतने हजार हैं, या इतने लाख हैं ?

नहीं आर्य !

महाराज ! क्या कोई ऐसा गिननेवाला पुरुष है जो महा-समुद्र के जल को तोल कर बता दे— यह इतना आह्वक (=उस समय का एक माप) है, इतना सौ आह्वक है, इतना हजार आह्वक है, इतना लाख आह्वक है ?

नहीं आर्य !

सौ क्यों ?

आर्य ! क्योंकि महासमुद्र गम्भीर है, अथाह है ।

महाराज ! इस तरह तथागत के रूप के विषय में भी कहा जा सकता है । तथागत का वह रूप प्रहीण हो गया, उच्छिन्न-मूल, चार कटे ताड़ के समान, मिटा दिया गया, और भविष्य में न उत्पन्न होने योग्य बना दिया गया । महाराज ! हम रूप और उस रूप के प्रश्न से तथागत विमुक्त होते हैं, गम्भीर, अप्रमेय, अबाह । जैसे महासमुद्र के विषय में बने ही तथागत के विषय में भी नहीं कहा जा सकता है—तथागत मरने के बाद रहते हैं, रहते भी हैं और नहीं भी रहते हैं, न रहते हैं और न नहीं रहते हैं ।

महाराज ! इसी तरह तथागत की वेदना के विषय में भी । सज्ञा के विषय में भी । प्रस्कार के विषय में भी । विज्ञान के विषय में भी ।

तब, कौशलराज प्रसेनजित् खेमा भिक्षुणी के कहे गये का अभिनन्दन और अनुमोदन कर, आसन से उठ, प्रणाम-प्रदक्षिणा कर चला गया ।

तब, वाट में कौशलराज प्रसेनजित् जहाँ भगवान् थे वहाँ गया और भगवान् का अभिवादन कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, कौशलराज प्रसेनजित् भगवान् से बोला, भन्ते ! क्या तथागत मरने के बाद रहते हैं ?

महाराज ! मैंने इस प्रश्न को अव्याकृत बताया है ।

[ खेमा भिक्षुणी के प्रश्नोत्तर जैसा ही ]

भन्ते ! आश्चर्य है, अद्भुत है ! कि इस भ्रमोपदेश से भगवान् की श्राविका के अर्थ और शब्द सभी ज्यों के त्यों टूट-टूट मिल गये ।

भन्ते ! एक बार मैंने खेमा भिक्षुणी के पास जाकर यही प्रश्न किया था । उसने भी भगवान् के ही अर्थ और शब्द से इसका उत्तर दिया था । भन्ते ! आश्चर्य है, अद्भुत है । भन्ते ! अर्थ ज्ञान की आज्ञा दे, मुझे बहुत काम करने हैं ।

महाराज ! जिसका तुम समय समझो ।

तब, कौशलराज प्रसेनजित् भगवान् के कहे गये का अभिनन्दन और अनुमोदन कर आसन से उठ, प्रणाम-प्रदक्षिणा कर चला गया ।

## § २. अनुराध सुत्त ( ४२ २ )

चार अव्याकृत

एक समय भगवान् वैशाली में महावन की वृद्धागारशाला में विहार करते थे ।

उस समय, आनुष्मान् अनुराध भगवान् के पास ही एक आरण्य में कुटी लगा कर रहते थे ।

तब, कुछ दूरसे मत के माधु जहाँ आनुष्मान् अनुराध थे वहाँ आये और कुशल-क्षेम पूछ कर एक ओर बैठ गये ।

एक और बैठ वे दूसरे मत के साधु आयुष्मान् अनुराध से बोले "आहुत अनुराध ! जा उत्तम पुरुष परम-पुरुष परम प्रसिद्धि प्राप्त हुए हैं वे इन चार स्थानों में पूछे जाने पर उत्तर देते हैं ( १ ) क्या तबागत मरने के बाद रहते हैं ? ( २ ) क्या तबागत मरने के बाद नहीं रहते हैं ? ( ३ ) क्या तबागत मरने के बाद रहते भी हैं और नहीं भी ? ( ४ ) क्या तबागत मरने के बाद न रहते हैं और न नहीं रहते हैं ?

आहुत ! जो कुछ है वे इन चार स्थानों से धर्मज्ञ ही उत्तर दत्त हैं ।

यह कहने पर वे साधु आयुष्मान् अनुराध से बोले 'बह भिक्षु तयात्त्वत्तु प्रब्रजित होया वा कोई मूर्ख अथवा स्वयं ही हो ।'

यह कह न साधु आसन्न से उत्तर कर चले गये ।

तब उन साधुओं के चले जाने के बाद ही आयुष्मान् अनुराध को यह हुआ—यदि वे दूसरे मत के साधु मुझे उसके भाग्य का प्रश्न पूछते तो क्या उत्तर दे मैं भगवान् के अनुकूल समझा जाता कोई छुड़ी बात भगवान् पर नहीं घोषता ?

तब आयुष्मान् अनुराध अहाँ भगवान् से बहाँ गये और भगवान् का अभिवादन कर एक और बैठ गये ।

एक और बैठ आयुष्मान् अनुराध भगवान् से बोले "भस्ते ! मैं भगवान् के पास ही आरम्भ में छुड़ी क्या कर रहा हूँ । भस्ते ! तब कुछ दूसरे मत वाले साधु अहाँ में था बहाँ आये । भस्ते ! उन साधुओं के चले जाने के बाद ही मैंने मन में यह हुआ—यदि वे दूसरे मत के साधु मुझे उसके भाग्य का प्रश्न पूछते तो क्या उत्तर दे मैं भगवान् के अनुकूल समझा जाता कोई छुड़ी बात भगवान् पर नहीं घोषता ?

अनुराध ! तो क्या समझते हो स्वयं भिन्न है वा अभिन्न ?

अभिन्न भस्ते !

जो अभिन्न है वह कुछ है वा कुछ ?

कुछ भस्ते !

जो अभिन्न कुछ और परिवर्तनशील है उस क्या ऐसा समझना उचित है—वह मेरा है वह मैं हूँ वह मेरा था मा है ?

नहीं भस्ते !

वेदान्त । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान ।

अनुराध ! वस्तु ही जो कुछ रूप—अतीत भूतगत वर्तमान अन्त्यात्म बाह्य स्पर्श सूक्ष्म हीन प्रकीर्ण चर भिन्न है समीप न मेरा है न मैं हूँ न मेरा आत्मा है । इसे वर्णन प्रशान्तपूर्वक व्यक्त करना चाहिये । वेदान्त । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान ।

अनुराध ! इस बात परिष्कृत आर्षभाष्य रूप में भी विवेक करता है श्रुति हीन दुर्लभ बात बता है ।

अनुराध ! क्या तुम रूप को तबागत समझते हो ?

नहीं भस्ते !

वेदान्त की ?

नहीं भस्ते !

संज्ञा का ?

नहीं भस्ते !

संस्कार की ?

नहीं भन्ते ।

विज्ञान को ?

नहीं भन्ते ।

अनुरोध ! क्या तुम 'रूप म तथागत है' ऐसा समझते हो ?

नहीं भन्ते ।

वेदना । सज्ञा । संस्कार । विज्ञान ।

अनुरोध ! क्या तुम तथागत को रूपवान् विज्ञानवान् समझते हो ?

नहीं भन्ते ।

अनुरोध ! क्या तुम तथागत को रूपरहित विज्ञानरहित समझते हो ?

नहीं भन्ते ।

अनुरोध ! जब तुमने स्वयं देखा लिया कि तथागत को मृत्युत उपलब्धि नहीं होती है, तो तुम्हारा ऐसा उत्तर देना क्या ठीक था "आयुस ! जो ' बुद्ध हैं वे इन चार म्थानों से अन्यत्र ही उत्तर देते हैं " ?

नहीं भन्ते ।

अनुरोध ! ठीक है, पहले आंर अब भी मैं मट्टा दु ग्ग आर दु र्ग के निरोध का ही उपदेश करता हूँ ।

### § ३ सारिपुत्तकोट्टित सुत्त ( ४२. ३ )

#### अव्यक्त वताने का कारण

एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र आर आयुष्मान् महाकोट्टित वाराणसी के पास ऋषिपत्तन मृगदाय में विहार करते थे ।

तब, आयुष्मान् महाकोट्टित मध्या समय ध्यान में उठ, जहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र थे वहाँ आये और कुशल-क्षेम पूछ कर एक ओर घूँट गये ।

एक ओर बैठ, आयुष्मान् महाकोट्टित आयुष्मान् सारिपुत्र से बोले, "आयुस ! क्या तथागत मरने के बाद रहते हैं ?

आयुस ! भगवान् ने इस प्रश्न को अव्यक्त बताया है ।

आयुस ! भगवान् ने हमें भी अव्यक्त बताया है ।

आयुस ! सारिपुत्र ! क्या कारण है कि भगवान् ने इसे अव्यक्त बताया है ?

आयुस ! तथागत मरने के बाद रहते हैं, यह तो रूप के विषय में है । तथागत मरने के बाद नहीं रहते हैं, यह भी रूप के विषय में है । तथागत मरने के बाद रहते भी हैं और नहीं भी रहते हैं, यह भी रूप के विषय में है । तथागत मरने के बाद न रहते हैं, और न नहीं रहते हैं, यह भी रूप के विषय में है ।

वेदना के विषय में । सज्ञा । संस्कार । विज्ञान" ।

आयुस ! यही कारण है कि भगवान् ने इसे अव्यक्त बताया है ।

### § ४. सारिपुत्तकोट्टित सुत्त ( ४२. ४ )

#### अव्यक्त वताने का कारण

एक समय, आयुष्मान् सारिपुत्र और आयुष्मान् महाकोट्टित वाराणसी के पास ऋषिपत्तन मृगदाय में विहार करते थे ।

आयुस ! क्या कारण है कि भगवान् ने इसे अव्यक्त बताया है । -

आहुतम् । रूप रूप के समुद्रय रूप के विरोध और रूप के विरोध-गामी मार्ग का बधार्थता नहीं जानने के कारण ही [ ऐसी मिथ्या-दृष्टि होती है ] कि तथ्यागत मरने के बाद रहते हैं या तथ्यागत मरने के बाद नहीं रहते हैं या तथ्यागत मरने के बाद रहते भी हैं और नहीं भी रहते हैं या तथ्यागत मरने के बाद न रहते हैं और न नहीं रहते हैं ।

बद्धता । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान ।

आहुतम् । रूप रूप के समुद्रय रूप के विरोध और रूप के विरोध-गामी मार्ग को बधार्थता जान स्मै न ऐसी मिथ्या-दृष्टि नहीं होती है कि तथ्यागत मरने के बाद रहते हैं ।

बद्धता । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान ।

आहुतम् । यही कारण है कि भगवान् ने हमें अध्याहृत बताया है ।

### § ५ सारिपुत्रकोष्ठित मुक्त ( ४० ५ )

#### अध्याहृत

आहुतम् । क्या कारण है कि भगवान् ने हमें अध्याहृत बताया है ?

आहुतम् । जिसको रूप में राग=दम्प=श्रेय=पिपासा=परिहास=तृप्त्या चगा हुआ है उस ही परती मिथ्या-दृष्टि होती है कि तथ्यागत मरने के बाद रहते हैं

बद्धता । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान ।

आहुतम् । जिसका रूप में राग=दम्प=श्रेय नहीं है उस ऐसी मिथ्या-दृष्टि नहीं होती है कि तथ्यागत मरने के बाद रहते हैं ।

बद्धता । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान ।

आहुतम् । यही कारण है कि भगवान् ने हमें अध्याहृत बताया है ।

### § ६ सारिपुत्रकोष्ठित मुक्त ( ४० ६ )

#### अध्याहृत

आहुतम् । सारिपुत्र आहुतम्प्य महाकाष्ठित न बोधे आहुतम् । क्या कारण है कि भगवान् ने हमें अध्याहृत बताया है ?

#### ( क )

आहुतम् । रूप में सम्यक करत बाह्य रूप में रह रहने बाह्य रूप में प्रमुदित रहने वाले और जो रूप के विरोध को बधार्थता नहीं जानता—देवता है उसे ही वह मिथ्या दृष्टि होती है—तथ्यागत मरने के बाद रहता है ।

बद्धता । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान ।

आहुतम् । रूप में सम्यक नहीं करने वाले रूप में रह नहीं रहने वाले रूप में प्रमुदित नहीं रहने वाले और जो रूप के विरोध को बधार्थता जानता—देवता है उसे वह मिथ्या दृष्टि नहीं होती है—तथ्यागत मरने के बाद ।

बद्धता । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान ।

आहुतम् । यही कारण है कि भगवान् ने हमें अध्याहृत बताया है ।

## ( ख )

आहुस ! दूसरा भी कोई दृष्टि-कोण है जिससे भगवान् ने इन्से अव्याकृत बताया है ?  
है, आहुस !

आहुस ! भवमें रमण करने वाले, भव में रत रहने वाले, भव में प्रसुद्धित रहने वाले, और जो भव के निरोध को यथार्थत जानता-देखता है उन्से यह मिथ्या-दृष्टि नहीं होती है—तथागत मरने के बाद ।

आहुस ! भव में रमण नहीं करने वाले, भव में रत नहीं रहने वाले, भव में प्रसुद्धित नहीं रहने वाले, और जो भव के निरोध को यथार्थत जानता—देखता है उन्से यह मिथ्या-दृष्टि नहीं होती है—तथागत मरने के बाद ।

आहुस ! यह भी कारण है कि भगवान् ने इन्से अव्याकृत बताया है ।

## ( ग )

आहुस ! दूसरा भी कोई दृष्टि-कोण है जिससे भगवान् ने इन्से अव्याकृत बताया है ?  
है आहुस !

आहुस ! उपादान में रमण करने वाले को यह मिथ्या-दृष्टि होती है ।

उपादान में रमण नहीं करने वाले को यह मिथ्या-दृष्टि नहीं होती है ।

आहुस ! यह भी कारण है ।

## ( घ )

आहुस ! दूसरा भी कोई दृष्टि-कोण ?

है, आहुस !

आहुस ! नृणा में रमण करने वाले को यह मिथ्या-दृष्टि होती है ।

नृणा में रमण नहीं करने वाले को यह मिथ्या-दृष्टि नहीं होती है ।

आहुस ! यह भी कारण है ।

## ( ङ )

आहुस ! दूसरा भी कोई दृष्टि-कोण है जिससे भगवान् ने इन्से अव्याकृत बताया है ?

आहुस सारिपुत्र ! इसके आगे और क्या चाहते हैं ? आहुस ! नृणा के बन्धन से जो मुक्त हो चुका है उस भिक्षु को बताने के लिये कुछ नहीं रहता ।

## § ७. मोगलान सुत्त ( ४२ ७ )

## अव्याकृत

तब, धरताराव परिव्रानक जहाँ आयुमान् महामोगलान ये वहाँ गया, और कुशल क्षेम पूछ कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, चम्पगोत्र परिव्रानक आयुमान् महामोगलान में बोला, मोगलान ! क्या लोक शाश्वत है ?”

वास ! इसे भगवान् ने अर्घ्याकृत बताया है ।

सांग्रहान ! क्या कोऊ अर्घ्याकृत है ?

वास ! इसे भी भगवान् ने अर्घ्याकृत बताया है ।

मोमाकान ! क्या कोऊ सांग्रह है ?

वास ! इसे भी भगवान् ने अर्घ्याकृत बताया है ।

वल्ल ! इसे भी भगवान् ने अर्घ्याकृत बताया है ।

मोमाकान ! क्या जो जीव है वही शरीर है ?

वास ! अर्घ्याकृत

मोमाकान ! क्या जीव अन्य है वही शरीर अन्य ?

वास ! अर्घ्याकृत ।

मोमाकान ! क्या तत्वागत मरने के बाद रहते हैं ?

वास ! अर्घ्याकृत ।

मोमाकान ! क्या कारण है कि दूसरे मनुष्यके प्रतिक जन्म पड़े जाने पर ऐसा उत्तर देते हैं—  
कोऊ शाश्वत है या कोऊ अर्थाश्वत है वा तत्वागत मरने के बाद व रहते हैं वही व नहीं रहते हैं ?

सांग्रहान ! क्या कारण है कि अमज गीतम पूछे जाने पर ऐसा उत्तर नहीं देते हैं—कोऊ  
शाश्वत है या कोऊ अर्थाश्वत है ?

वास ! दूसरे मनुष्यके परिवाकक समझते हैं कि "जन्म मेरा है जन्म मैं हूँ" जन्म मेरा आत्मा है ।

श्रीमत् । प्राय । विद्वान् । काया ।

इसीप्रकारे दूसरे मनुष्यके परिवाकक पूछे जाने पर ऐसा उत्तर देते हैं—कोऊ शाश्वत है ।

वास ! भगवान् जहाँ पर सम्बन्ध-सम्बन्ध ऐसा नहीं समझते हैं कि "जन्म मेरा है । श्रीमत् ।

प्राय" । विद्वान् । काया ।

इसीप्रकारे कुछ पूछे जाने पर ऐसा उत्तर नहीं देते हैं—कोऊ शाश्वत है ।

तब वास्तविक परिवाकक वास्तव से ऊठ उठें भगवान् से वहाँ गया और वृत्त-शेम पूछ कर  
पूछ और बैठ गया ।

पूछ और बैठ वास्तविक परिवाकक भगवान् से वाक्य "गीतम ! क्या कोऊ शाश्वत है ?"

वास ! इसे मैंने अर्घ्याकृत बताया है ।

[ ऊपर जसा ही ]

गीतम ! आश्चर्य है अर्घ्याकृत है कि इस समीपवर्ती में कुछ और वाक्य के अर्थ और अर्थ  
विस्तृत हुए हैं मित्र गये ।

गीतम ! मैंने इसी अर्थ को अमज मोमाकान से वाक्य पूछा था । उनसे भी मुझे इन्हीं बातों में  
उत्तर दिया । आश्चर्य है ! अर्घ्याकृत है ॥

४८ वच्छ सुत ( ४२ ८ )

कोऊ शाश्वत नहीं

तब वास्तविक परिवाकक जहाँ भगवान् से वहाँ जाया और वृत्त-शेम पूछ कर पूछ और बैठ  
गया ।

ऊठ और बैठ वास्तविक परिवाकक भगवान् से वाक्य—“हे गीतम ! क्या कोऊ शाश्वत है ?  
गया । इसे मैंने अर्घ्याकृत बताया है ।



गौतम ! क्या कारण है कि दूसरे मत वाले परिवाजक पूछे जाने पर कहते हैं कि—लोक शाश्वत है, या लोक अशाश्वत है ?

वत्स ! दूसरे मत वाले परिवाजक रूप को आत्मा करके जानते हैं, या आत्मा को रूपवान्, या रूप में आत्मा । वेदना । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान । यही कारण है कि दूसरे मत वाले परिवाजक पूछे जाने पर कहते हैं कि लोक शाश्वत है, या लोक अशाश्वत है ।

वत्स ! बुद्ध रूप को आत्मा करके नहीं जानते हैं, या आत्मा को रूपवान्, या आत्मा में रूप, या रूप में आत्मा । वेदना । संज्ञा । संस्कार । विज्ञान । यही कारण है कि बुद्ध पूछे जाने पर नहीं कहते हैं कि—लोक शाश्वत है, या लोक अशाश्वत है ।

तब, वत्सगोत्र परिवाजक आसन से उठ, जहाँ आयुष्मान् महाभोगलान् थे वहाँ गया, और कुशल-क्षेम पूछ कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, वत्सगोत्र परिवाजक आयुष्मान् महाभोगलान् से बोला “भोगलान् ! क्या लोक शाश्वत है ?”

वत्स ! भगवान् ने इसे अन्याकृत प्रताया है ।

[ भगवान् के प्रश्नोत्तर के समान ही ]

भोगलान् ! आश्चर्य है, अद्भुत है कि इस वर्मोपदेश में बुद्ध और श्रावक के अर्थ और शब्द बिल्कुल दृढ़ मिल गये ।

भोगलान् ! मैंने इसी प्रश्न को श्रमण गौतम ने जा कर पूछा था । उनसे भी मुझे इन्हीं शब्दों में उत्तर दिया । आश्चर्य है ! अद्भुत है ॥

## § ९. कुतूहलसाला सुत्त ( ४२ ९ )

### तृष्णा-उपादान से पुनर्जन्म

तब, वत्सगोत्र परिवाजक जहाँ भगवान् थे वहाँ आया और कुशल-क्षेम पूछकर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, वत्सगोत्र परिवाजक भगवान् से बोला, “हे गौतम ! बहुत पहले की बात है कि एक समय कौतूहलसाला<sup>७</sup> में एकत्रित हो बैठे हुये नाना मतवाले श्रमण, ब्राह्मण और परिवाजकों के बीच यह बात चली—

यह पूर्ण काश्यप सधवाला, राणवाला, राणाचार्य, प्रसिद्ध, यशस्वी, तीर्थङ्कर, और बहुत लोगों में सम्मानित है । वे अपने श्रावकों के मर जाने पर बता देते हैं कि अमुक यहाँ उत्पन्न हुआ है, और अमुक यहाँ । जो उनका उत्तम पुरुष, परम-पुरुष, परम-प्राप्ति-प्राप्त श्रावक है वह भी श्रावकों के मर जाने पर बता देता है कि अमुक यहाँ उत्पन्न हुआ है और अमुक यहाँ ।

यह मङ्गल्लि गोसाल भी ।

यह निगण्ठ नातपुत्र भी ।

यह सङ्गय वेलङ्घिपुत्र भी ।

यह प्रकृद्ध कात्यायन भी ।

यह अजित केशकम्बल भी ।

<sup>७</sup> वह यह जहाँ नाना मतवाले सभी एकत्र होकर धर्म चर्चा करते हैं और जिसे सब लोग कौतूहल-पूर्वक सुनते हैं ।

पह धमण गातम भी संपबाला अमुक पर्वो उत्पन्न हुआ ई भार अमुक पर्वो। और पकि पह भी पता देता है—तूणा को फाट डरका, कम्पन का ग्लोब दिवा, मान की अरुणी तरह जान बुग्न का अन्त कर दिया।

गीतम ! तब मुझे संका=विचित्रिग्या उत्पन्न हुई—धमण गीतम क चर्म का कंमे जानूँ।

बास ! डीक दे। मुझ बांका होना न्यामाविक ही था। मैं उसी की उत्पत्ति के विषय में बतलाता हूँ जो अभी उत्पादान से मुक्त है वा उत्पादान से मुक्त हो गया है उसकी उत्पत्ति क विषय में नहीं।

बास ! जैसे उत्पादान के रहने से ही अग अमती है उत्पादान के नहीं रहने म नहीं। बास ! बस ही मैं उसी की उत्पत्ति के विषय में बतलाता हूँ जो अभी उत्पादान म मुक्त है जो उत्पादान से मुक्त हो गया इ उसकी उत्पत्ति के विषय में नहीं।

हे गीतम ! त्रिम समय भाग की लपट उड़ कर दूर चली जाती है उस समय उसरा उत्पादान क्या बताते हैं ?

बास ! त्रिम समय भाग की लपट उड़ कर दूर चली जाती है, उस समय उसरा उत्पादान क्या ही है।

हे गीतम ! हम शरीर का छोड़ दूसरे शरीर पाने के बीच में मय क क्या उत्पादान होता है।

बास ! हम शरीर का छोड़ दूसरे शरीर पाने के बीच में मय का उत्पादान तूणा रहता है।

### § १० आनन्द मुच ( ४२ १० )

#### भक्तिता और नास्तितता

एक भार बड परस्पात्र परिभाजक भगवात् से बोला 'ह गीतम ! क्या भक्तिता' द ?'

पह पूछने पर भगवात् चुप रहे।

हे गीतम ! क्या 'नास्तितता' है ?

पह भी पूछने पर भगवात् चुप रहे।

तब परस्पात्र परिभाजक आपन से उठकर चला गया।

तब परस्पात्र परिभाजक के चले जाने के बाद ही आपुन्मात् आनन्द भगवात् से उनके "मन्त ! बलसगोत्र परिभाजक से पूछे जाने पर भगवात् क क्या उत्तर नहीं दिया ?

आनन्द ! यदि मैं बलसगोत्र परिभाजक म स्मरिता है" कह देता तो वह प्राइयतवाद का सिद्धान्त हो जाता। और यदि मैं बलसगोत्र स 'नास्तितता है" कह देता तो वह उच्छ्रयवाद का सिद्धान्त हो जाता।

आनन्द ! यदि मैं बलसगोत्र परिभाजक से भक्तिता है कह देता तो क्या वह लोग को 'समी बर्न अनारम है' हमके ज्ञान देने में अनुत्तर होता ?

नहीं मन्ते !

आनन्द ! यदि मैं बलसगोत्र को 'नास्तितता है कह देता तो उस मुड़ का मोह और भी क क्याता—मुझे पहले आरमा अथवा का जो इस समय नहीं है।

### § ११ समिय मुच ( ४२ ११ )

#### अप्याहृत

एक समय आपुन्मात् समिय कार्यालय व्याप्तिका क शिक्षाकामन्ध में निहार करते थे।

तब परस्पात्र परिभाजक वहाँ आपुन्मात् समिय कार्यालय में वहाँ आया और कुलक-लेम पूछ कर एक ओर बैठ गया।

# पाँचवाँ खण्ड

महावर्ग

# पाँचवाँ खण्ड

महावर्ग

# पहला परिच्छेद

## ४३. मार्ग-संयुक्त

### पहला भाग

#### अविद्या-वर्ग

### § १. अविज्ञा सुक्त ( ४३. १ १ )

#### अविद्या पापों का मूल

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय, भगवान् ध्यावस्ती में अनाथपिण्डिक के आराम जेतवन में विहार करते थे ।

वहाँ, भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, "भिक्षुओं !"

"भद्रन्त !" कह कर उन भिक्षुओं ने भगवान् को उत्तर दिया ।

भगवान् बोले, "भिक्षुओ ! अविद्या के ही पहले होने से अकृदाल (=पाप) धर्मों की उत्पत्ति होती है, तथा ( बुरे कर्मों के करने में ) निर्लज्जता (=अही) और निर्भयता (=अपत्रपा) भी होती हैं । भिक्षुओ ! अविद्या में पड़े हुये अज्ञ पुरुष को मिथ्या-दृष्टि उत्पन्न होती है । मिथ्या-दृष्टिवाले को मिथ्या-संकल्प उत्पन्न होता है । मिथ्या-संकल्पवाले की मिथ्या-वाचा होती है । मिथ्या-वाचावाले का मिथ्या-कर्मान्त होता है । मिथ्या-कर्मान्तवाले का मिथ्या-आजीव होता है । मिथ्या-आजीववाले का मिथ्या-व्यायाम होता है । मिथ्या-व्यायामवाले की मिथ्या-स्मृति होती है । मिथ्या-स्मृतिवाले की मिथ्या-समाधि होती है ।

भिक्षुओ ! विद्या के ही पहले होने से कृदाल (=पुण्य) धर्मों की उत्पत्ति होती है, तथा ( बुरे कर्मों के करने में ) लज्जा (=ही) और भय (=अपत्रपा) भी होते हैं । भिक्षुओ ! विद्या-प्राप्त ज्ञानी पुरुष को सम्यक्-दृष्टि उत्पन्न होती है । सम्यक्-दृष्टिवाले को सम्यक्-संकल्प उत्पन्न होता है । सम्यक्-संकल्पवाले की सम्यक्-वाचा होती है । सम्यक्-वाचावाले का सम्यक्-कर्मान्त होता है । सम्यक्-कर्मान्तवाले का सम्यक्-आजीव होता है । सम्यक्-आजीववाले का सम्यक्-व्यायाम होता है । सम्यक्-व्यायामवाले की सम्यक्-स्मृति होती है । सम्यक्-स्मृतिवाले की सम्यक्-समाधि होती है ।

### § २ उपड्डु सुक्त ( ४३ १ २ )

#### कल्याणमित्र से ब्रह्मचर्य की सफलता

एक समय, भगवान् शाक्य ( जनपद ) में सक्रर नामक दाक्या के कस्बे में विहार करते थे ।

तब, आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे वहाँ आये, और भगवान् का अभिवादन कर एक ओर बैठ गये ।

एक ओर बैठ, आयुष्मान् आनन्द भगवान् ने बोले—भन्ते ! कल्याणमित्र का मिलना मानो ब्रह्मचर्य आपा सफल हो जाता है ।

आनन्द ! ऐसी बात मत कहो, ऐसी बात मत कहो ! आनन्द ! कल्याणमित्र का मिलना तो

ब्रह्मचर्य विस्तृत ही सफल हो जाना है। जानम् ! ऐसा विश्वास करना चाहिये कि कल्याणमित्रवाला मित्रु धार्मिक-व्यंगिक मार्ग का चिन्तन और अभ्यास करेगा।

जानम् ! कल्याणमित्रवाला मित्रु धार्मिक-व्यंगिक मार्ग का कैसे अभ्यास करता है ? जानम् ! मित्रु विवेक विराग और निरोध की ओर से जानेवाली सम्बन्ध-रहि का चिन्तन और अभ्यास करता है जिससे मुक्ति सिद्ध होती है। सम्बन्ध-संक्षय का। सम्बन्ध-नाश का। सम्बन्ध-कर्मण्य का। सम्बन्ध-आजीव का। सम्बन्ध-व्यापाम का। सम्बन्ध-स्मृति का। सम्बन्ध-समाधि का। जानम् ! ऐसे ही कल्याणमित्रवाला मित्रु धार्मिक-व्यंगिक मार्ग का अभ्यास करता है।

जानम् ! इस तरह भी जानना चाहिये कि कल्याणमित्र का मित्रता तो ब्रह्मचर्य विस्तृत ही सफल हो जाना है। जानम् ! मुझ कल्याण मित्र के पास था जन्म लेनेवाले प्राणी जन्म से मुक्त हो जाते हैं मृत होनेवाले प्राणी मृत्यु से मुक्त हो जाते हैं मरनेवाले प्राणी मृत्यु से मुक्त हो जाते हैं शोकवि में पड़े प्राणी शोकवि से मुक्त हो जाते हैं।

जानम् ! इस तरह भी जानना चाहिये कि कल्याणमित्र का मित्रता तो ब्रह्मचर्य विस्तृत ही सफल हो जाना है।

### § ३ सारियुक्त सुप्त ( ४३ १ ३ )

कल्याणमित्र से ब्रह्मचर्य की स्फुटता

भावस्ती जेतवण ।

एक और बड़े आनुष्मान् सारियुक्त भगवान् से बोले "भन्ते ! कल्याणमित्र का मित्रता तो ब्रह्मचर्य विस्तृत ही सफल हो जाना है।

सारियुक्त ! ठीक है ठीक है ! सारियुक्त ! कल्याणमित्र का मित्रता तो ब्रह्मचर्य विस्तृत ही सफल हो जाना है। [ ऊपरवाले सूत्र के समान ही ]।

सारियुक्त ! इस तरह भी जानना चाहिये कि कल्याणमित्र का मित्रता तो ब्रह्मचर्य विस्तृत ही सफल हो जाना है।

### § ४ अन्न सुप्त ( ४३ १ ४ )

अन्न-पान

भावस्ती जेतवण ।

एक आनुष्मान् जानम् पूर्वाह्न समय पहल और पात्र-बीबर के भावस्ती में मिच्छारत के किये देते।

आनुष्मान् जानम् ने जानुओपी मासक को विस्तृत उजकी पोती उते हृद रथ वर भावस्ती में निरुपते देता। उजकी बोधिनी सुती हुई भी सभी सात्र उजके से रथ उजका या अणाम उजके से आनुक उजकी ही छाटा उजका या बीरवा उजका का कपड़े उजके से जूते उजके से और उजके उजके बीबर भी उजक रहे थे।

उते देनकर भय बह रहे थे "बह रथ कितना सुन्दर है मानो ब्रह्म-पान ही उतर आया हो।"

एक मिच्छारत से लौट भीजन कर लेने के बाद आनुष्मान् जानम् जहाँ भयवात् से बहो जाते और भयवात् को अधिवादन कर दूक और बँट गये। एक और बँट आनुष्मान् जानम् भय वात् ग बोले "भन्ते ! मैं पूर्वाह्न समय पहल और पात्र-बीबर के भावस्ती में मिच्छारत के किये देता। भन्ते ! मैं जानुओपी मासक का विच्छारत देता।

भन्ते ! उते देन वर भोग बह रहे थे "बह रथ कितना सुन्दर है मानो ब्रह्म-पान ही उतर आया हो।"

भन्ते । क्या हम धर्म-विनय में ब्रह्म-यान का निर्देश किया जा सकता है ?

भगवान् गोलें, “हाँ आनन्द ! किया जा सकता है । आनन्द ! इसी आर्य-अष्टांगिक मार्ग को ब्रह्म-यान काते हैं, धर्म-यान भी, और अनुत्तर संग्रामविजय भी ।

“आनन्द ! सम्यक्-दृष्टि के चिन्तन और अभ्यास से राग का अन्त हो जाता है, द्वेष का अन्त हो जाता है, मोह का अन्त हो जाता है । सम्यक्-संज्ञाप के चिन्तन और अभ्यास से । सम्यक्-वाचा के । सम्यक्-कामान्त के । सम्यक्-आर्जव के । सम्यक्-उदायम के । सम्यक्-स्मृति के । सम्यक्-समाधि के चिन्तन और अभ्यास से राग का अन्त हो जाता है, द्वेष का अन्त हो जाता है, मोह का अन्त हो जाता है ।

“आनन्द ! इस तरह भी समझना चाहिये कि इसी आर्य-अष्टांगिक मार्गकी ब्रह्म-यान काते हैं, धर्म-यान भी, और अनुत्तर संग्रामविजय भी ।”

भगवान् ने यह कहा, यह कहकर बुद्ध फिर भी गोलें—

जिमकी धृरी में धन्दा, प्रजा और धर्म मदा जुते रहते हैं,  
 दो ईश, मत्त लगाम, और स्मृति साधन सारथी हैं ॥१॥  
 द्वाँल के साजगाला रथ, ध्यान अक्ष, वीर्य चक्र,  
 उपेक्षा समाधि रूी, अभिन्य-बुद्धि उपवन ॥२॥  
 अद्यापाद, अहिंसा, और विवेक जिमके आयुध हैं,  
 तितिक्षा सन्नद्ध धर्म हैं, जो रक्षा के निमित्त लना हैं ॥३॥  
 हम ब्रह्म यान को अपनानर,  
 धीर पुन्य हम सवार से निकल जाते हैं,  
 यह उनकी परम विजय है ॥४॥

### § ५ किमतिथि सुत्त ( ४३ १ ५ )

#### दु ख की पहचान का मार्ग

श्रावस्ती जेतवन ।

तब, कुछ भिक्षु जहाँ भगवान् ने वहाँ धार्ये । पुरु और वेद, वे भिक्षु भगवान् से बोले, “भन्ते ! दूसरे मत वाले साधु हमसे पूछा करते हैं—आलुम् । श्रमण शौतम के शासन में किमलिये ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता है ? भन्ते ! उनके हम प्रश्न का उत्तर हम लोग इस प्रकार देते हैं—आलुम् । दु ख की पहचान ( =परिज्ञा ) के लिये श्रमण शौतम के शासन में ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता है ।

“भन्ते ! हम प्रकार उत्तर देकर हम भगवान् के अनुकूल तो कहते हैं न भगवान् पर कुछ झूठी बात तो नहीं बोपते हैं ?”

भिक्षुओ ! इस प्रकार उत्तर देकर तुम मेरे अनुकूल ही कहते हो भुम पर कोई झूठी बात नहीं बोपते हो । भिक्षुओ ! दु ख की पहचान के लिये ही मेरे शासन में ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता है ।

भिक्षुओ ! यदि तुमसे दूसरे मत वाले साधु पूछें, “आलुम् ! दु ख की पहचान के लिये क्या मार्ग है ?” तो तुम कहना, “हाँ आलुम् ! दु ख की पहचान के लिये मार्ग है ।”

भिक्षुओ ! इस दु ख की पहचान के लिये कौन सा मार्ग है ? यही आर्य अष्टांगिक मार्ग । जो, सम्यक्-दृष्टि सम्यक् समाधि । भिक्षुओ ! हम दु ख की पहचान के लिये यही मार्ग हैं ।

भिक्षुओ ! दूसरे मत के साधु के प्रश्न का उत्तर तुम इसी प्रकार देना ।

### § ६ षष्ठम भिक्खु सुत्त ( ४३ १ ६ ) ब्रह्मचर्य क्या है ?

भावस्ती जेतवन ।

तब कोई भिक्खु भगवान् से बोला "भन्ते ! क्या ब्रह्मचर्य ब्रह्मचर्य" कहा करते हैं । भन्ते ! ब्रह्मचर्य क्या है और क्या है ब्रह्मचर्य का अन्तिम उद्देश्य ?

भिक्खु ! वह आर्य अष्टांगिक मार्ग ही ब्रह्मचर्य है । जो सम्पक्-दृष्टि सम्पक् समाधि ।

भिक्खु ! जो राग-क्षय द्वेष-क्षय भीर मोह-क्षय है वही है ब्रह्मचर्य का अन्तिम उद्देश्य ।

### § ७ दुसिय भिक्खु सुत्त ( ४३ १ ७ ) अमृत क्या है ?

भावस्ती जेतवन ।

तब कोई भिक्खु भगवान् से बोला "भन्ते ! लोग राग द्वेष भीर मोह का वृक्षाना कहते हैं । भन्ते ! राग द्वेष भीर मोह के वृक्षाने का क्या अन्तिमप्राय है ?

भिक्खु ! राग द्वेष भीर मोह के वृक्षाने से निर्वाण का अन्तिमप्राय है । इसी से वह जानकों का क्षय कहा जाता है ।

वह कहने पर वह भिक्खु भगवान् से बोला "भन्ते ! लोग अमृत अमृत क्या करते हैं । भन्ते ! अमृत क्या है और अमृत-नामी मार्ग क्या है ?

भिक्खु ! राग द्वेष भीर मोह का वृक्षाना वही अमृत है । भिक्खु ! वही आर्य अष्टांगिक मार्ग अमृत-नामी मार्ग है । जो सम्पक् दृष्टि सम्पक् समाधि ।

### § ८ तिसरु सुत्त ( ४३ १ ८ ) आर्य अष्टांगिक मार्ग

भावस्ती जेतवन ।

भिक्खुओ ! आर्य अष्टांगिक मार्ग का विभाग कर उपवेश करूँगा । उसे सुनो ।

भगवान् बोले "भिक्खुओ ! आर्य अष्टांगिक मार्ग क्या है ? वही जो सम्पक्-दृष्टि सम्पक् समाधि ।

"भिक्खुओ ! सम्पक्-दृष्टि क्या है ? भिक्खुओ ! बुद्ध का ज्ञान दुःख के समुत्पन्न का शाव दुःख के विरोध का ज्ञान दुःख के विरोध-नामी मार्ग का ज्ञान वही सम्पक्-दृष्टि कही जाती है ।

"भिक्खुओ ! सम्पक्-संन्यस्य क्या है ? भिक्खुओ ! जो त्याग का संन्यस्य तथा धैर्य और हिंसा से अक्षय रहने का संन्यस्य है वही सम्पक्-संन्यस्य कहा जाता है ।

"भिक्खुओ ! सम्पक्-वाचा क्या है ? भिक्खुओ ! जो शून्य, सुगामी कट्ट माल्य और गण हर्षने से विरत रहना है वही सम्पक्-वाचा कही जाती है ।

"भिक्खुओ ! सम्पक्-कम्मन्त क्या है ? भिक्खुओ ! जो धीर-हिंसा धीरी और अग्रहणकर्त्त से विरत रहना है वही सम्पक् कम्मन्त कहा जाता है ।

"भिक्खुओ ! सम्पक्-आजीव क्या है ? भिक्खुओ ! आर्य भाषक भिक्षु आजीव की कोई सम्पक् आजीव न अपनी जीविका चलाता है । भिक्खुओ ! इसी को सम्पक् आजीव कहते हैं ।

"भिक्खुओ ! सम्पक्-व्यापाम क्या है ? भिक्खुओ ! भिक्खु अनुत्पन्न पापमत्त अनुत्पन्न धर्मों के अनुत्पन्न के लिये ( = जिनमें के उत्पन्न न हो सकें ) इच्छा करता है आशिश करता है उत्साह करता है प्रयत्न करता है । उत्पन्न पापमत्त अनुत्पन्न धर्मों के प्रहास के लिये । अनुत्पन्न सुगत धर्मों के उत्पन्न के



लिये । उत्पन्न कुशल धर्मों की स्थिति, वृद्धि तथा पूर्णता के लिये । भिक्षुओ ! इसी को कहते हैं सम्यक्-व्यायाम ।

“भिक्षुओ ! सम्यक्-स्मृति क्या है ? भिक्षुओ ! भिक्षु काया में कायानुपश्यी होकर विहार करता है, क्लेशों को तपाते हुए, मगज, स्मृतिमान् हो, तससर के लोभ और रीमनस्य को दयाकर । वेदना में वेदानुपश्यी होकर । चित्त में चित्तानुपश्यी होकर... । धर्मों में धर्मानुपश्यी होकर । भिक्षुओ ! इसीको कहते हैं ‘सम्यक्-स्मृति’ ।

“भिक्षुओ ! भिक्षु प्रथम ध्यान को प्राप्त होकर विहार करता है । द्वितीय ध्यान को । चतुर्थ ध्यान को । भिक्षुओ ! इसीको कहते हैं ‘सम्यक्-समाधि’ ।”

### § ९. सुक सुत्त ( ४३ १. ९ ) .

ठीक धारणा से ही निर्वाण-प्राप्ति

प्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! जैसे, ठीक से न रखा गया धान या जौ का नोक हाथ या पैर से कुचलनेसे गड़ जायगा और लहू निकाल देगा, यह सम्भव नहीं । सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि नोक ठीक से नहीं रखा गया है ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, भिक्षु तुरी धारणा को ले मार्ग का तुरी तरह अभ्यास कर अविद्या को काट विद्या उत्पन्न कर लेगा, तथा निर्वाण का साक्षात्कार कर पायगा, ऐसा बात नहीं है । सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि उसकी धारणा तुरी है ।

भिक्षुओ ! जैसे ठीक से रखा गया धान या जौ का नोक हाथ या पैर से कुचलने में गड़ जायगा और लहू निकाल देगा, यह सम्भव है । सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि नोक ठीक से रखा गया है ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, भिक्षु अच्छी धारणा को ले मार्ग का अच्छी तरह अभ्यास कर अविद्या को काट विद्या उत्पन्न कर लेगा, तथा निर्वाण का साक्षात्कार कर पायगा, ऐसा सम्भव है । सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि उसकी धारणा अच्छी है ।

भिक्षुओ ! अच्छी धारणा से युक्त हो, मार्ग का अच्छी तरह अभ्यास कर भिक्षु अविद्या को काट, विद्या उत्पन्न कर, निर्वाण का कैसे साक्षात्कार कर लेता है ?

भिक्षुओ ! भिक्षु सम्यक् दृष्टि का चिन्तन करता है जिमसे मुक्ति सिद्ध होती है । सम्यक् समाधि का ।

भिक्षुओ ! इसी प्रकार, अच्छी धारणा से युक्त हो, मार्ग का अच्छी तरह अभ्यास कर भिक्षु अविद्या को काट, विद्या उत्पन्न कर, निर्वाण का साक्षात्कार कर लेता है ।

### § १०. नन्दिय सुत्त ( ४३. १ १० )

निर्वाण-प्राप्ति के आठ धर्म

प्रावस्ती जेतवन ।

तव, नन्दिय परित्राजक जहाँ भगवान् वे वहाँ अत्या और कुशल-श्रेम पूछकर एक ओर बैठ गया । एक ओर बैठ, नन्दिय परित्राजक भगवान् से बोला, “हे गौतम ! वे धर्म कितने हैं जिनके चिन्तन और अभ्यास करने से निर्वाण की प्राप्ति हो सकती है ?”

नन्दिय । वे धर्म आठ हैं जिनके चिन्तन और अभ्यास करने से निर्वाण की प्राप्ति हो सकती है । जो, यह सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि ।

यह कहने पर, नन्दिय परित्राजक भगवान् से थाली, “हे गौतम ! आश्चर्य है, अद्भुत है ॥ मुझे उपासक स्वीकार करें ॥”

अविद्या वर्ग समाप्त

## दूसरा भाग

### विहार घर्ग

#### § १ पठम विहार सुच ( ४३ ० १ )

##### पुद्ग का एकान्तवास

भाषसी जेतयम ।

मिधुभो ! मैं आठ महीने एकान्तवास कर आरम-विस्तम करना चाहता हूँ । एक मिहारा के जाने बाके का छोड़ मरे पास कोई जाने न पावे ।

“मन्ते ! बहुत अच्छा” कह मगवान् को उत्तर दे वे मिधु मिहारा के जाने बाके को छोड़ मगवान् के पास नहीं जाने लगे ।

तब आठ महीने बीतने के बाद एकान्तवास छोड़ मगवान् ने मिधुभा को आमन्त्रित किया “मिधुभो ! मैं उसी स्थान में विहार कर रहा था जिसे बुद्धत्व काम करने के बाद पहले पहल कनाया था मैं देखता हूँ—मिष्या-दृष्टि के प्रत्यय से भी वेदना होती है । सम्यक्-दृष्टि के प्रत्यय से भी वेदना होती है । मिष्या-समाधि के प्रत्यय से भी वेदना होती है । सम्यक्-समाधि के प्रत्यय से भी वेदना होती है । संज्ञा के प्रत्यय से भी वेदना होती है ।

‘इच्छा वितर्क और संज्ञा के अज्ञान रहने के प्रत्यय से भी वेदना होती है । इच्छा के ज्ञान रहने तथा वितर्क और संज्ञा के अज्ञान रहने के प्रत्यय से भी वेदना होती है । इच्छा तथा वितर्क के ज्ञान रहने और संज्ञा के अज्ञान रहने के प्रत्यय से भी वेदना होती है । इच्छा वितर्क और संज्ञा के ज्ञान रहने के प्रत्यय से भी वेदना होती है ।

अर्हत्-रूप की प्राप्ति के किये की प्रयास ही उसके करने के भी प्रत्यय से वेदना होती है ।

#### § २ दुविय विहार सुच ( ४३ २ २ )

##### पुद्ग का एकान्तवास

तब तीन महीने बीतने के बाद एकान्त-वास को छोड़ मगवान् ने मिधुभो को आमन्त्रित किया “मिधुभो ! मैं उसी स्थान में विहार कर रहा था जिसे बुद्धत्व-काम करने के बाद पहले पहल कनाया था ।

मैं देखता हूँ—मिष्या-दृष्टि के प्रत्यय से वेदना होती है । मिष्या-दृष्टि के ज्ञान हो जाने के प्रत्यय से वेदना होती है । सम्यक्-दृष्टि के । सम्यक्-दृष्टि के ज्ञान हो जाने के । । मिष्या-समाधि के । मिष्या-समाधि के ज्ञान हो जाने के । सम्यक्-समाधि के । सम्यक्-समाधि के ज्ञान हो जाने के । इच्छा के । इच्छा के ज्ञान हो जाने के । वितर्क के । वितर्क के ज्ञान हो जाने के । संज्ञा के । संज्ञा के ज्ञान हो जाने के ।”

इच्छा वितर्क और संज्ञा के अज्ञान होने के प्रत्यय से वेदना होती है । इच्छा के ज्ञान हो जाने वितर्क और संज्ञा के अज्ञान होने के प्रत्यय से वेदना होती है । इच्छा और वितर्क के

प्रान्त हो जाने, किन्तु सजा के अदान्त होने के प्रत्यय से घटना जाता है। इच्छा, वितर्क और सजा सभी के प्रान्त हो जाने के प्रत्यय से घटना होती है।

अहङ्ग-फल की प्राप्ति के लिये जो प्रयास है, उसके करने के भी प्रत्यय से घटना होती है।

### § ३. सैरा सुत्त ( ४३ २ ३ )

दौक्ष्य

तब, कोई भिक्षु भगवान् से बोला, "भन्ते ! लोग 'दौक्ष्य, प्रौक्ष्य' कहा करते हैं। भन्ते ! कोई दौक्ष्य (अजितनी अभी परमपद सीगना पायी है) कैसे होता है ?

भिक्षु ! जो दौक्ष्य के अनुकूल सम्यक्-दृष्टि से युक्त होता है - सम्यक्-समाधि से युक्त होता है। भिक्षु ! इसी तरह, कोई प्रौक्ष्य होता है।

### § ४ पथम उप्पाद सुत्त ( ४३ २ ४ )

बुद्धोत्पत्ति के बिना सम्भव नहीं

आवस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! अहाँ सम्यक्-सम्बुद्ध भगवान् की उत्पत्ति के बिना इन पहले कभी नहीं होने वाले आठ धर्मों के चिन्तन और अभ्यास नहीं होते हैं। किन आठ धर्मों के ? जो, सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि।

भिक्षुओ ! अहाँ सम्यक्-सम्बुद्ध भगवान् की उत्पत्ति के बिना इन्हीं आठ धर्मों के चिन्तन और अभ्यास नहीं होते हैं।

### § ५. द्वितीय उप्पाद सुत्त ( ४३ २ ५ )

बुद्ध-विनय के बिना सम्भव नहीं

आवस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! बुद्ध के विनय के बिना इन पहले कभी नहीं होने वाले आठ धर्मों के चिन्तन और अभ्यास नहीं होते हैं। किन आठ धर्मों के ? जो, सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि।

भिक्षुओ ! बुद्ध के विनय के बिना इन्हीं आठ धर्मों के चिन्तन और अभ्यास नहीं होते हैं।

### § ६. पथम परिसुद्ध सुत्त ( ४३ २ ६ )

बुद्धोत्पत्ति के बिना सम्भव नहीं

आवस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! अहाँ सम्यक्-सम्बुद्ध भगवान् की उत्पत्ति के बिना यह आठ पहले कभी नहीं होने वाले परिसुद्ध, उज्ज्वल, निष्पाप, तथा क्लेश-रहित धर्म नहीं होते हैं। सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि।

### § ७. द्वितीय परिसुद्ध सुत्त ( ४३ २, ७ )

बुद्ध-विनय के बिना सम्भव नहीं

आवस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! बुद्ध के विनय के बिना यह आठ क्लेश-रहित धर्म नहीं होते हैं। सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि।

## § ८ पठम कुम्भकाराम मुक्त ( ४३ ० ८ )

महाशय क्या है ?

एक समय भायुप्मान् भानन्द भार भायुप्मान् भद्र पान्मिपुत्र में कुम्भकाराम में विहार करत थे ।

तब म पुप्मान् भद्र मन्वा समय प्पान म उठ वहाँ भायुप्मान् भानन्द म वहाँ भायु हीर कुमाल-क्षम पूजकर एक जीर पैठ गय ।

एक और वीठ म पुप्मान् भद्र भायुप्मान् भानन्द स थोळ भायुम । जोग 'जमहाचर्यं जमहाचर्यं' कहा करते हैं । भायुम । जमहाचर्य क्या है ?

भायुम भद्र । ठीक है आपका प्रश्न कहा भयडा है आपको यह सूचना क्या भयडा है आपका यह पूछना कहा भयडा है ।

भायुम भद्र । आप पही म पूछत हैं भायुम । जमहाचर्य क्या है ?

हैं भायुम ।

भायुम । पही अद्वैतिक मिथ्या-मार्गं जमहाचर्यं है । जो मिथ्या दृष्टि मिथ्या-समाधि ।

## § ९ दुतिय कुम्भकाराम मुक्त ( ४३ २ ९ )

महाचर्य क्या है ?

भायुम भानन्द । जोग 'महाचर्यं महाचर्यं' कहा करते हैं । भायुम । महाचर्य क्या है और क्या है महाचर्य का अन्तिम उद्देश्य ?

भायुम भद्र । ठीक है ।

भायुम । पही आर्य अद्वैतिक मार्गं महाचर्यं है । जो मय्यद्-दृष्टि 'सम्पन्न-समाधि' ।

भायुम । जो राग-द्वेष-ह्य-द्वेष और मोह-अहं है पही महाचर्य का अन्तिम उद्देश्य है ?

## § १० ततिय कुम्भकाराम मुक्त ( ४३ २ १० )

महाचर्यी कौन है ?

भायुम । महाचर्य क्या है ? महाचर्यी कौन है ? महाचर्य का अन्तिम उद्देश्य क्या है ?

भायुम भद्र । ठीक है ।

भायुम । पही आर्य अद्वैतिक मार्गं महाचर्यं है ।

भायुम । जो ह्य आर्य अद्वैतिक मार्गं पर चकता है वह महाचर्यी कहा जाता है ।

भायुम । जो राग-द्वेष-ह्य-द्वेष और मोह-अहं है पही महाचर्य का अन्तिम उद्देश्य है ।

ह्य तीन सूत्रा का विनाश एक ही है ।

विहार वर्ग समाप्त

## तीसरा भाग

### मिथ्यात्व वर्ग

§ १. मिच्छत्त सुत्त ( ४३ ३ १ )

#### मिथ्यात्व

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! मिथ्या-स्वभाव और सम्यक्-स्वभाव का उपदेश करूँगा । उम्मे सुनो ।

भिक्षुओ ! मिथ्या-स्वभाव क्या है ? जो, मिथ्या-दृष्टि मिथ्या-समाधि । भिक्षुओ ! इन्हीं को मिथ्या-स्वभाव कहते हैं ।

भिक्षुओ ! सम्यक्-स्वभाव क्या है ? जो, सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि । भिक्षुओ ! इन्हीं को सम्यक्-स्वभाव कहते हैं ।

§ २. अकुसल सुत्त ( ४३ ३ २ )

#### अकुशल धर्म

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! कुशल और अकुशल धर्मों का उपदेश करूँगा । उम्मे सुनो ।

भिक्षुओ ! अकुशल धर्म क्या है ? जो मिथ्या-दृष्टि ।

भिक्षुओ ! कुशल धर्म क्या है ? जो सम्यक्-दृष्टि ।

§ ३. पठम पटिपदा सुत्त ( ४३ ३ ३ )

#### मिथ्या-मार्ग

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! मिथ्या-मार्ग और सम्यक्-मार्ग का उपदेश करूँगा । उम्मे सुनो ।

भिक्षुओ ! मिथ्या-मार्ग क्या है ? जो मिथ्या-दृष्टि ।

भिक्षुओ ! सम्यक्-मार्ग क्या है ? जो, सम्यक्-दृष्टि ।

§ ४. दुत्तिय पटिपदा सुत्त ( ४३ ३ ४ )

#### सम्यक्-मार्ग

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! मैं गृहस्थ या प्रव्रजित के मिथ्या-मार्ग को अच्छा नहीं बताता ।

भिक्षुओ ! मिथ्या-मार्ग पर आरुढ़ अपने मिथ्या-मार्ग के कारण ज्ञान और कुशल धर्मों का लाभ नहीं कर सकता । भिक्षुओ ! मिथ्या-मार्ग क्या है ? जो, मिथ्या-दृष्टि मिथ्या-समाधि । भिक्षुओ ! इसी को मिथ्या-मार्ग कहते हैं । भिक्षुओ ! मैं गृहस्थ या प्रव्रजित के मिथ्या-मार्ग को अच्छा नहीं बताता ।

मिथुनो ! गृहस्थ या प्रव्रजित मिथ्या-मार्ग पर आरुढ़ हो ज्ञान और कुसक धर्मों का काम नहीं कर सकता ।

मिथुनो ! मैं गृहस्थ या प्रव्रजित के सम्यक्-मार्ग को अच्छा बताता हूँ ।

मिथुनो ! सम्यक्-मार्ग पर आरुढ़ अपने सम्यक्-मार्ग के कारण ज्ञान और कुसक धर्मों का काम कर लेता है । मिथुनो ! सम्यक्-मार्ग क्या है ! जो सम्यक्-दृष्टि । मिथुनो ! ज्ञानी को सम्यक्-मार्ग कहते हैं । मिथुनो ! मैं गृहस्थ या प्रव्रजित के सम्यक् मार्ग को अच्छा बताता हूँ ।

मिथुनो ! गृहस्थ या प्रव्रजित सम्यक्-मार्ग आरुढ़ हो ज्ञान और कुसक धर्मों का काम कर लेता है ।

### § ५ पथम सप्पुरिस सुत्त ( ४३ ३ ५ )

#### सत्पुरुष और असत्पुरुष

भावस्ती जेतवम ।

मिथुनो ! असत्पुरुष और सत्पुरुष का उपदेश करूँगा । उसे सुना ।

मिथुनो ! असत्पुरुष कान है ? मिथुनो ! कोई मिथ्या-दृष्टि बाध होता है मिथ्या-समाधि बाधा होता है । मिथुनो ! बुरी असत्पुरुष कहा जाता है ।

मिथुनो ! सत्पुरुष कौन है ? मिथुनो ! कोई सम्यक्-दृष्टि बाधा होता है सम्यक्-समाधि बाधा होता है । मिथुनो ! बुरी सत्पुरुष कहा जाता है ।

### § ६ दुतिय सप्पुरिस सुत्त ( ४३ ३ ६ )

#### सत्पुरुष और असत्पुरुष

भावस्ती जेतवम ।

मिथुनो ! असत्पुरुष और महात्मसत्पुरुष का उपदेश करूँगा । सत्पुरुष और महासत्पुरुष का उपदेश करूँगा । उसे सुना ।

मिथुनो ! असत्पुरुष कौन है ? [ ऊपर जैसा ही ]

मिथुनो ! महात्मसत्पुरुष कौन है ? मिथुनो ! कोई मिथ्या-दृष्टि बाध होता है मिथ्या-समाधि बाधा होता है । मिथ्या ज्ञान और विमुक्ति बाधा होता है । मिथुनो ! बुरी महात्मसत्पुरुष कहा जाता है ।

मिथुनो ! महासत्पुरुष कौन है ? मिथुनो ! कोई सम्यक्-दृष्टि बाधा होता है सम्यक्-समाधि बाधा होता है सम्यक् ज्ञान और विमुक्ति बाधा होता है । मिथुनो ! बुरी महासत्पुरुष कहा जाता है ।

### § ७ कुम्म सुत्त ( ४३ ३ ७ )

#### विच का आचार

भावस्ती जेतवम ।

मिथुनो ! विदे यदा विना आचार का हानि से आत्मावी स सुखता विदा जा सकता है किन्तु कुछ आचार के हानि से आत्मावी से सुखता नहीं जाता ।

मिथुनो ! विदे ही विच विना आचार का हानि से आत्मावी से सुख जाता है किन्तु कुछ आचार के हानि से नहीं सुखता ।

मिथुनो ! विच का आचार क्या ? बुरी धर्म अर्थात् मार्ग ।

## § ८. समाधि सूत्र ( १२. ३ ८ )

## समाधि

श्रावस्ती जेतवन ।

बिभुषो ! मैं तेरा और परिवार के साथ सम्यक्-समाधि का उपदेश करूँगा । उर्य सुतो ।

बिभुषो ! वह हेतु और परिवार के साथ 'हारे सम्यक्-समाधि क्या है ? जो, सम्यक्-दृष्टि... सम्यक्-सुति है ।

बिभुषो ! जा इन बातों से विनय हो जा। ज्ञान है, उर्यो जो हेतु और परिवार के साथ आर्य सम्यक् समाधि का है ।

## § ९. वेदना सूत्र ( १२. ३ ९ )

## वेदना

श्रावस्ती जेतवन ।

बिभुषो ! वेदना तीन है । 'होना जो नीला ? सुख वेदना, दुःख वेदना, और अदुःख-सुख वेदना ।

बिभुषो ! यही तीन वेदना है ।

बिभुषो ! इन तीन वेदनाओं की परिणत हो ही आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करना चाहिये ।

किस आर्य अष्टांगिक मार्ग का ? जा, सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि ।

## § १०. उत्तिय सूत्र ( १३. ३ १० )

## पाँच कामगुण

श्रावस्ती जेतवन ।

एक और श्रेष्ठ, आयुष्मान उत्तिय नेपथान से बोले, "अन्ते ! एतन्ते मे भवान् करते सम्य मेरे मन में यह विलय उदर—भयान् १ जो पाँच कामगुण होते हैं वह क्या है ?"

उत्तिय ! शीर है, मैंने पाँच कामगुण कहे हैं । कान से पाव ? चक्षुस्त्रियेय रूप, अभीष्ट, सुन्दर श्रोत्रत्रियेय प्रकृ । घ्राणत्रियेय मन्त्र । जिह्वात्रियेय रस । वायुत्रियेय स्पर्श । उत्तिय ! मैंने यही पाँच कामगुण कहे हैं ।

उत्तिय ! इन पाँच काम-गुणों के प्रहाण के लिये आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करना चाहिये । किस आर्य अष्टांगिक मार्ग का ? जो, सम्यक् दृष्टि सम्यक् समाधि ।

उत्तिय ! इन पाँच काम-गुणों के प्रहाण के लिये इसी अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करना चाहिये ।

मिथ्यात्व वर्ग समाप्त

## चौथा भाग

### प्रतिपत्ति वर्ग

§ १ पटिपत्ति सूच ( ४३ ४ १ १ )

मिथ्या और सम्यक् मार्ग

धावस्ती ।

मिथुनो ! मिथ्या प्रतिपत्ति ( मार्ग ) और सम्यक्-प्रतिपत्ति का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

मिथुनो ! मिथ्या प्रतिपत्ति क्या है ? जो मिथ्या-वृत्ति ।

मिथुनो ! सम्यक् प्रतिपत्ति क्या है ? जो सम्यक्-वृत्ति ।

§ २ पटिपत्ति सूच ( ४३ ४ १ २ )

मार्ग पर आकङ्क्ष

धावस्ती जेतवत ।

मिथुनो ! मिथ्या प्रतिपत्ति ( गलत मार्ग पर आकङ्क्ष ) और सम्यक्-प्रतिपत्ति का उपदेश करूँगा । इसे सुनो ।

मिथुनो ! मिथ्या प्रतिपत्ति क्या है ? मिथुनो ! कोई मिथ्या-वृत्तिवाला होता है मिथ्या-समाधि-प्राप्त होता है । वही मिथ्या-प्रतिपत्ति कहा जाता है ।

मिथुनो ! सम्यक् प्रतिपत्ति क्या है ? मिथुनो ! कोई सम्यक्-वृत्तिवाला होता है सम्यक्-समाधि-प्राप्त होता है । वही सम्यक्-प्रतिपत्ति कहा जाता है ।

§ ३ विरह सूच ( ४३ ४ १ ३ )

भार्य अष्टादिक मार्ग

धावस्ती जेतवत ।

मिथुनो ! त्रिव किन्हीं का भार्य अष्टादिक मार्ग एक गया उनका सम्यक्-नु ल-क्षय-गामी भार्य अष्टादिक मार्ग एक गया ।

मिथुनो ! त्रिव किन्हीं का भार्य अष्टादिक मार्ग एक हुआ उनका सम्यक्-नु ल-क्षय-गामी भार्य अष्टादिक मार्ग एक हुआ ।

मिथुनो ! भार्य अष्टादिक मार्ग क्या है ? जो सम्यक्-वृत्ति सम्यक्-समाधि । मिथुनो ! त्रिव किन्हीं का वह भार्य अष्टादिक मार्ग एक गया उनका सम्यक्-नु ल-क्षय-गामी भार्य अष्टादिक मार्ग एक गया । मिथुनो ! त्रिव किन्हीं का भार्य अष्टादिक मार्ग एक हुआ उनका सम्यक्-नु ल-क्षय-गामी भार्य अष्टादिक मार्ग एक हुआ ।



## § ४. पारङ्गम सुत्त ( ४३ ४ १. ४ )

## पार जाना

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ । इग आठ धर्मों के चिन्तन और अभ्यास करने से अपार को भी पार कर जाता है ।  
किन् आठ ? जो, सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि । भिक्षुओ । इन्हीं आठ धर्मों के चिन्तन और अभ्यास करने से अपार को भी पार कर जाता है ।

भगवान् ने यह कहा, यह कह कर बुद्ध फिर भी गोलें ---

मनुष्यों में ऐसे विरले ही लोग हैं जो पार जाने वाले हैं,

यह सभी तो तीर पर ही डौबते हैं ॥१॥

अच्छी तरह बतलाने लगे इन धर्म के अनुकूल जो आचरण करते हैं,

वे ही जन मृत्यु के इस दुस्तर राज्य को पार कर जायेंगे ॥२॥

कृष्ण धर्म को छोड़, पण्डित युक्ल का चिन्तन करे,

घरसे बेघर हो कर एकान्त शान्त स्थान में ॥३॥

प्रसन्नता में रहे, अकिञ्चन वन कामों को त्याग,

पण्डित अपने चित्त के क्लेशों से अपने को मुक्त करे ॥४॥

मनोधि भङ्गों में जिसने चित्त को अच्छी तरह भावित कर लिया है,

ब्रह्मण और त्याग में जो अनासक्त है,

क्षीणाश्रव, तेजस्वी, वे ही सखार में परम-मुक्त हैं ॥५॥

## § ५ पठम सामञ्ज सुत्त ( ४३ ४. १ ५ )

## श्रामण्य

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ । श्रामण्य (= श्रमण-भाव) और श्रामण्य-फल का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओ । श्रामण्य क्या है ? यही आर्य अष्टांगिक मार्ग । जो, सम्यक्-दृष्टि । भिक्षुओ । इसी को 'श्रामण्य' कहते हैं ।

भिक्षुओ । श्रामण्य-फल क्या है ? श्रोतापत्ति-फल, सकृद्यगामी-फल, अनागामी-फल, अर्हत्-फल ।

भिक्षुओ । इनको 'श्रामण्य-फल' कहते हैं ।

## § ६ दुतिय सामञ्ज सुत्त ( ४३. ४ १ ६ )

## श्रामण्य

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ । श्रामण्य और श्रामण्य के अर्थ का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओ । श्रामण्य क्या है ? । [ ऊपर जैसा ही ]

भिक्षुओ । श्रामण्य का अर्थ क्या है ? भिक्षुओ । जो राग-क्षय, द्वेष-क्षय, मोह-क्षय है, इसीको श्रामण्य का अर्थ कहते हैं ।

## § ७. पठम ब्रह्मञ्ज सुत्त ( ४३ ४ १ ७ )

## ब्राह्मण्य

भिक्षुओ । ब्राह्मण्य और ब्राह्मण्य-फल का उपदेश करूँगा [ ४३ ४ १ ५ के समान ही ]

## § ८ द्वितीय ब्रह्मचर्य सुक्त ( ४३ ४ १ ८ )

ब्रह्मचर्य

मिथुना ! ब्रह्मचर्य और ब्रह्मचर्य के अर्थ वा उपपत्त कहेगा [ ४३ ४ १ ९ के समान ही ]

## § ९ पठम ब्रह्मचरिय सुक्त ( ४३ ४ १ ९ )

ब्रह्मचर्य

मिथुना ! ब्रह्मचर्य और ब्रह्मचर्य का उपपत्त कहेगा [ ४३ ४ १ ५ के समान ही ]

## § १० द्वितीय ब्रह्मचरिय सुक्त ( ४३ ४ १ १० )

ब्रह्मचर्य

मिथुना ! ब्रह्मचर्य और ब्रह्मचर्य के अर्थ वा उपपत्त कहेगा [ ४३ ४ १ ९ के समान ही ]

प्रतिपत्ति धर्म समाप्त

## अञ्जतित्यिय पेय्याल

## § १ विराग सुक्त ( ४३ ४ ० १ )

राग को जीतने का मार्ग

भावस्ती जेतघन ।

पूत्र और बँठ जब मिथुना से भगवान् बोके मिथुना ! यदि दूसरे मत के साधु तुम से पूछें कि—आहुत ! अमल गीतम के शासन में किसदिने ब्रह्मचर्य का पाकन किया जाता है, तो उनको उत्तर देना कि—आहुत ! राग को जीतने के दिने भगवान् के सामन में ब्रह्मचर्य का पाकन किया जाता है ।

‘मिथुना ! यदि वे दूसरे मत वाले साधु तुमसे पूछें कि—आहुत ! क्या राग को जीतने के दिने मार्ग है तो तुम उनको उत्तर देना कि—हाँ आहुत ! राग को जीतने के दिने मार्ग है ।

‘मिथुना ! राग को जीतने का कौन सा मार्ग है ? यही जार्ज अर्थात् मार्ग ।

## § २ सञ्जोवन सुक्त ( ४३ ४ २ २ )

संयोजन

—आहुत ! अमल गीतम के शासन में किसदिने ब्रह्मचर्य का पाकन किया जाता है तो तुम उनको उत्तर देना कि—आहुत ! संयोजन ( = बन्धन ) के महात्त करने के दिने भगवान् के सामन में ब्रह्मचर्य का पाकन किया जाता है । [ उत्तर वैसे ही विन्दार कर देना चाहिये ]

## § ३ अनुसय सुक्त ( ४३ ४ २ ३ )

अनुसय

—आहुत ! अनुसय को समूह कर कर देने के दिने ।

## § ४. अद्धान सुत्त ( ४३. ४. २. ४ )

मार्ग का अन्त

आबुस ! मार्ग का अन्त जानने के लिये ।

## § ५. आसवक्खय सुत्त ( ४३. ४. २. ५ )

आश्रय-क्षय

आबुस ! आश्रयों का क्षय करने के लिये ।

## § ६. विज्जाविमुत्ति सुत्त ( ३४ ४ २. ६ )

विद्या-विमुक्ति

आबुस ! विद्या के विमुक्तिकाल का साक्षात्कार करने के लिये ।

## § ७. ज्ञान सुत्त ( ४३ ४ २. ७ )

ज्ञान

आबुस ! ज्ञान के दर्शन के लिये ।

## § ८. अनुपादाय सुत्त ( ४३ ४ २ ८ )

उपादान से रहित होना

आबुस ! उपादान से रहित हो निर्वाण जाने के लिये ।

अब्भतिरिदय पेत्थाल समाप्त

## सुरिय पेत्थाल

विवेक-निश्चित

## § १ कल्याणमिच्छ सुत्त ( ४३ ४ ३ १ )

कल्याण-सिद्धता

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! आकाश में ललाई का छा जाना सूर्योदय का पूर्व-लक्षण है । भिक्षुओ ! वैसे ही, कल्याणमिच्छ का मिलना आर्य अष्टांगिक मार्ग के लाभ का पूर्व-लक्षण है ।

भिक्षुओ ! ऐसी आशा की जाती है कि कल्याणमिच्छ वाला भिक्षु आर्य अष्टांगिक मार्ग का चिन्तन और अभ्यास करेगा ।

भिक्षुओ ! कल्याणमिच्छवाला भिक्षु कैसे आर्य अष्टांगिक मार्ग का चिन्तन और अभ्यास करता है ?

भिक्षुओ ! भिक्षु विवेक, विराग और निरोध की ओर ले जानेवाली सम्यक्-दृष्टि का चिन्तन और अभ्यास करता है, जिससे परम-मुक्ति सिद्ध होती है । सम्यक्-समाधि का अभ्यास करता है ।

भिक्षुओ ! कल्याणमिच्छ वाला भिक्षु इसी प्रकार आर्य अष्टांगिक मार्ग का चिन्तन और अभ्यास करता है ।

## § २ सील मुक्त ( ४३ ४ ३ २ )

शील

मिथुनो ! आकाश में लकड़ी का बाला खुरोदय का पूर्व-सङ्गण है । मिथुनो ! बस ही शील का आचरण भार्य अष्टांगिक मार्ग के काम का पूर्व-सङ्गण है । [ शेष ऊपर जैसा ही समझ बना चाहिये ]

## § ३ छन्द मुक्त ( ४३ ४ ३ ३ )

छन्द

मिथुनो ! बस ही सुकर्म में लगने की प्रवृत्ति ।

## § ४ अक्ष मुक्त ( ४३ ४ ३ ४ )

दृढ़ चित्त का होना

मिथुनो ! बस ही दृढ़-चित्त का होना ।

## § ५ दिष्टि मुक्त ( ४३ ४ ३ ५ )

दृष्टि

मिथुनो ! बस ही सम्पूर्ण दृष्टि का होना ।

## § ६ अप्यमाद मुक्त ( ४३ ४ ३ ६ )

अप्रमाद

मिथुनो ! बस ही अप्रमाद का होना ।

## § ७ योनिता मुक्त ( ४३ ४ ३ ७ )

मनन करना

मिथुनो ! बस ही अच्छी तरह मनन करना ( व्यसक्तिकार ) ।

राग-धिनय

## § ८ फल्पाणमित्त मुक्त ( ४३ ४ ३ ८ )

फलपाणमित्तता

[ देखा "४३, ४ ३ ३ ]

मिथुनो ! मिथुन राग ही और मोह का दूर करने वाली सम्पूर्ण दृष्टि का किन्तु और अन्वेषण करना है । सम्पूर्ण-समाधि का ।

मिथुनो ! इसी प्रकार उपराणमित्तताका मिथुन भाष्य अष्टांगिक मार्ग का --।

## § ९ सील मुक्त ( ४३ ४ ३ ९ )

शील

मिथुनो ! बस ही शील का आचरण करना । १

## § १०-१४ छन्द मुक्त ( ४३ ४ ३ १०-१४ )

छन्द

मिथुनो ! बस ही सुकर्म में लगने की प्रवृत्ति ।

- “‘हृद-मित्त वा ताना ।  
 “‘सम्पक्-दृष्टि वा ताना ।  
 “‘अप्रमाद वा ताना ।  
 “‘अग्नी तरह मनन करना ।

सुरिय पेठ्याल समाप्त

## प्रथम एक-धर्म पेठ्याल

विवेक-निश्चिन

§ १. कल्याणमित्त सुक्त ( ४२ ४ ४ १ )

कल्याण मित्रता

“‘प्रायस्ती””जंतवन ”।

मिधुजी ! अर्ग अष्टमिक मार्ग के लाभ के लिये एत उर्म पड़े उपकार का है । कौन एक धर्म ?  
 जो यह ‘कल्याणमित्रता’ ।

मिधुजी ! ऐसी अज्ञा ही जाती है कि [ हेमो, ४३ ४ ३ १ ] ।

§ २. शील सुक्त ( ४३ ४. ४ २. )

शील

कौन एक धर्म ? जो यह ‘शील वा आचरण’ ।

§ ३. छन्द सुक्त ( ४३. ४. ४. ३ )

छन्द

कौन एक धर्म ? जो यह सुर्म में लगने की प्रवृत्ति ।

§ ४. अत्त सुक्त ( ४३. ४ ४ ४ )

चित्त की दृढता

कौन एक धर्म ? जो यह दृढ चित्त का होना ।

§ ५. दिङ्घि सुक्त ( ४३ ४. ४. ५ )

दृष्टि

“‘कौन एक धर्म ? जो यह सम्पक्-दृष्टि का होना ।

§ ६. अप्रमाद सुक्त ( ४३. ४ ४. ६ )

अप्रमाद

कौन एक धर्म ? जो यह अप्रमाद का होना ।

§ ७. योनिषी सुक्त ( ४३ ४ ४. ७ )

मनन करना

कौन एक धर्म ? जो यह अग्नी तरह मनन करना ।

## राग-धिनय

§ ८ कल्याणमिच्छ सुत्त ( ४३ ४ ४ ८ )

कल्याण-मित्रता

मिथुजो ! कार्ये अहांगिक मार्ग के लगभग क मिय एक धर्म परे उपकार का है । काम एक धर्म ? जो यह 'कल्याण-मित्रता' ।

मिथुजो ! मिथु राग होय भीर मोह को दूर करने वाली सम्यक्-दृष्टि का चिन्तन भीर अग्रास करता है । सम्यक्-समाधि का ।

§ ९-१४ सील सुत्त ( ४३ ४ ४ ९-१४ )

शील

शील एक धर्म ?

जो यह शील का आचरण करना ।

जो यह सुकर्म में लगाने की प्रवृत्ति ।

जो यह एक चित्त का हाता ।

जो यह सम्यक्-दृष्टि का होना ।

जो यह अग्रमात् का होना ।

जो यह अच्छी तरह मनन करना ।

प्रथम एक-धर्म पेय्याल समाप्त

## द्वितीय एक धर्म पेय्याल

विवेक-निमित्त

§ १ कल्याणमिच्छ सुत्त ( ४३ ४ ५ १ )

कल्याण मित्रता

यावस्ती जेतथन ।

मिथुजो ! मैं किसी दूसरे ऐसे एक धर्म को भी नहीं देखता हूँ जिससे वे पाये गये कार्ये अहांगिक मार्ग का काम ही जाय या काम कर किया गया मार्ग अग्रास की पूर्णता को प्राप्त करे ।

मिथुजो ! यैसी यह 'कल्याण-मित्रता' ।

मिथुजो ! यैसी भाषा की जाती है कि ।

[ देखो ४३ ४ ३ १ ]

§ २-७ सील सुत्त ( ४३ ४ ५ २-७ )

शील

मिथुजो ! मैं किसी दूसरे ऐसे एक धर्म को भी नहीं देखता हूँ ।

जैसा यह शील का आचरण करना ।

जैसी यह सुकर्म में लगाने की प्रवृत्ति ।

जैसा यह एक चित्त का होना ।

जैसा यह सम्यक्-दृष्टि का होना ।

जैसा यह अग्रमाद का होना ।"

जैसा यह अच्छी तरह मनन करना ।

### राग-चिनय

#### § ८ कल्याणमित्त सुत्त ( ४३ ४ ५ ८ )

##### कल्याण-मित्रता

भिक्षुओ ! जैसा यह कल्याणमित्रता ।

-भिक्षुओ ! भिक्षु राग, द्वेष, और मोह को दूर करनेवाली सम्यक्-दृष्टि का चिन्तन और अभ्यास करता है । सम्यक्-समाधि का ।

#### § ९-१४. सील सुत्त ( ४३ ४ ५. ९-१४ )

##### शील

भिक्षुओ ! मैं किसी दूसरे ऐसे एक धर्म को भी नहीं देखता हूँ ।

जैसा यह शील का आचरण करना ।

जैसा यह अच्छी तरह मनन करना ।

##### द्वितीय एक-धर्म पेट्याल समाप्त

## गङ्गा-पेट्याल

### विवेक-निश्चित

#### § १. पठम पाचीन सुत्त ( ४३. ४. ६. १ )

##### निर्वाण की ओर बढ़ना

आवस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! जैसे गङ्गा नदी पूरव की ओर बहती है, वैसे ही आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करनेवाला भिक्षु निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ।

भिक्षुओ ! आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करनेवाला भिक्षु कैसे निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ?

भिक्षुओ ! भिक्षु विवेक, विराग और निरोध की ओर ले जानेवाली सम्यक्-दृष्टि का चिन्तन और अभ्यास करता है, जिससे परम मुक्ति सिद्ध होती है । सम्यक्-समाधि का अभ्यास करता है ।

भिक्षुओ ! इसी तरह, आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करनेवाला भिक्षु निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ।

#### § २. दुतिय पाचीन सुत्त ( ४३ ४ ६. २ )

##### निर्वाण की ओर बढ़ना

भिक्षुओ ! जैसे जमुना नदी पूरव की ओर बहती है [ ऊपर जैसा ही ] ।

§ ३ तृतीय पाचीन सूच ( ४३ ४ ६ ३ )

निर्वाण की ओर बढ़ना

मिथुनो ! जैसे अधिरवती नहीं ।

§ ४ चतुर्थ पाचीन सूच ( ४३ ४ ६ ४ )

निर्वाण की ओर बढ़ना

मिथुनो ! जैसे सरयू नहीं ।

§ ५ पञ्चम पाचीन सूच ( ४३ ४ ६ ५ )

निर्वाण की ओर बढ़ना

मिथुनो ! जैसे मही नहीं ।

§ ६ छठम पाचीन सूच ( ४३ ४ ६ ६ )

निर्वाण की ओर बढ़ना

मिथुनो ! जैसे गङ्गा जमुना अधिरवती सरयू और मही जैसी दूसरी भी नदियाँ ।

§ ७-१२ सप्तम सूच ( ४३ ४ ६ ७-१२ )

निर्वाण की ओर बढ़ना

मिथुनो ! जैसे गङ्गा नहीं समुद्र की ओर पड़ती है जैसे ही धार्मिक शक्तियों का अन्वयन करनेवाला मिथु निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ।

मिथुनो ! जैसे जमुना नहीं ।

मिथुनो ! जैसे अधिरवती नहीं ।

मिथुनो ! जैसे सरयू नहीं ।

मिथुनो ! जैसे मही नहीं ।

मिथुनो ! जैसे और भी दूसरी नदियाँ ।

राग विनय

§ १३ १८ पाचीन सूच ( ४३ ४ ६ १३ १८ )

निर्वाण की ओर बढ़ना

मिथु राग द्वेष और मोह को दूर करनेवाली मन्त्रक-रहि का चिन्तन और अन्वयन करता है ।

§ १९ २४ सप्तम सूच ( ४३ ४ ६ १९ २४ )

निर्वाण की ओर बढ़ना

मिथु राग द्वेष और मोह को दूर करनेवाली मन्त्रक-रहि का चिन्तन और अन्वयन करता है ।



## अमृतोगध

§ २५-३०. पाचीन सुत्त ( ४३. ४. ६ २५-३० )

अमृत-पद को पहुँचाना

§ ३१-३६. समुद्र सुत्त ( ४३ ४ ६. ३१-३६ )

भिक्षु अमृत-पद पहुँचाने वाली सम्यक्-दृष्टि का चिन्तन और अभ्यास करता है ।

## निर्वाण-निम्न

§ ३७-४२. पाचीन सुत्त ( ४३ ४ ६. ३७-४२ )

निर्वाण की ओर जाना

§ ४३-४८. समुद्र सुत्त ( ४३ ४ ६ ४३-४८ )

भिक्षु निर्वाण की ओर ले जाने वाली सम्यक्-दृष्टि का चिन्तन और अभ्यास करता है ।

गङ्गा पेठवाल समाप्त

## पाँचवाँ भाग

### अप्रमाद धर्म

#### विशेष निश्चित

§ १ तयागत सुष्ठ ( ४२ ५ १ )

#### तयागत सर्वधोष्ठ

धावन्ती जेतघत ।

मिथुनो ! जितने प्राणी हैं अपद वा द्विपद वा त्रिपुण्ड्र वा बहुपुण्ड्र वा कप वाके वा रूप रहित वा संज्ञा वाके वा संज्ञा-रहित वा न संज्ञा वाके और न संज्ञा-रहित सभी में सर्वत्र सम्बन्ध सम्बन्ध मगबाध् अथ समझे जाते हैं ।

मिथुनो ! वैसे ही जितने कुशाक (= पुण्य ) धर्म हैं सभी का आधार-मूल अप्रमाद ही है । अप्रमाद इन धर्मों का अन्न समझा जाता है ।

मिथुनो ! ऐसी भाषा की जाती है कि अप्रमत्त मिथुन धर्म आध्यात्मिक मार्ग का चिन्तन और अभ्यास करेगा ।

मिथुनो ! अप्रमत्त मिथुन धर्म आध्यात्मिक मार्ग का चिन्तन और अभ्यास करता है ।

मिथुनो ! मिथुन विशेष विराम और निरोध की ओर के जाने वाली सम्बन्ध दृष्टि का ।

#### राग विनय

मिथुन राग द्वेष और माद को दूर करेगाकी सम्बन्ध-दृष्टि का चिन्तन और अभ्यास करता है ।

#### असुत

मिथुन असुत-पद पहुँचानेवाली सम्बन्ध-दृष्टि का चिन्तन और अभ्यास करता है ।

#### निर्वाण

मिथुन निर्वाण की ओर के जानेवाली सम्बन्ध दृष्टि का ।

§ २ पद सुष्ठ ( ४२ ५ २ )

#### अप्रमाद

मिथुनो ! जितने अंगम प्राणी हैं सभी के पैर हाथी के पैर में बंधे जाते हैं । बड़ा होने में हाथी का पैर सभी पैरों में अन्न समझा जाता है ।

मिथुनो ! वैसे ही जितने कुशाक धर्म हैं सभी का आधार = मूल अप्रमाद ही है । अप्रमाद इन धर्मों में अन्न समझा जाता है ।

मिथुनो ! ऐसी भाषा की जाती है कि अप्रमत्त मिथुन ।

## § ३. कूट सुत्त ( ४३ ५ ३ )

## अप्रमाद

भिक्षुओ ! कूटागार के जितने धरण हैं सभी कूट की ओर झुके होते हैं । कूट ही उनमें अग्र समझा जाता है ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, जितने कुशल धर्म हैं ।

## § ४. मूल सुत्त ( ४३ ५. ४ )

## गन्ध

भिक्षुओ ! जैसे, जितने मूल-गन्ध हैं सभी में खस (=कालानुसारिय) अग्र समझा जाता है ।

## § ५. सार सुत्त ( ४३ ५ ५ )

## सार

भिक्षुओ ! जैसे, जितने सार-गन्ध हैं सभी में लाल चन्दन अग्र समझा जाता है \* ।

## § ६. वस्सिक सुत्त ( ४३ ५ ६ )

## जूही

भिक्षुओ ! जैसे, जितने पुष्प-गन्ध हैं सभी में जूही (=वार्षिक) अग्र ।

## § ७. राज सुत्त ( ४३ ५ ७ )

## चक्रवर्ती

भिक्षुओ ! जैसे, जितने छोटे मोटे राजा होते हैं सभी चक्रवर्ती के आधीन रहते हैं, चक्रवर्ती उनमें अग्र समझा जाता है ।

## § ८. चन्दिम सुत्त ( ४३ ५ ८ )

## चाँद

भिक्षुओ ! जैसे, सभी ताराओं की प्रभा चाँद की प्रभा की सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं है, चाँद उनमें अग्र समझा जाता है ।

## § ९. सुरिय सुत्त ( ४३ ५ ९ )

## सूर्य

भिक्षुओ ! जैसे, शरत् काल में आकाश साफ हो जाने पर, सूर्य सारे अन्धकार को दूर कर तपता है, शोभायमान होता है ।

## § १०. वत्थ सुत्त ( ४३ ५ १० )

## काशी-वस्त्र

भिक्षुओ ! जैसे, सभी बुने गये कपड़ों में काशी का बना कपड़ा अग्र समझा जाता है, वैसे ही सभी कुशलधर्मों का आधार=मूल अप्रमाद ही है । अप्रमाद उन धर्मों का अग्र समझा जाता है ।

भिक्षुओ ! ऐसी आशा की जाती है कि अप्रमत्त भिक्षु आर्य अष्टांगिक मार्ग का चिन्तन और अभ्यास करेगा ।

भिक्षुओ ! अप्रमत्त भिक्षु कैसे आर्य अष्टांगिक मार्ग का चिन्तन और अभ्यास करता है ?

भिक्षुओ ! भिक्षु विवेक, विराग, निरोध, निर्वाण की ओर ले जानेवाली सम्पक्-दृष्टिका ।

अप्रमाद वर्ग समाप्त

## पाँचवाँ भाग

### अप्रमाद धर्म

विशेष विधित

५१ तथ्यागत सूच ( ४३ ५ १ )

तथ्यागत सपर्यध्रष्ट

धापस्ती जेतयम ।

मिथुभो ! कितने प्राणी हैं अपद वा त्रिपद वा चतुष्पद वा पक्षुष्पद वा रूप बाह्य या रूप रहित वा संग्र बाह्ये वा सजा-रहित वा न संग्र बाह्य और न संग्र-रहित सभी में अर्हत् सम्बन्ध सम्बुद्ध मगधम् अत्र समझे जाते हैं ।

मिथुभो ! जैसे ही कितने कुशास ( = पुण्य ) धर्म हैं वरगी के आचार-मूल अप्रमाद ही है । अप्रमाद इन धर्मों का अत्र समझा जाता है ।

मिथुभो ! एसी आशा की जाती है कि अप्रमाद मिथु धर्म आध्यात्मिक मार्ग का चिन्तन और अभ्यास करेगा ।

मिथुभो ! अप्रमाद मिथु धर्म आध्यात्मिक मार्ग का चिन्तन और अभ्यास करता है ।

मिथुभो ! मिथु विवेक विराम और विरोध की ओर ले जाने वाली सम्बन्ध-रहित का ।

तथा विनय

मिथु राग द्वेष आद मोह को दूर करनेवाली सम्बन्ध-रहित का चिन्तन और अभ्यास करता है ।

अमृत

मिथु अमृत-पत्र पशु-बालवाली सम्बन्ध-रहित का चिन्तन और अभ्यास करता है ।

निर्घोष

मिथु निर्घोष की ओर ले जानेवाली सम्बन्ध-रहित का ।

५२ पद सूच ( ४३ ५ २ )

अप्रमाद

मिथुभो ! कितने अंगम प्राणी हैं सभी के पैर हाथी के पैर में बड़े जाते हैं । बड़ा होने में हाथी का पैर घसी पैरों में अत्र समझा जाता है ।

मिथुभो ! जैसे ही कितने दुष्कर्म धर्म हैं सभी का आचार = मूल अप्रमाद ही है । अप्रमाद इन धर्मों में अत्र समझा जाता है ।

मिथुभो ! एसी आशा की जाती है कि अप्रमाद मिथु ।

### § ४ स्वप्न सुत्त ( ४३. ६ ४ )

#### निर्वाण की ओर झुकना

भिक्षुओ ! कौन वृक्ष पृथ्वी की ओर झुकने लगे, तब उसके मूल को काट देने से वह किस ओर गिरेगा ?

भन्ते ! जिस ओर झुका है उधर ही ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करने वाला भिक्षु निर्वाण की ओर झुका रहता है, निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ।

भिक्षुओ ! कैसे निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ?

भिक्षुओ ! सम्यक्-दृष्टि । सम्यक्-समाधि ।

### § ५. कुम्भ सुत्त ( ४३. ६ ५ )

#### अकुशल-धर्मों का त्याग

भिक्षुओ ! उलट देने से घड़ा सभी पानी बहा देता है, कुछ रोक नहीं रहता । भिक्षुओ ! वैसे ही, आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करने वाला भिक्षु सभी पापमय अकुशल धर्मों को छोड़ देता है, कुछ रहने नहीं देता ।

भिक्षुओ ! कैसे ?

भिक्षुओ ! सम्यक्-दृष्टि । सम्यक्-समाधि ।

### § ६ सुकिय सुत्त ( ४३. ६. ६ )

#### निर्वाण की प्राप्ति

भिक्षुओ ! ऐसा हो सकता है कि अच्छी तरह तैयार किया गया धान या जौ का काँटा हाथ या पैर में चुभाने से गड़ जाय और लहू निकाल दे । सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि काँटा अच्छी तरह तैयार किया गया है ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, यह हो सकता है कि भिक्षु अच्छी तरह आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करके अविद्या दूर कर दे, विद्या का लाभ करे, और निर्वाण का साक्षात्कार कर ले । सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि उसने ज्ञान अच्छी तरह प्राप्त कर लिया है ।

भिक्षुओ ! कैसे ?

भिक्षुओ ! सम्यक्-दृष्टि । सम्यक्-समाधि ।

### § ७ आकाश सुत्त ( ४३. ६ ७ )

#### आकाश की उपमा

भिक्षुओ ! आकाश में विविध वायु बहती है । पुरव की वायु भी बहती है । पच्छिम । उत्तर । दक्षिण । दूर्वा के साथ । स्पष्ट । ठही । गर्म । धीमी । तेज वायु भी बहती है ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करनेवाले भिक्षु में चारों न्यस्त-ग्रन्थान पूर्णता को प्राप्त होते हैं, चार सम्यक्-ग्रन्थान भी पूर्णता को प्राप्त होते हैं, चार क्लिष्टा भी , पाँच इन्द्रियाँ भी , पाँच बल भी , सात बोध्यग भी ।

भिक्षुओ ! कैसे ?

भिक्षुओ ! सम्यक्-दृष्टि । सम्यक्-समाधि ।

## छठों भाग

### फलफरणीय धर्म

§ १ बल सुत्त ( ३२ ६ १ )

शील का आधार

अध्वर्या अंतधन ।

मिथुभो ! शितने कस से कर्म किए जाते हैं उसी धर्म के आधार पर ही लगे होकर किये जाते हैं । मिथुभो ! जैसे ही शील के आधार पर प्रतिष्ठित होकर आर्य अष्टांगिक मार्ग का सम्पादन किया जाता है ।

मिथुभो ! शील के आधार पर प्रतिष्ठित होकर केवल आर्य-अष्टांगिक मार्ग का सम्पादन किया जाता है ?

मिथुभो ! बिना ब्रह्म विद्या और निराह की धार से आनन्दात्मी सम्बन्ध-रहित का सम्पादन करता है । सम्बन्ध-समाधि का ।

मिथुभो ! इसी प्रकार शील के आधार पर प्रतिष्ठित होकर आर्य अष्टांगिक मार्ग का सम्पादन किया जाता है ।

§ २ भीम सुत्त ( ४३ ६ २ )

शील का आधार

मिथुभो ! अतः शिलनी अवस्थावर्धितों हैं उसी धर्म के आधार पर ही जगती और बहती हैं केवल ही शील के आधार पर प्रतिष्ठित होकर ।

§ ३ नाग सुत्त ( ४६ ६ ३ )

शील के आधार से बुद्धि

मिथुभो ! हिमालय पर्वत के आधार पर ही नाग बहुत ऊपर उठते हैं । वहाँ ऊपर और उन्नत हो के छोटी छोटी गहरी गहिरियों में उतर जाते हैं । छोटी-छोटी गहिरियों में उतर कर वह-वह गहिरियों में चले जाते हैं । वहाँ से उतर कर छोटी छोटी गहिरियों में चले जाते हैं । वहाँ से बड़ी-बड़ी गहिरियों में चले जाते हैं । बड़ी-बड़ी गहिरियों में महा-समुद्र में चले जाते हैं । वे वहाँ उतरकर बहुत बड़े-बड़े हो जाते हैं ।

मिथुभो ! जैसे ही मिथु शील के आधार पर प्रतिष्ठित हो आर्य अष्टांगिक मार्ग का सम्पादन करते वर्ये में बुद्धि और महात्मता का प्राप्त करते हैं ।

मिथुभो ! मिथु शील के आधार पर केवल महात्मता का प्राप्त करते हैं ?

मिथुभो ! मिथु सम्बन्ध-रहित का सम्पादन और सम्पादन करता है । सम्बन्ध-समाधि का ...

भिक्षुओं ! ज्ञान-पूर्वक अभ्यास करने योग्य भस्म कौन है ? भिक्षुओं ! शमश आर विश्रमणा, या भस्म प्राप्त-पूर्वक अभ्यास करने योग्य है ।

भिक्षुओं ! सम्पद्-वृष्टि... सम्पद्-समाधि ।

### § १२. नदी मुक्त ( ४३. ६. १२ )

#### गृहस्थ बनना सम्भव नहीं

भिक्षुओं ! जैसे, गंगा नदी पृथ्वी की ओर बहती है । तब, आरमियों का एक जगथा तुहाल और टोपरी लिये आये और कहे—जम लोग गंगा नदी को पच्छिम की ओर चला देंगे ।

भिक्षुओं ! तो क्या समझते हो, ये गंगा नदी को पच्छिम की ओर चला सकेंगे ? नहीं बन्ते ।

तो क्या ?

भस्ते ! गंगा नदी पृथ्वी की ओर चलती है, उसे पच्छिम या/वेना अभ्यास नहीं । ये लोग व्यर्थ में परेशानी उठावेंगे ।

भिक्षुओं ! जैसे ही, आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करने वाले भिक्षु को राजा, राज-मन्त्री, मित्र, स्वलाकार, या कोई अन्य-व्यक्ति सामारिक भागों का लोभ दिखाने प्रुलाये—अरे ! याने आओ, पाले कपड़े में क्या रक्का है, क्या माथा सुड़ा कर घूम रहे हो ! आओ, घर पर रा कामों का भागों और पुण्य करो ।

भिक्षुओं ! तो, यह सम्भव नहीं है कि या शिक्षा को उद्य गृहस्थ बन जायगा ।

तो क्यों ? भिक्षुओं ! ऐसा सम्भव नहीं है कि द्वाँईशक तक जो वित्त विप्रेक की ओर लगा रहा है वह गृहस्थी में पड़ेगा ।

भिक्षुओं ! भिक्षु आर्य अष्टांगिक मार्ग का कैसे अभ्यास करता है ।

भिक्षुओं ! सम्पद्-वृष्टि । सम्पद्-समाधि ।

[ 'बलकरणीय' के लेख विन्तर करना चाहिये ]

बलकरणीय वर्ग समाप्त

## § ८ पठम मेघ सुच ( ४३ ६ ८ )

पर्या की उपमा

मिथुभो ! जैसे प्रीत्य ऋषि के पहिले महीने में ठंडी थूक को पानी की एक बौझर बना देती है वैसे ही कार्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करनेवाला मिथु मन में बढते पाप भय अदुःख भयों को दबा देता है ।

मिथुभो ! कैसे ?

मिथुभो ! सम्पक्-रुधि । सम्पक्-समाधि ।

## § ९ दुतिय मेघ सुच ( ४३ ६ ९ )

पावळ की उपमा

मिथुभो ! जैसे उमरते महामेघ को हवा के झंकोर तितर-बितर कर देते हैं वैसे ही कार्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करने वाले मिथु मन में बढते पाप-भय अदुःख भयों को तितर-बितर कर देता है ।

मिथुभो ! कैसे ?

मिथुभो ! सम्पक्-रुधि । सम्पक्-समाधि ।

## § १० तामा सुच ( ४३ ६ १० )

संयोगों का लघु होना

मिथुभो ! जैसे छ महीने पानी में पका केले के बाजू हैमन्त में एक पर रखी हुई गैर के बन्धन से रूपी हुई बाक के बन्धन बरसात का पानी पड़ने से क्षीम ही सब जाते हैं वैसे ही कार्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करने वाले मिथु के संयोग ( सम्बन्ध ) लघु हो जाते हैं ।

मिथुभो ! कैसे ?

मिथुभो ! सम्पक्-रुधि । सम्पक्-समाधि ।

## § ११ आगन्तुक सुच ( ४३ ६ ११ )

धर्मशास्त्रा की उपमा

मिथुभो ! जैसे कई धर्म-शास्त्रा (= अगन्तुकारण ) हो वहीं एक विशाल धर्म योग आकर रहते हैं । पशियम । उत्तर । दक्षिण । इतिथि भी आ कर रहते हैं । आश्रम भी । वैश्व भी । द्वाद भी ।

मिथुभो ! वैसे ही कार्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करने वाले मिथु ज्ञान-पूर्वक ज्ञानने योग्य धर्मों को ज्ञान-पूर्वक जानते हैं । ज्ञान-पूर्वक त्याग करने योग्य धर्मों का ज्ञान-पूर्वक त्याग कर देते हैं । ज्ञान-पूर्वक साक्षात्कार करते हैं । ज्ञान-पूर्वक अभ्यास करने योग्य धर्मों का ज्ञान-पूर्वक अभ्यास करते हैं ।

मिथुभो ! ज्ञान-पूर्वक ज्ञानने योग्य धर्म कौन हैं ? कहाँ आदिने कि 'यद् पूर्व उपादान रहस्य । कौन से पूर्व ? जी । अन्त-उपादानरहस्य विज्ञान उपादानरहस्य । मिथुभो ! परी ज्ञान-पूर्वक ज्ञानने योग्य धर्म हैं ।

मिथुभो ! ज्ञान-पूर्वक त्याग करने योग्य धर्म कौन हैं ? मिथुभो ! अविद्या और भय-मूल्या वह धर्म ज्ञान-पूर्वक त्याग करने योग्य हैं ।

मिथुभो ! ज्ञान-पूर्वक साक्षात्कार करने योग्य धर्म कौन हैं ? मिथुभो ! विद्या और विमुक्ति वह धर्म ज्ञान-पूर्वक साक्षात्कार करने योग्य हैं ।



## § ३. आश्रव सुत्त ( ४३ ७ ३ )

तीन आश्रव

भिक्षुओ ! आश्रव तीन हैं ? कौन से तीन ? काम-आश्रव, भव-आश्रव, अविद्या-आश्रव ।

भिक्षुओ ! यही तीन आश्रव हैं ।

भिक्षुओ ! इन तीन आश्रवों को जानने, अच्छी तरह जानने, क्षय और प्रहाण के लिये आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करना चाहिये ।

## § ४. भव सुत्त ( ४३ ७ ४ )

तीन भव

काम-भव, रूप-भव, अरूप-भव ।

भिक्षुओ ! इन तीन भवों को जानने ।

## § ५. दुःखता सुत्त ( ४३ ७. ५ )

तीन दुःखता

दुःख दुःखता, सस्कार दुःखता, विपरिणाम-दुःखता ।

भिक्षुओ ! इन तीन दुःखता को जानने ।

## § ६. खील सुत्त ( ४३ ७ ६ )

तीन रूकाचटे

राग, द्वेष, मोह

भिक्षुओ ! इन तीन रूकाचटों ( =खील ) को जानने ।

## § ७. मल सुत्त ( ४३ ७ ७ )

तीन मल

राग, द्वेष, मोह

भिक्षुओ ! इन तीन मलों को जानने ।

## § ८. नीघ सुत्त ( ४३ ७ ८ )

तीन दुःख

राग, द्वेष, मोह

भिक्षुओ ! इन तीन दुःखों को जानने

## § ९. वेदना सुत्त ( ४३ ७ ९ )

तीन वेदना

सुख वेदना, दुःख वेदना, अदुःख-सुख वेदना

भिक्षुओ ! इन तीन वेदना को जानने ।

## § १०. तण्हा सुत्त ( ४३ ७ १० )

तीन तृष्णा

काम-तृष्णा, भव-तृष्णा, विभव-तृष्णा

भिक्षुओ ! इन तीन तृष्णा को जानने ।

## § ११. तसिन सुत्त ( ४३ ७ ११ )

तीन तृष्णा

काम-तृष्णा, भव-तृष्णा, विभव-तृष्णा

भिक्षुओ ! इन तीन तृष्णा को जानने ।

एवमण चर्ग समाप्त

## सातवाँ भाग

### एकपण वर्ग

§ १ एकपण सुप्त (४३ ७ १)

तीन एकपणायें

( अभिज्ञा )

मिथुओ ! एकपण ( अत्रोत्रोत्राह ) तीस है । काम मी तीन ? कामपण धकपण लमकपणैपण ।

मिथुओ ! बही तीन एकपण है ।

मिथुओ ! इन तीन एकपण को जमन के किये भावै अष्टांगिक मार्ग का अन्वय करना चाहिये ।  
भावे अष्टांगिक मार्ग क्या है ?

मिथुओ ! मिथु बिबक की ओर के जाने वाली सम्यक-दृष्टि या बिभुम और अन्वय करता है जिसमें सुक्ति मिह जाती है । सम्यक-समाधि । "

-- राता होय और मोह को दूर करने वाली सम्यक-दृष्टि का बिभुम और अन्वय करता है ।  
सम्यक-समाधि ।

अष्टांगिक-पद सेने वाली सम्यक-दृष्टि सम्यक-समाधि ।

बिबोम की ओर के जाने वाली सम्यक-दृष्टि सम्यक-समाधि ।

( परिज्ञा )

मिथुओ ! एकपण तीस है ।

मिथुओ ! इन तीन एकपण को जमने तरह जानने के किये भावै अष्टांगिक मार्ग का अन्वय करना चाहिये । [ ऊपर जैसा ही ]

( परिधुम )

मिथुओ ! इन तीन एकपण के कर के किये ।

( प्रह्लाप )

मिथुओ ! इन तीन एकपण का प्रह्लाप के किये ।

§ २ विषा सुप्त ( ४३ ७ ० )

तीन अहंकार

मिथुओ ! अहंकार तीस है । तीन मी तीन ? मी क्या है—इसका अहंकार मी क्या है—  
इसका अहंकार मी छोटा है—इसका अहंकार । मिथुओ ! बही तीन अहंकार है ।

मिथुओ ! इन तीन अहंकार को जमने जमने तरह जानने काय और प्रह्लाप के किये भावै  
अष्टांगिक मार्ग का अन्वय करना चाहिये ।

भावे अष्टांगिक मार्ग क्या है ?

-- [ तीन वर्णा "४३ ७ १ एकपण" ]

७ मिथु दृष्टि सुक्त जमने की एकपण—अहंकार ।

## § ६ कामगुण सुत्त ( ४३ ८ ६ )

## पाँच काम-गुण

कौन से पाँच ? चक्षुर्विज्ञेय रूप अभीष्ट , श्रोत्रविज्ञेय शब्द अभीष्ट , घ्राणविज्ञेय गन्ध अभीष्ट , जिह्मविज्ञेय रस अभीष्ट \*\*, कायाविज्ञेय स्पर्श अभीष्ट ।\*\*\*

भिक्षुओ ! इन पाँच काम-गुणों को जानने ।

## § ७. नीवरण सुत्त ( ४३ ८ ७ )

## पाँच नीवरण

कौन से पाँच ? काम-इच्छा, वैर-भाव, आलस्य, आँदृश्य-कांक्षुदय ( = आवेश में आकर कुछ उलटा-सलटा कर बैठना और पीछे उसका पछतावा करना ), चिचिखिस्ता (=धर्म में शका का होना) ।

भिक्षुओ ! इन पाँच नीवरणों को जानने

## § ८ खन्ध सुत्त ( ४३. ८ ८ )

## पाँच उपादान स्कन्ध

कौन से पाँच ? जो, रूप-उपादान स्कन्ध, वेदना , सज्ञा , सरकार , विज्ञान-उपादान स्कन्ध ।

भिक्षुओ ! इन पाँच उपादान-स्कन्धों को जानने ।

## § ९ ओरम्भागिय सुत्त ( ४३ ८ ९ )

## निचले पाँच संयोजन

भिक्षुओ ! नीचेवाले पाँच संयोजन ( = बन्धन ) हैं । कौन से पाँच ? स्वत्काय-इष्टि, विचिकित्सा, दालिन्नत परामर्श, काम-छन्द, व्यापाद ।

भिक्षुओ ! इन पाँच नीचेवाले संयोजनों को जानने • ।

## § १० उद्धम्भागिय सुत्त ( ४३ ८ १० )

## ऊपरी पाँच संयोजन

भिक्षुओ ! ऊपरवाले पाँच संयोजन हैं । कौन से पाँच ? रूप-राग, अरूप-राग, मान, आँदृश्य, अविद्या ।

भिक्षुओ ! इन पाँच ऊपर वाले संयोजनों को जानने, अच्छी तरह जानने, क्षय और प्रहण करने के लिये आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करना चाहिये ।

आर्य अष्टांगिक मार्ग क्या है ?

भिक्षुओ ! भिक्षु सम्पक्-दृष्टि • सम्यक्-समाधि ।

भिक्षुओ ! जैसे गंगा नदी । विवेक । विराग । निरोध । निर्वाण ।

ओघ वर्ग समाप्त

मार्ग-संयुक्त समाप्त

## आठवाँ भाग

### ओष वर्ग

#### § १ ओष सुप्त ( ४३ ८ १ )

##### चार पाद

धावस्ती जतयम ।

मिथुजो ! बाढ़ चार है । कीन से चार ? काम-बाढ़ मव-बाढ़ मिथ्या-दहि-बाढ़ भविष्य-बाढ़ ।  
मिथुजो ! यही चार बाढ़ है ।

मिथुजो ! इन चार बाढ़ों को जानम अच्छी तरह जानम सब नीर प्रहाय करन के लिये इन  
चार्य अष्टांगिक मार्ग का सम्वाय करना चाहिये ।

[ पृथक् के समान ही विस्तार कर जना चाहिये ]

#### § २ योग सुप्त ( ४३ ८ २ )

##### चार योग

काम-योग मव-योग मिथ्या-दहि-योग भविष्य-योग ।

मिथुजो ! इन चार योगों को जानने ।

#### § ३ उपादान सुप्त ( ४३ ८ ३ )

##### चार उपादान

काम-उपादान मिथ्या-दहि-उपादान शीकजत-उपादान आमबाढ़-उपादान ।

मिथुजो ! इन चार उपादानों का जानने ।

#### § ४ गन्ध सुप्त ( ४३ ८ ४ )

##### चार गौड़ें

अभिष्या ( = अक्षोभ ) उपादाह ( = वीर-भाह ) शीकजत-परामर्श ( = देवी मिथ्या धारणा कि  
शीक नीर जत के पाक्य करन से मुक्ति हो जायची ) यही परमाथ सत्य है ऐसे इन्ह का होना

मिथुजो ! इन चार प्रथमों ( = गौड़ ) को जानने ।

#### § ५ अनुमय सुप्त ( ४३ ८ ५ )

##### सात अनुमय

मिथुजो ! अनुमय सात है । कीन से सात ? काम-राग विषम-भाह मिथ्या-दहि विविचिता  
माल मव-राग नीर भविष्य ।

मिथुजो ! इन सात अनुमयों का जानने ।

भिक्षुओ ! शुभ-निमित्त ( = मान्दर्य त्रु केवल देगुना ) । उसका बुराटया का उर्भा मनन न करना—यही वह आहार है जिसमें अनुत्पन्न काम-उन्ड उन्पन्न होते है और उत्पन्न काम-उन्ड वृद्धि को प्राप्त होते है ।

भिक्षुओ ! वह काम आहार है जिसमें अनुत्पन्न वर-भाव , आलम्प , आदर्य कौकृत्य , विचित्रिस्ता [ 'काम-उन्ड' जेसा विस्तार कर लेता चाहिये ]

## ( ख )

भिक्षुओ ! जैसे, वह शरीर आहार पर ही खडा है आहार के नहीं मिलनेपर खडा नहीं रह सकता ।

भिक्षुओ ! जैसे ही, यात प्रोध्यग आहार पर ही खडे होते है, आहार के नहीं मिलने पर खडे नहीं रह सकते ।

भिक्षुओ ! वह काम आहार है जिसमें अनुत्पन्न स्मृति-सवोध्यग उत्पन्न होता है, और उत्पन्न स्मृति-सवोध्यग भावित और पूर्ण होता है ?

भिक्षुओ ! स्मृति-सवोध्यग सिद्ध करने वाले जो धर्म है उनका अच्छी तरह मनन करना—यही वह आहार है जिससे अनुत्पन्न स्मृति-सवोध्यग उत्पन्न होते है, और उत्पन्न स्मृति-सवोध्यग भावित और पूर्ण होता है ।

भिक्षुओ ! कुशल और अकुशल, मद्योप और निर्दोष, बुरे और अच्छे, तथा कृष्ण और शुक्र धर्मोंका अच्छी तरह मनन करना—यही वह आहार है जिसमें अनुत्पन्न वर्मविचय-सवोध्यग उत्पन्न होता है, और उत्पन्न धर्म-विचय-सवोध्यग, भावित और पूर्ण होता है ।

भिक्षुओ ! आरम्भ-धातु, और पराक्रम-धातु का अच्छी तरह मनन करना—यही वह आहार है जिसमें अनुत्पन्न वीर्य-सवोध्यग ।

भिक्षुओ ! प्रीति-सवोध्यग सिद्ध करनेवाले जो धर्म है उनका अच्छी तरह मनन करना—यही वह आहार है जिससे अनुत्पन्न प्रीति-सवोध्यग उत्पन्न होता है, और उत्पन्न प्रीति-सवोध्यग भावित और पूर्ण होता है ।

भिक्षुओ ! कथ-प्रश्रुति और चित्त-प्रश्रुति का अच्छी तरह मनन करना—यही वह आहार है जिसमें अनुत्पन्न प्रश्रुति-सवोध्यग ।

भिक्षुओ ! समय और विवर्शना का अच्छी तरह मनन करना—यही वह आहार है जिसमें अनुत्पन्न समाधि-सवोध्यग ।

भिक्षुओ ! उपेक्षा-सवोध्यग सिद्ध करने वाले जो धर्म हैं उनका अच्छी तरह मनन करना—जिसमें अनुत्पन्न उपेक्षा-सवोध्यग ।

भिक्षुओ ! जैसे, वह शरीर आहार पर ही खडा है, आहार के नहीं मिलने पर खडा नहीं रह सकता, वैसे ही सात वोध्यग आहार पर ही खडे होते है, आहार के नहीं मिलने पर खडे नहीं रह सकते ।

## § ३ सील सुच ( ४४. १. ३ )

### वोध्यग-भावना के सात फल

भिक्षुओ ! जो भिक्षु शील, समाधि, प्रज्ञा, विमुक्ति और विमुक्ति-ज्ञानवर्शन में सम्पन्न है, उनका वर्शन भी बड़ा उपकारक होता है—ऐसा मैं कहता हूँ ।

# दूसरा परिच्छेद

## ४४ वीध्यङ्ग-संयुक्त

पहलें भाग

पर्यंत वर्ग

३ १ द्विमन्त सुच ( ४४ १ १ )

वीध्यङ्ग-अभ्यास से वृद्धि

भाषस्ती जतवन ।

मिथुनी ! पर्यंतरात् हिमालय के आकार पर नाग कर्त भीर मचल होत है [ देखो "४३ १ १ ] ।

मिथुनी ! जैसे ही मिथु सीक के आकार पर प्रतिष्ठित हुँ साथ बाध्यता का अभ्यास करते धर्म म बचकर महालता को प्राप्त होता है ।

कैसे ?

मिथुनी ! मिथु विचित्र विराग आर निरोध की ओर क आनेवाले रसुति-संबोधन का अभ्यास करता है जिसमें मुक्ति होती है । "धर्म-विचित्र-सम्बोधन । धीमे-संबोधन । प्रीति-संबोधन । प्रभविच-संबोधन । समाधि-संबोधन । उपेक्षा-संबोधन ।

मिथुनी ! इस प्रकार मिथु सीक के आकार पर प्रतिष्ठित हुँ साथ बोध्यता का अभ्यास करते धर्म म बचकर महालता को प्राप्त होता है ।

३ २ काय सुच ( ४४ १ २ )

आहार पर अवसंयित

भाषस्ती जतवन ।

( क )

मिथुनी ! जैसे बड़ करीब आहार पर ही लड़ा है आहार के मिलने ही पर लड़ा रहता है, आहार के लड़ी मिलन पर लड़ा नहीं रह सकता ।

मिथुनी ! जैसे ही पाँच भीरण ( अर्थात् क आहार ) आहार पर ही लड़ा है आहार के लड़ी मिलने पर लड़ा नहीं रह सकता ।

मिथुनी ! पर भी आहार है जिसमें अनुभव राम उक्त उत्तर देने हैं और उक्त राम-उक्त वृद्धि को प्राप्त होने हैं ।

## § ४. वृत्त मुक्त ( ४४. १. १ )

## भान्त बोध्यः

एक समय, आयुष्मान् स्तम्बिपुत्र श्रावणर्षी ने अनाश्रिपण्डक के आराम जेतवन में विहार करते थे।

आयुष्मान् स्तम्बिपुत्र प्रोत्, "आयुम् । प्रोत्, भान्त । तं न म भान्त ? स्मृति-संप्रोथग, वर्म-विचय , वीर्यं , प्रीति , प्रभ्रति , श्रमाधि , उपेक्षा-संप्रोथग । आयुम् । यानि भान्त संप्रोथग ई ।

"आयुम् । उनमें मैं श्रम-विचय संप्रोथग में पूर्वोक्त समय विहार करना चाहता हूँ, उप-उप में विश्रुत करता हूँ । संप्रोथग समय । संध्या समय ।

"आयुम् । यदि मेरे मनमें स्मृति-संप्रोथग होता है तो यह भ्रमण होता है, अर्थात् वरुं पूरा-पूरा होता है । उसके उप-विचय रूप में जानता हूँ कि यह उप-विचय है । जब वह व्युत् होता है तब मैं जानता हूँ कि इसके कारण व्युत् हो रहा है ।

धर्म-विचय-संप्रोथग उपेक्षा-संप्रोथग ।

"आयुम् । जब, विचय रात्रि या रात्रि-संप्रोथग की पेटा रम-विचय के कपटों में भरी हो । तब, वह श्रम-विचय की पूर्वोक्त समय पहनना चाहे उस पान ले, श्रम-विचय का संध्या-समय पहनना चाहे उसे पहन ले, और श्रम-विचय की संध्या-समय पहनना चाहे उसे पान ले ।

"आयुम् । जेने ही, मैं श्रम-विचय संप्रोथग में पूर्वोक्त समय विहार करना चाहता हूँ, उप-उप में विश्रुत करता हूँ । 'संध्या-समय । संध्या-समय । "

## § ५. भिक्षु मुक्त ( ४४. १. ५ )

## बोध्यः का अर्थ

तत्र, कोई भिक्षु भगवान् से बोला, "भन्ते ! लोत 'बोध्य' 'बोध्य' का करते हैं । भन्ते ! यह बोध्य क्या कहें जाते हैं ?"

भिक्षु । तत्र 'बोध' (=ज्ञान) के लिये होते हैं इसलिये बोध्य कहे जाते हैं ।

## § ६. कुण्डलि मुक्त ( ४४. १. ६ )

## विद्या और विमुक्ति की पूर्णता

एक समय, भगवान् स्तम्बेन में अञ्जनवन स्तम्बेन में विहार करते थे ।

तत्र, कुण्डलिय परिव्राजक जहाँ भगवान् थे वहाँ आया, और कुशल-क्षेम पूछकर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, कुण्डलिय परिव्राजक भगवान् से बोला, "हे गौतम ! मैं सभा-परिषद् में भान्त लेने वाला अपने स्थान पर ही रहा करता हूँ । सो मैं सुबह में जलपान करने के बाद एक आराम से दूसरे आराम, और एक उद्यान से दूसरे उद्यान घूमा करता हूँ । यहाँ, मैं कितने श्रमण और ब्राह्मणों को हम बात पर बाद-विवाद करते देखता हूँ—क्या श्रमण गौतम क्षीणाश्रव होकर विहार करता है ?"

कुण्डलिय । विद्या और विमुक्ति के अच्छे फल से युक्त होकर बुद्ध विहार करते हैं ।

हे गौतम ! किन धर्मों के भावित और अभ्यस्त होने से विद्या और विमुक्ति पूर्ण होती है ?

कुण्डलिय । सात बोध्यों के भावित और अभ्यस्त होने से विद्या और विमुक्ति पूर्ण होती है ।

हे गौतम ! किन धर्मों के भावित और अभ्यस्त होने से सात बोध्य पूर्ण होते हैं ?

कुण्डलिय । चार स्मृति-प्रस्थान के भावित और अभ्यस्त होने से सात बोध्य पूर्ण होते हैं ।

उसके उपपेतों का सुनना भी तथा उपकारक होता है । उसके पास जाना भी । उनका स्वर्ग करना भी । उनसे शिक्षा लेना भी । उनमें प्रार्थित हो जाना भी ।

तो क्यों ? मिथुनो ! बने मिथुन का धर्म सुन वह शरीर और मन दोनों से भ्रमण होकर बिहार करता है । इस प्रकार बिहार करते हुये वह धर्म का स्मरण और चिन्तन करता है । उस समय उसके स्मृति-संबोधन का प्रारम्भ होता है । वह स्मृति-संबोधन की भावना करता है । इस तरह वह भावित और पूर्ण हो जाता है । वह स्मृतिसाम् हो बिहार करते हुये धर्म को प्रज्ञा से जान और समझ जाता है ।

मिथुनो ! जिस समय मिथु स्मृतिसाम् हो बिहार करते हुये धर्म को प्रज्ञा से जान और समझ जाता है उस समय उसके धर्मविलय-संबोधन का प्रारम्भ होता है । वह धर्मविलय-संबोधन की भावना करता है । इस तरह वह भावित और पूरा हो जाता है । उस धर्म को प्रज्ञा से जान और समझ कर बिहार करते हुये उसे धीरे ( = उस्ताह ) होता है ।

मिथुनो ! जिस समय धर्म को प्रज्ञा से जान और समझ कर बिहार करते हुये उसे धीरे जाता है उस समय उसके धीरे-संबोधन का प्रारम्भ होता है । इस तरह उसका धीरे-संबोधन भावित और पूर्ण हो जाता है । धीरेबाध को गिरामिप प्रीति उत्पन्न होती है ।

मिथुनो ! जिस समय धीरेबाध मिथु का गिरामिप प्रीति उत्पन्न होती है उस समय उसके प्रीति-संबोधन का प्रारम्भ होता है । इस तरह उसका प्रीति संबोधन भावित और पूर्ण हो जाता है । प्रीति-सुख होने से शरीर और मन दोनों प्रसन्न हो जाते हैं ।

मिथुनो ! जिस समय प्रीति-सुख होने से शरीर और मन दोनों प्रसन्न (स्वास्त) हो जाते हैं उस समय उसके प्रसन्न-संबोधन का प्रारम्भ होता है । इस तरह उसका प्रसन्न-संबोधन भावित और पूर्ण हो जाता है । प्रसन्न हो जाने से सुख होता है । सुख-सुख जान से चित्त समाहित हो जाता है ।

मिथुनो ! जिस समय चित्त समाहित हो जाता है उस समय उसके समाधि-संबोधन का प्रारम्भ होता है । इस तरह उसका समाधि-संबोधन भावित और पूर्ण हो जाता है । उस समय वह अपने समाहित चित्त के प्रति अच्छी तरह उपेक्षित हो जाता है ।

मिथुनो ! उस समय उसके उपेक्षा-संबोधन का प्रारम्भ होता है । इस तरह उसका उपेक्षा-संबोधन भावित और पूर्ण हो जाता है ।

मिथुनो ! इस प्रकार सात बोधनों के भावित और अभ्यास हो जाने पर उसके सात अच्छे परिणाम होते हैं । क्या मैं सात अच्छे परिणाम ?

१-२ अपने देखते ही देखते परम-ज्ञान को पैद कर चक लेता है यदि नहीं तो मरने के समय उसका काम करता है ।

३ यदि वह भी नहीं तो पंच मीचेबाध संपीडनों के क्षीण हो जाने से अपने भीतर ही प्रीति निर्माण पा लेता है ।

४ यदि वह भी नहीं तो पंच मीचेबाध संपीडनों के क्षीण हो जाने से साग चककर निर्माण पा लेता है ।

५ यदि वह भी नहीं तो क्षीण हो जाने से अमंस्वार-परिचिर्वाच को प्राप्त करता है ।

६ यदि वह भी नहीं तो क्षीण हो जाने से अमंस्वार-परिचिर्वाच को प्राप्त करता है ।

७ यदि वह भी नहीं तो क्षीण हो जाने से ऊपर उठने वाला (अधोर्ध्व) धेनु मार्ग पर आनेवाला ( = अर्द्धनिष्ठाजी ) होता है ।

मिथुनो ! सात बोधनों के भावित और अभ्यास हो जाने पर बड़ी उमरके सात अच्छे परिणाम होते हैं ।



### § ४ वच सुत्त ( ४४ १. ४ )

#### ज्ञान बोध्यम्

एक समय, आयुमान् सारिपुत्र बोले, "आयुम् । बोध्यम् ज्ञानम् । ज्ञान मे ज्ञान ? स्मृति-संश्लेषण, धर्म-विचय , धर्म-प्रति, प्रशक्ति, नमोधि , उप-संश्लेषण । आयुम् । ज्ञान ज्ञान संश्लेषणम् ।

"आयुम् ! ज्ञान मे ज्ञान-विचय-संश्लेषण मे ज्ञान-समय विचार करना चाहता हूँ, उम-उम मे विचार करता हूँ । 'म गच्छ समय' । 'यथा समय' ।

"आयुम् ! यदि मेरे मन मे स्मृति-संश्लेषण होता है तो यह अप्रमाण होता है, अच्छी तरह पूरा-पूरा होता है । उसके उपरि तो ज्ञान मे जानता हूँ कि 'यथा उपरि-ज्ञान' है । जय वा-च्युत होता है तो मे जानता हूँ कि इसके कारण च्युत तो रहा है ।

धर्म-विचय-संश्लेषण उप-संश्लेषण ।

"आयुम् ! ज्ञान, विचार राजा या राज-सर्वी की पेट्टी रग-रिग के कपड़े मे भरी है । तब, वह जिन-जिन चीजों पर ध्यान-समय पहनना चाहे उसे पहन ले, जिन-जिन चीजों पर ध्यान-समय पहनना चाहे उसे पहन ले, और जिन-जिन चीजों पर ध्यान-समय पहनना चाहे उसे पहन ले ।

"आयुम् ! ज्ञान ही, मे जिन-जिन बोध्य मे पूर्णतः समय विचार करना चाहता हूँ, उम-उम मे विचार करता हूँ । मध्य-समय । मध्य-समय । "

### § ५ भिक्षु सुत्त ( ४४. १. ५ )

#### बोध्यम् या अर्थ

तब, कोई भिक्षु भगवान् मे बोले, "भन्ते ! लोग 'बोध्यम्' 'बोध्यम्' कहा करते हैं । भन्ते ! वह बोध्यम् क्यों कहे जाते हैं ?"

भिक्षु ! वह 'बोध्य' (=ज्ञान) के लिये होते हैं इसलिए बोध्यम् कहे जाते हैं ।

### § ६. कुण्डलितुत्त ( ४४ १ ६ )

#### विद्या और विमुक्ति की पूर्णता

एक समय, भगवान् साकेत मे अञ्जनघन मुग्धाय मे विचार करते थे ।

तब, कुण्डलितुत्त परित्राजक जहाँ भगवान् थे वहाँ आया, और कुण्डल-श्रेण पृथक् एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, कुण्डलितुत्त परित्राजक भगवान् से बोले, "हे गौतम ! मैं सभा-परिषद् मे भाग लेने वाला अपने स्थान पर ही रहा करता हूँ । सो मैं सुबह मे जलपान करने के बाद एक आराम से दूसरे आराम, और एक उद्यान से दूसरे उद्यान घूमा करता हूँ । वहाँ, मैं कितने श्रमण और ब्राह्मणों को इन बात पर धाड़-विधाड़ करते देखता हूँ—'यथा श्रमण गौतम क्षीणाश्रव होकर विहार करता है ?'

कुण्डलितुत्त ! विद्या और विमुक्ति के अच्छे फल से युक्त होकर बुद्ध विहार करते हैं ।

हे गौतम ! किन धर्मों के भावित और अभ्यस्त होने से विद्या और विमुक्ति पूर्ण होती है ?

कुण्डलितुत्त ! सात बोध्यों के भावित और अभ्यस्त होने से विद्या और विमुक्ति पूर्ण होती है ।

हे गौतम ! किन धर्मों के भावित और अभ्यस्त होने से सात बोध्य पूर्ण होते हैं ?

कुण्डलितुत्त ! चार स्मृति-प्रस्थान के भावित और अभ्यस्त होने से सात बोध्य पूर्ण होते हैं ।

इ गीतम ! किं भर्मा के भावित भार अम्वस्त हान स चार स्मृतिप्रस्थान पूर्ण हाते है ?

कुण्डकिय ! तीन सुचरितों के भावित भार अम्वस्त हान स चार स्मृतिप्रस्थान पूर्ण हाते है ।

हे गीतम ! किं भर्मा के भावित भार अम्वस्त होने से तीन सुचरित पूर्ण होते है ।

कुण्डकिय ! इन्द्रिय-संयम (= संयम ) के भावित भार अम्वस्त होने से तीन सुचरित पूर्ण होते है । कुण्डकिय ! कैसे पूर्ण हाते है ?

कुण्डकिय ! मिथु वधु स लुभावने रूप की वेवहर कोम नहीं करता है प्रमत्त नहीं हो जाता है राग पैदा नहीं करता है । उसका शरीर स्थित होता है अज्ञान किंत अपने भीतर ही भीतर स्थित भार विमुक्त हाता है ।

वधु स अमिय रूपा का देख रिच नहीं हो जाता—इच्छा सन ज्ञाना हुआ । उसका शरीर स्थित होता है उसका सन अपने भीतर ही भीतर स्थित भीतर विमुक्त होता है ।

शोक से सन्ध सुन । प्राण । जिह्वा । काया । मृत से भर्मा को जग ।

कुण्डकिय ! इस प्रकार इन्द्रिय-संयम भावित भार अम्वस्त होने से तीन सुचरित पूर्ण हाते है ।

कुण्डकिय ! किम प्रकार तीन सुचरित भावित भार अम्वस्त होने से चार स्मृतिप्रस्थान पूर्ण हाते है ।

कुण्डकिय ! मिथु काय इन्द्रिय को छान काय सुचरित का अभ्यास करता है । वाक्-सुचरित को शोक । मनो-सुचरित को शोक । कुण्डकिय ! इस प्रकार तीन सुचरित भावित भीतर अम्वस्त होने से चार स्मृतिप्रस्थान पूर्ण होते है ।

कुण्डकिय ! किम प्रकार चार स्मृतिप्रस्थान भावित भार अम्वस्त होने से सात बोधवा पूर्ण होते है ? कुण्डकिय ! मिथु काया में कायापुपद्मी होकर विहार करता है । वेदना में वेदनापुपद्मी । चित्त में चित्तापुपद्मी । भर्मा में भर्मापुपद्मी । कुण्डकिय ! इस प्रकार चार स्मृतिप्रस्थान भावित भीतर अम्वस्त होने से सात बोधवा पूर्ण होते है ।

कुण्डकिय ! किम प्रकार सात बोधवा भावित भीतर अम्वस्त होने से विद्या भीतर विमुक्ति पूर्ण होती है ? कुण्डकिय ! मिथु विदिक स्मृति-संबोधवा का अभ्यास करता है उपेक्षा-संबोधवा का अभ्यास करता है । कुण्डकिय ! इस प्रकार सात बोधवा भावित भीतर अम्वस्त होने से विद्या भीतर विमुक्ति पूर्ण होती है ।

पह कहने पर कुण्डकिय परित्राजक भगवान् से बोला—“मन्ते ! मुझे उपामक स्वीकार करें ।

§ ७ कूट सुष ( ४४ १ ७ )

मियाण की ओर लुकना

मिथुको ! जने कूटगार के सभी धरम कूट की ओर ही लुके होते है किम ही सात बोधवा का अभ्यास करने काका निर्वाण की ओर लुका होता है ।

कैसे निर्वाण की ओर लुका होता है ?

मिथुको ! मिथु विदिक स्मृति-संबोधवा का अभ्यास करता है उपेक्षा-संबोधवा का अभ्यास करता है । मिथुको ! इसी प्रकार सात बोधवा का अभ्यास करने काका निर्वाण की ओर लुका हाता है ।

§ ८ उपदान सुष ( ४४ १ ८ )

याप्यहो की मित्ति का ज्ञान

एक समय अशुभान उपदान भीतर आयुष्माक सातियुक्त कर्मात्मा में पापितानाम में विहार करते । ।

तत्र, आयुष्मान् सारिपुत्र सध्या समय ध्यान मे उठ जहाँ आयुष्मान् उपवान ये वहाँ आये और कुशल-क्षेम पूछकर पूरु और बैठ गये ।

एक ओर बैठ, आयुष्मान् सारिपुत्र आयुष्मान् उपवान मे बोले, “आवुस ! क्या भिक्षु जानता है कि मेरे अपने भीतर ही भीतर ( =प्रत्यात्म ) अच्छी तरह मनन करने मे सात बोध्यंग सिद्ध हो सुप्त-पूर्वक विहार करने के योग्य हो गये है ?”

हाँ, आवुस सारिपुत्र ! भिक्षु जानता है कि सुप्त-पूर्वक विहार करने के योग्य हो गये हैं । आवुस ! भिक्षु जानता है कि मेरे अपने भीतर ही भीतर अच्छी तरह मनन करने से स्मृति-संबोधयंग सिद्ध हो सुप्त-पूर्वक विहार करने योग्य हो गया है । मेरा चित्त पूरा-पूरा चिसुक्त हो गया है, आलस्य समूल नष्ट हो गया है, औद्धत्य-क्रांति य विलकुल दया दिये गये हैं, मैं पूरा शीघ्र कर रहा हूँ, परमार्थ का मनन करता हूँ, ओर लीन नहीं होता । उपेक्षा-न्यबोधयंग ।

### § ९ पंथम उप्पन्न सुत्त ( ४४ १ ९ )

बुद्धोत्पत्ति से ही सम्भव

भिक्षुओं ! भगवान् अर्हत सम्यक्-सम्बुद्ध की उत्पत्ति के बिना सात अनुत्पन्न बोध्यंग जो भावित ओर अभ्यस्त कर लिये गये हैं, नहीं होते । कौन से सात ?

स्मृति-संबोधयंग उपेक्षा-संबोधयंग ।

भिक्षुओं ! यही सात अनुत्पन्न बोध्यंग नहीं होते ।

### § १० दुतिय उप्पन्न सुत्त ( ४४ १ १० )

बुद्धोत्पत्ति से ही सम्भव

भिक्षुओं ! बुद्ध के विनय के बिना सात अनुत्पन्न बोध्यंग [ ऊपर जैसा ही ] ।

पर्वत वर्ग समाप्त



## दूसरा भाग

### ग्लान वर्ग

§ १ पाण मुत्त ( ४४ १ )

#### शीब का आधार

मिथुनी ! जैसे जो कोई प्राणी पार सामान्य काम करत है समय-समय पर चलना समय समय पर पढ़ा हल्ला समय-समय पर बैठना और समय-समय पर खंडना मदी पूर्ण के आकार पर ही करते है ।

मिथुनी ! वस ही मिथु शीब के आधार पर ही प्रतिष्ठित होकर सात बोधंगा का अभ्यास करता है ।

मिथुनी ! कैसे सात बोधंगा का अभ्यास करता है ?

मिथुनी ! विवेक स्थिति संबोधंगा उपेक्षा-संबोधंगा का अभ्यास करता है ।

§ २ पठम सुरियूपम मुत्त ( ४४ २ २ )

#### सूर्य की उपमा

मिथुनी ! जाकरा में कर्णार् का का वाता सूर्याद्वय का पूर्व-कक्षण है, जैसे ही कर्णार्-मिथु का सात सात बोधंगा की उत्पत्ति का पूर्व-कक्षण है । मिथुनी ! ऐसी भासा की जाती है कि कर्णार् मिथुनाका मिथु सात बोधंगा की भावना और अभ्यास करेगा ।

मिथुनी ! कैसे कर्णार्-मिथु जाका मिथु सात बोधंगा की भावना और अभ्यास करता है ?

मिथुनी ! विवेक स्थिति-संबोधंगा उपेक्षा-संबोधंगा ।

§ ३ दुविय सुरियूपम मुत्त ( ४४ ३ २ )

#### सूर्य की उपमा

जैसे ही भण्टी तरह मनन करना सात बोधंगा की उत्पत्ति का पूर्व-कक्षण है । मिथुनी ! ऐसी भासा की जाती है कि भण्टी तरह मनन उपेक्षाका मिथु [ कपर बना ही ] ।

§ ४ पठम गिलान मुत्त ( ४४ २ ४ )

#### महाकादप का वीमार पङ्कना

व्या मने मुता ।

एक समय भगवात् राजगृह में वेलुवन कलम्कमिपाप में विहार करत से ।

जस समय आयुष्मात् महा-कादपय पिण्डकी मुद्रा में बने वीमार पङ्के से ।

तब संभव समय जान से उठ भगवात् उहाँ आयुष्मात् महा-कादप में बहाँ मने भीर विठे भावन पर बैठ गये ।

घेड़कर, भगवान् आयुमान् महा-काश्यप से बोले, “काश्यप ! कहां, अच्छे तो हो, बीमारी घटती रही है न ?”

नहीं भन्ते ! मेरी तथियत अच्छी नहीं है, बीमारी घट नहीं रही है, ब्रह्मिक बदती ही माहूम होती है ।

काश्यप ! मैंने यह बात बोध्यांग बताया है जिनके भावित और अभ्यास होने से परम-ज्ञान और निर्वाण की प्राप्ति होती है । कौन से स्वतः ? स्मृति-सबोध्यांग उपेक्षा-सबोध्यांग । काश्यप ! मैंने यही बात बोध्यांग बताया है, जिनके भावित और अभ्यास होने से परमज्ञान और निर्वाण की प्राप्ति होती है ।\*\*\*

भगवान् यह बोले । संतुष्ट हो आयुमान् महा-काश्यप ने भगवान् के कहे का अभिनन्दन और अनुमोदन किया । आयुमान् महा-काश्यप उस बीमारी से उठ खड़े हुये । आयुमान् महा-काश्यप की बीमारी तुरन्त दूर हो गई ।

### § ५. द्वितीय गिलान सुत्त ( ४४. २. ५ )

महामांगलान का बीमार पड़ना

राजगृह वेलुवन ।

उस समय, आयुमान् महा-मोन्गलान बुद्धकृष्ट-परंत पर बड़े बीमार पड़े थे ।

[ श्रेय ऊपर जैसा ही ]

### § ६ तृतीय गिलान सुत्त ( ४४. २. ६ )

भगवान् का बीमार पड़ना

राजगृह वेलुवन ।

उस समय, भगवान् बड़े बीमार पड़े थे ।

तब, आयुमान् महा-सुन्द जहाँ भगवान् थे वहाँ आये और भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये ।

एक ओर बैठे आयुमान् महासुन्द से भगवान् बोले, “सुन्द ! बोध्यांग के विषय में कहो ।”

भन्ते ! भगवान् ने बात बोध्यांग बताया है जिनके भावित और अभ्यास होने से परम-ज्ञान और निर्वाण की प्राप्ति होती है ।

आयुमान् महा-सुन्द यह बोले । बुद्ध प्रसन्न हुये । भगवान् उस बीमारी से उठ खड़े हुये । भगवान् की वह बीमारी तुरन्त दूर हो गई ।

### § ७ पारगामी सुत्त ( ४४. २. ७ )

पार करना

निधुओ ! इन बात बोध्यांग के भावित और अभ्यास होने से अपार ( =सत्कार ) को भी पार कर जाता है । कौन से बात ! स्मृति-सबोध्यांग उपेक्षा-सबोध्यांग ।

भगवान् यह बोले ।

मनुष्यों में ऐसे बिरले ही लोग हैं ।

[ देखो गाथा “मार्ग-सुत्त” ४३. ४. १. ४ ]

## § ८ विरह सुच ( ४४ २ ८ )

माग का एकना

मिथुनो ! जिन किम्ही के साथ बोध्यंग रहे उनका सम्यक-बुद्ध-क्षय-गामी मार्ग क्या ।

मिथुनो ! जिन किम्ही के साथ बाध्यंग शुरू हुए उनका सम्यक-बुद्ध-क्षय गामी मार्ग शुरू हुआ ।

कीन साथ ? स्थिति-संबोधन उपेक्षा-संबोधन ।

मिथुनो ! जिन किम्ही के पक्षी साथ बोध्यंग ।

## § ९ अरिष सुच ( ४४ २ ९ )

मोक्ष-मार्ग से आना

मिथुनो ! साथ बोध्यंग भावित और अभ्यस्त होने से मिथु सम्यक-बुद्ध-क्षय के द्विपे भाषे निर्वाणिक मार्ग ( =मोक्ष-मार्ग ) से आता है । कीन से साथ ? स्थिति-संबोधन उपेक्षा-संबोधन ।

## § १० निम्बिदा सुच ( ४४ २ १० )

नर्षाण की प्राप्ति

मिथुनो ! साथ बोध्यंग भावित और अभ्यस्त होये से मिथु परम निर्वेद, विराग विरोध स्थिति ज्ञान संबोधन और निर्वाण का काम करता है ।

कीन से साथ ?

ग्लान दर्श समाप्त

## तीसरा भाग

### उदायि वर्ग

#### § १ बोधन सुत्त ( ४४. ३. १ )

बोधयज्ञ क्यो कहा जाता है ?

तब, कोई भिक्षु भगवान् से बोला, "भन्ते ! लोग 'बोधयग, बोध्यग' कहा करते हैं । भन्ते ! यह बोध्यग क्यो कहे जाते हे ?"

भिक्षु ! इनसे 'बोध' (=ज्ञान) होता है, इसलिये यह बोध्यग कहे जाते हैं ।

भिक्षु ! भिक्षु त्रिवेक स्मृति-सबोधयग उपेक्षा-सबोधयग की भावना और अभ्यास करता है ।

भिक्षु ! इनसे 'बोध' होता है, इसलिये यह बोध्यग कहे जाते हैं ।

#### § २. देसना सुत्त ( ४४. ३. २ )

सात बोध्यग

भिक्षुओ ! मैं सात बोध्यग का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओ ! सात बोध्यग कौन हैं ? स्मृति उपेक्षा-सबोधयग ।

भिक्षुओ ! यही सात बोध्यग हैं ?

#### § ३. ठान सुत्त ( ४४. ३. ३ )

स्थान पाने से ही वृद्धि

भिक्षुओ ! काम-राग को स्थान देनेवाले धर्मों का मनन करने से अनुत्पन्न काम-राग उत्पन्न होता है और उत्पन्न काम-राग और भी बढ़ता है ।

हिंसा-भाव ( =व्यापाद ) । आलस्य । औद्धत्य-कौकृत्य । विचिकित्सा को स्थान देनेवाले धर्मों को मनन करने से ।

भिक्षुओ ! स्मृति-सबोधयग को स्थान देनेवाले धर्मों का मनन करने से अनुत्पन्न स्मृति-सबोधयग उत्पन्न होता है, और उत्पन्न स्मृति-सबोधयग और भी बढ़ता है । \*\*

भिक्षुओ ! उपेक्षा-सबोधयग को स्थान देनेवाले धर्मों का मनन करने से अनुत्पन्न उपेक्षा-सबोधयग उत्पन्न होता है, और उत्पन्न उपेक्षा-सबोधयग और भी बढ़ता है ।

#### § ४ अयोनिसो सुत्त ( ४४. ३. ४ )

टीक से मनन न करना

भिक्षुओ ! तुरी तरह मनन करने से अनुत्पन्न काम-उन्ध उत्पन्न होता है, और उत्पन्न काम-उन्ध और भी बढ़ता है ।

व्यापाद । आलस्य । \*\* औद्धत्य-कौकृत्य । विचिकित्सा ।

## § ८ विरह सुघ ( ४४ २ ८ )

माग का रचना

मिथुनो ! जिन किन्हीं के साथ बोध्यांग हूँ उनका सम्बन्ध-मुत्त-सप्त-गामी मार्ग हूँ ।  
 मिथुनो ! जिन किन्हीं के साथ बोध्यांग हूँ उनका सम्बन्ध-मुत्त-सप्त-गामी मार्ग हूँ ।  
 कौन साथ ! स्पृति-सबोध्यांग अपेक्षा-सबोध्यांग ।  
 मिथुनो ! जिन किन्हीं के साथ बोध्यांग ।

## § ९ अरिष सुत्त ( ४४ २ ९ )

मोक्ष-मार्ग से जाना

मिथुनो ! साथ बोध्यांग भावित और अल्पस्त होने से मिथु सम्बन्ध-मुत्त-सप्त के किये कार्य  
 मैत्री-मार्ग ( = मोक्ष-मार्ग ) से जाता है । कौन से साथ ! स्पृति-सबोध्यांग अपेक्षा-सबोध्यांग ।

## § १० निम्बिदा सुत्त ( ४४ २ १० )

नर्वाण की प्राप्ति

मिथुनो ! साथ बोध्यांग भावित और अल्पस्त होने से मिथु परम विरह, विराग विरोध क्षान्ति  
 ज्ञान संतोष और निर्वाण का काम करता है ।  
 कौन से साथ !

व्यस्य वर्ग समाप्त



उदायी । भिक्षु विवेक 'स्मृति-सर्वोप्यग का अभ्यास करता है' । स्मृति-सर्वोप्यग भावित और अभ्यस्त चित्त से पहले कमी नहीं वाटे और कुचल लिये राये लोग को काट और कुचल देता है । द्वेष को काट और कुचल देता है । 'मोह को काट और कुचल देता है ।

उदायी । भिक्षु विवेक 'उपेक्षा-सर्वोप्यग का अभ्यास करता है' । उपेक्षा-सर्वोप्यग के भावित और अभ्यस्त चित्त से 'लोक', 'द्वेष', 'मोह' को काट और कुचल देता है ।

उदायी ! इस तरह, सात उपेक्षा के भावित और अभ्यस्त होने से गुणा बट जाती है ।

### § ९. एकधम्म सुक्त ( ४४. ३. ९ )

बन्धन में डालनेवाले धर्म

भिक्षुओ । सात उपेक्षा के छोड़, मैं तुमसे किसी एक धर्म को भी नहीं देखता हूँ जिसकी भावना और अभ्यास में बन्धन में डालनेवाले (अस्योजनीय) धर्म प्राण हो जायें । कौन से सात ? स्मृति-सर्वोप्यग 'उपेक्षा-सर्वोप्यग ।

भिक्षुओ । कैसे सात उपेक्षा के भावित और अभ्यस्त होने से बन्धन में डालनेवाले धर्म प्राण होते हैं ?

• भिक्षुओ । भिक्षु विवेक 'स्मृति-सर्वोप्यग' उपेक्षा सर्वोप्यग ।

भिक्षुओ । इसी तरह, सात उपेक्षा के भावित और अभ्यस्त होने से बन्धन में डालनेवाले धर्म प्राण होते हैं ।

भिक्षुओ । बन्धन में डालनेवाले धर्म कौन हैं ? भिक्षुओ । बंधु बन्धन में डालनेवाला धर्म है । यहाँ बन्धन में डाल देनेवाली आसक्ति उत्पन्न होती है । श्रोत्र । घ्राण । जिह्वा । काया । मन बन्धन में डालनेवाला धर्म है । यहाँ बन्धन में डाल देनेवाली आसक्ति उत्पन्न होती है । भिक्षुओ ! इन्हीं को बन्धन में डालनेवाले धर्म कहते हैं ।

### § १०. उदायि सुक्त ( ४४ ३ १० )

बोधयज्ञ-भावना से परमार्थ की प्राप्ति

एक समय, भगवान् सुम्म ( जनपद ) में सेतक नाम के सुम्मों के कस्ये में विहार करते थे ।

'एक ओर बैठ, आयुष्मान् उदायी भगवान् से बोले, "भन्ते ! आश्चर्य है, अद्भुत है ॥ भन्ते ! भगवान् के प्रति मेरा प्रेम, गौरव, लज्जा और भय अत्यन्त अधिक है । भन्ते ! जब मैं गृहस्थ या तब मुझे धर्म या सच के प्रति बहुत सम्मान नहीं था । भन्ते ! भगवान् के प्रति प्रेम होने से ही मैं घर से बेघर हो प्रव्रजित हो गया । सो भगवान् ने मुझे धर्म का उपदेश दिया—यह रूप है, यह रूप का समुद्र है, यह रूप का निरोध है, यह रूप का निरोध-नामी मार्ग है, वेदना, सज्ञा, संस्कार, विज्ञान ।

भन्ते ! सो मैंने एकान्त स्थान में बैठ, इन पाँच उपादान स्कन्धों का उलट-पुलट कर चिन्तन करने लगे जान लिया कि 'यह दुःख का समुद्र है, यह दुःख का निरोध है, यह दुःख का निरोध-नामी मार्ग है ।

भन्ते ! मैंने धर्म को जान लिया, मार्ग मिल गया । इसी भावना और अभ्यास से, विहार करते हुये मुझे परमार्थ मिल जायगा । जाति क्षीण हुई, मैं जान लूँगा ।

भन्ते ! मैंने स्मृति-सर्वोप्यग को पा लिया है । इसकी भावना और अभ्यास से विहार करते हुये मुझे परमार्थ मिल जायगा । जाति क्षीण हुई, मैं जान लूँगा । 'उपेक्षा-सर्वोप्यग' ।

उदायी । ठीक है, ठीक है ॥ इसकी भावना और अभ्यास से विहार करते हुये तुम्हें परमार्थ मिल जायगा । जाति क्षीण हुई तुम जान लोगे ।

उदायि वर्ग समाप्त

अनुत्पन्न सृष्टि-संबोध्यां नहीं उत्पन्न होता है और उत्पन्न उपेक्षा-संबोध्यां भी निकट हो जाता है। अनुत्पन्न उपेक्षा-संबोध्यां भी निकट हो जाता है।

मिथुनो ! जबही तरह मनन करने से अनुत्पन्न काम-उत्पन्न नहीं उत्पन्न होता है और उत्पन्न काम-उत्पन्न प्रहीण हो जाता है।

ध्यापात् । आलस्य । नीदृत्य नीहृत्य । विचिकित्सा ।

अनुत्पन्न सृष्टि-संबोध्यां उत्पन्न होता है और उत्पन्न सृष्टि-संबोध्यां भावित तथा पूर्व होता है। अनुत्पन्न उपेक्षा-संबोध्यां उत्पन्न होता है और उत्पन्न उपेक्षा-संबोध्यां भावित तथा पूर्व होता है।

### § ५ अपरिहानि सुच ( ४४ ३ ५ )

क्षय न होनेवाले धर्म

मिथुनो ! सात क्षय न होनेवाले ( = अपरिहानीय ) धर्मों का उपदेश करूँगा। उसे सुनो ।

मिथुनो ! वह काम क्षय न होतवाले सात धर्म हैं ? यही सात बोध्यां । काम से सात ? सृष्टि संबोध्यां उपेक्षा-संबोध्यां ।

मिथुनो ! यही क्षय न होनेवाले सात धर्म हैं।

### § ६ स्वयं सुच ( ४४ ३ ६ )

तृष्णा-क्षय के माग का अभ्यास

मिथुनो ! तृष्णा-क्षय का जो मार्ग है उसका अभ्यास करो ।

मिथुनो ! तृष्णा क्षय का कौन-सा मार्ग है ? जो यह सात बोध्यां । काम से सात ? सृष्टि संबोध्यां उपेक्षा-संबोध्यां ।

यह कहने पर आनुष्णात् उद्ग्रापी भगवान् ने वाक्ये 'मन्ते ! सात संबोध्यां के भावित और अभ्यास होने से मैंने तृष्णा का क्षय होता है ?

उद्ग्रापी ! मिथुन विवेक विराग और निरोध की मार के जाने वाक्य विपुल महान् अभ्यास और ध्यापात्-रहित सृष्टि-संबोध्यां का अभ्यास करता है जिससे मुक्ति सिद्ध होती है। इस प्रकार उसकी तृष्णा प्रहीण होती है। तृष्णा के प्रहीण होने से धर्म प्रहीण होता है। धर्म के प्रहीण होने से दुःख प्रहीण होता है।

उपेक्षा-संबोध्यां का अभ्यास करता है ।

उद्ग्रापी ! इस तरह तृष्णा का क्षय होने से धर्म का क्षय होता है। धर्म का क्षय होने से दुःख का क्षय होता है।

### § ७ निरोध सुच ( ४४ ३ ७ )

तृष्णा-निरोध का माग का अभ्यास

मिथुनो ! तृष्णा-निरोध का जो मार्ग है उसका अभ्यास करो । [ "तृष्णा-क्षय" के स्थान पर "तृष्णा-निरोध" कहके शेष ऊपर वाले सूत्रों की भाँति ही ]

### § ८ निर्व्येध सुच ( ४४ ३ ८ )

तृष्णा का काटन वाला माग

मिथुनो ! ( तृष्णा का ) काट गिर देने वाले मार्ग का उपदेश करूँगा। उसे सुनो ।

मिथुनो ! काट गिर देने वाला मार्ग काय है ? यही सात बोध्यां ।

यह कहने पर आनुष्णात् उद्ग्रापी भगवान् ने वाक्ये "मन्ते ! सात संबोध्यां के भावित और अभ्यास होने से मैंने तृष्णा करणी है ?"

### § ४. दुतिय किलेम सुक्त ( ४४. ४ ४ )

बोधयज्ञ-भावना से त्रिमुक्ति-फल

भिक्षुओं ! यह सात आवरण, नीवरण और चित्त के उपकलेज से रहित बोध्यग की भावना और अभ्यास करने से विद्या और त्रिमुक्ति के फल का साक्षात्कार होता है । कौन से सात ? स्मृति-सबोधयग । उपेक्षा-सबोधयग ।

भिक्षुओं ! यही सात बोध्यग की भावना और अभ्यास करने से विद्या और त्रिमुक्ति के फल का साक्षात्कार होता है ।

### § ५. पठम योनिसो सुक्त ( ४४. ४. ५ )

अच्छरी तरह मनन न करना

भिक्षुओं ! अच्छरी तरह मनन नहीं करने से अनुपन्न काम-उन्मत्त उत्पन्न होता है, और उत्पन्न काम-उन्मत्त और भी यदना है ।

अनुपन्न व्यापाद । आलस्य । आन्दस्य-कौक्य । विचिकित्सा ।

### § ६. दुतिय योनिसो सुक्त ( ४४ ४ ६ )

अच्छरी तरह मनन करना

भिक्षुओं ! अच्छरी तरह मनन करने से अनुपन्न स्मृति-सबोधयग उत्पन्न होता है, और उत्पन्न स्मृति-सबोधयग वृद्धि तथा पूर्णता को प्राप्त होता है । अनुपन्न उपेक्षा-सबोधयग ।

### § ७. वृद्धि सुक्त ( ४४ ४ ७ )

बोधयज्ञ-भावना से वृद्धि

भिक्षुओं ! सात बोध्यग की भावना और अभ्यास करने से वृद्धि ही होती है, हानि नहीं । कौन से सात ? स्मृति-सबोधयग ।

### § ८. नीवरण सुक्त ( ४४ ४ ८ )

पाँच नीवरण

भिक्षुओं ! यह पाँच चित्त के उपकलेज (=मल) ( ज्ञान के ) आवरण और प्रज्ञा को दुर्बल करनेवाले हैं । कौन से पाँच ?

काम-उन्मत्त । व्यापाद । आलस्य । आन्दस्य-कौक्य । विचिकित्सा ।

भिक्षुओं ! यह सात बोध्यग चित्त के उपकलेज नहीं हैं, न वे ज्ञान के आवरण और न प्रज्ञा को दुर्बल करनेवाले हैं । उनके भावित और अभ्यस्त होने से विद्या और त्रिमुक्ति के फल का साक्षात्कार होता है । कौन से सात ? स्मृति-सबोधयग उपेक्षा-सबोधयग ।

भिक्षुओं ! जिस समय, आर्य-धायक कान दे, ध्यान-पूर्वक, समझ-समझ कर धर्म सुनता है, उस समय उसे पाँच नीवरण नहीं होते हैं, सात बोध्यग पूर्ण होते हैं ।

उस समय कौन से पाँच नीवरण नहीं होते हैं ? काम-उन्मत्त विचिकित्सा ।

उस समय कौन से सात बोध्यग पूर्ण होते हैं ? स्मृति-सबोधयग उपेक्षा-सबोधयग ।

### § ९. रुक्म सुक्त ( ४४. ४ ९ )

ज्ञान के पाँच आवरण

भिक्षुओं ! ऐसे अत्यन्त फैले हुए, ऊँचे बड़े बड़े वृक्ष हैं जिनके वीज बहुत छोटे होते हैं, जिनसे फूट-फूट कर सौई नीचे की ओर लटकी होती है । ऐसे वृक्ष कौन हैं ? जो पीपल, बरगद, पारुद, गूलर,

## चौथा भाग

### नीवरण वर्ग

§ १ पठम कुसल सुत्त ( ४४ ४ १ )

अप्रमाद ही आघारुई

मिधुओ ! कितने कुसल-पक्ष के ( = पुण्य-पक्ष के ) धर्म हैं सभी का मूक आधार अप्रमाद ही है । अप्रमाद उन धर्मों में अग्र समझा जाता है

मिधुओ ! उसी भाषा की जाती है कि अप्रमाद मिधु सात बोधों का अभ्यास करेगा ।  
मिधुओ ! कैसे अप्रमाद मिधु सात बोधों का अभ्यास करता है ?

मिधुओ ! बिचक' क्युति-सबोधन' उपैक्षा-संबोधन का अभ्यास करता है ।

मिधुओ ! इसी तरह अप्रमाद मिधु सात बोधों का अभ्यास करता है ।

§ २ दुसिय कुसल सुत्त ( ४४ ५ ० )

अच्छी तरह मनन करना

मिधुओ ! कितने कुसल-पक्ष के धर्म हैं सभी का मूक आधार 'अच्छी तरह मनन करना' ही है ।  
अच्छी तरह मनन करना' उन धर्मों में अग्र समझा जाता है ।

[ ऊपर वैसे ही ]

§ ३ पठम किलेस सुत्त ( ४४ ४ ३ )

सोमा के समान चित्त के पाँच मल

मिधुओ ! सोमा के पाँच मल होते हैं कितने मीका हो सोमा न म्लु होता है न सुन्दर होता है न चमक वाका होता है और न अक्षरार के योग्य होता है । वीत न पाँच ?

मिधुओ ! काका कोहा (अवयव) सोमा का मल होता है कियसे मीका हो सोमा न म्लु होता है न अक्षरार के योग्य होता है ।

कोहा । मिधु (अवयव) - । सीसा । चोही ।

मिधुओ ! सोमा के चही पाँच मल होते हैं ।

मिधुओ ! वैसे ही चित्त के पाँच मल (अवयव) होते हैं कियसे मीका हो चित्त न म्लु होता है न सुन्दर होता है न चमक वाका होता है और न अक्षरार के अक्षर करने के योग्य होता है । वीत न पाँच ?

मिधुओ ! काम उन्द चित्त का मल है कितने मीका हो चित्त 'आकाश' को अक्षर करने योग्य नहीं होता है । अनाप' । आकाश' । जीवन् जीवन् । विचित्रिया ।

मिधुओ ! चही चित्त के पाँच मल हैं ।

## पाँचवाँ भाग

### चक्रवर्ती वर्ग

§ १. विधा सुत्त ( ४४. ५. १ )

बोधयन्-भानता से अभिमान का त्याग

भिक्षुओ ! शरीरकाल में जिन धम्म का प्राणो ने तीन प्रकार के अभिमान (=विधा) को छोड़ा है, सभी सात बोध्यग की भावना और अभ्यास करके ही । भयिन्त्र ने । इस समय जिन धम्म का प्राणो ने तीन प्रकार के अभिमान को छोड़ा है, सभी सात बोध्यग की भावना और अभ्यास करके ही ।

किन सात बोध्यग की ? उपेक्षा-संबोधयन् ।

§ २. चक्रवर्ती सुत्त ( ४४. ५. २ )

चक्रवर्ती के सात रत्न

भिक्षुओ ! चक्रवर्ती राजा के होने में सात रत्न प्रकट होते हैं । कौन से सात ? चक्र-रत्न प्रकट होता है, हस्ति-रत्न , अश्व-रत्न , गणि-रत्न , स्त्री-रत्न , गृहपति-रत्न , परिनायक-रत्न प्रकट होता है ।

भिक्षुओ ! अर्हत् सम्मत्सन्नुद भगवान् के होने से सात बोध्यग-रत्न प्रकट होते हैं । कौन से सात ? उपेक्षा-संबोधयन्-रत्न ।

§ ३. मार सुत्त ( ४४. ५. ३ )

मार-सेना को भगाने का मार्ग

भिक्षुओ ! मार की सेना को तितर-वितर कर देने वाले मार्ग का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओ ! मार की सेना को तितर-वितर कर देने वाला कौन सा मार्ग है ? जो यह सात बोध्यग ।

§ ४. दुप्पञ्ज सुत्त ( ४४. ५. ४ )

वेवकूप क्यों कहा जाता है ?

तब, कोई भिक्षु भगवान् से बोला, “भन्ते ! लोग ‘वेवकूप मुँहदव, वेवकूप मुँहदव’ कहा करते हैं । भन्ते ! कोई क्यों वेवकूप (=दुष्पञ्ज) मुँहदव (=एवमूक=मैंह जैसा गुँगा) कहा जाता है ?”

भिक्षु ! सात बोध्यग की भावना और अभ्यास न करने से कोई वेवकूप मुँहदव कहा जाता है ।  
किन सात बोध्यग की उपेक्षा-संबोधयन् ।

\* घमण्ड करने के अर्थ में मान को ही ‘विधा’ करते हैं—अट्टकथा ।

कष्टक कपिग्य (= कर्हति) । मिथुना ! यह अत्यन्त ऊँचे बुद्धे ऊँचे बड़े बड़े बुद्ध हैं जिसके बीच बहुत घात होते हैं जिसके फूट-फूट कर सोई सीधे की ओर कटका होती हैं ।

मिथुनी ! काई कुलपुत्र जब कामों का छोड़ घर में बेबर हो मजबूत होता है दैते ही या उससे भी अधिक पापमय कामों के पीछे पड़ा रहता है ।

मिथुना ! यह चित्त स फूटनेवासे प्रजा को दुबस करनेवासे पाँच ज्ञान के आधारम है । कर्म से पाँच / काम-उत्पद् विधि-किन्ना ।

मिथुनी ! यह मात बाध्याग चित्त से नहीं फूटने वाले हैं और वे ज्ञान के आधारम भी नहीं होते । उनके भावित भीर अक्षय्य होन स विद्या और विमुक्ति के काम का साक्षात्कार होता है । कर्म से मात ? स्युति-संबोध्याग उपसा-संबोध्याग " ।

### § १० नीघरण सुच ( ४४ व १० )

#### पाँच नीघरण

मिथुना ! यह पाँच नीघरण हैं जो भन्ना बना दैते हैं चतु-रहित बना दैते हैं ज्ञान को हर नत हैं प्रजा को उत्पन्न दैते नहीं दैते हैं परेशानी में दाल दैते हैं और निर्बाल की ओर से दूर दूरा दैते हैं । काम स पाँच ? काम-उत्पद् विधि-किन्ना ।

मिथुना ! यह मात बाध्याग चतु दैते ज्ञान देनेवाके प्रजा की बुद्धि करनेवासे परेशानी से बचान वाले भार निर्बाल की ओर से जाने वाले हैं । कर्म से मात ? स्युति-संबोध्याग उपसा-संबोध्याग " ।

#### नीघरण धर्म समाप्त

## छठाँ भाग

### बोधयज्ञ षष्टकम्

§ १. आहार सुच ( ४४. ६. १ )

#### नीवरणों का आहार

श्रावस्ती...जेतवन ।

मिथुओ ! पाँच नीवरणों तथा सात बोधयज्ञों के आहार और अनाहार का उपदेश करूँगा ।  
दसे सुनो... ।

### ( क )

#### नीवरणों का आहार

मिथुओ ! अनुत्पन्न काम-छन्द की उत्पत्ति और उत्पन्न काम-छन्द की वृद्धि के लिए क्या आहार है ? मिथुओ ! सौन्दर्य के प्रति होनेवाली आसक्ति ( =शुभनिमित्त ) का बुरी तरह मनन करना—यही अनुत्पन्न काम-छन्द की उत्पत्ति और उत्पन्न काम-छन्द की वृद्धि के लिए आहार है ।

मिथुओ ! वैर-भाव ( =व्यापाद ) का बुरी तरह मनन करना—यही अनुत्पन्न वैर-भाव की उत्पत्ति और उत्पन्न वैर-भाव की वृद्धि के लिए आहार है ।

• मिथुओ ! धर्म का अभ्यास करने में मन का न लगना ( =भरति ), यत्न का पूँटना और जँभाई लेना, भोजन के बाद आलस्य का होना ( =भक्तसम्मद ), और चित्त का न लगना—इनका बुरी तरह मनन करना अनुत्पन्न आलस्य की ( =धीनमिद्ध ) उत्पत्ति के लिए आहार है ।

मिथुओ ! चित्त की खंचलता का बुरी तरह मनन करना—यही अनुत्पन्न औद्धत्य-कौकृत्य की उत्पत्ति के लिए आहार है ।

• मिथुओ ! विचिकित्सा को ( =शंका ) त्याग देने वाले जो धर्म हैं उनका बुरी तरह मनन करना—यही अनुत्पन्न विचिकित्सा की उत्पत्ति और उत्पन्न विचिकित्सा की वृद्धि के लिए आहार है ।

### ( ख )

#### बोधयज्ञों का आहार

मिथुओ ! अनुत्पन्न स्मृति-संबोधयज्ञ की उत्पत्ति और उत्पन्न स्मृति-संबोधयज्ञ की भावना और पूर्णता के लिए क्या आहार है ?

[ देखो—“बोधयज्ञ-संयुक्त ४४ १. २ (ख)” ]

### ई ५ पञ्जवा सुच ( ४४ ५ ५ )

प्रसाधान् पर्यो कदा जाता है ?

— मन्ते ! सोम 'प्रशापान् निर्माक, प्रशापान् निर्माक' कहा करते हैं। मन्ते ! कोई कैसे प्रशापान् निर्माक कहा जाता है ?

मिथु ! सात बोध्या की भाषना और अभ्यास करने से कोई प्रशापान् निर्माक होता है। किन् सात बोध्या की ? 'उपेक्षा-संबोध्या' ।

### ई ६ दलिह सुच ( ४४ ५ ६ )

दरिद्र

मिथु ! सात बोध्या की भाषना और अभ्यास न करने से ही कोई दरिद्र कहा जाता है—

### ई ७ अदलिह सुच ( ४४ ५ ७ )

धनी

— मिथु ! सात बोध्या की भाषना और अभ्यास करने से ही कोई अदरिद्र कहा जाता है ।

### ई ८ आदिच सुच ( ४४ ५ ८ )

पूर्व छक्षण

मिथुओ ! जैसे आकाश में कणार्क का का जाना सूर्य के उदय होने का पूर्व-छक्षण है वैसे ही कल्याण-मित्र का मिथुना सात बोध्या की उपधि का पूर्व-छक्षण है ।

मिथुओ ! ऐसी भाषा की जाती है कि कल्याण-मित्र बाधा मिथु सात बोध्या की भाषना और अभ्यास करेगा ।

मिथुओ ! कैसे ?

मिथुओ ! मिथु विवेक स्मृति-संबोध्या उपेक्षा-संबोध्या की भाषना और अभ्यास करेगा है ।

### ई ९ पठम अङ्ग सुच ( ४४ ५ ९ )

अच्छी तरह मनन करना

मिथुओ ! अच्छी तरह मनन करना अपना एक आध्यात्मिक धर्म बना देने को छोड़ मैं किसी दूसरी चीज को नहीं देखता हूँ जो सात बोध्या उपलब्ध कर सके ।

मिथुओ ! ऐसी भाषा की जाती है कि अच्छी तरह मनन करने बाधा मिथु सात बोध्या की भाषना और अभ्यास करेगा ।

— मिथुओ ! मिथु विवेक स्मृति-संबोध्या उपेक्षा-संबोध्या की भाषना और अभ्यास करेगा है ।

### ई १० दुतिय अङ्ग सुच ( ४४ ५ १० )

कल्याण-मित्र

मिथुओ ! कल्याण-मित्र की अपना एक बाहर का धर्म बना देने को छोड़ मैं किसी दूसरी चीज को नहीं देखता हूँ जो सात बोध्या उपलब्ध कर सके ।

मिथुओ ! ऐसी भाषा की जाती है कि कल्याण-मित्र बाधा मिथु ।

आकाशनी धर्म समाप्त



## छठँ भाग

### बोध्द्वङ्ग षष्ठकम्

§ १. आहार सुत्त ( ४४, ६. १ )

#### नीवरणों का आहार

श्रावस्ती • जेतवन ।

भिक्षुओ ! पाँच नीवरणों तथा सात बोध्द्वङ्गों के आहार और अनाहार का उपदेश करूँगा ।  
उसे सुनो...

( क )

#### नीवरणों का आहार

भिक्षुओ ! अनुत्पन्न काम-उन्द की उत्पत्ति और उत्पन्न काम-उन्द की वृद्धि के लिए क्या आहार है ? भिक्षुओ ! खोन्दर्य के प्रति होनेवाली आसक्ति ( = शुभनिमित्त ) का बुरी तरह मनन करना—यही अनुत्पन्न काम-उन्द की उत्पत्ति और उत्पन्न काम-उन्द की वृद्धि के लिए आहार है ।

भिक्षुओ ! वैर-भाव ( = व्यापाद ) का बुरी तरह मनन करना—यही अनुत्पन्न वैर-भाव की उत्पत्ति और उत्पन्न वैर-भाव की वृद्धि के लिए आहार है ।

• भिक्षुओ ! धर्म का अभ्यास करने में मन का न लगना ( = अरति ), यत्न का छूटना और जँभाई लेना, भोजन के बाद आलस्य का होना ( = भत्तसम्मद ), और चित्त का न लगना—इनका बुरी तरह मनन करना अनुत्पन्न आलस्य की ( = ध्यानमिद्ध ) उत्पत्ति के लिए आहार है ।

• भिक्षुओ ! चित्त की चंचलता का बुरी तरह मनन करना—यही अनुत्पन्न औद्धत्य-कौकल्य की उत्पत्ति के लिए आहार है ।

भिक्षुओ ! विचिकित्सा को ( = शंका ) स्थान देने वाले जो धर्म हैं उनका बुरी तरह मनन करना—यही अनुत्पन्न विचिकित्सा की उत्पत्ति और उत्पन्न विचिकित्सा की वृद्धि के लिए आहार है ।

( ख )

#### बोध्द्वङ्गों का आहार

भिक्षुओ ! अनुत्पन्न सृष्टि-संबोध्द्वङ्ग की उत्पत्ति और उत्पन्न सृष्टि-संबोध्द्वङ्ग की भावना और पूर्णता के लिए क्या आहार है ?

[ देखो—“बोध्द्वङ्ग-संयुक्त ४४ ३ २ (ख)” ]

## ( ग )

## नीचरणों का अनाहार

मिथुनो ! अनुत्पन्न काम-कन्द की उत्पत्ति और उत्पन्न काम-कन्द की वृद्धि का अनाहार क्या है ? मिथुनो ! सौम्य की सुराहियों का अच्छी तरह भक्षण करना—यही अनुत्पन्न काम-कन्द की उत्पत्ति और उत्पन्न काम-कन्द की वृद्धि का अनाहार है ।

मिथुनो ! मैत्री से पित्त की विमुक्ति का अच्छी तरह भक्षण करना—यही अनुत्पन्न बर-भाव की उत्पत्ति और उत्पन्न बर-भाव की वृद्धि का अनाहार है ।

मिथुनो ! आरम्भ मात्र, निष्कर्म-भाव और पराक्रम-भाव का अच्छी तरह भक्षण करना—यही अनुत्पन्न आक्रमण की उत्पत्ति का अनाहार है ।

मिथुनो ! पित्त की क्षात्रिता का अच्छी तरह भक्षण करना—यही अनुत्पन्न क्षात्रिता की उत्पत्ति का अनाहार है ।

मिथुनो ! कुण्ड-भङ्गनाक सवोप-विधौष्य अच्छे-दुरे तथा कुण्ड-सुखक बर्षों का अच्छी तरह भक्षण करना—यही अनुत्पन्न विधिक्रिया की उत्पत्ति का अनाहार है ।

## ( घ )

## बोधर्षणों का अनाहार

मिथुनो ! अनुत्पन्न सृष्टि-संबोधर्षण की उत्पत्ति और उत्पन्न सृष्टि-संबोधर्षण की भावना और पूर्णता का क्या अनाहार है ? मिथुनो ! सृष्टि-संबोधर्षण को स्थान देनेवाले बर्षों का भक्षण न करना—यही अनुत्पन्न सृष्टि-संबोधर्षण की उत्पत्ति और उत्पन्न सृष्टि-संबोधर्षण की भावना और पूर्णता का अनाहार है ।

[ बोधर्षणों के आहार में जो "अच्छी तरह भक्षण करना है उसके स्थान पर "भक्षण न करना" करके दोष का बोधर्षणों का विस्तार समझ लेना चाहिए ]

## ३ २ परियाय सुप्त ( ४४ ६ ७ )

## दुग्धना होना

तब तब मिथु पहल और पात्र-बीच से पुराई समय ध्यायस्ती में मिश्रादन के लिए बैठे । तब उन मिथुनों को यह हुआ—मनी आबस्ती में मिश्रादन करने के लिए सबैरा है इगकिण तब तब जहाँ दूसरे मठ के साधुओं का आगत है वहाँ चले ।

तब वे मिथु जहाँ दूसरे मठ के साधुओं का आगत या वहाँ गये और कुण्ड-क्षेम पूरा कर एक और बैठ गये ।

एक और बड़े उन मिथुओं से दूसरे मठ के साधु बोले "आधुन ! अमल गौतम अपने आबर्षों को देगा उपदेश करते हैं—मिथुनो ! तुम तुम लोग पित्त को मीका करने वाले तथा मशा को दुर्बल करने वाले पौष की बरसों की उड़ चाल बोधर्षण की धर्षार्थता भावना करो । आधुन ! और हम भी अपने आबर्षों को देगा ही उपदेश करते हैं "सात बोधर्षण की धर्षार्थता भावना करो ।

"आधुन ! तो बर्षोंपदेश करने में अमल गौतम और हम दोनों में क्या भेद हुआ ।"

तब, वे भिक्षु उन परिव्राजकों के कहने का न तो अभिनन्दन और न विरोध कर, आसन से उठ चले गये—भगवान् के पास चल कर इसका अर्थ समझेंगे।

तब, वे भिक्षु भिक्षाटन से लोट भोजन कर लेने के घाट जहाँ भगवान् थे वहाँ गये, और भगवान् का अभिवादन कर एक ओर बैठ गये।

एक ओर बैठ, वे भिक्षु भगवान् से बोले, “भन्ते ! हम लोग पूर्वाह्न समय पहुँच और पात्र चीवर ले ।”

“भन्ते ! तब, हम उन परिव्राजकों के कहने का न तो अभिनन्दन और न विरोध कर, आसन से उठ चले आये—भगवान् के पास इसका अर्थ समझेंगे।”

भिक्षुओ ! यदि दूसरे मत के साधु ऐसा पृष्ठ, तो उन्हें यह उत्तर देना चाहिये—भाङ्गुस ! एक दृष्टि-कोण है जिससे पाँच नीवरण दस, और सात बोध्यंग चाँदह होते हैं। भिक्षुओ ! यह कहने पर दूसरे मत के साधु इसे समझा नहीं सकेंगे, बड़ी गढबडी में पड़ जायेंगे।

सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि यह विषय से बाहर का प्रश्न है। भिक्षुओ ! देवता, मार और ब्रह्मा सहित सारे लोक में, तथा श्रमण-ब्राह्मण देव-मनुष्य वाली इस प्रजा में बुद्ध, बुद्ध के श्रावक, या इनसे सुने हुये मनुष्य को छोड़, मैं किसी दूसरे को ऐसा नहीं देखता हूँ जो इन प्रश्न का उत्तर दे सके।

## ( क )

पाँच दस होते हैं

भिक्षुओ ! यह कौन-सा दृष्टिकोण है जिससे पाँच नीवरण दस होते हैं ?

भिक्षुओ ! जो आध्यात्म काम-छन्द है वह भी नीवरण है, और जो बाह्य काम-छन्द है वह भी नीवरण है। दोनों काम-छन्द नीवरण ही कहे जाते हैं। इस दृष्टि-कोण से एक दो हो गये।

भिक्षुओ ! आध्यात्म प्यापाद बाह्य न्यापाद ।

भिक्षुओ ! जो ख्यान (=शारीरिक आलस्य) है वह भी नीवरण है, और जो मृदु (=मानसिक आलस्य) है वह भी नीवरण है।

भिक्षुओ ! जो बोद्धव्य है वह भी नीवरण है, और जो कौकृत्य है वह भी नीवरण है। दोनों औद्धव्य-कौकृत्य नीवरण कहे जाते हैं। इन दृष्टि-कोण से एक दो हो गये।

भिक्षुओ ! जो आध्यात्म धर्मों में विचिकित्सा है वह भी नीवरण है, और जो बाह्य धर्मों में विचिकित्सा है वह भी नीवरण है। दोनों विचिकित्सा-नीवरण ही कहे जाते हैं।

भिक्षुओ ! इस दृष्टि-कोण से पाँच नीवरण दस होते हैं।

## ( ख )

सात चौदह होते हैं

भिक्षुओ ! वह कौन सा दृष्टि-कोण है जिससे सात बोध्यंग चौदह होते हैं ?

भिक्षुओ ! जो आध्यात्म धर्मों में स्मृति है वह भी स्मृति-संबोध्यंग है, और जो बाह्य धर्मों में स्मृति है वह भी स्मृति-संबोध्यंग है। दोनों स्मृति-संबोध्यंग ही कहे जाते हैं। इस दृष्टि-कोण से एक दो हो गये।

भिक्षुओ ! जो आध्यात्म धर्मों में प्रज्ञा से विचार करता है=चिन्तन करता है वह भी धर्म-विषय-बोध्यंग है।

## ( ग )

## मीथर्यों का अनाहार

मिथुनो ! अनुत्पन्न काम-उन्मत् की उत्पत्ति और उत्पन्न काम-उन्मत् की वृद्धि का अनाहार क्या है ? मिथुनो ! सौम्य की घुराइयों का अच्छी तरह मसन करना—यही अनुत्पन्न काम-उन्मत् की उत्पत्ति और उत्पन्न काम-उन्मत् की वृद्धि का अनाहार है ।

मिथुनो ! मीठी से पिच की विमुक्ति का अच्छी तरह मसन करना—यही अनुत्पन्न बैर-भाव की उत्पत्ति और उत्पन्न बैर-भाव की वृद्धि का अनाहार है ।

मिथुनो ! आरम्भ गानु, पिच्छम-गानु और पराङ्गम-गानु का अच्छी तरह मसन करना—यही अनुत्पन्न आकल्प की उत्पत्ति का अनाहार है ।

मिथुनो ! पिच की क्षान्ति का अच्छी तरह मसन करना—यही अनुत्पन्न जीवत्व-कीर्तन की उत्पत्ति का अनाहार है ।

मिथुनो ! कुत्तल-भङ्गशाक सद्गोप-विर्ज्ञोप अच्छे-तुरे, तथा कुत्तल-शुक्ल धर्मों का अच्छी तरह मसन करना—यही अनुत्पन्न विचिकित्सा की उत्पत्ति का अनाहार है ।

## ( घ )

## बोध्यों का अनाहार

मिथुनो ! अनुत्पन्न स्पृति-संबोधन की उत्पत्ति और उत्पन्न स्पृति-संबोधन की प्राप्ति और पूर्णता का क्या अनाहार है ? मिथुनो ! स्पृति-संबोधन को स्थान सेनेवाले धर्मों का मसन न करना—यही अनुत्पन्न स्पृति-संबोधन की उत्पत्ति और उत्पन्न स्पृति-संबोधन की प्राप्ति और पूर्णता का अनाहार है ।—

[ बोध्यों के अनाहार में जो “अच्छी तरह मसन करना” है उसके स्थान पर “मसन न करना” करके शेष का अनाहार समझ लेना चाहिए ]

३२ परिभाषा सुच ( ४४ ६ ० )

## पुरुषा होना

तब कुछ मिथु पहन और पतल-बीबर के रक्षाक समन आबस्ती में मिश्रादन के लिए पड़े ।

तब उन मिथुनों को यह हुआ—अभी आबस्ती में मिश्रादन करने के लिए सबैरा है इसलिये तब तक वहाँ दूसरे मत के साधुओं का आराम है वहाँ चले ।

तब वे मिथु वहाँ दूसरे मत के साधुओं का आराम का वहाँ चले और कुत्तल-शुक्ल पत्र पर एक और बैठ गये ।

पत्र नीचे बैठे उन मिथुनों से दूसरे मत के साधु बोले “आधुस ! असन गौतम अपने आबनों को देना उपदेश करते हैं—मिथुनो ! तुम लोग बिच को मीठा करने वाले तथा प्रश्न को दुर्बल करने वाले पूर्व बोध्यों को छोड़ सात बोध्यों की ब्यार्थता प्राप्ति करो । आधुस ! और हम भी अपने आबनों को देना ही उपदेश करते हैं सात बोध्यों की ब्यार्थता प्राप्ति करो ।

“आधुस ! ती बर्तनदेव करने में असन गौतम और हम लोगों में क्या भेद हुआ ?”

संबोध्यांग की , और प्रीति-संबोध्यांग की भावना करनी चाहिये । सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि जो चित्त लीन है वह इन धर्मों से अच्छी तरह उठाया जा सकता है ।

भिक्षुओ ! जैसे, कोई पुरुष कुठ आग जलाना चाहता हो । वह सूखे तृण ढाले, सूखे गोबर ढाले, सूखी लकड़ियाँ ढाले, मुँह से फूँक लगावे, धूल नहीं बिखेरे, तो क्या वह पुरुष आग जला सकेगा ?

हाँ भन्ते !

भिक्षुओ ! वैसे ही, जिस समय चित्त लीन होता है उस समय धर्म-विचय-संबोध्यांग की भावना करनी चाहिये । सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि जो चित्त लीन है वह इन धर्मों से अच्छी तरह उठाया जा सकता है ।

## ( ग )

समय नहीं है

भिक्षुओ ! जिस समय चित्त उद्धत होता है उस समय धर्म-विचय-संबोध्यांग की भावना नहीं करनी चाहिये, वीर्य-संबोध्यांग , प्रीति-संबोध्यांग की भावना नहीं करनी चाहिये । सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि जो चित्त उद्धत है वह इन धर्मों से अच्छी तरह शान्त नहीं किया जा सकता है ।

भिक्षुओ ! जैसे, कोई पुरुष आग की एक जलती ढेर को बुझाना चाहे । वह उसमें सूखे तृण ढाले, सूखे गोबर ढाले, सूखी लकड़ियाँ ढाले, मुँह से फूँक लगावे, धूल नहीं बिखेरे, तो क्या वह पुरुष आग बुझा सकेगा ?

नहीं भन्ते !

भिक्षुओ ! वैसे ही, जिस समय चित्त उद्धत होता है उस समय धर्म-विचय-संबोध्यांग की भावना नहीं करनी चाहिये । भिक्षुओ ! क्योंकि, जो चित्त उद्धत है वह इन धर्मों से अच्छी तरह शान्त नहीं किया जा सकता है ।

## ( घ )

समय है

भिक्षुओ ! जिस समय चित्त उद्धत होता है उस समय प्रश्रद्धि-संबोध्यांग , समाधि-संबोध्यांग , उपेक्ष-संबोध्यांग की भावना करनी चाहिये । सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि जो चित्त उद्धत है वह इन धर्मों से अच्छी तरह शान्त किया जा सकता है ।

भिक्षुओ ! जैसे कोई पुरुष आग की एक जलती ढेर को बुझाना चाहे । वह उसमें भीगे तृण ढाले, भीगे गोबर , भीगी लकड़ियाँ ढाले, पानी छीटे, और धूल बिखेरे दे, तो क्या वह पुरुष आग बुझा सकेगा ?

भिक्षुओ ! वैसे ही, जिस समय चित्त उद्धत होता है उस समय प्रश्रद्धि-संबोध्यांग की भावना करनी चाहिये ।

## § ४. मेत्त सुत्त ( ४४ ६ ४ )

मैत्री-भावना

एक समय भगवान् कोलिय ( जनपद ) में हल्लिद्धवरुन नाम के कोलियों के कस्ये में विहार करते थे ।

तब कुछ भिक्षु पूर्वाह्न समय पहन, और पात्र-चीवर ले हल्लिद्धवसन में भिक्षाटन के लिये गये ।

मिथुनो ! जो शारीरिक वीर्य है वह भी वीर्य-संबोधन है और जो मानसिक वीर्य है वह भी वीर्य-संबोधन है । दोनों वीर्य-संबोधन ही कहे जाते हैं ।

मिथुनो ! जो सचितक-सविचार प्रीति है वह भी प्रीति-संबोधन है और जो सचितक-अविचार प्रीति-संबोधन है । दोनों प्रीति-संबोधन ही कहे जाते हैं ।

मिथुनो ! जो काया की प्रमद्विष है वह भी प्रमद्विष-संबोधन है और जो चित्त की प्रमद्विष है वह भी प्रमद्विष-संबोधन है ।

मिथुनो ! जो सचितक-सविचार समाधि है वह भी समाधि-संबोधन है और जो सचितक-अविचार समाधि है वह भी समाधि-संबोधन है ।

मिथुनो ! जो व्यापार-धर्मों में उपेक्षा है वह भी उपेक्षा-संबोधन है और जो बाध-धर्मों में उपेक्षा है वह भी उपेक्षा-संबोधन है । दोनों उपेक्षा-संबोधन ही कहे जाते हैं । इस दृष्टि-कोण से भी एक यो हो गय ।

मिथुनो ! इस दृष्टि-कोण से साठ बीबरण बीबद होते हैं ।

### § ३ अग्नि सूक्त ( ४४ ६ ३ )

समय

[ परिपाक सूत्र के समान ही ]

मिथुनो ! यदि सूत्रों में मत्त के साठ पुराण पृष्ठों को उन्हें वह पृष्ठना चाहिये—अगुप्त ! जिस समय चित्त कील होता है उस समय किंच बोधन की माचना नहीं करनी चाहिये और किंच बोधन की माचना करनी चाहिये । अगुप्त ! जिस समय चित्त उद्धत (उर्ध्वक) होता है उस समय किंच बोधन की माचना नहीं करनी चाहिये और किंच बोधन की माचना करनी चाहिये । मिथुनो ! यह पृष्ठने पर सूत्रों में मत्त के साठ पृष्ठों समस्त नहीं सँभरे, बल्कि गणकरी में यह सँभरे ।

सो क्यों ? ई किन्ती सूत्रों को ऐसा नहीं देखता है जो इस प्रश्न का उत्तर दे सके ।

( क )

समय नहीं है

मिथुनो ! जिस समय चित्त कील होता है उस समय प्रमद्विष-संबोधन की माचना नहीं करनी चाहिये समाधि-संबोधन की माचना नहीं करनी चाहिये उपेक्षा-संबोधन की माचना नहीं करनी चाहिये । सो क्यों ? मिथुनो ! क्योंकि जो चित्त कील होता है वह इस घर्मों में उद्धत नहीं का सत्ता ।

मिथुनो ! जैसे कोई पुराण उद्धत भाग जलना चाहता हो । वह भीगे हुए काले भीगे भीगे काले काले पानी छिड़के दे पूर किलेरे दे तो क्या वह पुराण भाग जल सकेगा ? नहीं सके !

मिथुनो ! जैसे ही जिस समय चित्त कील होता है उस समय प्रमद्विष-संबोधन की माचना नहीं करनी चाहिये । सो क्यों ? मिथुनो ! क्योंकि जो चित्त कील होता है वह इस घर्मों में उद्धत नहीं का सत्ता ।

( ख )

समय है

मिथुनो ! जिस समय चित्त कील होता है उस समय प्रमद्विष-संबोधन की, बोध-

संज्ञा को मन में न ला, 'आकाश अनन्त है' ऐसे आकाशानन्त्यायतन तक होती है—ऐसा मैं कहता हूँ । वह भिक्षु इसके ऊपर की विमुक्ति को नहीं पाता है ।

भिक्षुओ ! किन प्रकार भावना की गई मुद्रिता से चित्त को विमुक्ति के क्या गति = फल = परिणाम होते हैं ?

भिक्षुओ ! आकाशानन्त्यायतन का चिह्नकूल अतिक्रमण कर, "विज्ञान अनन्त है" ऐसे विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त होकर विहार करता है । भिक्षुओ ! मुद्रिता से चित्त की विमुक्ति विज्ञानानन्त्यायतन तक होती है—ऐसा मैं कहता हूँ ।

भिक्षुओ ! किन प्रकार भावना की गई उपेक्षा से चित्त की विमुक्ति के क्या गति = फल = परिणाम होते हैं ?

भिक्षुओ ! विज्ञानानन्त्यायतन का चिह्नकूल अतिक्रमण कर "कुल नहीं है" ऐसे आकिञ्चन्यायतन प्राप्त होकर विहार करता है । भिक्षुओ ! उपेक्षा से चित्त की विमुक्ति आकिञ्चन्यायतन तक होती है । वह भिक्षु इसके ऊपर की विमुक्ति को नहीं पाता है ।

## § ५. सङ्गारव सुत्त ( ४४. ६ ५ )

### मन्त्र का नसूयना

श्रावस्ती जेतवन ।

तब, सङ्गारव ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे वहाँ आया और कुशल-क्षेम पूछ कर एक ओर बैठ गया । एक ओर बैठ, सङ्गारव ब्राह्मण भगवान् से बोला—“हे गौतम ! क्या कारण है कि कभी-कभी दीर्घकाल तक भी अभ्यास किये गये मन्त्र नहीं उठते हैं, और जो अभ्यास नहीं किये गये हैं उनका तो कहना ही क्या ? और, क्या कारण है कि कभी-कभी दीर्घकाल तक अभ्यास नहीं किये गये भी मन्त्र झट उठ जाते हैं, जो अभ्यास किये गये हैं उनका तो कहना ही क्या ?

### ( क )

ब्राह्मण ! जिस समय चित्त काम-राग से अभिभूत रहता है, उत्पन्न काम-राग के मोक्ष को यथार्थ नहीं जानता है, उस समय वह अपना अर्थ भी ठीक ठीक नहीं जानता या देखता है, दूसरे का अर्थ भी, दोनों का अर्थ भी । उस समय, दीर्घकाल तक अभ्यास किये गये भी मन्त्र नहीं उठते हैं ।

ब्राह्मण ! जैसे, कोई जल-पात्र हो जिसमें लाह, या हल्दी, या नील, या मँजीठ लगा हो । उसमें कोई अपनी परछाईं देखना चाहे तो ठीक ठीक नहीं देख सकता हो ।

ब्राह्मण ! जैसे ही, जिस समय चित्त काम-राग से अभिभूत रहता है, उस समय, दीर्घकाल तक अभ्यास किये गये भी मन्त्र नहीं उठते हैं ।

ब्राह्मण ! जिस समय, चित्त व्यापाद से अभिभूत रहता है, उस समय दीर्घकाल तक अभ्यास किये गये भी मन्त्र नहीं उठते हैं ।

ब्राह्मण ! जैसे, कोई जल-पात्र आग से सतप्त, खोलता हुआ, भाप निकलता हुआ हो । उसमें कोई अपनी परछाईं देखना चाहे तो ठीक-ठीक नहीं देख सकता हो । ब्राह्मण ! जैसे ही, जिस समय चित्त व्यापाद से ।

ब्राह्मण ! जिस समय, चित्त भालस्य से ।

ब्राह्मण ! जैसे, कोई जल-पात्र सेवार और पक मे मँदला हो । ।

एक और बड़े उम मिथुनों से वृत्ते मत के साथ बोके 'आयुस ! धर्मम गौतम अपने वाक्यों का इस प्रकार धर्मोपदेश करते हैं—मिथुनो ! तुम विद्य को मैत्रा करनेवाले तथा प्रज्ञा को दुर्बल बना देनेवाले पाँच नीचियों को छोड़ मैत्री-सहगत विद्य से एक विद्या को ध्यास कर विहार करो जैसे ही दूसरी तीसरी और चौथी विद्या को । उपर, नीचे टे-मई समी तरह के सारे कोक को विपुल महान्, अप्रमाण बैरहित तथा व्यापार-रहित मैत्री-सहगत विद्य से ध्यास कर विहार करो । कर्म-सहगत विद्य से । मुद्रित-सहगत विद्य से । जपेसा-सहगत विद्य से ।

'आयुस ! आर हम भी अपने आचकों को इसी प्रकार धर्मोपदेश करते हैं—आयुस ! पाँच नीचियों को छोड़ मैत्री-सहगत विद्य से एक विद्या को ध्यास कर विहार करो । कर्म-सहगत विद्य से । मुद्रित-सहगत विद्य से । जपेसा-सहगत विद्य से ।

"आयुस ! तो धर्मोपदेश करने में धर्मम गौतम और हममें क्या भेद हुआ ?"

तब ये मिथु वृत्ते मत के साथियों के कहने का तब अभिनन्दन और न विरोध कर आसन से उठ खड़े गये—भगवान् के पास बसकर इसका अर्थ समझेंगे ।

तब मिथ्यात्म से छान मोहन कर खने के वाक् ये मिथु जाहीं भगवान् ये बहोँ आये और भगवान् का अभिवादन कर एक आर बैठ गये । एक और बड़े ये मिथु भगवान् से बोके "अन्ते ! दम श्रेष्ठ पूर्वाह्न समय ।

"अन्ते ! तब हम उम परिमात्रों के कहने का न तो अभिनन्दन आर न विरोध कर, आसन से उठ खड़े आये—भगवान् के पास बसकर इसका अर्थ समझेंगे ।

मिथुभा ! यदि वृत्ते मत के साथ जमा कद तो उनका यह पूजना चाहिये—आयुस ! किस प्रकार भावना की गई मन्त्री न विद्य की विमुक्ति से क्या गति=उत्थ=परिणाम होते हैं ? किस प्रकार भावना की गई उपशा से विद्य की विमुक्ति के क्या गति=उत्थ=परिणाम होते हैं ? मिथुनो ! पर ज्ञान पर वृत्ते मत के साथ इस समारण न सको बरिष्ठ बर्षी बपुर्ही में एक जायेंगे ।

गो बर्षो ! मैं किसी वृत्ते को ऐसा नहीं देखता हूँ जो इस प्रश्न का उत्तर दे सके ।

मिथुभा ! किस प्रकार भावना की गई मन्त्री न विद्य की विमुक्ति के क्या गति=उत्थ=परिणाम होते हैं ?

मिथुभा ! मिथु मैत्री-सहगत इत्यति-सहगत ग की भावना करना है "अद्वैत-भावोपदेश की भावना करता है तो विवेक विद्या तथा विरोध ही और ए अज्ञता है और निम्न मुक्ति सिद्ध होती है । यदि वह चाहता है कि 'अप्रतिद्वय में प्रतिद्वय की रीति नर विहार करें ता वैसा ही विहार करता है । यदि वह चाहता है कि 'प्रतिद्वय में अप्रतिद्वय की रीति नर विहार करें ता वैसा ही विहार करता है । यदि वह चाहता है कि 'अप्रतिद्वय पर प्रतिद्वय में प्रतिद्वय की रीति नर विहार करें तो वैसा ही विहार करता है । यदि वह चाहता है कि 'अप्रतिद्वय आर प्रतिद्वय दोनों को छोड़ अद्वैत-सहगत इत्यति-सहगत आर नगम्य दोहर विहार करें तो वैसा ही विहार करता है । तुम वा विमोह को प्राप्त करना है । मिथुनो ! मैत्री न विद्य की विमुक्ति शुभ-नर्त्तन है । वह मिथु हमसे उत्तर की विमुक्ति को नहीं जाना है ।

मिथुनो ! किस प्रकार भावना की जगता न विद्य की विमुक्ति के क्या गति=उत्थ=परिणाम होते हैं ?

मिथुनो ! -- ( मैत्री-सहगत के सम्बन्ध ही अज्ञान-सहगत ) यदि वह चाहता है कि 'अप्रतिद्वय की प्रतिद्वय दोनों को छोड़ अद्वैत-सहगत आर नगम्य दोहर विहार करें तो वैसा ही विहार करता है । वा अज्ञान का विवेक अज्ञान कर प्रतिद्वय-रीति के जगता हो करने से अज्ञान-



संज्ञा को मन में न ला, 'आकाश अनन्त है' ऐसे आकाशानन्त्यायतन तक होती है—ऐसा मैं कहता हूँ । वह भिक्षु इसके ऊपर की विमुक्ति को नहीं पाता है ।

भिक्षुओ ! किस प्रकार भावना की गई मुद्रिता से चित्त की विमुक्ति के क्या गति = फल = परिणाम होते हैं ?

भिक्षुओ ! आकाशानन्त्यायतन का विष्कूल अतिक्रमण कर, "विज्ञान अनन्त है" ऐसे विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त होकर विहार करता है । भिक्षुओ ! मुद्रिता से चित्त की विमुक्ति विज्ञानानन्त्यायतन तक होती है—ऐसा मैं कहता हूँ ।

भिक्षुओ ! किस प्रकार भावना की गई उपेक्षा से चित्त की विमुक्ति के क्या गति = फल = परिणाम होते हैं ?

भिक्षुओ ! विज्ञानानन्त्यायतन का विष्कूल अतिक्रमण कर "कुल नहीं है" ऐसे आकिञ्चन्यायतन प्राप्त होकर विहार करता है । भिक्षुओ ! उपेक्षा से चित्त की विमुक्ति आकिञ्चन्यायतन तक होती है । वह भिक्षु इसके ऊपर की विमुक्ति को नहीं पाता है ।

## ३ ५. सङ्गारव मुत्त ( ४४. ६. ५ )

### मन्त्र का न-सूचना

श्रावस्ती जेतवन ।

तथ, संगारव ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे वहाँ आया और कुशल-क्षेम पूछ कर एक ओर बैठ गया । एक ओर बैठ, संगारव ब्राह्मण भगवान् से बोला—“हे गौतम ! क्या कारण है कि कभी-कभी दीर्घकाल तक भी अभ्यास किये गये मन्त्र नहीं उठते हैं, और जो अभ्यास नहीं किये गये हैं उनका तो कहना ही क्या ? और, क्या कारण है कि कभी-कभी दीर्घकाल तक अभ्यास नहीं किये गये भी मन्त्र छट उठ जाते हैं, जो अभ्यास किये गये हैं उनका तो कहना ही क्या ?

### ( क )

ब्राह्मण ! जिस समय चित्त काम-राग से अभिभूत रहता है, उत्पन्न काम-राग के मोक्ष को यथार्थत नहीं जानता है, उस समय वह अपना अर्थ भी ठीक ठीक नहीं जानता था देखता है, दूसरे का अर्थ भी , दोनों का अर्थ भी' । उस समय, दीर्घकाल तक अभ्यास किये गये भी मन्त्र नहीं उठते हैं ।

ब्राह्मण ! जैसे, कोई जल-पात्र हो जिसमें लाह, या हल्दी, या नील, या मेंजीठ लगा हो । उसमें कोई अपनी परछाईं देखना चाहे तो ठीक ठीक नहीं देख सकता हो ।

ब्राह्मण ! जैसे ही, जिस समय चित्त काम-राग में अभिभूत रहता है, उस समय, दीर्घकाल तक अभ्यास किये गये भी मन्त्र नहीं उठते हैं ।

ब्राह्मण ! जिस समय, चित्त व्यापाठ से अभिभूत रहता है, उस समय दीर्घकाल तक अभ्यास किये गये भी मन्त्र नहीं उठते हैं ।

ब्राह्मण ! जैसे, कोई जल-पात्र आग से सतप्त, खीलता हुआ, भाप निकलता हुआ हो । उसमें कोई अपनी परछाईं देखना चाहे तो ठीक-ठीक नहीं देख सकता हो । ब्राह्मण ! जैसे ही, जिस समय चित्त व्यापाठ से ।

ब्राह्मण ! जिस समय, चित्त आलस्य से ।

ब्राह्मण ! जैसे, कोई जल-पात्र सेवार आंग पर में दूला हो । ।

ब्राह्मण ! जिस समय चित्त भीक्षुत्व-कौतुक से ।

ब्राह्मण ! उस कोई जल-पात्र हुआ से बेग उत्पन्न कर दिया गया चञ्चल हा । ।

ब्राह्मण ! जिस समय चित्त विचिकित्सा से ।

ब्राह्मण ! जैसे काहूँ गैदुका बहु-पात्र अंधकार में रक्खा हो । उसमें कोई भयभी परछाईं देखना चाहे तो डीक-डीक नहीं देख सकता हो । ब्राह्मण ! वैसे ही जिस समय चित्त विचिकित्सा से अभिभूत रहता है उत्पन्न विचिकित्सा के मोह को पर्याप्त नहीं जानता है उस समय वह अपना भर्ष भी डीक-डीक नहीं जानता या देखता है दूसरे का भर्ष भी दोनों का भर्ष भी । उस समय दीर्घकाळ तक अभ्यास किए गये भी मन्त्र नहीं उठते हैं ।

ब्राह्मण ! यही कारण है कि कभी-कभी दीर्घकाळ तक अभ्यास किये गये भी मन्त्र नहीं उठते हैं ।

( स )

ब्राह्मण ! जिस समय चित्त कामराग से अभिभूत नहीं रहता है उत्पन्न कामराग के मोह को पर्याप्त जानता है उस समय वह अपना भर्ष भी डीक-डीक जानता हीर देखता है, दूसरे का भर्ष भी दोनों का भर्ष भी । उस समय दीर्घकाळ तक अभ्यास न किये गये मन्त्र भी छत्र उठ जाते हैं ।

ब्राह्मण ! जैसे काहूँ बल पात्र हा जिसमें साह इन्दी नीक या मँडीक न लगा हो । उसमें काहूँ भयभी परछाईं देखना चाहे तो डीक-डीक देख के । ब्राह्मण ! वैसे ही ।

[ इमी मन्त्र, दूसरे बार नीचरमों के विषय में भी समझ लेना चाहिये ]

ब्राह्मण ! यही कारण है कि कभी-कभी दीर्घकाळ तक अभ्यास न किये गये मन्त्र भी छत्र उठ जाते हैं ।

ब्राह्मण ! यह सात भावरस-रहित और चित्त के उपकलेया स रहित बोधार्थ के साहित्य और अन्वयत होने से विद्या और विमुक्ति के चक्र का साक्षात्कार होता है । नीम से सात १ स्फुटि-संगर्भण्य उपस्था-संभार्यण्य ।

यह कहने पर संगारण्य ब्राह्मण भगवान् स बोला "भन्ते ! मुझे उपामक स्वीकार करें ।"

५ ६ अमम सुत ( ४४ व ६ )

परमज्ञान-वृत्त का दण्ड

जब समय भगवान् राजशुभ्र में 'शुद्धशुद्ध' बर्षत पर विहार करते थे ।

जब राजशुभ्र भगवत् जहाँ भगवत् थे वहाँ जाया और भगवान् का अविचारण कर एक बार बैठ गया ।

एक बार बैठ राजशुभ्र भगवत् से बोला "भन्ते ! पूरण्य बन्धन्य कहता है कि— परम ज्ञान के अर्थात् के हेतु-उत्पन्न नहीं है किना हेतु-उत्पन्न के ज्ञान का अर्थात् होता है । ज्ञान ज्ञान के अर्थ का भी हेतु-उत्पन्न नहीं है किना हेतु-उत्पन्न के ज्ञान का अर्थ होता है । भन्ते ! धारणाएँ दृग विद्ये सिं वरा करन हैं १

राजशुभ्र ! परम ज्ञान के अर्थान् के हेतु-उत्पन्न होते हैं हेतु और मन्त्र से ही उसका अर्थान् होता है । राजशुभ्र ! परम ज्ञान के अर्थान् का भी हेतु-उत्पन्न होता है हेतु-उत्पन्न से ही उसका अर्थान् होता है ।

## ( क )

भन्ते ! परम-ज्ञान के अदर्शन के हेतु=प्रत्यय क्या है, कैसे हेतु=प्रत्यय से ही उसका अदर्शन होता है ?

राजकुमार ! जिस समय चित्त कामराग से अभिभूत होता है, उस समय उत्पन्न कामराग के मोक्ष को यथार्थत न जानता और न देखता है । राजकुमार ! यह भी हेतु=प्रत्यय है जिससे परम-ज्ञान का अदर्शन होता है । इस तरह, हेतु=प्रत्यय से ही उसका अदर्शन होता है ।

व्यापाठ । आलस्य । आद्वैत्य-कोट्युक्त । विचिकित्सा ।

भन्ते ! यह धर्म क्या कहे जाते हैं ?

राजकुमार ! यह धर्म 'नीवरण' कहे जाते हैं ।

भन्ते ! ठीक है, यह सच में नीवरण है । भन्ते ! यदि एक नीवरण से भी अभिभूत हो तो सत्य को जान या देख नहीं सकता है, पाँच की तो बात ही क्या !

## ( ख )

भन्ते ! परम-ज्ञान के दर्शन के हेतु=प्रत्यय क्या है, कैसे हेतु=प्रत्यय से ही उसका दर्शन होता है ? राजकुमार ! भिक्षु विवेक । स्मृति-नवबोधग की भावना करता है । स्मृति-नवबोधग से भावित चित्त यथार्थ को जान और देख लेता है । राजकुमार ! यह भी हेतु=प्रत्यय है जिससे परम-ज्ञान का दर्शन होता है । इस तरह, हेतु=प्रत्यय से ही उसका दर्शन होता है ।

धर्मविचय । धीर्य । प्रीति । प्रश्रद्धि । गमाधि । उपेक्षा ।

भन्ते ! यह धर्म क्या कहे जाते हैं ?

राजकुमार ! यह धर्म 'बोधग' कहे जाते हैं ।

भन्ते ! ठीक है, यह सच में बोधग है । भन्ते ! एक बोधगसे युक्त हो कर भी यथार्थ को देख और जान ले, सात की तो बात ही क्या ! गृध्रकूट पर्वत पर चलने से जो थकावट आई थी, दूर हो गई, धर्म को जान लिया ।

बोधग पष्टकम् समाप्त

ब्राह्मण ! जिस समय वित्त आन्दोल्य-काहुत्य से ।

ब्राह्मण ! जैसे, कोई बख-पात्र इवा से बेग उत्पन्न कर दिया गया बखरु हो । ।

ब्राह्मण ! जिस समय वित्त विधिक्रिस्ता स ।

ब्राह्मण ! जैसे कोई गैदका बख-पात्र अंधकार में रक्खा हो । उसमें कोई अपनी परछाई देखा चाहे तो डीक-डीक नहीं देख सकता हो । ब्राह्मण ! जैसे ही जिस समय वित्त विधिक्रिस्ता से अभिमूढ रहता है, उत्पन्न विधिक्रिस्ता के मोक्ष को घघार्थतः नहीं जानता है उस समय वह अपना अर्थ भी डीक डीक नहीं जानता वा देखता है दूसरे का अर्थ भी दोनों का अर्थ भी । उस समय शीर्षकाक तक अभ्यास किये गये भी मन्त्र नहीं उठते हैं ।

ब्राह्मण ! यही कारण है कि कभी कभी शीर्षकाक तक अभ्यास किये गये भी मन्त्र नहीं उठते हैं ।

## ( स )

ब्राह्मण ! जिस समय वित्त कामराग से अभिमूढ नहीं रहता है उत्पन्न कामराग के मोक्ष को घघार्थतः जानता है, उस समय वह अपना अर्थ भी डीक-डीक जानता और देखता है दूसरे का अर्थ भी दोनों का अर्थ भी । उस समय शीर्षकाक तक अभ्यास न किये गये मन्त्र भी छर उठ जाते हैं ।

ब्राह्मण ! जैसे कोई बख-पात्र हो जिसमें छद्म इच्छा नीक वा मीठीद म लगा हो । उसमें कोई अपनी परछाई देखा चाहे तो डीक-डीक देना के । ब्राह्मण ! जैसे ही ।

[ इसी प्रश्न, दूसरे बार नीचर्यों के विषय में भी समझ देना चाहिये ]

ब्राह्मण ! यही कारण है कि कभी कभी शीर्षकाक तक अभ्यास न किये गये मन्त्र भी छर उठ जाते हैं ।

ब्राह्मण ! वह सात आबरु-रहित और वित्त के उपबन्ध से रहित बोधार्थ के माहित और अभ्यस्त होने से विद्या और विमुक्ति के फल का साक्षात्कार होता है । श्रीम से सात ? स्मृति-सम्बोधार्थ ।

वह कहते पर, सांगारव ब्राह्मण भगवान् स बोला मन्ते ! मुझे उपासक स्वीकार करें ।

## ५ ६ अमय मुक्त ( ४४ ६ ६ )

### परमज्ञान-दर्शन का हनु

एक समय भगवान् राजगृह में 'गुणकुट' पर्वत पर विहार करते थे ।

तब राजगुमार अमय यहाँ भगवान् से यहाँ आया और भगवान् को अभिवादन कर एक और बैठ गया ।

एक और बैठ राजगुमार अमय भगवान् से बोला "मन्ते ! पूरण कस्तप कहता है कि— परम ज्ञान के अदर्शन के हेतु-अत्यन्त नहीं है विना हेतु-अत्यन्त के ज्ञान का अदर्शन होता है । परम ज्ञान के दर्शन के भी हेतु-अत्यन्त नहीं है विना हेतु-अत्यन्त के ज्ञान का दर्शन होता है । मन्ते ! भगवान् हम विषय में क्या कहते हैं ?"

राजगुमार ! परम ज्ञान के अदर्शन के हेतु-अत्यन्त होते हैं हेतु और अत्यन्त से ही उत्पन्न अदर्शन होता है । राजगुमार ! परम ज्ञान का दर्शन के भी हेतु-अत्यन्त होते हैं हेतु-अत्यन्त से ही उत्पन्न दर्शन होता है ।

( घ )

महान् योगश्चेम

• भिक्षुओ ! इस तरह, अस्थिक-संज्ञा के भावित और अभ्यस्त होने से महान् योग-श्चेम होता है ।

( ङ )

महान्-संवेग

भिक्षुओ ! इस तरह, अस्थिक-संज्ञा के भावित और अभ्यस्त होने से महान् संवेग होता है ।

( च )

सुख से विहार

भिक्षुओ ! इस तरह, अस्थिक-संज्ञा के भावित और अभ्यस्त होने से सुख से विहार होता है ।

§ २. पुलवक सुत्त ( ४४ ७ २ )

पुलवक-भावना

( क-च ) भिक्षुओ ! पुलवक-संज्ञा के ।

§ ३. विनीलक सुत्त ( ४४. ७ ३ )

विनीलक-भावना

( क-च ) भिक्षुओ ! विनीलक-संज्ञा के ।

§ ४. विच्छिद्रक सुत्त ( ४४ ७. ४ )

विच्छिद्रक-भावना

( क-च ) भिक्षुओ ! विच्छिद्रक-संज्ञा के ।

§ ५. उद्धुमातक सुत्त ( ४४ ७ ५ )

उद्धुमातक-भावना

( क-च ) भिक्षुओ ! उद्धुमातक-संज्ञा के ।

§ ६. मैत्री सुत्त ( ४४ ७ ६ )

मैत्री-भावना

( क-च ) भिक्षुओ ! मैत्री के भावित और अभ्यस्त होने से ।

§ ७. करुणा सुत्त ( ४४ ७ ७ )

करुणा-भावना

( क-च ) भिक्षुओ ! करुणा के ।

§ ८. मुदिता सुत्त ( ४४. ७ ८ )

मुदिता-भावना

( क-च ) भिक्षुओ ! मुदिता के ।

§ ९. उपेक्षा सुत्त ( ४४ ७. ९ )

उपेक्षा-भावना

( क-च ) भिक्षुओ ! उपेक्षा के ।

§ १०. आनापान सुत्त ( ४४. ७ १० )

आनापान-भावना

( क-च ) भिक्षुओ ! आनापान ( =आश्वास-प्रश्वास ) स्मृति के ।

आनापान वर्ग समान

## सातवाँ भाग

### आनापान धर्म

§ १ अष्टिक सुत ( ४४ ७ १ )

अस्थिक भावना

( क )

महाफल महापूर्णास

भाषस्त्री श्लेषम ।

मिथुभो ! अस्थिक-संज्ञा के भावित और अन्वस्त होने से महाफल=महापूर्णास होता है ।

कैसे ?

मिथुभो ! मिथु विवेक अस्थिक-संज्ञावाले रचुति-सम्बोधन की भावना करता है अस्थिक-संज्ञावाले उपेक्षा-सम्बोधन की भावना करता है जिससे मुक्ति सिद्ध होती है ।

मिथुभो ! इस तरह अस्थिक-संज्ञा के भावित और अन्वस्त होने से महाफल=महापूर्णास होता है ।

( ख )

परम-ज्ञान

मिथुभो ! अस्थिक-संज्ञा के भावित और अन्वस्त होने से दो में एक एक भवत्व होता है—  
अपने देखते ही देखते परम ज्ञान की प्राप्ति या उपादान के कुछ शेष रहने पर अवागामी-फल का काम ।

कैसे ?

मिथुभो ! मिथु विवेक अस्थिक संज्ञावाले रचुति-सम्बोधन की भावना करता है अस्थिक-संज्ञावाले उपेक्षा-सम्बोधन की भावना करता है जिससे मुक्ति सिद्ध होती है ।

मिथुभो ! इस तरह अस्थिक-संज्ञा के भावित और अन्वस्त होने से दो में से एक एक भवत्व होता है ।

( ग )

महाम् अर्ध

मिथुभो ! अस्थिक-संज्ञा के भावित और अन्वस्त होने से महाम् अर्ध सिद्ध होता है ।

कैसे ?

मिथुभो ! मिथु विवेक अस्थिक-संज्ञावाले उपेक्षा-सम्बोधन की भावना करता है जिससे मुक्ति सिद्ध होती है ।

मिथुभो ! इस तरह अस्थिक-संज्ञा के भावित और अन्वस्त होने से महाम् अर्ध सिद्ध होता है ।

## नवौं भाग

### गङ्गा पेर्याल

§ १. पाचीन मुक्त ( ४४. ५. १ )

निर्वाण की ओर बढ़ना

भिक्षुओ ! जमे गंगा नदी पुरव की ओर जाती हे, जेमे ही मान सयोध्यग की भावना और अभ्यास करने वाला भिक्षु निर्वाण की ओर अग्रसर होना हे ।

कैसे.. ?

भिक्षुओ ! भिक्षु विवेक उपेक्षान्नयोध्यग की भावना आर अभ्यास करता हे, जिसमे मुक्ति सिद्ध होती हे ।

भिक्षुओ ! इसी तरह जमे गंगा नदी, भिक्षु निर्वाण की ओर अग्रसर होता हे ।

§ २-१२ सेस सुत्तन्ता ( ४४. ५. २-१२ )

निर्वाण की ओर बढ़ना

[ पण्णा के पंमा विन्तार कर लेना चाहिये ]

## दसवाँ भाग

### अप्रमाद वर्ग

§ १-१०. सव्वे सुत्तन्ता ( ४४ १० १-१० )

अप्रमाद आधार है

भिक्षुओ ! जितने प्राणी बिना पैर वाले, दो पैर वाले, चार पैर वाले, बहुत पैर वाले [ विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

अप्रमाद वर्ग समाप्त

## आठवाँ भाग

### निरोध वर्ग

§ १ असुम सुच ( ४४ ८ १ )

असुम-संज्ञा

( क-च ) सिद्धो ! असुम-संज्ञा के साधित और अभ्यस्त होने से ।

§ २ मरण सुच ( ४४ ८ २ )

मरण-संज्ञा

( क-च ) सिद्धो ! मरण-संज्ञा के साधित और अभ्यस्त होने से ।

§ ३ पटिक्कूल सुच ( ४४ ८ ३ )

पटिक्कूल-संज्ञा

( क-च ) सिद्धो ! पटिक्कूल-संज्ञा के ।

§ ४ अनमिरति सुच ( ४४ ८ ४ )

अनमिरति-संज्ञा

( क-च ) सिद्धो ! सारे कोठ में अनमिरति-संज्ञा के ।

§ ५ अनिघ सुच ( ४४ ८ ५ )

अमित्य-संज्ञा

( क-च ) सिद्धो ! अनित्य-संज्ञा के ।

§ ६ दुक्ख सुच ( ४४ ८ ६ )

दुक्ख-संज्ञा

( क-च ) सिद्धो ! दुक्ख-संज्ञा के ।

§ ७ अनत्त सुच ( ४४ ८ ७ )

अनात्म-संज्ञा

( क-च ) सिद्धो ! अनात्म-संज्ञा के ।

§ ८ महात्त सुच ( ४४ ८ ८ )

महात्त-संज्ञा

( क-च ) सिद्धो ! महात्त-संज्ञा के ।

§ ९ विराग सुच ( ४४ ८ ९ )

विराग-संज्ञा

( क-च ) सिद्धो ! विराग-संज्ञा के ।

§ १० निरोध सुच ( ४४ ८ १० )

निरोध-संज्ञा

( क-च ) सिद्धो ! निरोध-संज्ञा के साधित और अभ्यस्त होने से ।

निरोध वर्ग समाप्त



## नवाँ भाग

### गङ्गा पंच्याल

#### § १. पाचीन मुत्त ( ४४ ९ १ )

##### निर्वाण की ओर बढ़ना

भिक्षुओ ! जैसे गंगा नदी पृथ्वी की ओर बहती है, वैसे ही मात सर्वोप्यग की भावना आर अभ्यास करने वाला भिक्षु निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ।

कैसे ?

भिक्षुओ ! भिक्षु विवेक ' उपेक्षा-मशोप्यग की भावना आर अभ्यास करता है, जिसमें मुक्ति सिद्ध होती है ।

भिक्षुओ ! इसी तरह जैसे गंगा नदी, भिक्षु निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ।

#### § २-१२ सेस सुत्तन्ता ( ४४ ९. २-१२ )

##### निर्वाण की ओर बढ़ना

[ पृष्ठा के पैमा विन्तार कर लेना चाहिये ]

## दसवाँ भाग

### अप्रमाद वर्ग

#### § १-१०. सब्बे सुत्तन्ता ( ४४ १० १-१० )

##### अप्रमाद आधार है

भिक्षुओ ! जितने प्राणी बिना पैर वाले, दो पैर वाले, चार पैर वाले, बहुत पैर वाले [ विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

##### अप्रमाद वर्ग समाप्त

## ग्यारहवाँ भाग

### फलकरणीय वर्ग

§ १-१२ सम्बन्धे सूचन्ता ( ४४ ११ १-१० )

फल

मिथुनो ! जैसे जो कुछ बल-पूर्वक काम किये जात हैं [ विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

फलकरणीय वर्ग समाप्त

---

## बारहवाँ भाग

### एपण वर्ग

§ १-१२ सम्बन्धे सूचन्ता ( ४४ १० १-१२ )

हीन एपणार्थे

मिथुनो ! एपणा हीन है । क्या ही हीन ? काम-एपणा सब-एपणा प्रह्वार्थ-एपणा ।  
[ विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

एपण वर्ग समाप्त

---

## तेरहवाँ भाग

### ओघ वर्ग

§ १-९. सुत्तन्तानि ( ४४. १३. १-९ )

#### चार वाङ्

श्रावस्ती० जेतवन ।

भिष्णुमा । ओघ ( =माङ् ) चार है । कान मे चार ? काम , भव० , मिथ्या-दृष्टि , अविद्या । [ विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

§ १०. उद्धम्भागिय सुत्त ( ४४ १३. १० )

#### ऊपरी संयोजन

भिष्णुओ । पाँच ऊपरवाल मयोजन है । कान मे पाँच ? रूप-राग, अरूप-राग, मान, औद्धत्य, अविद्या । [ विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

#### ओघ वर्ग समाप्त

## चौदहवाँ भाग

### गङ्गा-पेय्याल

§ १. पाचीन सुत्त ( ४४ १४ १ )

#### निर्वाण की ओर बहना

भिष्णुओ । जैसे, गंगा नदी पूर्य की ओर बहती है, वैसे ही सात बोध्यंग का अभ्यास करने-वाला भिष्णु निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ।

कैसे ?

भिष्णुओ । भिष्णु राग, द्वेष आर मोह को दूर करनेवाले उपेक्षा-सम्बोध्यंग की भावना करता है ।

भिष्णुओ । इस तरह, जैसे गंगा नदी पूर्य की ओर बहती है, वैसे ही सात बोध्यंग का अभ्यास करनेवाला भिष्णु निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ।

§ २-१२. सेस सुत्तन्ता ( ४४ १४ २-१२ )

#### निर्वाण की ओर बहना

[ इस प्रकार रागविनय करके पण्णा तक विस्तार कर लेना चाहिये ]

#### गङ्गा-पेय्याल समाप्त

## ग्यारहवाँ भाग

### बलकरणीय वर्ग

§ १-१२ सम्बन्धे सूचन्ता ( ४४ ११ १-१२ )

यत्न

मिष्ठुभा ! जैसे जो कुछ बल-पूर्वक काम किये जाते हैं [ विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

बलकरणीय वर्ग समाप्त

---

## बारहवाँ भाग

### एपण वर्ग

§ १-१२ सम्बन्धे सूचन्ता ( ४४ १० १-१० )

हीन एपणार्थे

मिष्ठुभा ! एपण हीन है । कम ही हीन ? काम एपणा मद्य-एपणा अहमर्ष-एपणा ।  
[ विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

एपण वर्ग समाप्त

---

## तेरहवाँ भाग

### ओघ वर्ग

§ १-९. सुचन्तानि ( ४४ १३. १-९ )

चार वाढ़

श्रावस्तो जेतवन ।

भिक्षुओ ! ओघ (=वाढ़) चार हँ । कौन से चार ? काम , भव , मिथ्या-दृष्टि , अविद्या । [ विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

§ १०. उद्धमभागिय सुत्त ( ४४ १३ १० )

ऊपरी संयोजन

भिक्षुओ ! पाँच ऊपरवाले संयोजन हँ । कौन से पाँच ? रूप-राग, अरूप-राग, मान, औद्धत्य, अविद्या । [ विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

ओघ वर्ग समाप्त

## चौदहवाँ भाग

### गङ्गा-पेठ्याल

§ १. पाचीन सुत्त ( ४४ १४ १ )

निर्वाण की ओर बहना

भिक्षुओ ! जैसे, गंगा नदी पूरब की ओर बहती हे, वैसे ही सात बोधधम का अभ्यास करने-वाला भिक्षु निर्वाण की ओर अग्रसर होता हे ।

कैसे ?

भिक्षुओ ! भिक्षु राग, द्वेष और मोह को दूर करनेवाले उपेक्षा-सम्बोधधम की भावना करता हे ।

भिक्षुओ ! इस तरह, जैसे गंगा नदी पूरब की ओर बहती हे, वैसे ही सात बोधधम का अभ्यास करनेवाला भिक्षु निर्वाण की ओर अग्रसर होता हे ।

§ २-१२. सेस सुत्तन्ता ( ४४ १४ २-१२ )

निर्वाण की ओर बढ़ना

[ इस प्रकार रागविनय करके पण्णा तक विस्तार कर लेना चाहिये ]

गङ्गा-पेठ्याल समाप्त

## पन्द्रहवाँ भाग

### अप्रमाद वर्ग

§ ११० मन्त्रे सुचन्ता ( ४४ १५ १-१० )

अप्रमाद ही आधार है

[ बोधग-संयुक्त के शगदितय करके अप्रमाद वर्ग का विस्तार कर देना चाहिये ]

अप्रमाद वर्ग समाप्त

---

## सोलहवाँ भाग

### बलकरणीय वर्ग

§ १-१२ मन्त्रे सुचन्ता ( ४४ १७ १-१२ )

बल

[ बोधग-संयुक्त के शगदितय करके बल-करणीय वर्ग का विस्तार कर देना चाहिये ]

बलकरणीय वर्ग समाप्त

---

## सत्रहवाँ भाग

### एषण वर्ग

§ १-१०. सब्बे सुत्तन्ता ( ४४. १८ १-१० )

तीन एषणायें

[ बोध्यंग-स्युत्त के रागविनय करके एषण वर्ग का विस्तार कर लेना चाहिये ]

एषण वर्ग-समाप्त

---

## अठारहवाँ भाग

### ओघ वर्ग

§ १-१०. सब्बे सुत्तन्ता ( ४४ १९ १-१० )

चार बाढ़

[ बोध्यंग-स्युत्त के रागविनय करके ओघ-वर्ग का विस्तार कर लेना चाहिये ]

ओघ वर्ग समाप्त

बोध्यङ्ग-स्युत्त समाप्त

---

# तीसरा परिच्छेद

## ४५ स्मृतिप्रस्थान-सयुक्त

### पहला भाग

#### अम्बपाली धर्म

§ १ अम्बपालि सुच ( ४५ १ १ )

#### आर्य स्मृतिप्रस्थान

एसा मीन सुता ।

एक समय भगवान् वैशाली में अम्बपालीयन में विहार करते थे ।

भगवान् बोले मिश्रुभा ! बीजा की मिश्रुद्धि के किये लोक और परिवेष ( = रोमा-वीरता ) के पार आर्य के किये दुःख-बीर्मेवस्य को मित्र होने के किये ज्ञान प्राप्त करने के किये और निर्वाण का साक्षात्कार करने के किये यह एक ही मार्ग है—वा यह आर्य स्मृति-प्रस्थान ।

“कोम से चार ?”

“मिश्रुभा ! मिश्रु काया म कायायुपवसी हाकर विहार करता है—बेवसा को तपाते हुमें ( = भ्रातृपत्नी ) संयम स्मृतिमात् हो संसार में कोम और बीर्मेवस्य को दवाकर । बेवसा में बेवसा-युपवसी । चित्त में चित्तायुपवसी । धर्मों में धर्मायुपवसी ।

‘मिश्रुभा ! निर्वाण का साक्षात्कार करने के किये यह एक ही मार्ग है—शुो यह आर्य स्मृति प्रस्थान ।”

भगवान् यह बोले । सम्बुद्ध हो मिश्रुभा म भगवान् क यह का अभिवादन किया ।

§ २ सतो सुच ( ४५ १ २ )

#### स्मृतिमात् होकर विहारना

अम्बपालीयन म विहार करते थे ।

मिश्रुभा ! स्मृतिमात् और संयम हाकर विहार करा । दुग्धारे मित्र मेरी वही शिक्षा है ।

मिश्रुभा ! मिश्रु स्मृतिमात् कैसे जाना है ? मिश्रुभा ! मिश्रु काया म कायायुपवसी होकर विहार करता है । बेवसा में बेवसायुपवसी । चित्त में चित्तायुपवसी । धर्मों में धर्मायुपवसी ।

मिश्रुभा ! इसी प्रकार मिश्रु स्मृतिमात् होता है ।

मिश्रुभा ! मिश्रु संयम जाना है ?

मिश्रुभा ! मिश्रु ज्ञान-ज्ञान जानकार होता है । इसी भावने जानकार होता है समेदने-यत्नारते जानकार होता है संशरी ( = ऊपर की चक्र )-बाह-बीर्मेव को पारक करने जानकार होता है स्वाते-पीते चराने चराने जानकार होता है बाल्या-वैशाख करने जानकार होता है कल्पे-वदा होमे-वीरते-सोते-जगते-कोल्ने खुद करने जानकार होता है ।



भिक्षुओ ! इसी प्रकार भिक्षु सप्रज्ञ होता है ।

भिक्षुओ ! स्मृतिमान् और सप्रज्ञ होकर विहार करो । तुम्हारे लिये मेरी यही शिक्षा है ।

### § ३ भिक्षु सुत्त ( ४५. १. ३ )

#### चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना

एक समय भगवान् श्रावस्ती में अनाथापिण्डक के आराम जेनवन में विहार करते थे ।

तब, कोई भिक्षु भगवान् से बोला, “भन्ते ! अच्छा होता कि भगवान् मुझे सक्षेप से धर्म का उपदेश करते, जिसे सुनकर मैं अकेला अप्रमत्त हो समय से विहार करूँ ।”

“इस प्रकार, कुछ सुखं पुरुष मेरा ही पीछा करते हैं । धर्मोपदेश किये जाने पर समझते हैं कि उन्हें मेरा ही अनुसरण करना चाहिये ।

भगवन् ! सक्षेप से धर्मोपदेश करें । सुगत ! सक्षेप से धर्मोपदेश करें, कि मैं भगवान् के उपदेश का अर्थ समझ सकूँ, भगवान् का टायाट ( =महा उत्तराधिकारी ) बन सकूँ ।

भिक्षु ! तो, तुम कुशल वर्मों के आदि को शुद्ध करो ।

कुशल-धर्मों का आदि क्या है ? विशुद्ध शील, और सीधी ( =कलु ) दृष्टि ।

भिक्षु ! जब तुम्हारा शील विशुद्ध, और दृष्टि सीधी हो जायगी, तब तुम शील के आधार पर प्रतिष्ठित हो चार स्मृति-प्रस्थान की भावना तीन प्रकार से करोगे ।

कौन से चार ?

भिक्षु ! तुम अपने भीतर के ( =आध्यात्म ) काया में कायानुपश्यी होकर विहार करो , बाहर के काया में कायानुपश्यी होकर विहार करो , भीतर के और बाहर के काया में कायानुपश्यी होकर विहार करो । वेदना में वेदानुपश्यी । चित्त में चित्तानुपश्यी होकर विहार करो ।

धर्मों में धर्मानुपश्यी होकर विहार करो ।

भिक्षु ! जब तुम शील पर प्रतिष्ठित हो इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना तीन प्रकार से करोगे, तब रात या दिन तुम्हारी कुशल वर्मों में वृद्धि ही होगी, हानि नहीं ।

तब, वह भिक्षु भगवान् के कहे का अभिनन्दन और अनुमोदन कर, आसन से उठ, प्रणाम और प्रदक्षिण कर चला गया ।

तब, उस भिक्षु ने जाति क्षीण हुई—जान लिया । वह भिक्षु अर्हंतों में एक हुआ ।

### § ४. सल्ल सुत्त ( ४५. १ ४ )

#### चार स्मृतिप्रस्थान

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय, भगवान् कोशल ( जनपद ) में ढाल्ला नाम के एक वाक्षण ग्राम में विहार करते थे ।

भगवान् बोले, “भिक्षुओ ! जो नये अर्था हल ही में भाकर इस धर्मविनय में प्रवृत्त हुये हैं, उन्हें व्रताना चाहिये कि वे चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना का अच्छी तरह अभ्यास कर उनमें प्रतिष्ठित हो जायँ—

“किन चार की ?”

“आयुम । तुम काया में कायानुपश्यी होकर विहार करो—फलेशों को तपाने हुये, संप्रज्ञ, एकप्र-चित्त हो श्रद्धायुक्त चित्त में, समाहित हो—जिससे काया का आपको यथार्थ ज्ञान हो जाय ।” भित्तसे

वेदना का आपको सम्यक् ज्ञान हो जाय । जिसमें चित्त का आपको ब्यर्थ ज्ञान हो जाय । जिसमें धर्मों का आपको ब्यर्थ ज्ञान हो जाय ।

मिथुनी ! जो सैद्ध्य मिथु अनुत्तर मिर्चा का काम करने में लगे हैं वे भी काया में कायानुपस्थी होकर विहार करते हैं । जिसमें काया का ब्यर्थतः ज्ञान है । वेदना में वेदनामुपस्थी । चित्त में चित्तानुपस्थी । धर्मों में धर्मानुपस्थी होकर विहार करते हैं । जिसमें धर्मों को ब्यर्थतः ज्ञान है ।

मिथुनी ! जो मिथु भर्ष्य, क्षीणाश्रय चित्तका अस्वर्ण्य पूरा हो गया है कृतकृत्य चित्तका मार उतर गया है जिसमें परमार्थ का परमिप्य है जिसका सब-संयोजन क्षीण हो गया है और जो परम ज्ञान या विमुक्त हो गये हैं वे भी काया में कायानुपस्थी होकर विहार करते हैं । काया में अज्ञासक हो ।

वेदना में अज्ञासक हो । चित्त में अज्ञासक हो । धर्मों में धर्मानुपस्थी होकर विहार करते हैं । धर्मों में अज्ञासक हो ।

'मिथुनी ! जो मये धर्मी हाथ ही में बाँधकर इन धर्मधिनय में प्रयत्नित हुये हैं उन्हें बताया चाहिये कि वे चार स्मृति प्रस्थाना की साधना का मन्त्री तरह अभ्यास कर उनमें प्रतिष्ठित हो जायें ।

### § ५ कुसुरासि सुप्त ( ४५ १ २ )

#### कुसुरासि

श्रावस्नी जेनबन ।

मगवान् बोळ 'मिथुनी ! यदि पौष जीवरण को कोई भद्रक ( = पाप ) की राशि बड़े वा उले डीक ही समझना चाहिये । मिथुनी ! यह पौष जीवरण सारे भद्रक की एक राशि है ।

हीन मे पौष ? कामरज्जु-जीवरण विचिकित्ता-जीवरण ।

'मिथुनी ! यदि चार स्मृति-प्रस्थानों को कोई कुसुर ( = पुण्य ) की राशि बड़े तो उले डीक ही समझना चाहिये । मिथुनी ! यह चार स्मृति प्रस्थान सारे कुसुर की एक राशि है ।

'जीव से चार ? काया में कायानुपस्थी धर्मों में धर्मानुपस्थी ।

### § ६ सकृणगही सुप्त ( ४६ १ ६ )

#### दोष छोड़कर कुर्छेव में न जाना

मिथुनी ! बहुत पढ़क एक चिकित्सा में लीम न जाकर सद्मता एक काय पक्षी को पकड़ लिया । तब यह काय पक्षी चिकित्सा से किये जाते समझ इस प्रकार विधाय करने लगा—'मैं बड़ा समझता हूँ कि अपने ज्ञान को छोड़ उम कुर्छेव में चर रहा था । यदि आज मैं कर्षीता अपने ही दोष चरता तो चिकित्सा से हन्य तरह पकड़ा नहीं जाता ।

व्याप ! तुम्हारा अपना कर्षीता दोष कहीं है ?

जो यह हन्य मे जोता वेर्मी से भरा ट्रेन है ।

मिथुनी ! तब यह चिकित्सा कर्षीता चतुरार्थ की डींग मारने हुये काय पक्षी का कोष विधा— का रे जाय । वहाँ भी जा कर व सुशामे नहीं बच सकेगा ।

मिथुनी ! तब काय पक्षी तब से जोमे वेर्मी से भर लान में उधकर नक बड़ वेक कर बँड गया और लज्जकारने लगा—'जा रे चिकित्सा वहाँ था !

मिथुनी ! तब अपनी चतुरार्थ की डींग मारने हुये चिकित्सा कीनी और न राबकर काय पक्षी पर लक्ष्मर सराटा । मिथुनी ! जब काय पक्षी ने देखा कि चिकित्सा बहुत मन्त्रीक या गया है तो तब उली डेके के लीके पढ़क गया । मिथुनी ! चिकित्सा उली डेके पर पक्षी के बक गिर पड़ा ।

भिक्षुओ ! वयें ही, तुम भी अपने स्थान को छोड़ कुठोंव में मन जानो, नहीं तो तुम्हें भी यहाँ हारा । अपने स्थान को छोड़ कुठोंव में जाओगे तो माग तुम्हें अपने फन्दे में बध्नाकर वश में कर लेगा ।

भिक्षुओ ! भिक्षु के लिये कुठोंव क्या है ? जो यह पाँच काम-गुण । ज्ञान से पाँच ?

बधुविज्ञेय रूप , भ्रान्तविज्ञेय शब्द , भ्रान्तविज्ञेय गन्ध , जिह्वाविज्ञेय रस , काय-विज्ञेय स्पर्श ।

भिक्षुओ ! भिक्षु के लिये यहाँ कुठोंव है ।

भिक्षुओ ! अपने वर्पानी ठोंव में विचरण करो । अपन वपाती ठोंव में विचरण करने से मार तुम्हें अपने फन्दे में बध्नाकर वश में नहीं कर सकेगा ।

भिक्षुओ ! भिक्षु के लिये अपना वपाती ठोंव क्या है ? जो यह चार स्मृति-प्रस्थान । कोनसे चार ?

काया में कामानुपश्यी । वेदना में वेदनानुपश्यी । चित्त में चित्तानुपश्यी । धर्मों में धर्मानुपश्यी ।

भिक्षुओ ! भिक्षु के लिये यहाँ अपना वपाती ठोंव है ।

### § ७. मकट सुत्त ( ४५ १ ७ )

#### बन्दर की उपमा

भिक्षुओ ! पर्वतराज हिमालय पर ऐसे भी वीहड स्थान है जहाँ न तां मनुष्य आंग न बन्दर ही जा सकते हैं ।

भिक्षुओ ! पर्वतराज हिमालय पर ऐसे भी वीहड स्थान है जहाँ केवल बन्दर जा सकते हैं, मनुष्य नहीं ।

भिक्षुओ ! पर्वतराज हिमालय पर ऐसे भी रमणीय समतल भूमि-भाग है जहाँ मनुष्य और बन्दर सभी जा सकते हैं । भिक्षुओ ! वहाँ, वहेलिये बन्दर बजाने के लिये उनके आने-जाने के स्थान में लासा लगा देते हैं । भिक्षुओ ! जो बन्दर बैक्कुक और बैग्ममल नहीं होते हैं वे लासा को देख कर दूर ही से निकल जाते हैं, और जो बैक्कुक और बैग्ममल बन्दर होते हैं वे पास जा कर उस लासे को हाथ से पकड़ लेते हैं और बज जाते हैं । एक हाथ छोड़ने के लिये दूसरा हाथ लगाते हैं, वह भी बज जाता है । दोनों हाथ छोड़ने के लिये एक पैर , दूसरा पैर लगाते हैं, वह भी वही बज जाता है । चारों हाथ-पैर छोड़ने के लिये मुँह लगाते हैं, वह भी वही बज जाता है ।

भिक्षुओ ! इस प्रकार, पाँचों जगह से बज कर बन्दर केकियात्ता रहता है, भारी विपत्ति में पड़ जाता है, वहेलिया उस जैसी इच्छा कर सकता है । भिक्षुओ ! तब, वहेलिया उर्ये मार कर वही लकड़ी की आग में जला देता है, और जहाँ चढ़े चला जाता है ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, तुम भी अपने स्थान को छोड़ कुठोंव में मन जानो, नहीं तो तुम्हें भी यहाँ होगा । [ शेष कथन वालं सूत्र जैसा ही ]

भिक्षुओ ! भिक्षु के लिये यहाँ अपना वपाती ठोंव है ।

### § ८. सूद सुत्त ( ४५ १ ८ )

#### स्मृतिप्रस्थान

#### ( क )

भिक्षुओ ! जैसे, कोई मूर्ख गँवार रसोइया राजा या राजमन्त्री को नाना प्रकार के सुप परीसे । खट्टे भी, तीते भी, कड्डये भी, मीठे भी, खारे भी, नमकीन भी, बिना नमक के भी ।

बेवना का भापकी पधाव ज्ञान हो जाय । जिसमें चित्त का भापका पधाव ज्ञान हो जाय । जिसमें धर्मों का भापका पधाव ज्ञान हो जाय ।

मिथुओ ! जो रीह्व मिथु अनुत्तर निदान का लाभ करन में स्तो ई बे भी काया में काबाजु पक्षी होकर विहार करते हैं जिसमें काया का पधार्यता ज्ञान है । बेवना में बेवनाजुपक्षी । चित्त में चित्ताजुपक्षी । धर्मों में धर्माजुपक्षी होकर विहार करते हैं जिसमें धर्मों को पधार्यता ज्ञान है ।

मिथुओ ! जो मिथु भईन, क्षीयाभव जिसका लक्षणार्थ पूरा हो गया है कृष्णध्व चित्तका भार उतर गया है जिसमें परमार्थ को पा लिया है चित्तका भव-निवोजन क्षीय हो गया है और जो परम-ज्ञान पा चित्तस्थ हो गया है बे भी काया में काबाजुपक्षी होकर विहार करते हैं काया में ज्ञानासक्त हो ।

बेवना में ज्ञानासक्त हो । चित्त में ज्ञानासक्त हो । धर्मों में धर्माजुपक्षी होकर विहार करते हैं धर्मों में ज्ञानासक्त हो ।

‘मिथुओ ! जो नये धर्मों काक ही में आकर इन धर्मविनय में प्रवृत्त हुए हैं उन्हें ज्ञानासक्त कहिये कि वे चार स्युति-प्रस्थानों की भावना का भवती तरह अभ्यास कर इनमें प्रतिष्ठित हो जायें ।

### § ५ कुसलरासि सुच ( ४५ १ ५ )

#### कुशल-रासि

भावन्ती जेनवम ।

सराबाजु बोध “मिथुओ ! यदि पौच नीवरणों को कीई अकुसल ( =पाप ) की रासि कहे तो उमे डीक ही समझना चाहिये । मिथुओ ! यह पौच नीवरण सारे अकुसल की एक रासि है ।

ज्ञान में पौच ? कामचञ्चल-नीवरण विचिकित्सा-नीवरण ।

मिथुओ ! यदि चार स्युति-प्रस्थानों को कीई कुसल ( =पुण्य ) की रासि कहे तो उमे डीक ही समझना चाहिये । मिथुओ ! यह चार स्युति प्रस्थान सारे कुसल की एक रासि है ।

कीन से चार ? काया में काबाजुपक्षी धर्मों में धर्माजुपक्षी ।

### § ६ सहजगवाही सुच ( ४५ १ ६ )

#### जैव छोड़कर कुसल में न जाना

मिथुओ ! बहुत पहले एक चिकित्सक ने कोम में आकर सहजा एक काय पक्षी को पकड़ लिया । तब वह काय पक्षी चिकित्सक से किये जाते समय इस प्रकार बिकाप करते बगा—मैं बड़ा ज्ञानासक्त हूँ कि अपने स्थान को छोड़ उस कुसल में चर रहा था । यदि जाब मैं बचाती अपने ही डीक चरता तो चिकित्सक से इस तरह पकड़ नहीं जाता ।

जाय ! तुम्हारा अपना बचीती डीक क्यों है ?

जो यह हक में जाता देका मैं सरा लेन है ।

मिथुओ ! तब वह चिकित्सक अपनी अनुराई की डींग मारते हुए काय पक्षी का छाक दिया—जा रे ज्ञान ! क्यों भी जा कर तू मुझमें नहीं बच सकेगा ।

मिथुओ ! तब काय पक्षी डीक में जोते डीकीं स भरे नल में ठककर पड़ बड़े डीके पर बैठ गया और जलवारने लगा—जा रे चिकित्सक नहीं आ !

मिथुओ ! तब अपनी अनुराई की डींग मारते हुए चिकित्सक अपनी और स रोषकर काय पक्षी पर नरहना लपटा । मिथुओ ! अब काय पक्षी ने देखा कि चिकित्सक बहुत लज्जित आ गया है तो तब उसी डीके में बौये दबक गया । मिथुओ ! चिकित्सक उसी डीके पर छाती से कक गिर गया ।

तब, उस वर्षावास में भगवान् को एक घड़ी समीन बीमारी हो गई—मरणान्तक पीडा होने लगी । भगवान् उसे स्मृतिमान् और संप्रज्ञ हो स्थिर भाव से सह रहे थे ।

तब, भगवान् के मन में यह हुआ—मुझे ऐसा योग्य नहीं है कि अपने टहल करने वाले को बिना कष्ट और भिक्षु-सघ को बिना देखे मैं परिनिर्वाण पा लूँ । तो, मुझे उत्साह से इस बीमारी को हटा कर जीवित रहना चाहिये । तब, भगवान् उत्साह से उस बीमारी को हटा कर जीवित विहार करने लगे ।

तब, भगवान् बीमारी ने उठने के बाद ही, विहार से निकल, विहार के पीछे छाया में बिले आसन पर बैठ गये ।

तब, आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे वहाँ आये और भगवान् का अभिवादन कर एक ओर बैठ, आयुष्मान् आनन्द भगवान् से बोले, “भन्ते ! भगवान् को आज भला-चगा देख रहा हूँ । भन्ते ! भगवान् की बीमारी से मैं बहुत घबडा गया था, दिशायें भी नहीं देख पड़ती थीं, और धर्म भी नहीं सुझ रहा था । हाँ, कुछ आश्वास इस बात की थी, कि भगवान् तब तक परिनिर्वाण नहीं प्राप्त करेंगे जब तक भिक्षु-सघ से कुछ कह-सुन न लें ।

आनन्द ! भिक्षु-सघ मुझसे अब क्या जानने की आशा रखता है ? आनन्द ! मैंने बिना किसी भेद-भाव के धर्म का उपदेश कर दिया है । आनन्द ! कुछ धर्म की कुछ बात छिपा कर नहीं रखते । आनन्द ! जिसके मन में ऐसा हो—मैं भिक्षु-सघ का सचालन करूँगा, भिक्षु-सघ मेरे ही आशोन है, वही भिक्षु-सघ से कुछ कहे सुने । आनन्द ! कुछ के मन में ऐसा नहीं होता है, भला, वे भिक्षु-सघ से क्या कुछ कहे सुनेंगे ?

आनन्द ! इस समय, मैं पुरनिया=वृद्धा=महल्लक=अवस्था-प्राप्त हो गया हूँ । मेरी आयु अस्सी साल की हो गई है । आनन्द ! जैसे पुरानी गाड़ी को चौध-छानकर चलाते हैं, वैसे ही मेरा शरीर चौध-छानकर चलाने के योग्य हो गया है ।

आनन्द ! जिस समय, कुछ सारे निमित्त को मन में न ला, वेदना के निरुद्ध हो जाने से अनिमित्त चित्त की समाधि को प्राप्त करते हैं, उस समय वे बड़े सुख से विहार करते हैं ।

आनन्द ! इसलिये, अपने पर आप निर्भर होओ, अपनी शरण आप घनो, किसी दूसरे के भरोसे मत रहो, धर्म पर ही निर्भर होओ, अपनी शरण धर्म को ही बनाओ, किसी दूसरे के भरोसे मत रहो ।

आनन्द ! अपने पर आप निर्भर कैसे होता है, अपनी शरण आप कैसे बनता है, किसी दूसरे के भरोसे कैसे नहीं रहता है ?

आनन्द ! भिक्षु काया में कायानुपश्यी होकर विहार करता है धर्मों में धर्मानुपश्यी होकर विहार करता है ।

आनन्द ! इसी तरह, कोई अपने पर आप निर्भर होता है, अपनी शरण आप बनता है, किसी दूसरे के भरोसे नहीं रहता है ।

आनन्द ! जो कोई इस समय, या मेरे बाद अपने पर आप निर्भर हो कर विहार करेंगे, वही शिक्षा-कामी भिक्षु अन्न होने ।

## § १०. भिक्षुनिवासक सुत्त ( ४५ १. १० )

### स्मृतिप्रस्थानों की भावना

#### थावस्ती जेतवन ।

तब, आयुष्मान् आनन्द पूर्वाह्न समय पहन और पात्र-चीवर ले जहाँ एक भिक्षुणी-आवास था वहाँ गये । जाकर बिले आसन पर बैठ गये ।

तब, कुछ भिक्षुणियाँ जहाँ आयुष्मान् आनन्द थे वहाँ आईं, और अभिवादन कर एक ओर बैठ गईं ।

मिथुना ! वह मूर्ख गैबार् रसोइया मोहन की यह बात नहीं समझ सकता है—आज की यह तैबारी स्थाविष्ट है इसे लूब भोगत है इस लूब केत है इसकी तारीफ करते है । लड़ी स्थाविष्ट है लड़ी लूब भोगते है लड़ी को लूब सेते है लड़ी की तारीफ करते है ।

मिथुनी ! ऐसा मूर्ख गैबार् रसोइया न कपड़ा पाता है और न तख्त वा इनाम । सो क्या ? मिथुना ! क्योंकि वह पूरा मूर्ख आर गैबार् है कि अपने मोहन की यह बात नहीं समझ सकता है ।

मिथुनी ! जैसे ही कोई मूर्ख गैबार् मिथु काबा में कपातुपक्षी होकर बिहार करता है किन्तु उसका चित्त समाहित नहीं होता है उपनवेश क्षीण नहीं होते है । बंधना । चित्त । पत्नी म प्रमोदुपक्षी होकर बिहार करता है किन्तु उसका चित्त समाहित नहीं होता है उपनवेश क्षीण नहीं होते है । वह इस बात को नहीं समझता है ।

मिथुना ! वह मूर्ख गैबार् मिथु अपने मूलते ही देखते मुक्त पूर्वक बिहार नहीं कर पाता है स्मृतिमात् और संपन्न भी नहीं हो सकता है । सो क्यों ? मिथुनी ! क्योंकि वह मिथु इतना मूर्ख और गैबार् है कि अपने चित्त की बात को नहीं समझ सकता है ।

### ( स )

मिथुनी ! जमे कोई परिष्ठ होसियार रसोइया राजा वा राजमन्त्री को नाता प्रकार के रूप परोसे ।

मिथुनी ! वह परिष्ठ होसियार रसोइया मोहन की यह बात पूरा समझता हो—आज की यह तैबारी ।

मिथुनी ! ऐसा परिष्ठ होसियार रसोइया कपड़ा भी पाता है तख्त और इनाम भी । सो क्या ? मिथुनी ! क्योंकि वह ऐसा परिष्ठ और होसियार है कि अपने मोहन की यह बात लूब समझता है ।

मिथुनी ! जैसे ही कोई परिष्ठ होसियार मिथु काबा में कपातुपक्षी होकर बिहार करता है तख्त चित्त समाहित हो जाता है उपनवेश क्षीण होते है । बंधना । चित्त । पत्नी । वह इस बात को समझता है ।

मिथुनी ! वह परिष्ठ होसियार मिथु अपने देखते ही देखते मुक्त पूर्वक बिहार करता है स्मृतिमात् और संपन्न होता है । सो क्यों ? मिथुनी ! क्योंकि वह मिथु इतना परिष्ठ और होसियार है कि अपने चित्त की बात को लूब समझता है ।

### ४० गितान सुत्त ( ४५१९ )

अपना मग्गमा करता

युवा मीने सुत्ता ।

एक ममक मगहात् देहाली में संयुक्त प्राम में बिहार करत थे ।

वहाँ मगहात् ने मिथुनी को आमन्त्रित किया 'मिथुनी ! जाओ देहाली के चारों ओर जहाँ-जहाँ तुम्हारे मित्र परिष्ठित वा मन्त्र हैं वहाँ जा कर वहाँ-वहाँ करो । मैं इसी संयुक्त प्राम में वहाँ-वहाँ करूँगा ।

"मम ! बहुत अच्छा" कह कर मिथु मगहात् को उत्तर दे देहाली के चारों ओर जहाँ-जहाँ उनका मित्र परिष्ठित वा मन्त्र थे वहाँ जा कर वहाँ-वहाँ करने लगे । और मगहात् उसी संयुक्त प्राम में वहाँ-वहाँ करने लगे ।

## दूसरा भाग

### नालन्द वर्ग

#### § १. महापुरिस सुत्त ( ४५ २ १ )

##### महापुरुरूप

श्राघस्ती 'जेतवन ।

एक ओर बैठ, आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् ने बोले, "भन्ते ! लोग 'महापुरुरूप, महापुरुरूप' कहा करते हैं । भन्ते ! कोई महापुरुरूप कैसे होता है ?"

सारिपुत्र ! चित्त के विमुक्त होने से कोई महापुरुरूप होता है—ऐसा मैं कहता हूँ । चित्त के विमुक्त नहीं होने से कोई महापुरुरूप नहीं होता है ।

सारिपुत्र ! कोई विमुक्त चित्त वाला कैसे होता है ?

सारिपुत्र ! भिक्षु काया में कायानुपशयी होकर विहार करता है—क्लेशों को तपाते हुये (=आतापी), मप्रज्ञ, स्मृतिमान् हो, मसार में लोभ और टामनस्य को टबा कर । इस प्रकार विहार करते उसका चित्त राग-रहित हो जाता है, और उपादान-रहित हो आश्रवों से मुक्त हो जाता है । वेदना । चित्त । धर्म ।

सारिपुत्र ! इस तरह, कोई विमुक्त चित्त वाला होता है ।

सारिपुत्र ! चित्त के विमुक्त होने से कोई महापुरुरूप होता है—ऐसा मैं कहता हूँ । चित्त के विमुक्त नहीं होने से कोई महापुरुरूप नहीं होता है ।

#### § २, नालन्द सुत्त ( ४५ २ २ )

##### तथागत तुलसी-रहितं

एक समय भगवान् नालन्दा में पावारिक आश्रितवन में विहार करते थे ।

एक ओर बैठ, आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् से बोले, "भन्ते ! भगवान् पर मेरी एक श्रद्धा ही गई है । ज्ञान में भगवान् से सबकर कोई श्रमण या ब्राह्मण न हुआ है, न होगा, और न अभी वर्तमान है ।"

सारिपुत्र ! तुमने निर्भक्त हो बड़ी ऊँची बात कह डाली है, एक लपेट में सभी को ले लिया है, सिंह-नाद कर दिया है ।

सारिपुत्र ! जो अतीत काल में अर्हत् सम्यक्-सम्बुद्ध हो गये हैं, सभी को क्या तुमने अपने चित्त से जान लिया है—इस शीलवाले वे भगवान् थे, या इस धर्मवाले वे भगवान् थे, इस प्रज्ञा-वाले वे भगवान् थे, या इस प्रकार विहार करनेवाले वे भगवान् थे, या ऐसे विमुक्त वे भगवान् थे ?

नहीं भन्ते !

सारिपुत्र ! जो भविष्य में अर्हत् सम्यक्-सम्बुद्ध होंगे, सभी को क्या तुमने अपने चित्त से जान लिया है—इस शीलवाले वे भगवान् होंगे, या ऐसे विमुक्त वे भगवान् होंगे ?

नहीं भन्ते !

एक बार यह ब भिक्षुमियों आयुष्मान् आनन्द से बोली 'मन्ते आनन्द ! यहाँ कुछ भिक्षुमियों वार स्मृतिग्रन्थाना में सुप्रतिष्ठित चित्त वाली हा अधिक से अधिक विज्ञेयता को प्राप्त हो रही है ।

वहमें ! ऐसी ही बात है । जिन भिक्षु वा भिक्षुणियों का चित्त वार स्मृतिग्रन्थाना में सुप्रतिष्ठित हा गया है उनसे यहाँ आशा की जाती है कि वे अधिक से अधिक विज्ञेयता को प्राप्त हों ।

तब आयुष्मान् आनन्द उन भिक्षुणियों को धर्मोपदेश से विज्ञा रता उन्हाहित कर प्रसन्न कर भासब से उठ खड़े गये ।

तब आयुष्मान् आनन्द मिहाराज कर आबस्तां से फार भाजन कर कने के याद वहाँ भगवान् से वहाँ आय धीर भगवान् को अभिवादन कर एक धीर बैठ गये ।

एक बार बैठ, आयुष्मान् आनन्द भगवान् से बोले "मन्ते ! मैं पूर्वाह्न समय पहल और पात्र धीर कर वहाँ एक भिक्षुणी जावास है वहाँ गया । । मन्ते ! तब मैं उन भिक्षुणियों का धर्मोपदेश से विज्ञा भासन से उठ खडा थापा ।

आनन्द ! ठीक है ठीक है । जिन भिक्षु वा भिक्षुमियों का चित्त वार स्मृतिग्रन्थाना में सुप्रतिष्ठित हा गया है उनसे यहाँ आशा की जाती है कि वे अधिक से अधिक विज्ञेयता को प्राप्त हा ।

जिन वार से !

आनन्द ! भिक्षु कथा में कथानुपकथी होकर विहार करता है । इस प्रकार विहार करते हुये कथा एक लाक्षणिक हो जाता है । कथा में कथा उत्पन्न होने लगते हैं । चित्त कीर्त ( = सुत्त ) हो जाता है धीर बाहर रूप-रूपर जाने लगता है । आनन्द ! तब भिक्षु को किसी अच्छी पात्र लावार पर अपना चित्त लगाता चाहिये । एसा करन से उस प्रसन्न होना है । प्रसन्न को प्रीति होती है । प्रीतिपुत्र होने से शरीर प्रसन्न हो जाता है । शरीर के प्रसन्न हो जान से सुख होता है । सुख होने से चित्त समाहित होता है । यह एसा चिन्तन परता है 'जिन उद्देश्य के लिए हमने चित्त को लगाया वा यह मित्र हा गया । अब मैं वहाँ से अपना चित्त रीत करेता हूँ । यह अपना चित्त छाब हटा है । वहाँ का चित्त वा विचार नहीं करता है । चित्त और विचार से रहित अपने भीतर ही भीतर स्मृतिग्रन्थ को सुख पूर्वक विहार कर रहा हूँ—एसा आय भन्ता है ।

ऐसा ! चित्त । धर्म ।

आनन्द ! इस प्रकार प्रणिधान से ( अचित्त लगाकर ) भावना होती है ।

आनन्द ! अग्रिमियान से भावना कम होती है ?

आनन्द ! भिक्षु बाहर से वहाँ चित्त को प्रणिधान से कर जानता है कि मेरा चित्त बाहर से वहाँ प्रसन्न नहीं है । भागे-गीठे नहीं देता नहीं है विमुक्त धीर अग्रिमिहित है—एसा कहता है । तब कथा में कथानुपकथी होकर विहार कर रहा हूँ कथा जानता है ।

ऐसा ! चित्त । धर्म ।

आनन्द ! इस प्रकार अग्रिमियान से भावना होता है ।

आनन्द ! यह मैंने क्या दिवा कि प्रणिधान धीर अग्रिमियान से कने भावना वाली है । आनन्द ! सुपेयू और ह्यागु बुद्ध का जा अपने भावना क निरि करना चाहिये कने दूया करक कर दिवा । आनन्द ! यह बुद्ध-भूत है यह सुत्त-गुह है एसा नहीं प्रमाद मन कर देना न हो कि पीठे वदनामा यह । मुझसे जिने मेरी नहीं सिखा है ।

अन्यान यह कने । संसुव हा आयुष्मान् आनन्द से भगवान् से यह का अभिवादन और अनुवादन दिवा ।



## दूसरा भाग

### नालन्द वर्ग

#### § १. महापुरिस सुत्त ( ४५ २ ? )

##### महापुररूप

श्रावस्ती जेतवन ।

एक ओर बँठ, आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् से बोले, “भन्ते ! लोग ‘महापुररूप, महापुररूप’ कहा करते हैं । भन्ते ! कोई महापुररूप कैसे होता है ?”

सारिपुत्र । चित्त के विमुक्त होने में कोई महापुररूप होता है—ऐसा मैं कहता हूँ । चित्त के विमुक्त नहीं होने में कोई महापुररूप नहीं होता है ।

सारिपुत्र । कोई विमुक्त चित्त वाला कैसे होता है ?

सारिपुत्र । भिक्षु काया में कायानुपश्या होकर विहार करता है—बलेन्द्रों को तपाते हुये (=जातापी), मप्रज्ञ, स्मृतिमान् हो, मन्वार में लोभ और दौर्मनस्य को दया कर । इस प्रकार विहार करते उसका चित्त राग-रहित हो जाता है, और उपादान-रहित हो आश्रवों से मुक्त हो जाता है । वेदना । चित्त । धर्म ।

सारिपुत्र । इस तरह, कोई विमुक्त चित्त वाला होता है ।

सारिपुत्र । चित्त के विमुक्त होने से कोई महापुररूप होता है—ऐसा मैं कहता हूँ । चित्त के विमुक्त नहीं होने से कोई महापुररूप नहीं होता है ।

#### § २, नालन्द सुत्त ( ४५ २ २ )

##### तथानंत तुलनी-रहित

एक समय भगवान् नालन्दा में पावारिक धाम्निचन में विहार करते थे ।

एक ओर बँठ, आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् से बोले, “भन्ते ! भगवान् पर मेरी दृढ़ श्रद्धा हो गई है । जान में भगवान् से बढ़कर कोई श्रमण या ब्राह्मण न हुआ है, न होगा, और न अभी वर्तमान है ।”

सारिपुत्र । तुमने निर्भीक हो बड़ी ऊँची बात कह डाली है, एक छपेट में सभी को ले लिया है, सिंह-नाट कर दिया है ।

सारिपुत्र । जो अतीत काल में अर्हन् सम्यक्-सम्बुद्ध हो गये हैं, सभी को क्या तुमने अपने चित्त से जान लिया है—इस शीलवाले वे भगवान् थे, या इस धर्मवाले वे भगवान् थे, या इस प्रज्ञा-वाले वे भगवान् थे, या इस प्रकार विहार करनेवाले वे भगवान् थे, या ऐसे विमुक्त वे भगवान् थे ?

नहीं भन्ते !

सारिपुत्र । जो भविष्य में अर्हन् सम्यक्-सम्बुद्ध होंगे, सभी को क्या तुमने अपने चित्त से जान लिया है—इस शीलवाले वे भगवान् होंगे, या ऐसे विमुक्त वे भगवान् होंगे ?

नहीं भन्ते !

सारियुव ! जो भली बर्हैत सम्पक-सम्बुद्ध हैं क्या उम्ह तुमने अपन बिल से जान किया है—  
मगवान् इस शकिकाले हैं या ऐसे बिमुक्त हैं ?

गहीं भन्ते !

सारियुव ! जब तुमने न कर्तीत न भविष्य और न वर्तमान के बर्हैत सम्पक-सम्बुद्धों को अपने  
बिल से जाना है तब क्या निर्भीक हो बड़ी ऊँची बात कह वाली है एक कपेट में सभी को के छिपा  
है सिहनाह कर दिया है ?

भन्ते ! मैंने भलीत भविष्य और वर्तमान के बर्हैत सम्पक-सम्बुद्धों का अपने बिल से नहीं  
जाना है किन्तु 'धर्म विषय को अच्छी तरह समझ लिया है ।

भन्ते ! जैसे किन्नी राजा के सीमाप्राप्त का कोई नगर हो जिसके प्राकार और तोरण बड़े बड़े  
हैं और जिसके भीतर जाने के द्विये एक ही द्वार हो । उसका द्वारपाक बड़ा चतुर और समझदार हो  
जो भयजान लोगों को भीतर आने से रोक देता हो केवल पहचाने लोगों को भीतर आने देता हो ।

तब कोई नगर की चारा और घूम घूम कर भी भीतर घुसने का कोई रास्ता न पड़े—माझर में  
कोई छड़ी बगइ या छेप किम्व हो कर एक चिह्नी मौ का सके । उनके सनमें देगा हो—जो कोई बड़े  
भीष इसके भीतर आते हैं या बाहर निकलते हैं सभी इसी द्वार से हो कर ।

भन्ते ! मैंने इसी प्रकार धर्म-विषय को समझ किया है । भन्ते ! जो भलीत काक म बर्हैत सम्पक  
सम्बुद्ध हो चुके हैं सभी ने बिल को मीका करने वाले और प्रशा को चुर्बल करने काक पाँच तीवरया को  
महीन कर चार स्तुतिप्रस्थानों में बिल को अच्छी तरह प्रतिष्ठित कर, सात बोधर्गों की पचाबर्तः भावना  
करते हुये अनुत्तर सम्पक-सम्बुद्ध को प्राप्त किया था । भन्ते ! जो भविष्य में बर्हैत सम्पक-सम्बुद्ध होंगे  
वे भी सात बोधर्गों की पचाबर्तः भावना करते हुये अनुत्तर सम्पक-सम्बुद्ध को प्राप्त करेंगे । भन्ते !  
बर्हैत सम्पक-सम्बुद्ध मगवान् ने भी सात बोधर्गों की पचाबर्तः भावना करते हुये अनुत्तर सम्पक  
सम्बुद्ध को प्राप्त किया है ।

सारियुव ! शीक है शीक है ! सारियुव ! जने की इन बात को तुम सिद्ध सिद्धनी उपासक  
और उपासिकाओं के बीच बघाते रहना । सारियुव जिन भय लोगों को बुद्ध में शंका या विमति होगी  
उम्हें धर्म की इन बात को सुन कर दूर हो जावयी ।

### § ३ बुद्ध सुत्त ( ४१ ० ३ )

#### आयुष्मान् सारियुव का परिनिर्वाण

एक समय मगवान् ध्यायस्ती में अनापविष्टिक के आराम जेतवन में बिहार करते थे ।

उन समय आयुष्मान् सारियुव मगवा में ज्ञानप्राप्त में बहुत बीमार पड़े थे । बुद्ध धामधेर  
आयुष्मान् सारियुव की सेवा कर रहे थे ।

तब आयुष्मान् सारियुव इसी रोग से परिनिर्वाण को प्राप्त हो गये ।

तब धामधेर बुद्ध आयुष्मान् सारियुव के पात्र और चीवर को के बर्है ध्यायस्ती में अनापविष्टिक  
का जेतवन आराम था बर्है आयुष्मान् ध्यानम् के पाम जाने और उनका भविष्यवाण कर एक और  
बैठ गये ।

एक और बर धामधेर बुद्ध आयुष्मान् धामम् से बोले "भन्ते ! आयुष्मान् सारियुव  
परिनिर्वाण को प्राप्त हो गये यह उनका पात्र-चीवर है ।

आयुव बुद्ध ! वह समाचार मगवान् को देना चाहिये । उहाँ मगवान् हैं बर्है इस उम्हें और  
समवाह सं बह बात करें ।

'भन्ते ! बहुत अच्छा' बर धामधेर बुद्ध ने आयुष्मान् धामम् को उत्तर दिया ।

तथ, श्रामणेर सुन्द और आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् ये वहाँ गये, और भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये ।

एक ओर बैठ, आयुष्मान् आनन्द भगवान् से बोले, “भन्ते ! श्रामणेर सुन्द कहता है कि, ‘आयुष्मान् सारिपुत्र परिनिर्वाण को प्राप्त हो गये, यह उनका पात्र-चीवर है ।’ भन्ते ! आयुष्मान् सारिपुत्र के इस समाचार को सुन मुझे बड़ी विकलता हो रही है, दिशायेँ भी मुझे नहीं सूझ रही है, धर्म भी समझ मे नहीं आ रहा है ।”

आनन्द ! क्या सारिपुत्र ने शील-स्कन्ध को लिये परिनिर्वाण पाया है, या समाधि-स्कन्ध को, या प्रज्ञा स्कन्ध को, या विमुक्ति-स्कन्ध को या विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन स्कन्ध को ?

भन्ते ! आयुष्मान् सारिपुत्र ने न शील-स्कन्ध को और न विमुक्ति-ज्ञान दर्शन स्कन्ध को लिये परिनिर्वाण पाया है, किन्तु वे मेरे उपदेश देनेवाले थे, दिखानेवाले, बताने वाले, उत्साहित और हर्षित करनेवाले । गुरु-भाइयों के बीच जहाँ कहीं धर्म की वेसमझी को दूर करने वाले थे । मैं इस समय आयुष्मान् सारिपुत्र की धर्म में की गई कृतज्ञता का स्मरण करता हूँ ।

आनन्द ! क्या मैंने पहले ही उपदेश नहीं कर दिया है कि सभी प्रिय अलग होते और छूटते रहते हैं । ससार का यही नियम है । जो उत्पन्न हुआ, बना हुआ (=संस्कृत), और नाश हो जाने के स्वभाव वाला (=प्रलोकधर्मा) है, वह न नष्ट हो—ऐसा सम्भव नहीं ।

आनन्द ! जैसे, किसी सारवान् बड़े वृक्ष की जो सबसे बड़ी डाली हो गिर जाय । आनन्द ! वैसे ही, हम महान् भिक्षु-सघ के रहते बड़े सारवान् सारिपुत्र का परिनिर्वाण हो गया है । ससार का यही नियम है । जो उत्पन्न हुआ, बना हुआ, और नाश हो जाने के स्वभाव वाला है, वह न नष्ट हो—ऐसा सम्भव नहीं ।

आनन्द ! इसलिये, अपने पर आप निर्भर होओ, अपनी शरण आप बनाओ, किसी दूसरे के भरोसे मत रहो, धर्म पर ही निर्भर होओ, अपनी शरण धर्म को ही बनाओ, किसी दूसरे के भरोसे मत रहो ।

आनन्द ! अपने पर आप निर्भर कैसे होता है, अपनी शरण आप कैसे बनता है, किसी दूसरे के भरोसे कैसे नहीं रहता है ?

आनन्द ! भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर विहार करता है धर्मों में धर्मानुपश्यी हो कर विहार करता है ।

आनन्द ! इसी तरह, कोई अपने पर निर्भर होता है, अपनी शरण आप बनता है, किसी दूसरे के भरोसे नहीं रहता है ।

आनन्द ! जो कोई इस समय, मेरे वाद अपने पर आप निर्भर हो कर विहार करेंगे, वही शिक्षा-कामी भिक्षु अन्न होंगे ।

## § ४. चेल सुत्त ( ४५ २ ४ )

### अन्नधावकां के चिन्ता भिक्षु-संघ सूना

एक समय, सारिपुत्र और मोग्गलान के परिनिर्वाण पाने के कुछ दिन बाद ही, बज्जी ( जनपद ) में गङ्गा नदी के तीरपर उक्कञ्चेल में भगवान् बड़े भिक्षु-सघ के साथ विहार करते थे ।

उस समय, भगवान् भिक्षु-सघ से चिन्ते ही कर खुली जगह में बैठे थे । तथ, भगवान् ने दान्त बैठे भिक्षु-सघ की ओर देख कर आमन्त्रित किया —

भिक्षुओ ! यह मण्डली सूनी-सी मालूम पड़ रही है । भिक्षुओ ! सारिपुत्र और मोग्गलान के परिनिर्वाण पा लेने के बाद यह मण्डली सूनी-नी हो गई है । जिम् ओर सारिपुत्र और मोग्गलान रहते थे उस ओर भरा मालूम होता था ।

मिथुना ! जो अतीत काल में अर्द्धत् सम्बन्ध-सम्बुद्ध मगधात् हा गय है उनके भी ऐसे ही अग्रभाषक होते थे । जो भविष्य में अर्द्धत् सम्बन्ध-सम्बुद्ध मगधात् हांगे उनके भी ऐसा ही दो अग्रभाषक होंगे—बैस मेरे सारिपुत्र भार भोग्यकाल थे ।

मिथुनो ! भाषकों के लिये आश्चर्य है अजसुत है ! जो कि सास्ता के ज्ञायनकर तथा आजागारी होंगे और चारों परिवर्त के लिये प्रिय-समाय गौरवनीय और सम्माननीय होंगे । और मिथुना ! उभायत के लिये भी आश्चर्य और अजसुत है कि जमे दोनों अग्र भाषकों के परिनिर्वाण या कने पर भी कुछ का कोई शोक या परिदेव नहीं है । जो उपर्युक्त हुआ यना हुआ (असम्भूत) और नाश हो कने के स्वभाव बाका है वह न गद्य हा—यथा सम्भव नहीं ।

मिथुनो ! उस किन्ती सारवात् बने कुछ की का सबसे बड़ी डाली हो गिर जाय [ऊपर बैसा ही]

मिथुनो ! जो कोई हम समय या मेरे बाद अपने पर भाय निर्भर होकर विहार करतो बड़ी सिद्धा-कामी मिथु अग्र हामी ।

### § ५ बाहिय सुत्त ( ४५ २ ५ )

#### कुशाक धर्मा का भावि

भावस्ती- जेतवन ।

एक जोर बठ आबुप्पमात् बाहिय मगधात् से बोले "मस्ते ! अप्पा हाता कि मगधात् सुंके संक्षेप से धर्म का उपदेश करते जिसे सुत्त में अकेका अलग अग्रसत्त हो संक्षेप-पूर्वक प्रहितात्म चित्त से विहार करता ।"

बाहिय ! तो तुम अपने कुशाक धर्मों के भावि को कुछ करा ।

कुशाक धर्मों का भावि क्या है ?

बिभुद्ध शीक और मत्तुपदि ।

बाहिय ! यदि तुम्हारा शीक बिभुद्ध भीर रहि न्मत्त रहेगी तो तुम शीक के व्यापार पर प्रतिष्ठित हो चार स्मृतिप्रस्ताभा की सरचना कर लीये ।

किन् चार की ?

कथा में कथातुपस्वी । वेदना । चित्त । धर्म ।

बाहिय ! इस प्रकार साधना करने से शत-दिन तुम्हारी इच्छि ही होगी हावि नहीं ।

एव आबुप्पमात् बाहिय के भावि हीन हुई जान किया ।

आबुप्पमात् बाहिय अर्द्धों में एक हुये ।

### § ६ उत्तिय सुत्त ( ४१ २ ६ )

#### कुशाक धर्मा का भावि

भावस्ती- जेतवन ।

[ ऊपर बैसा ही ]

उत्तिय ! इस प्रकार साधना करने से तुम सुत्त के बच से चार बने जाओगे ।

एव आबुप्पमात् उत्तिय के भावि हीन हुई जान किया ।

आबुप्पमात् उत्तिय अर्द्धों में एक हुये ।

### § ७. अरिय सुत्त ( ४५ २, ७ )

स्मृतिप्रस्थान की भावना से दुःख-अप

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओं । चार आर्य मुक्तिप्रद स्मृतिप्रस्थान की भावना और अभ्यास करने से दुःख का विलकुल क्षय हो जाता है ।

कौन से चार ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

भिक्षुओं । इन्हीं चार आर्य मुक्तिप्रद स्मृतिप्रस्थान की भावना और अभ्यास करने से दुःख का विलकुल क्षय हो जाता है ।

### § ८. ब्रह्म सुत्त ( ४५. २ ८ )

विशुद्धि का एकमात्र मार्ग

एक समय, बुद्ध स्व लाभ करने के बाद ही, भगवान् उरुवेला में नेगञ्जरा नदी के तीर पर अज्जपाल निश्रोत्र के नीचे विहार करते थे ।

तब, एकान्त में ध्यान करते समय भगवान् के चित्त में यह वितर्क उठा—जीवों की विशुद्धि के लिये, शोक-परित्रेव में वचने के लिये, दुःख-द्वैर्मानस्य को मिटाने के लिये, ज्ञान को प्राप्त करने के लिये, और निर्वाण का साक्षात्कार करने के लिये एक ही मार्ग है—यह जो चार स्मृतिप्रस्थान ।

कौन से चार ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

तब, ब्रह्मा सहस्रपति अपने चित्त से भगवान् के चित्त की बात को जान, जैसे कोई बलवान् पुरुष समेटी बाँह को पसार दे और पसारी बाँह को नमेट ले, वैसे ब्रह्मलोक में अन्तर्धान हो भगवान् के सम्मुख प्रगट हुये ।

तब, ब्रह्मा सहस्रपति भगवान् की ओर हाव जोड़कर बोले, “भगवान् ! ठीक है, ऐसी ही बात है ॥ जीवों की विशुद्धि के लिये एक ही मार्ग है—यह जो चार स्मृतिप्रस्थान । कौन से चार ? काया । वेदना । चित्त । धर्म ।”

ब्रह्मा सहस्रपति यह बोले । यह कहकर ब्रह्मा सहस्रपति फिर भी बोले —

हित चाहने वाले, जन्म के क्षय को देखने वाले,

यह एक ही मार्ग वसता है ।

इसी मार्ग से पहले लोग तर चुके हैं,

तरंगे, और याद को तर रहे हैं ॥

### § ९. सेदक सुत्त ( ४५ २ ९ )

स्मृतिप्रस्थान की भावना

एक समय, भगवान् सुम्भ ( जनपद ) में सेदक नाम के सुम्भों के कस्थे में विहार करते थे । वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, भिक्षुओं । बहुत पहले, एक खेलाड़ी बाँस को ऊपर उठा, अपने शक्तिर्भेदकपालिका ले बोला—मेदकपालिके । इस बाँस के ऊपर चढ़कर मेरे कस्थे के ऊपर खड़े होओ ।

“बहुत अच्छा” कह, मेदकपालिका बाँस के ऊपर चढ़ खेलाड़ी के कस्थे के ऊपर खड़ा हो गया ।

तब, खेलाड़ी अपने शक्तिर्भेदकपालिका से बोला, “मेदकपालिके । देखना, तुम सुम्भे वचाओ

भीरु में मुझे बधाई । इस प्रकार सावधानी से एक दूसरे को पचाते हुए येस दिशाओं में दिसा जमाने भीरु बुद्धिमान से बौम के ऊपर चढ़कर उठें ।

यह कहन पर सागिरी मन्दकपालिका राजाही से चाला 'रक्षणी ! येना नहीं हांगा । अप भयने का बचावें भार में धरन को बधाई । इस प्रकार इस अपने अपने का बचाव हुय रात दिशाओं में दिसा जमाने भीरु बुद्धिमान से बौम के ऊपर चढ़कर उठें ।

अगवान् बाल 'यही बहो उचित था जमा कि मेदकपालिका सागिरी से लहाड़ी का बहा ।'  
 मिथुभा । अपनी रक्षा करेगा—जमे स्मृतिप्रधान का अभयान करो । दूसरे की रक्षा करेगा—  
 एम स्मृतिप्रधान का अभयान करा । मिथुभा । अपनी रक्षा करने वाला दूसरे की रक्षा करता है और  
 दूसरे की रक्षा करने वाला अपनी रक्षा करता है ।

मिथुभा । ईम अपनी रक्षा करने वाला दूसरे की रक्षा करता है ? सेवन करन से भावना करने  
 से भावना करन से । मिथुभा । इस तरह अपनी रक्षा करने वाला दूसरे की रक्षा करता है ।

मिथुभा । ईम दूसरे का रक्षा करने वाला अपनी रक्षा करता है ? क्षमा-नीत्या से दिसा-रहित  
 क्षमा से मयी से दया से । मिथुभा । इसी तरह दूसरे की रक्षा करने वाला अपनी रक्षा करता है ।

### § १० जनपद मुक्त ( ४१ - १० )

#### जनपदव्याप्ती की उपमा

जमा मन मुभा ।

एक समय भगवान् मुद्रम ( जनपद ) में मन्दक नाम के मुद्रों के कर्मों में विहार करते थे ।

मिथुभा । जम जनपदव्याप्ती ( अनेकता ) के भाग का नाम मुद्रम कहना भीड़ का नाम जमी

है । मिथुभा । जनपदव्याप्ती की भाषा और भाग जमी भाषा-वैदिक है । मिथुभा । जब जनपदव्याप्ती

कापी भाग भागे लगता है तब भीड़ और भीड़ बढ़ती है ।

एक कार्मु मुद्रम भाग जम के दिन रक्षता चाहता है मरना नहीं मुद्रम भागता चाहता है और

मुद्रम से दूर रहना । जम कार्मु बदे—

ह मुद्रम । मुद्रम हुय-मन्द्रम लक्ष्यक भर हुय भाग का ल जनपदव्याप्ती और भीड़ के बीच से

हो कर जाता होगा । मुद्रम परिधि परिधि जनपद उदाह एक भ दमो जयता जहाँ पाग से मुद्रम भी मंत्र

गणना करी यह मुद्रम विर कर देता ।

मिथुभा । जम मुद्रम का समान है यह मुद्रम भवन के भाग का भाग मन्त्रम कर बाहर करी

विश्व बोलता ।

नहीं भागे

मिथुभा । किसी बात का समान है कि किसी दिन यह उपमा बही है । बात यह है—जम

से लक्ष्यक और हुये भाग से लक्ष्यक का मुद्रम का अभिप्राय है ।

मिथुभा । इसमें लक्ष्यक का लक्ष्यक का लक्ष्यक—है लक्ष्यक का स्मृति की उपमा बही

लक्ष्यक करेगा जमे लक्ष्यक करेगा जमे विर करेगा लक्ष्यक करेगा लक्ष्यक करेगा

हमे लक्ष्यक लक्ष्यक करेगा । मिथुभा । लक्ष्यक का लक्ष्यक का लक्ष्यक ।

## तीसरा भाग श्रीलस्थिति वर्ग

§ १ सील सुत्त ( ४५ ३. १ )

स्मृतिप्रस्थानों की भावना के लिए कुशल-शील

ग्रेया मैंने सुना ।

एक समय, आयुष्मान् आनन्द और आयुष्मान् भद्र पाटलिपुत्र में कुक्कुटागम में विहार करते थे ।

तब, सन्ध्या समय ध्यान में उठ आयुष्मान् भद्र जहाँ आयुष्मान् आनन्द थे वहाँ गये और कुशल क्षेम पूछकर एक ओर बैठ गये ।

एक ओर बैठ, आयुष्मान् भद्र आयुष्मान् आनन्द से बोले, “आयुष्म ! भगवान् ने जो कुशल (=पुण्य) शील बताये हैं वह किम अभिप्राय से ?”

आयुष्म भद्र ! ठीक है, आपको यह बड़ा अच्छा सूझा कि ऐसा महत्त्वपूर्ण प्रश्न पूछा ।...

आयुष्म भद्र ! भगवान् ने जो कुशल-शील बताये हैं वह चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना के लिये ही ।

किन चार स्मृतिप्रस्थानों की ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

आयुष्म भद्र ! भगवान् ने जो कुशल-शील बताये हैं वह इन्हीं चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना के लिये ।

§ २. ठिति सुत्त ( ४५ ३. २ )

धर्म का चिरस्थायी होना

[ वही निदान ]

आयुष्म आनन्द ! बुद्ध के परिनिर्वाण पा लेने के बाद धर्म के चिरकाल तक स्थित रहने के क्या हेतु = प्रत्यय हैं ?

आयुष्म भद्र ! ठीक है, आपको यह बड़ा अच्छा सूझा कि ऐसा महत्त्वपूर्ण प्रश्न पूछा ।

आयुष्म भद्र ! ( भिक्षुओं के ) चार स्मृति प्रस्थानों की भावना और अभ्यास नहीं करते रहने से बुद्ध के परिनिर्वाण पाने के बाद धर्म चिरकाल तक स्थित नहीं रहता । आयुष्म भद्र ! चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना और अभ्यास करते रहने से बुद्ध के परिनिर्वाण पाने के बाद धर्म चिर काल तक स्थित रहता है ।

किन चार की ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

आयुष्म ! इन्हीं चार स्मृतिप्रस्थानों की ।

भीरु में मुझे पचाई। इस प्रकार सावधानी से एक दूसरे को पचाते हुए एक दियाओं पर बसाये भीरु कुतलना से बौम के ऊपर चढ़कर उठें।

यह करने पर सावित्री मन्त्रपाठिका रोमाड़ी से बोली "रोमाड़ी! रोमा नहीं हागा। आप अपने का बचने भीरु में अपने को पचाई। इस प्रकार हम अपने अपने का पचाते हुए एक दियाओं पर बसाये भीरु कुतलना से बौम के ऊपर चढ़कर उठें।

भगवान् बाल, यही यहाँ उचिल था जमा कि मन्त्रपाठिका सावित्री ने रोमाड़ी को कहा।

मिथुभा! अपनी रक्षा करैगा—जम स्मृतिप्रस्थान का अर्थात् कर। दूसरे की रक्षा करैगा—जम स्मृतिप्रस्थान का अर्थात् कर। मिथुभा! अपनी रक्षा करने वाला दूसरे की रक्षा करता है और दूसरे का रक्षा करने वाला अपनी रक्षा करता है।

मिथुभा! कौन अपनी रक्षा करने वाला दूसरे का रक्षा करता है? सब करने से भावना करने से अर्थात् करने से। मिथुभा! इसी तरह अपनी रक्षा करने वाला दूसरे की रक्षा करता है।

मिथुभा! कौन दूसरे का रक्षा करने वाला अपनी रक्षा करता है? इसी-ही-प्रकार से हिंसा-रहित हानि से भय से। मिथुभा! इसी तरह दूसरे का रक्षा करने वाला अपनी रक्षा करता है।

### § १० जनपद मुत्त ( ४५ १० )

जनपदकथ्यायी की उपमा

रोमा मिन मुभा ।

एक समय भगवान् मुत्त ( जनपद ) से मन्त्र नाम के मुत्तों के कदम से बिहार करते थे।

मिथुभा! जो जनपदकथ्यायी ( जनपद ) के भाग की बात सुनकर नहीं भीड़ लग जाती है। मिथुभा! जनपदकथ्यायी का भाग भीड़ गीत गीत भावनें करे। मिथुभा! जब जनपदकथ्यायी मन्त्र भरे जाने लगता है तब भीड़ भर भा दृष्ट पड़ती है।

तब कोई मुत्त भाव या कि विद्वान् पढ़ना या सरना मन्त्र मुत्त भावना पाठना ही भीरु से न कर सकता। उसे कोई करे—

हे मुत्त! मुझे इस समय सबका भरे हुए भाव का जनपदकथ्यायी भीरु भीड़ के साथ से का कर जमा हागा। तुम्हारे पीछे पाते सबका उदात्त एक भर्मा जमागा जहाँ पाते से कुछ भी से प्रकृति का ही सब साक्षात् सिद्ध बात है।

मिथुभा! जो मुत्त का समझना है वह मुत्त अपने संकल्प का भाव साधना करे जहाँ ही कित्तु भीरु ?

करी मन्त्र ।

मिथुभा! हिंसा से न के समझने के लिए ही मिन पर उपमा चढ़ा है। जगत् सब है—जगत् से सबका भरे हुए भाव से जनपदकथ्यायी का अर्थ है।

मिथुभा! इस सबे मुत्त के जगत् से सबका अर्थ है—जगत् से सबका अर्थ है। जगत् से सबका अर्थ है। जगत् से सबका अर्थ है। जगत् से सबका अर्थ है।

जनपद का भावना



## तीसरा भाग

### शीलस्थिति वर्ग

#### § १ शील सुत्त ( ४५ ३ १ )

स्मृतिप्रस्थानों की भावना के लिए कुशल-शील

प्रेमा मेने सुता ।

एक समय, आयुमान् आनन्द और आयुमान् भद्र पाटलिपुत्र में कुक्कुटाराम में विहार करते थे ।

तब, मन्था समय ध्यान में उठ आयुमान् भद्र जहाँ आयुमान् आनन्द थे वहाँ गये और कुशल क्षेम पूछकर एक और बैठ गये ।

एक धीरे बैठ, आयुमान् भद्र आयुमान् आनन्द से बोले, "आयुस ! भगवान् ने जो कुशल ( = पुण्य ) शील बताये हैं वह किस अभिप्राय से ?"

आयुस भद्र ! ठीक है, आपको यह बड़ा अच्छा सूझा कि प्रेमा महत्त्वपूर्ण प्रश्न पूछा ।"

आयुस भद्र ! भगवान् ने जो कुशल-शील बताये हैं वह चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना के लिये ही ।

किन चार स्मृतिप्रस्थानों की ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

आयुस भद्र ! भगवान् ने जो कुशल-शील बताये हैं वह इन्हीं चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना के लिये ।

#### § २. ठिति सुत्त ( ४५ ३ २ )

धर्म का चिरस्थायी होना

[ वही निदान ]

आयुस आनन्द ! बुद्ध के परिनिर्वाण पाने के बाद धर्म के चिरकाल तक स्थित रहने के क्या हेतु = प्रत्यय हैं ?

आयुस भद्र ! ठीक है, आपको यह बड़ा अच्छा सूझा कि प्रेमा महत्त्वपूर्ण प्रश्न पूछा ।

आयुस भद्र ! ( भिक्षुओं के ) चार स्मृति प्रस्थानों की भावना और अभ्यास नहीं करते रहने से बुद्ध के परिनिर्वाण पाने के बाद धर्म चिरकाल तक स्थित नहीं रहता । आयुस भद्र ! चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना और अभ्यास करते रहने से बुद्ध के परिनिर्वाण पाने के बाद धर्म चिर काल तक स्थित रहता है ।

किन चार की ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

आयुस ! इन्हीं चार स्मृतिप्रस्थानों की ।

## § ३ परिहान सुच ( ४५ ३ ३ )

सद्धर्म की परिहानि न होना

पाटलिपुत्र कुम्भट्टागम ।

आहुस आनन्द ! क्या हेतु = मत्पय है जिससे सद्धर्म की परिहानि होती है, आर क्या हेतु = मत्पय है जिससे सद्धर्म की परिहानि नहीं होती है ? -

आहुस मग्न ! आर स्युतिप्रस्थानों की भावना और अभ्यास नहीं करने से सद्धर्म की परिहानि होती है। आहुस मग्न ! आर स्युतिप्रस्थानों की भावना आर अभ्यास करने से सद्धर्म की परिहानि नहीं होती है।

किन आर की ?

कामा । वेदता । चित्त । धर्म ।

आहुस ! इन्हीं आर स्युतिप्रस्थानों की ।

## § ४ सुद्धक सुच ( ४५ ३ ४ )

आर स्युतिप्रस्थान

धायस्ती जेतवन ।

मिद्धुजो ! स्युतिप्रस्थान आर हैं ; कौन से आर ?

कामा । वेदता । चित्त । धर्म ।

## § ५ ब्राह्मण सुच ( ४५ ३ ५ )

धम के विरुद्धाधी होने का कारण

धायस्ती जेतवन ।

एक और बँट यह ब्राह्मण मगवान् से बोला 'इ वातम ! बुद्ध के प्रतिनिधि पा देने के बाद धर्म के विरुद्ध तू ठ स्थित रहने और न रहने के क्या हेतु मत्पय है ?'

[ इन्दो— ४५ ३ ५ ]

यह करने पर यह ब्राह्मण भागवान् से बोला भन्ते ! मुझ उपामक स्वीकार करें।

## § ६ पवेस सुच ( ४५ ३ ६ )

दीक्ष्य

एक समय आहुप्मान् सारिपुत्र आहुप्मान् महासालान् आर आहुप्मान् अनुयन्त्र साकेत में जण्डकीयन में विहार करने से।

तब मन्वा समय प्यास से उठ आहुप्मान् सारिपुत्र और आहुप्मान् महासालान् वहीं आहुप्मान् अनुयन्त्र ५ बर्हों गये आर बुध्म-धेम पउकर एक और बँट गये।

एक और बँट आहुप्मान् सारिपुत्र आहुप्मान् अनुयन्त्र से बोला 'आहुस ! आर 'दीक्ष्य दीक्ष्य' कहा करते हैं। आहुस ! दीक्ष्य कीमे होता है ?'

आहुस ! आर स्युतिप्रस्थानों की कुछ भी भावना कर जन्मे से दीक्ष्य जाता है।

किन आर की ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

आयुस ! इन चार की ।

### § ७. समत्त सुक्त ( ४५ ३ ७ )

अशौक्ष्य

[ वही निदान ]

आयुस अनुसुद्ध ! लोग 'अशौक्ष्य, अशौक्ष्य' कहा करते हैं । आयुस ! अशौक्ष्य कैसे होना है ?

आयुस ! चार स्मृतिप्रस्थानों की पूरी-पूरी भावना कर लेने से अशौक्ष्य होता है ।

किन चार की ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

आयुस ! इन चार की ।

### § ८. लोक सुक्त ( ४५ ३ ८ )

ज्ञानी होने का कारण

[ वही निदान ]

आयुस अनुसुद्ध ! किन धर्मों की भावना और अभ्यास करके आयुष्मान् इतने ज्ञानी हुए हैं ?

आयुस ! चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना और अभ्यास करके मैंने यह बड़ा ज्ञान पाया है ।

किन चार की ?

आयुस ! इन्हीं चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना और अभ्यास करके मैं सहस्र लोकों को जानता हूँ ।

### § ९. सिरिवह्नु सुक्त ( ४५ ३ ९ )

श्रीवर्धन का बीमार पड़ना

एक समय आयुष्मान् आनन्द राजगृह में वेलुवन कलन्डकनिवाप में विहार करते थे ।

उस समय श्रीवर्धन गृहपति बड़ा बीमार पड़ा था ।

तब, श्रीवर्धन गृहपति ने किसी पुरुष को आमन्त्रित किया, "हे पुरुष ! सुनो, जहाँ आयुष्मान् आनन्द हैं वहाँ जाओ, और आयुष्मान् आनन्द के चरणों पर मेरी ओर से प्रणाम करो, और कहो— भन्ते ! श्रीवर्धन गृहपति बड़ा बीमार है । वह आयुष्मान् आनन्द के चरणों पर प्रणाम करता है और कहता है, 'भन्ते ! बड़ा अच्छा होता यदि आयुष्मान् आनन्द जहाँ श्रीवर्धन गृहपति का घर है वहाँ कृपा कर चलते ।'

"भन्ते ! बहुत धक्का" कह, वह पुरुष श्रीवर्धन गृहपति को उत्तर दे जहाँ आयुष्मान् आनन्द थे वहाँ गया और आयुष्मान् आनन्द को अभिवादन कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, वह पुरुष आयुष्मान् आनन्द से बोला, "भन्ते ! श्रीवर्धन गृहपति बड़ा बीमार पड़ा है ।"

आयुष्मान् आनन्द ने खुप रहकर स्वीकार कर लिया ।

तब, आयुष्मान् आनन्द पहन और पात्र-चीवर ले जहाँ श्रीवर्धन गृहपति का घर था वहाँ गये, और थिठे आसन पर बैठ गये ।

### § ३ परिहान सुच ( ४१ ३ ३ )

#### सखम की परिहानि न होना

पाटलिपुत्र कुक्कुटाराम ।

आहुम आत्मन् ! क्या हेतु = प्रत्यय है जिससे सखम की परिहानि होती है, और क्या हेतु = प्रत्यय है जिससे सखम की परिहानि नहीं होती है ?

आहुम मद्र ! पार स्मृतिप्रस्थानों की भावना और सम्पास नहीं करने से सखम की परिहानि होती है। आहुम मद्र ! पार स्मृतिप्रस्थानों की भावना और सम्पास करने से सखम की परिहानि नहीं होती है।

किम पार की ?

काया । चरुना । चित्त । धर्म ।

आहुम ! इन्हीं पार स्मृतिप्रस्थानों की ।

### § ४ सुदक सुच ( ४५ ३ ४ )

#### पार स्मृतिप्रस्थान

आपस्ती जलघन ।

मिथुभो ! स्मृतिप्रस्थान पार हैं । काय से पार ?

काया । वेदवा । चित्त । धर्म ।

### § ५ ब्राह्मण सुच ( ४९ ३ ५ )

#### धर्म के चिरस्थायी होने का कारण

आपस्ती जलघन ।

एक और बँद यह ब्राह्मण मगवान् न बोधा इ गीतम ! सुद के परिनिर्वाण पा धर्म के बाद धर्म के चिर काय तर स्थित रहने भार न रहने के क्या हेतु प्रत्यय हैं ?

[ श्रुतौ—“४५ ३ ५” ]

यद यदत्र पर यद ब्राह्मण मगवान् न बोधा “अन्त ! शुभे उपासक स्वीकार करें।

### § ६ पदेम सुच ( ४५ ३ ६ )

#### दीर्घ

एक मगव आहुष्मात् गान्धियुष आहुष्मात् महाभागव्यात और आहुष्मात् अनुदन्त मार्गत् में काचटकीयत् में विहार करत थे।

एव मगवा मगव प्यात न उद आहुष्मात् गान्धियुष भार आहुष्मात् महामोग्यात इति आहुष्मात् अनुदन्त ये इति मगव भार बुगन्-शेम पुठर एव और बँद मगव ।

एव और बँद आहुष्मात् गान्धियुष आहुष्मात् अनुदन्त ये बोधे “आहुष्म ! बोधे ‘दीर्घ दीर्घ’ कहा करते हैं। आहुष्म ! दीर्घ बँद होता है ?”

आहुष्म ! पार स्मृतिप्रस्थानों की वृत्त थी भावना कर लेके न दीर्घ जाना है।

किम पार वा ।

## चौथा भाग

### अननुश्रुत वर्ग

#### § १ अननुस्मृत मुक्त ( ४५. ४. १ )

पहले कर्मी न मृती गई वाने

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! धारा ने कायानुपश्यना, या पहले कर्मी नहीं सुने गये धर्मों में मुझे बहुत उत्पन्न हो गया, ज्ञान उत्पन्न हो गया, विद्या उत्पन्न हो गई, आलोक उत्पन्न हो गया । भिक्षुओ ! उस धारा ने कायानुपश्यना की भावना करना चाहिये, यह पहले कर्मी नहीं सुने गये । उसकी भावना मेने कर ली, यह पहले कर्मी नहीं सुने गये धर्मों में मुझे बहुत उत्पन्न हो गया, ज्ञान उत्पन्न हो गया, विद्या उत्पन्न हो गई, आलोक उत्पन्न हो गया ।

वेदना मे वेदानुपश्यना ।

चित्त मे चित्तानुपश्यना ।

धर्मों मे धर्मानुपश्यना ।

#### § २ विराग मुक्त ( ४५. ४. २ )

स्मृतिप्रस्थान-भावना से निर्वाण

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! इन चार स्मृतिप्रस्थानों के भावित और अभ्यस्त होने से परम वैराग्य, निरोध, शान्ति, ज्ञान और निर्वाण सिद्ध होते हैं ।

किन चार के ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

भिक्षुओ ! इन्हीं चार स्मृतिप्रस्थानों के भावित और अभ्यस्त होने से निर्वाण सिद्ध होते हैं ।

#### § ३ विरट्ट मुक्त ( ४५. ४. ३ )

मार्ग में रुकावट

भिक्षुओ ! जिन किन्हीं के चार स्मृतिप्रस्थान रके, उनका सम्यक्-दु ख क्षय नामी मार्ग रक गया ।

भिक्षुओ ! जिन किन्हीं के चार स्मृतिप्रस्थान शुरू हुये, उनका सम्यक्-दु ख-क्षय-नामी मार्ग शुरू हो गया ।

कौन से चार ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

भिक्षुओ ! जिन किन्हीं के यह चार स्मृतिप्रस्थान रके, शुरू हुये ।

बैठ कर आधुप्यान् आनन्द श्रीबर्चस गृहपति से बोले 'गृहपति ! तुम्हारी लविपत्त कैसी है  
बच्छ तो हो न बीमारी घटती माच्छुन होती है न ?

बर्चस मन्ते ! मेरी लविपत्त बहुत बराब है मैं बच्छा नहीं हूँ बीमारी घटती नहीं बच्छि बक्षरी  
ही माच्छुन होती है ।

गृहपति ! तुम्हें पंसा लीकना चाहिये—कामा म कापाधुपक्षी होकर बिहार करूँगा धर्मों  
में धर्माधुपक्षी होकर बिहार करूँगा । गृहपति ! तुम्हें ऐसा ही लीकना चाहिये ।

मन्ते ! भगवान् ने जिन चार स्थितिप्रस्थानों का उपदेश किया है वे धर्म सुष्ठुमें कसे हैं धार  
में उन धर्मों में कमा हूँ । मन्ते ! मैं कपा में कपाधुपक्षी होकर बिहार करता हूँ धर्मों में धर्माधु  
पक्षी होकर बिहार करता हूँ ।

मन्ते ! भगवान् ने जिन पाँच लीके के ( लखरभगामी ) संयोग ( लखरभ ) बताया है  
उनमें मैं अपने में कुछ भी पंसे नहीं देखता हूँ जो प्रहीन न हुए हों ।

गृहपति ! तुमने बहुत बड़ी चीज पा ली । गृहपति ! तुमने धर्मागामी-कम की बात कही है ।

### § १० मानदिश सुष्ठु ( ४५ ३ १० )

मानदिश का धर्मागामी होना

[ बड़ी निवृत्त ]

कस समय मानदिश गृहपति बरा बीमार पका था ।

तब मानदिश गृहपति ने किसी पुरुष को आमन्त्रित किया ।

मन्ते ! मैं इस प्रकार कठिन दुःख ठगते हुए भी कपा में कपाधुपक्षी होकर बिहार करता  
हूँ धर्मों में धर्माधुपक्षी होकर बिहार करता हूँ ।

मन्ते भगवान् ने जिन पाँच लीके के संयोग बताया है उनमें मैं अपने में कुछ भी पंसे नहीं  
देखता हूँ जो प्रहीन न हुए हों ।

गृहपति ! तुमने बहुत बड़ी चीज पा ली । गृहपति ! तुमने धर्मागामी कम की बात कही है ।

शीलम्बिति धरन् प्रमास

## चौथा भाग

### अननुश्रुत वर्ग

#### § १ अननुस्मृत सुत्त ( ४५, ४ १ )

पहले कभी न सुनी गई बातें

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओं ! काया में कायानुपश्यना, या पहले कभी नहीं सुने गये धर्मों में मुझे कुछ उपपन्न हो गया, ज्ञान उत्पन्न हो गया, विद्या उत्पन्न हो गई, आलोक उत्पन्न हो गया । भिक्षुओं ! उस काया में ज्ञानानुपश्यना की भावना करनी चाहिये, यह पहले कभी नहीं सुने गये । उम्की भावना मैंने कर ली, यह पहले कभी नहीं सुने गये धर्मों में मुझे कुछ उपपन्न हो गया, ज्ञान उत्पन्न हो गया, विद्या उत्पन्न हो गई, आलोक उत्पन्न हो गया ।

वेदान में वेदानुपश्यना ।

चित्त में चिन्तानुपश्यना ।

धर्मों में धर्मानुपश्यना ।

#### § २ विराग सुत्त ( ४५, ४ २ )

स्मृतिप्रस्थान-भावना से निर्वाण

श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओं ! इन चार स्मृतिप्रस्थानों के भावित और अभ्यस्त होने से परम वैराग्य, निरोध, शान्ति, ज्ञान और निर्वाण सिद्ध होते हैं ।

किन चार के ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

भिक्षुओं ! इन्हीं चार स्मृतिप्रस्थानों के भावित और अभ्यस्त होने से निर्वाण सिद्ध होते हैं ।

#### § ३ विरट्ट सुत्त ( ४५, ४ ३ )

मार्ग में रुकावट

भिक्षुओं ! जिन किन्हीं के चार स्मृतिप्रस्थान रके, उनका सम्यक्-दु ख क्षय-नामी मार्ग रक गया ।

भिक्षुओं ! जिन किन्हीं के चार स्मृतिप्रस्थान शुरू हुये, उनका सम्यक्-दु ख-क्षय-नामी मार्ग शुरू हो गया ।

कौन से चार ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

भिक्षुओं ! जिन किन्हीं के यह चार स्मृतिप्रस्थान रके, शुरू हुये ।

## § ४ मापना सुच ( ४५ ४ ४ )

पार जाना

मिथुभो ! इन चार स्मृतिप्रस्थानों की मापना भार जन्मास कर कोई अपार को भी पार कर जाता है ।

कित्त चार की ?

## § ५ सरो सुच ( ४५ ४ ५ )

स्मृतिमान् हांकर विहारमा

धावस्ती जेतवन ।

मिथुभो ! स्मृतिमान् भीर संमज्ज होकर मिथु विहार करे । तुम्हारे किये मेरी बड़ी सिखा है ।

मिथुभो ! कैसे मिथु स्मृतिमान् होता है ?

मिथुभो मिथु कथा में कथापुपत्ती होकर विहार करता है यमों में यमपुपत्ती हांकर विहार करता है ।

मिथुभो ! इस तरह मिथु स्मृतिमान् होता है ।

मिथुभो ! कैसे मिथु संमज्ज होता है ?

मिथुभो ! मिथु क जानते हुए बेचना उठती है जानते हुए रहती है भीर जानते हुए जस्त भी हो जाती है । जानते हुए बितर्क उठते हैं जानते हुए भरत भी हो जाते हैं । जानते हुए संजा उठती है जानते हुए भरत भी हो जाती है ।

मिथुभो ! इस तरह मिथु संमज्ज होता है ।

मिथुभो ! स्मृतिमान् भीर संमज्ज होकर मिथु विहार करे । तुम्हारे किये मेरी बड़ी सिखा है ।

## § ६ अज्जा सुच ( ४५ ४ ६ )

परम-ज्ञान

धावस्ती जेतवन ।

मिथुभो ! स्मृतिप्रस्थान चार हैं । कौन से चार ?

काय । वेदना । बिच । यम ।

मिथुभो ! इस चार स्मृतिप्रस्थानों के आबित और अभ्यस्त होने से जो मैं से एक कज सिद्ध होता है—या तो अपने देखते ही देखते परम ज्ञान का काम का उपादान के कुछ सैप रह जाने पर यत्नागमिता ।

## § ७ छन्द सुच ( ४५ ४ ७ )

स्मृतिप्रस्थान-भावना से तुण्णा-क्षय

धावस्ती जेतवन ।

मिथुभो ! स्मृतिप्रस्थान चार हैं । कौन से चार ?

मिथुभो ! मिथु कथा में कथापुपत्ती होकर विहार करता है । इस प्रकार विहार करते कथा में उन्मत्ती को तुण्णा है वह प्रहीन हो जाती है । तुण्णा के प्रहीन होने से उसे विज्ञान का साक्षात्कार होता है ।



वेदना । चित्त । धर्म ।

### § ८ परिञ्जाय सुत्त ( ४५. ४ ८ )

काया को जानना

भिक्षुओ ! स्मृतिप्रस्थान चार हैं । कौन से चार ?

भिक्षुओ ! भिक्षु काया में कायानुपश्यी होकर विहार करता है । इस प्रकार विहार करते वह काया को जान लेता है । काया को जान लेने से उम्मे निर्वाण का साक्षात्कार होता है ।

वेदना । चित्त । धर्म ।

### § ९ भावना सुत्त ( ४५ ४ ९ )

स्मृतिप्रस्थानों की भावना

भिक्षुओ ! चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओ ! चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना क्या है ?

भिक्षुओ ! भिक्षु काया में कायानुपश्यी होकर विहार करता है धर्मों में धर्मानुपश्यी होकर विहार करता है ।

भिक्षुओ ! यही चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना है ।

### § १० विभङ्ग सुत्त ( ४५ ४ १० )

स्मृतिप्रस्थान

भिक्षुओ ! मैं स्मृतिप्रस्थान, स्मृतिप्रस्थान की भावना और स्मृतिप्रस्थान के भावनानामी मार्ग का उपदेश करूँगा । उसे सुनो ।

भिक्षुओ ! स्मृतिप्रस्थान क्या है ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

भिक्षुओ ! यही स्मृतिप्रस्थान है ।

भिक्षुओ ! स्मृतिप्रस्थान की भावना क्या है ?

भिक्षुओ ! भिक्षु काया में उत्पत्ति देखते विहार करता है, व्यय देखते विहार करता है, उत्पत्ति और व्यय देखते विहार करता है—क्लेशों को तपाते हुये (=आतापी) । वेदना में । चित्त में । धर्म में ।

भिक्षुओ ! यही स्मृतिप्रस्थान की भावना है ।

भिक्षुओ ! स्मृतिप्रस्थान का भावना-नामी मार्ग क्या है ? यहाँ आर्य अष्टांगिक मार्ग । जो सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि । भिक्षुओ ! यही स्मृतिप्रस्थान का भावनानामी मार्ग है ।

अननुश्रुत वर्ग समाप्त

# पाँचवाँ भाग

## अमृत वर्ग

§ १ अमृत सूत्र ( ४५ १ १ )

### अमृत की प्राप्ति

मिश्रुषी ! चार स्थितिप्रस्थानों में चित्त का अच्छी तरह प्रतिष्ठित करो । फिर अमृत (अमृतान्न) तुम्हारे पास है ।

किस चार में ?

कषया । बेवृत्ता । चित्त । धर्म ।

मिश्रुषी ! इन चार स्थितिप्रस्थानों में चित्त का अच्छी तरह प्रतिष्ठित करो । फिर अमृत तुम्हारा अपना है ।

§ २ समुद्रय सूत्र ( ४५ ५ २ )

### उत्पत्ति और लय

मिश्रुषी ! चार स्थितिप्रस्थाओं के समुद्रय (अव्यपत्ति) चार अस्त (अस्त) होने का उपदेश करूँगा । उस सुनो ।

मिश्रुषी ! कषया का समुद्रय क्या है ? आहार से काया का समुद्रय होता है और आहार के एक जाने से अमृत हो जाता है ।

स्पर्श से बेवृत्ता का समुद्रय होता है स्पर्श के रुक जाने से बेवृत्ता अस्त ही जाती है ।

मात्र-रूप से चित्त का समुद्रय होता है मात्र-रूप के रुक जाने से चित्त अस्त हो जाता है ।

मग्न करने से धर्मों का समुद्रय होता है । मग्न करने के रुक जाने से धर्म अस्त हो जाते हैं ।

§ ३ मग्ना सूत्र ( ४५ ५ ३ )

### विशुद्धि का एकमात्र मार्ग

आवस्थी 'जलधन ।

मिश्रुषी ! एक समय बुद्धि का काम करने में बाध ही मैं उठनेवाला मैं भरकटता नहीं के तौर पर अज्ञपाठ निग्रोध के नीचे विहार करता था ।

मिश्रुषी ! जब एकस्थ में स्थान करने समय मरे चित्त में वह विचल बड़ा—धीरों की विशुद्धि के किये एक ही मार्ग है—एक को चार स्थितिप्रस्थान ।

[ देखो "४५ १ ८ ]

§ ४ सतो सूत्र ( ४५ ५ ४ )

### स्मृतिमान् होकर विहारना

आवस्थी 'जलधन ।

मिश्रुषी ! सिद्ध स्थितिमान् होकर विहार करे । तुम्हारे किये मेरी नहीं सिद्धा है ।

भिक्षुओ ! कैसे भिक्षु स्मृतिमान् होता है ?

भिक्षुओ ! भिक्षु काया में कायानुपस्थी होकर विहार करता है...धर्मों में धर्मानुपस्थी होकर विहार करता है ।

भिक्षुओ ! इस प्रकार, भिक्षु स्मृतिमान् होता है ।

भिक्षुओ ! भिक्षु स्मृतिमान् होकर विहार करे । तुम्हारे लिये मेरी यही शिक्षा है ।

### § ५ कुशलरासि सुत्त ( ४५ ५ ५ )

#### कुशल-राशि

भिक्षुओ ! यदि कोई चार स्मृतिप्रस्थानों को कुशल (=पुण्य) राशि कहे तो उसे ठीक ही समझना चाहिये ।

भिक्षुओ ! यह चार स्मृतिप्रस्थान सारे कुशलों की एक राशि है ।

कौन से चार ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म - ।

### § ६ पातिमोक्ख सुत्त ( ४५ ५ ६ )

#### कुशलधर्मों का आदि

तब, कोई भिक्षु भगवान् से बोला, "भन्ते ! अच्छा होता यदि भगवान् मुझे सक्षेप से धर्म का उपदेश करते, जिसे सुन, मैं अकेला विहार करता ।"

भिक्षु ! तो, तुम कुशल धर्मों के आदि को ही श्रुद्ध करो । कुशल धर्मों का आदि क्या है ?

भिक्षु ! तुम प्रातिमोक्ष-सवर का पालन करते विहार करो—आचार-विचार से सम्पन्न हो, थोड़ी सी भी बुराई में भय देख, और शिक्षा-पदों को मानते हुये । भिक्षु ! इस प्रकार, तुम शील पर प्रतिष्ठित हो चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना कर सकोगे ।

किन चार की ?

काया । वेदना । चित्त । धर्म ।

भिक्षु ! इस प्रकार भावना करने से कुशल धर्मों में रात-दिन तुम्हारी बुद्धि ही होगी हानि नहीं ।

तब, उस भिक्षु ने जाति क्षीण हुई जान लिया ।

वह भिक्षु अर्हत्तों में एक हुआ ।

### § ७ दुश्चरित सुत्त ( ४५ ५ ७ )

#### दुश्चरित्र का त्याग

[ वही निदान ]

भिक्षु ! तो, तुम कुशल धर्मों के आदि को ही श्रुद्ध करो । कुशल धर्मों का आदि क्या है ?

भिक्षु ! तुम क्षारीक दुश्चरित्र को छोड़ सुचरित्र का अभ्यास करो । वाचसिक दुश्चरित्र को छोड़ । मानसिक दुश्चरित्र को छोड़ ।

भिक्षु ! इस प्रकार अभ्यास करने से, तुम शील पर प्रतिष्ठित हो चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना कर सकोगे ।

वह भिक्षु अर्हत्तों में एक हुआ ।

## § ८ मित्र सुक्त ( ४५ ५ ८ )

मित्र को स्मृतिप्रस्थान में लगाना

आवस्ती—जेठयन ।

मिष्टुजो ! तुम मित्र पर प्रसन्न होओ किन्हे समझा कि तुम्हारी बात समझे ठग मित्र का बन्धु-भाज्यव को चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना यदा वो जममें छगा दो और प्रतिष्ठित कर दो ।

किन चार की ?

काया । वेदना । मित्र । जर्म ।

## § ९ वेदना सुक्त ( ४५ ५ ९ )

तीन वेदनायें

आवस्ती—जेठयन ।

मिष्टुजो ! वेदना तीन हैं । कौन सी तीन ? सुख वेदना दुःख वेदना अदुःख-सुख वेदना ।

मिष्टुजो ! बड़ी तीन वेदना हैं ।

मिष्टुजो ! इन तीन वेदनाओं को ध्यानने के किने चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करो ।

## § १० आसव सुक्त ( ४५ ५ १० )

तीन आसव

मिष्टुजो ! आसव तीन हैं । कौन स तीन ? काम-आसव अथ आसव अविध्य-आसव । मिष्टुजो !

यही तीन आसव हैं ।

मिष्टुजो ! इन तीन आसवों के महान के किने चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करो ।

अमृत बर्ग समाप्त

## छठौं भाग

### गङ्गा पेय्याल

§ १-१२. सब्बे सुत्तन्ता ( ४५ ६. १-१२ )

#### निराण की ओर बढ़ना

भिक्षुओ ! जैसे, गंगा नदी पृथ्वी की ओर बहती है, वैसे ही चार स्मृतिग्रन्थों की भाँति करनेवाला भिक्षु निराण की ओर अग्रसर होता है ।

• कैसे... ?

भिक्षुओ ! भिक्षु काया से कायानुपपत्ती होकर विहार करता है धर्मों में धर्मानुपपत्ती को विहार करता है ।

भिक्षुओ ! इस तरह, निराण की ओर अग्रसर होता है ।

---

## सातवौं भाग

### अप्रमाद वर्ग

§ १-१०. सब्बे सुत्तन्ता ( ४५ ७ १-१० )

#### अप्रमाद आधार है

[ स्मृतिग्रन्थान के वक्ता से अप्रमाद वर्ग का विस्तार कर लेना चाहिये । ]

## आठवाँ भाग

### बलकरणीय वर्ग

§ ११० सम्बन्धे सुचन्ता ( ४५ ८ ११० )

दस

[ स्मृतिप्रस्थान के बल पर बलकरणीय वर्ग का विस्तार कर लेना चाहिये । ]

---

## नवाँ भाग

### पपण वर्ग

§ १११ सम्बन्धे सुचन्ता ( ४५ ९ १११ )

चार पपणार्थे

[ स्मृतिप्रस्थान के बल से पपण वर्ग का विस्तार कर लेना चाहिये । ]

---

## दसवाँ भाग

### ओघ वर्ग

§ ११० सम्बन्धे सुचन्ता ( ४५ १ ११० )

चार भाङ्ग

[ --ओघ वर्ग का विस्तार कर लेना चाहिये । ]

ओघ वर्ग समाप्त  
स्मृतिप्रस्थान-संयुक्त समाप्त

---

# चौथा परिच्छेद

## ४६. इन्द्रिय-संयुक्त

### पहला भाग

#### शुद्धिक वर्ग

#### § १ शुद्धिक सुक्त ( ४६ १ १ )

##### पाँच इन्द्रियाँ

श्रावस्ती जेतवन ।

भगवान् बोले, "भिक्षुओ इन्द्रियाँ पाँच है। कौन से पाँच ? श्रद्धा-इन्द्रिय, वीर्य-इन्द्रिय, स्मृति-इन्द्रिय, समाधि-इन्द्रिय, प्रज्ञा-इन्द्रिय । भिक्षुओ । यही पाँच इन्द्रियाँ हैं ।

#### § २. पठम सोत सुक्त ( ४६ १ २ )

##### स्रोतापन्न

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ पाँच हैं । कौन से पाँच ? श्रद्धा , वीर्य , स्मृति , समाधि ; प्रज्ञा । भिक्षुओ ! यही पाँच इन्द्रियाँ हैं ।

भिक्षुओ ! क्योंकि आर्यश्रावक इन पाँच इन्द्रियों के आस्वाद, दोष और मोक्ष को यथार्थत जानता है, इसलिए वह स्रोतापन्न कहा जाता है, उसका प्युक्त होना सम्भव नहीं, उसका परम पद पाना निश्चित होता है ।

#### § ३. दुत्तिय सोत सुक्त ( ४६ १ ३ )

##### स्रोतापन्न

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ पाँच हैं । कौन से पाँच ? श्रद्धा प्रज्ञा ।

भिक्षुओ ! क्योंकि आर्यश्रावक इन पाँच इन्द्रियों के समुद्ध्य, अस्त होने, आस्वाद, दोष और मोक्ष को यथार्थत जानता है, इसलिए वह स्रोतापन्न कहा जाता है ।

#### § ४. पठम अरहा सुक्त ( ४६ १. ४ )

##### अर्हत्

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ पाँच हैं । कौन से पाँच ? श्रद्धा प्रज्ञा ।

भिक्षुओ ! क्योंकि आर्यश्रावक इन पाँच इन्द्रियों के आस्वाद, दोष और मोक्ष को यथार्थत जान, उपदान रहित हो विमुक्त हो जाता है, इसलिए वह अर्हत् कहा जाता है—क्षीणाश्रव, जिमका प्राप्त्यर्थे

पूरा हो गया है कृतकृत्य जिसका भार बतर गया है जिसने परमार्थ पा लिया है जिसका मज-संयोग श्रेय हो गया है परम ज्ञान को पा विमुक्त हो गया है ।

### § ५ द्वितीय अरहा सुत्त ( ४६ १ ५ )

अहंत्

मिथुभी ! क्योंकि अर्थभावक इन पाँच इन्द्रियों के समुत्पन्न भस्त होने आस्वाद्य होय और मोक्ष को पश्चार्थतः ज्ञान ।

### § ६ पथम समणब्राह्मण सुत्त ( ४६ १ ६ )

अमय और ब्राह्मण कौन ?

मिथुभी ! इन्द्रियों पाँच है ।

मिथुभी ! जो अमय या ब्राह्मण इन पाँच इन्द्रियों के समुत्पन्न भस्त होने आस्वाद्य होय और मोक्ष को पश्चार्थतः नहीं जानते हैं उनका न तो अमयो में अमय-भाव है और न ब्राह्मणों में ब्राह्मण-भाव । वे आत्पुप्फाद् अपने देखते ही देखते अमयत्व या ब्राह्मणत्व को ज्ञान देख और प्राप्त कर नहीं बिहार करते हैं ।

मिथुभी ! जो अमय या ब्राह्मण इन पाँच इन्द्रियों के समुत्पन्न भस्त होने आस्वाद्य होय और मोक्ष को पश्चार्थतः जानते हैं उनका अमयो में अमय-भाव भी है और ब्राह्मणों में ब्राह्मण-भाव भी । वे आत्पुप्फाद् अपने देखते ही देखते अमयत्व या ब्राह्मणत्व को ज्ञान देख और प्राप्त कर बिहार करते हैं ।

### § ७ द्वितीय समणब्राह्मण सुत्त ( ४६ १ ७ )

अमय और ब्राह्मण कौन ?

मिथुभी ! जो अमय या ब्राह्मण अज्ञा-इन्द्रिय को नहीं जानते हैं अज्ञा-इन्द्रिय के समुत्पन्न को नहीं जानते हैं अज्ञा-इन्द्रिय के निरोध को नहीं जानते हैं अज्ञा-इन्द्रिय के निरोधगामी मार्ग को नहीं जानते हैं । धर्म का नहीं जानते हैं । स्मृति को नहीं जानते हैं । समाधि को नहीं जानते हैं । प्रज्ञा इन्द्रिय को नहीं जानते हैं । प्रज्ञा-इन्द्रिय के निरोधगामी मार्ग को नहीं जानते हैं उनका न तो अमयो में अमय-भाव है और न ब्राह्मणों में ब्राह्मण-भाव । वे आत्पुप्फाद् अपने देखते ही देखते अमयत्व या न ब्राह्मणत्व को ज्ञान देख और प्राप्त कर नहीं बिहार करते हैं ।

मिथुभी ! जो अमय या ब्राह्मण प्रज्ञा इन्द्रिय को जानते हैं प्रज्ञा-इन्द्रिय के निरोधगामी मार्ग को जानते हैं वे आत्पुप्फाद् अपने देखते ही देखते अमयत्व या ब्राह्मणत्व को ज्ञान देख और प्राप्त कर बिहार करते हैं ।

### § ८ दृष्टम्भ सुत्त ( ४६ १ ८ )

इन्द्रियों का ध्वने का म्यान

मिथुभी ! इन्द्रियों पाँच है ।

मिथुभी ! अज्ञा-इन्द्रिय नहीं देना जगता है ? चार सामान्य-जनों में । नहीं अज्ञा-इन्द्रिय देना जगता है ।

मिथुभी ! धर्म-इन्द्रिय नहीं देना जगता है ? चार मनुक प्रजातों में । नहीं धर्म-इन्द्रिय देना जगता है ।



भिक्षुओ ! स्मृति-इन्द्रिय कहाँ देखा जाता है ? चार स्मृति-प्रस्थानों में । यहाँ स्मृति-इन्द्रिय देखा जाता है ।

भिक्षुओ ! समाधि-इन्द्रिय कहाँ देखा जाता है ? चार ध्यानों में । यहाँ समाधि-इन्द्रिय देखा जाता है ।

भिक्षुओ ! प्रज्ञा-इन्द्रिय कहाँ देखा जाता है ? चार आर्य सार्यों में । यहाँ प्रज्ञा-इन्द्रिय देखा जाता है ।

## § ९. षष्ठ विभङ्ग सुत्त ( ४६ १ ९ )

### पाँच इन्द्रियों

भिक्षुओ ! इन्द्रियों पाँच हैं ।

भिक्षुओ ! श्रद्धा-इन्द्रिय क्या है ? भिक्षुओ ! आर्यश्रावक श्रद्धालु होता है । बुद्ध के वृद्धत्व में श्रद्धा रखता है—ऐसे वह भगवान् अर्हन्, सम्यक-मस्तुद्ध, विद्याचरण-मम्पन्न, लोकविद्, अनुत्तर, पुरुषों को दमन करने में स्मरयि के समान, देवताओं और मनुष्यों के गुरु, बुद्ध भगवान् । भिक्षुओ ! इसी को श्रद्धा-इन्द्रिय कहते हैं ।

भिक्षुओ ! वीर्य-इन्द्रिय क्या है ? भिक्षुओ ! आर्यश्रावक अकुशल (=पाप) धर्मों के प्रहाण करने और कुशल (=पुण्य) धर्मों के पटा करने में वीर्यवान् होता है, स्थिरता से दृढ़ पराक्रम करता है, और कुशल धर्मों में कन्धा लुका देनेवाला (=अनिक्षिप्त-पुर) नहीं होता है । इसी को वीर्य-इन्द्रिय कहते हैं ।

भिक्षुओ ! स्मृति-इन्द्रिय क्या है ? भिक्षुओ ! आर्य श्रावक स्मृतिमान् होता है, परम स्मृति से युक्त, चिरकाल के किये और कहे गये का भी स्मरण करनेवाला । इसी को स्मृति इन्द्रिय कहते हैं ।

भिक्षुओ ! समाधि-इन्द्रिय क्या है ? भिक्षुओ ! आर्य श्रावक निर्वाण का आलम्बन करके चित्त की एकाम्रतावाली समाधि का लाभ करता है । इसी को समाधि-इन्द्रिय कहते हैं ।

भिक्षुओ ! प्रज्ञा-इन्द्रिय क्या है ? भिक्षुओ ! आर्यश्रावक के धर्मों के उदय और अस्त होने के स्वभाव को प्रज्ञा-पूर्वक जानता है, जिससे बन्धन कट जाते हैं और दुःखों का विलकुल क्षय हो जाता है । इसी को प्रज्ञा-इन्द्रिय कहते हैं ।

भिक्षुओ ! यही-पाँच इन्द्रियाँ हैं ।

## § १० दुतिय विभङ्ग सुत्त ( ४६ १ १० )

### पाँच इन्द्रियों

भिक्षुओ ! इन्द्रियों पाँच हैं ।

भिक्षुओ ! श्रद्धा-इन्द्रिय क्या है ? [ ऊपर जैसा ही ]

भिक्षुओ ! वीर्य-इन्द्रिय क्या है ? और कुशल धर्मों में कन्धा लुका देनेवाला नहीं होता है । वह अनुत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों के अनुत्पादन के लिए होखला करता है, कोशिश करता है, वीर्य करता है, मन लगाता है । वह उत्पन्न पापमय कुशल धर्मों के प्रहाण के लिए हीसला करता है । अनुत्पन्न कुशल धर्मों के उत्पाद के लिए । उत्पन्न कुशल धर्मों की स्थिति, बुद्धि, भावना और पूर्णता के लिए हीसला करता है, कोशिश करता है, वीर्य करता है, मन लगाता है । भिक्षुओ ! इसी को वीर्य-इन्द्रिय कहते हैं ।

मिथुभो ! स्पृति-इन्द्रिय क्या है ? चित्तका के द्विपे भीर कटे गये वा स्मरण करनकारा । वह काया में कायाद्रुपस्थी होकर बिहार करता है । धर्मों में धमद्रुपस्थी होकर बिहार करता है । मिथुभो ! इसी को स्पृति-इन्द्रिय कहते हैं ।

मिथुभो ! समाधि-इन्द्रिय क्या है ? चित्त की एकप्रतापकी समाधि का काम करता है । वह प्रथम ध्यान द्वितीय ध्यान तृतीय ध्यान चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर बिहार करता है । मिथुभो ! इसी को समाधि-इन्द्रिय कहते हैं ।

मिथुभो ! प्रज्ञा इन्द्रिय क्या है ? मिथुभो ! आर्षभावाज बसों के उद्वेग भीर भरत होम के स्वभाव को प्रज्ञापूर्वक जानता है । वह 'बह बु-प है इसे वचार्थतः जायता है 'बह बु-क-समुद्र्य है इस वचार्थतः जायता है 'बह बु-पमिरोध है इसे वचार्थतः जायता है वह बु-प-मिरोध-नामी मार्ग है' -इसे वचार्थतः जायता है । मिथुभो ! इसी को प्रज्ञा-इन्द्रिय कहते हैं ।

मिथुभो ! बही पाँच इन्द्रियाँ हैं ।

शुद्धिकर्मी समाप्त

## दूसरा भाग

### मृदुतर वर्ग

§ १. पटिलाभ सुत्त ( ४६ २. १ )

पाँच इन्द्रियों

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ पाँच हैं ।

भिक्षुओ ! श्रद्धा-इन्द्रिय क्या है ? [ ऊपर जैसा ही ]

भिक्षुओ ! वीर्य-इन्द्रिय क्या है ? भिक्षुओ ! चार सम्यक् प्रधानों को लेकर जो वीर्य का लाभ होता है, इसे वीर्य-इन्द्रिय कहते हैं ।

भिक्षुओ ! स्मृति-इन्द्रिय क्या है ? भिक्षुओ ! चार स्मृतिप्रस्थानों को लेकर जो स्मृति का लाभ होता है, इसे स्मृति-इन्द्रिय कहते हैं ।

भिक्षुओ ! समाधि-इन्द्रिय क्या है ? भिक्षुओ ! आर्य-श्रावक निर्वाण को आलम्बन कर, समाधि, चित्त की एकाम्रता का लाभ करता है । भिक्षुओ ! इसे समाधि-इन्द्रिय कहते हैं ।

भिक्षुओ ! प्रज्ञा-इन्द्रिय क्या है ? भिक्षुओ ! आर्यश्रावक धर्मों के उदय और अस्त होने के स्वभाव को प्रज्ञा-पूर्वक जानता है, जिससे धन्धन कट जाते हैं और दुःखों का विलकुल क्षय हो जाता है ।

भिक्षुओ ! इसे प्रज्ञा-इन्द्रिय कहते हैं ।

भिक्षुओ ! यही पाँच इन्द्रियाँ हैं ।

§ २ पठम संक्खित सुत्त ( ४६. २ २ )

इन्द्रियों यदि कम हुए तो

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ पाँच हैं ।

भिक्षुओ ! इन्हीं इन्द्रियों के विलकुल पूर्ण हो जाने से अर्हत् होता है । उससे यदि कम हुआ तो अनागामी होता है । उससे भी यदि कम हुआ तो सकृदागामी होता है । उससे भी यदि कम हुआ तो स्रोतापन्न होता है । उससे भी यदि कम हुआ तो धर्मानुसारी<sup>१</sup> होता है । उससे भी यदि कम हुआ तो अज्ञानुसारी<sup>१</sup> होता है ।

§ ३. दुत्तिय संक्खित सुत्त ( ४६ २ ३ )

पुरुषों की भिन्नता से अन्तर

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ पाँच हैं ।

भिक्षुओ ! इन्हीं इन्द्रियों के विलकुल पूर्ण हो जाने से अर्हत् होता है । उससे भी यदि कम हुआ तो अज्ञानुसारी होता है ।

भिक्षुओ ! इन्द्रियों की, फल की, बल की और पुरुषों की भिन्नता होने से ही ऐसा होता है ।

१ देखो पृष्ठ ७१४ में पादटिप्पणी ।

## § ४ तृतीय संमिश्र सूत्र ( ४६. २. ४ )

## इन्द्रिय विफल नहीं होत

मिथुनो ! इन्द्रियों पाँच हैं ।

मिथुनो ! इन्हीं इन्द्रियों के विच्छेद पूर्व हो जाने से बर्हत् होता है । उससे भी यदि कम हुआ तो अज्ञानुसारी होता है ।

मिथुनो ! इस तरह इन्हें पूरा करनेवाला पूरा कर लेता है और कुछ पूरा करनेवाला कुछ पूरा ठक करता है । मिथुनो ! पाँच इन्द्रियों कमी विच्छेद नहीं होते हैं—वेसा में कहता हूँ ।

## § ५ पठम वित्थार सूत्र ( ४६. २. ५ )

## इन्द्रियों की पूर्णता से बर्हत्त्व

मिथुनो ! इन्द्रियों पाँच हैं ।

मिथुनो ! इन्हीं इन्द्रियों के विच्छेद पूर्व हो जाने से बर्हत् होता है । उससे यदि कम हुआ तो बीच में निर्वान्य पानेवाला (= अन्तरपरिमित्वाची )<sup>१</sup> होता है । उससे यदि कम हुआ तो "उपहृत्त्व परिमित्वाची"<sup>२</sup> (= उपहृत्त्वपरिमित्वाची) होता है । उससे यदि कम हुआ तो 'असंस्मर परिमित्वाची'<sup>३</sup> होता है । संस्मर परिमित्वाची होता है । उपर्यक्तोत्पन्नविद्युत्वाची होता है । मनुष्याण्यमी होता है । पमानुसारी होता है । अज्ञानुसारी होता है ।

१ जो व्यक्ति पाँच निचले संयोजनों के नष्ट हो जाने पर अनागामी होकर पुद्गावास तन्मयोक्त में उत्पन्न होने के बाद ही आपदा मध्य आयु से पूर्व ही ऊपरी संयोजनों को नष्ट करने के लिए आर्यमार्ग को उत्पन्न कर लेता है उसे 'अन्तरपरिमित्वाची' कहते हैं ।

२ जो व्यक्ति अनागामी होकर पुद्गावास तन्मयोक्त में उत्पन्न हो मध्य आयु के बीच जाने पर अथवा काल करने के समय ऊपरी संयोजनों को नष्ट करने के लिए आर्यमार्ग को उत्पन्न कर लेता है, उसे 'उपहृत्त्व परिमित्वाची' कहते हैं ।

३ जो व्यक्ति अनागामी होकर पुद्गावास तन्मयोक्त में उत्पन्न होता है और वह अल्प प्रयत्न से ही ऊपरी संयोजनों को नष्ट करने के लिए आर्यमार्ग को उत्पन्न कर लेता है, उसे 'असंस्मर परिमित्वाची' कहते हैं ।

४ जो व्यक्ति अनागामी होकर पुद्गावास तन्मयोक्त में उत्पन्न होता है और वह वह मध्य आयु के साथ कठिनाई से ऊपरी संयोजनों को नष्ट करने के लिए आर्यमार्ग को उत्पन्न करता है, उसे 'संस्मर परिमित्वाची' कहते हैं ।

५ जो व्यक्ति अनागामी होकर पुद्गावास तन्मयोक्त में उत्पन्न होता है और वह अथिद तन्मयोक्त से स्मृत होकर अल्प तन्मयोक्त को जाता है, अल्प से स्मृत होकर सुदृप्त तन्मयोक्त को जाता है, वहाँ से स्मृत होकर सुदृष्टी तन्मयोक्त को जाता है और वहाँ से स्मृत हो अकस्मिन् तन्मयोक्त में जा ऊपरी संयोजनों को नष्ट करने के लिए आर्यमार्ग उत्पन्न करता है उसे 'उर्ध्वीवो अकस्मिन्नुत्तामी' कहते हैं ।

६ सोतापति पत्र प्राप्त करने में कमी हुए किञ्चित् व्यक्ति का प्रवेन्द्रिय प्रवक्त होता है और प्रथा का आगे करके आर्यमार्ग की भावना करता है उसे पमानुसारी कहते हैं ।

७ सोतापति-पत्र प्राप्त करने में कमी हुए किञ्चित् व्यक्ति का अवेन्द्रिय प्रवक्त होता है और अथा का आगे करके आर्यमार्ग की भावना करता है, उसे अज्ञानुसारी कहते हैं ।

### § ६. दुतिय वित्थार सुत्त ( ४६. २. ६ )

पुरुषो की भिन्नता से अन्तर

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ पाँच हैं ।

भिक्षुओ ! इन्हीं इन्द्रियों के विल्कुल पूर्ण हो जाने से अर्हत् होता है बीच में निर्वाण पाने वाला श्रद्धानुसारी होता है ।

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ की, फल की, बल की, ओर पुरुषो की भिन्नता होने से ही ऐसा होता है ।

### § ७ ततिय वित्थार सुत्त ( ४६ २ ७ )

इन्द्रियाँ विफल नहीं होते

[ ऊपर जैसा ही ]

भिक्षुओ ! इस तरह, इन्हें पूरा करने वाला पूरा कर लेता है, और कुछ दूर तक करने वाला कुछ दूर तक करता है । भिक्षुओ ! पाँच इन्द्रियाँ कभी विफल नहीं होते हैं—ऐसा मैं कहता हूँ ।

### § ८ पटिपन्न सुत्त ( ४६ २ ८ )

इन्द्रियों से रहित अज्ञ है

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ पाँच हैं ।

भिक्षुओ ! इन्हीं इन्द्रियों के विल्कुल पूर्ण हो जाने से अर्हत् होता है । उससे यदि कम हुआ तो अर्हत् फल के साक्षात्कार करने के लिये प्रयत्नवान् होता है । अनागामी होता है । अनागामी-फल के साक्षात्कार करने के लिये प्रयत्नवान् होता है । सक्रदागामी होता है । सक्रदागामी-फल के साक्षात्कार करने के लिये प्रयत्नवान् होता है । सोतापन्न होता है । सोतापत्ति-फल के साक्षात्कार करने के लिये प्रयत्नवान् होता है ।

भिक्षुओ ! जिसे यह पाँच इन्द्रियाँ विल्कुल किसी प्रकार से कुछ भी नहीं है, उसे मैं बाहर का, पृथक्-जन (=अज्ञ) कहता हूँ ।

### § ९. उपसम सुत्त ( ४६ २ ९ )

इन्द्रिय-सम्पन्न

तब, कोई भिक्षु भगवान् से बोला—“भन्ते ! लोग ‘इन्द्रिय-सम्पन्न, इन्द्रिय-सम्पन्न’ कहा करते हैं । भन्ते ! कोई कैसे इन्द्रिय-सम्पन्न होता है ?”

भिक्षुओ ! भिक्षु शान्ति और ज्ञान की ओर लें जानेवाले श्रद्धा-इन्द्रिय की भावना करता है, शान्ति और ज्ञान की ओर लें जानेवाले प्रज्ञा-इन्द्रिय की भावना करता है ।

भिक्षुओ ! इतने से कोई इन्द्रिय-सम्पन्न होना है ।

### § १० आसवक्त्रय सुत्त ( ४६ २ १० )

आश्रवों का शय

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ पाँच हैं ।

भिक्षुओ ! इस पाँच इन्द्रियों के भावित ओर अभ्यस्त होने से भिक्षु आश्रवों के क्षीण हो जाने से अनाश्रव चित्त और प्रज्ञा की विमुक्ति को अपने देवते ही देवते स्वयं जान, देख और प्राप्त कर विहार करता है ।

मृदुतर वर्ग समान

## तीसरा भाग

### पञ्चिन्द्रिय वर्ग

§ १ नवमव सुप्त ( ४६ ३ १ )

इन्द्रिय ज्ञान के पाद् बुद्धत्व का दावा

मिथुब्धी ! इन्द्रियोँ पौंच है ।

मिथुब्धी ! अब तक मैंने इन पाँच इन्द्रिया के समुच्चय बरत जाने आम्बाव, द्रोप भीर मोह्य की बचार्थतः काव नहीं किया अब तक वेद भीर मार के साथ इस लोक में अधुत्तर सम्बन्ध-सम्बुद्धत्व पाने का दावा नहीं किया ।

मिथुब्धी ! अब मैंने ज्ञान किया तनी वेद भीर मार के साथ इस लोक में अधुत्तर सम्बन्ध-सम्बुद्धत्व पाने का दावा किया ।

मुझे ज्ञान-वर्त्म उल्पद्य हो गया—मेरा चित्त विकल्क्य मुक्त हो गया है । यही मेरा ज्ञानितम ज्ञान है अब पुनर्वर्त्म होने का नहीं ।

§ २ त्रीवित्त सुप्त ( ४६ ३ २ )

तीन इन्द्रियोँ

मिथुब्धी ! इन्द्रियोँ तीन है । कीम से तीन ? की इन्द्रिय पुरुष-इन्द्रिय भीर त्रीवित्त-इन्द्रिय ।

मिथुब्धी ! यही तीन इन्द्रियोँ है ।

§ ३ आय सुप्त ( ४६ ३ ३ )

तीन इन्द्रियोँ

मिथुब्धी ! इन्द्रियोँ तीन है । कीम से तीन ? अज्ञत को जानूँगा-इन्द्रिय (अज्ञोवापत्ति में) ज्ञान-इन्द्रिय (अज्ञोवापत्ति-व्यक्त इत्यादि छः स्वानाम्) भीर परम ज्ञान-इन्द्रिय (अज्ञोवापत्ति में) ।

मिथुब्धी ! यही तीन इन्द्रियोँ है ।

§ ४ एकामिन्द्रिय सुप्त ( ४६ ३ ४ )

पौंच इन्द्रियोँ

मिथुब्धी ! इन्द्रियोँ पौंच है । कीम से पौंच ? महा इन्द्रिय भीर स्थिति समाधि महा-इन्द्रिय ।

मिथुब्धी ! यही पौंच इन्द्रियोँ है ।

मिथुब्धी ! इन्हीं पौंच इन्द्रिया के विपुल पूर्ण होने से अर्हत् होता है । उससे यदि वन हुआ तो बीच में परिनिर्वाण जाने काका होता है । उपहास-परिनिर्वाणी होता है । अर्हत्तर परिनिर्वाणी होता है । सर्वकार-परिनिर्वाणी होता है । ऊर्ध्वनील-अर्जुनगामी होता है । महर्दगामी होता है ।

‘एक-बीजी’ होता है। ‘कोलकोल’ होता है। ‘सात बार परम’ होता है। ‘धर्मानुसारी’ होता है।  
श्रद्धानुसारी होता है।

### § ५ सुद्धक सुत्त ( ४६ ३ ५ )

छः इन्द्रियाँ

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ छ. हैं। कौन से छ ? चक्षु-इन्द्रिय, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, काया, मन-इन्द्रिय।

भिक्षुओ ! यही छः इन्द्रियाँ हैं।

### § ६. सोतापन्न सुत्त ( ४६ ३ ६ )

स्रोतापन्न

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ छ हैं। कौन से छ ? चक्षु-इन्द्रिय मन-इन्द्रिय।

भिक्षुओ ! जो आर्यश्रावक इन छ इन्द्रियों के समुदय, अस्त होने, आस्वाद, दोष और मोक्ष को यथार्थत जानता है वह स्रोतापन्न कहा जाता है, वह अब च्युत नहीं हो सकता, परम-ज्ञान लाभ करना उसका नियत होता है।

### § ७ पठम अरहा सुत्त ( ४६ ३ ७ )

अर्हात्

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ छ हैं। कौन से छ ? चक्षु मन।

भिक्षुओ ! जो भिक्षु इन छ इन्द्रियों के मोक्ष को यथार्थत- जान, उपादान-रहित हो विमुक्त हो जाता है, वह अर्हात् कहा जाता है—क्षीणाश्रव, जिसका ब्रह्मचर्य-वास पूरा हो गया है, कृतकृत्य, जिसका भार उतर गया है, जिसने परमार्थ को पा लिया है, जिसका भव-संयोजन क्षीण हो चुका है, जो परम-ज्ञान पा विमुक्त हो गया है।

### § ८ द्वितीय अरहा सुत्त ( ४६. ३. ८ )

इन्द्रिय-ज्ञान के बाद बुद्धत्व का दावा

भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ छ हैं।

भिक्षुओ ! जब तक मैंने इन छ इन्द्रियों के समुदय, अस्त होने, आस्वाद, दोष और मोक्ष को यथार्थत जान नहीं लिया, तब तक देव और मार के साथ इस लोक में ; अनुत्तर सम्यक्-सम्बुद्धत्व पाने का दावा नहीं किया।

भिक्षुओ ! जब मैंने जान लिया, तभी अनुत्तर सम्यक्-सम्बुद्धत्व पाने का दावा किया।

१ जो स्रोतापत्ति-फल प्राप्त व्यक्ति केवल एक बार ही मनुष्य-लोक में उत्पन्न होकर निर्वाण पा लेता है, उसे ‘एकबीजी’ कहते हैं।

२ जो स्रोतापत्ति फल प्राप्त व्यक्ति दो या तीन बार जन्म लेकर निर्वाण प्राप्त करता है, उसे ‘कोलकोल’ कहते हैं।

३ जो स्रोतापत्ति-फल प्राप्त व्यक्ति सात बार देवलोक तथा मनुष्यलोक में जन्म लेकर निर्वाण प्राप्त करता है, उसे ‘सप्तकल्लु परम’ (=सात बार परम) कहते हैं।

सुने ज्ञान दर्शन उत्पन्न हो गया—मेरा चित्त विस्तृत विस्तृत हो गया है। यही मेरा अन्तिम जन्म है अब पुनर्जन्म होने का नहीं।

### § ९ पठम समणब्राह्मण सुत्त ( ४६. ३ ९ )

इन्द्रिय-ज्ञान से भ्रमणत्व या ब्राह्मणत्व

सिद्धुओ ! जो धम्म या ब्राह्मण रूप छः इन्द्रियों के समुच्चय अस्त होने आस्वाव होय और मोक्ष को पर्यार्थत नहीं जानते हैं वे भ्रमणत्व या ब्राह्मणत्व को अपने देखते ही देखते पा कर बिहार नहीं करते हैं।

सिद्धुओ ! जो पर्यार्थत जानते हैं वे भ्रमणत्व या ब्राह्मणत्व को अपने देखते ही देखते पा कर बिहार करते हैं।

### § १० दुसिय समणब्राह्मण सुत्त ( ४६. ३ १० )

इन्द्रिय-ज्ञान से भ्रमणत्व या ब्राह्मणत्व

सिद्धुओ ! जो धम्म या ब्राह्मण चक्षु-इन्द्रिय को नहीं जानते हैं चक्षु-इन्द्रिय के निरोध-गामी मार्ग को नहीं जानते हैं भोज्य भ्रान्त विद्या काया मन का नहीं जानते हैं मन के निरोध गामी मार्ग को नहीं जानते हैं वे बिहार नहीं करते हैं।

सिद्धुओ ! जो पर्यार्थत जानते हैं वे बिहार करते हैं।

पच्छिन्द्रिय वरौ समाप्त





## चौथा भाग सुखेन्द्रिय वर्ग

§ १ सुद्विक सुत्त ( ४६ ४ १ )

पाँच इन्द्रियों

भिक्षुओ ! इन्द्रियों पाँच है । कौन से पाँच ? सुख-इन्द्रिय, दुःख-इन्द्रिय, सोमनस्य-इन्द्रिय, दौर्मनस्य-इन्द्रिय, उपेक्षा-इन्द्रिय ।

भिक्षुओ ! यही पाँच इन्द्रियाँ हैं ।

§ २ सोत्तापन्न सुत्त ( ४६ ४ २ )

स्रोत्तापन्न

भिक्षुओ ! जो भार्यश्रावक इन पाँच इन्द्रियों के समुदय' और मोक्ष को यथार्थत जानता है, वह स्रोत्तापन्न कहा जाता है ।

§ ३ अरहा सुत्त ( ४६ ४ ३ )

अर्हत

भिक्षुओ ! जो भिक्षु इन पाँच इन्द्रियों के समुदय और मोक्ष को यथार्थत जान, उपादान-रहित हो विमुक्त हो गया है, वह अर्हत कहा जाता है ।

§ ४ पठम समणब्राह्मण सुत्त ( ४६ ४ ४ )

इन्द्रिय-ज्ञान से श्रमणत्व या ब्राह्मणत्व

भिक्षुओ ! जो श्रमण या ब्राह्मण इन पाँच इन्द्रियों के समुदय और मोक्ष को यथार्थत नहीं जानते हैं, वे विहार नहीं करते हैं ।

भिक्षुओ ! जो जानते हैं, वे विहार करते हैं ।

§ ५. दुतिय समणब्राह्मण सुत्त ( ४६ ४ ५ )

इन्द्रिय-ज्ञान से श्रमणत्व या ब्राह्मणत्व

भिक्षुओ ! जो श्रमण या ब्राह्मण सुख-इन्द्रिय को, निरोध-गामी मार्ग को, दुःख, सोमनस्य, दौर्मनस्य, उपेक्षा-इन्द्रिय को निरोधगामी मार्ग को यथार्थत नहीं जानते हैं । वे विहार नहीं करते हैं ।

भिक्षुओ ! जो जानते हैं, वे विहार करते हैं ।

## § ६ षष्ठम विमङ्ग सुच ( ४६ ४ ६ )

## पाँच इन्द्रियाँ

मिथुनो ! सुक-इन्द्रिय क्या है ? मिथुनो ! जो कायिक सुक-भसात काय-संस्पर्श से सुकद वेदना होती है वह सुक-इन्द्रिय कहलाता है ।

मिथुनो ! दुःख-इन्द्रिय क्या है ? जो कायिक दुःख-भसात काय-संस्पर्श से दुःखद वेदना होती है वह दुःख-इन्द्रिय कहलाता है ।

मिथुनो ! सौमनस्य-इन्द्रिय क्या है ? मिथुनो ! जो मानसिक सुक-भसात मन-संस्पर्श से सुकद अनुभव वेदना होती है वह सौमनस्य-इन्द्रिय कहलाता है ।

मिथुनो ! हीर्मनस्य-इन्द्रिय क्या है ? मिथुनो ! जो मानसिक दुःख-भसात मना-संस्पर्श से दुःखद वेदना होती है वह हीर्मनस्य-इन्द्रिय कहलाता है ।

मिथुनो ! उपेक्षा-इन्द्रिय क्या है ? मिथुनो जो कायिक या मानसिक सुक या दुःख नहीं है वह उपेक्षा-इन्द्रिय कहलाता है ।

मिथुनो ! यही पाँच इन्द्रियाँ हैं :

## § ७ द्वाविंश विमङ्ग सुच ( ४६ ४ ७ )

## पाँच इन्द्रियाँ

मिथुनो ! सुक-इन्द्रिय क्या है ?

मिथुनो ! उपेक्षा-इन्द्रिय क्या है ?

मिथुनो ! जो सुक-इन्द्रिय और सौमनस्य-इन्द्रिय हैं उनकी वेदना सुक बाकी समझनी चाहिये । जो दुःख-इन्द्रिय और हीर्मनस्य-इन्द्रिय हैं उनकी वेदना दुःख बाकी समझनी चाहिये । जो उपेक्षा-इन्द्रिय है उसकी वेदना अनुप-सुक समझनी चाहिये ।

मिथुनो ! यही पाँच इन्द्रियाँ हैं ।

## § ८ त्रिंश विमङ्ग सुच ( ४६ ४ ८ )

## पाँच से तीन होना

[ ऊपर बीसा ही ]

मिथुनो ! इस प्रकार वह पाँच इन्द्रियाँ पाँच हो कर भी तीन ( अनुप दुःख उपेक्षा ) हो जाती हैं और एक दृष्टि-कोण से तीन हो कर पाँच ही जाते हैं ।

## § ९ चरमि सुच ( ४६ ४ ९ )

## इन्द्रिय-उत्पत्ति को हेतु

मिथुनो ! अनुप-वेदनीय स्पर्श के प्रत्यक्ष से सुक-इन्द्रिय उत्पन्न होता है । वह सुलित रहते हुए जानता है कि मैं सुखित हूँ । उसी सुक-वेदनीय स्पर्श के निरुद्ध हो जाने से उससे उत्पन्न हुआ सुक-इन्द्रिय निरुद्ध-भसात हो जाता है—वेदना भी जानता है ।

मिथुनो ! दुःख-वेदनीय स्पर्श के प्रत्यक्ष से दुःख-इन्द्रिय उत्पन्न होता है । [ ऊपर बीसा ही समझ लेना चाहिये ]

भिभुओ । सोमनस्य-वेदनीय स्पर्श के प्रथम में सोमनस्य-इन्द्रिय उत्पन्न होता है ।

भिभुओ । सोमनस्य-वेदनीय स्पर्श के प्रथम में सोमनस्य-इन्द्रिय उत्पन्न होता है ।

भिभुओ । उपेक्षा-वेदनीय स्पर्श के प्रथम में उपेक्षा-इन्द्रिय उत्पन्न होता है ।

भिभुओ । जैसे, दो काठ के रंगद गाने में गर्मा पंदा होती है, और आग निकल आती है, और उन काठ को अलग-अलग फेंक देने से वा गर्मा धार आग शान्त हो जाती है, ठंडी हो जाती है ।

भिभुओ । जैसे ही, सुख-वेदनाय स्पर्श के प्रथम में सुख-इन्द्रिय उत्पन्न होता है । वह सुखित रहने लगे जानता है कि "मे सुखिन हूँ ।" उर्मा सुख-वेदनीय स्पर्श के निरुद्ध हो जाने से, उससे उत्पन्न हुआ सुख-इन्द्रिय निरुद्ध = शान्त हो जाता है—पुमा भी जानता है ।

## § १० उपातिक सुत्त ( ४६. अ १० )

### इन्द्रिय-निरोध

भिभुओ । इन्द्रियो पाँच है । कौन से पाँच ? दु ग-इन्द्रिय, सोमनस्य, सुख, सोमनस्य, उपेक्षा-इन्द्रिय ।

भिभुओ । आतापी ( = तलेहों को तपाने वाला ), अप्रमत्त, भोग प्रकृतिक हो विहार करने वाले भिक्षु को दु ग-इन्द्रिय उत्पन्न होता है । वह ऐसा जानता है—सुखे दु ग-इन्द्रिय उत्पन्न हुआ है । वह निमित्त=निदान=संस्कार=प्रत्यय से ही उत्पन्न होता है । ऐसा सम्भव नहीं, कि बिना निमित्त के उत्पन्न हो जाय । वह दु ग-इन्द्रिय को जानता है, उसके समुदय को जानता है, उसके निरोध को जानता है, और वह कैसे निरुद्ध होगा—इसे भी जानता है ।

उत्पन्न दु ग-इन्द्रिय कहाँ विलकुल निरुद्ध हो जाता है ? भिक्षुओ । भिक्षु प्रथम ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है । यहाँ उत्पन्न दु ग-इन्द्रिय विलकुल निरुद्ध हो जाता है ।

भिभुओ । हमी को कहते हैं कि—भिभु ने दु ग-इन्द्रिय के निरोध को जान लिया और उसके लिये चिंत लगा दिया ।

[ ऊपर जैसा ही सोमनस्य-इन्द्रिय का भी समझ लेना चाहिये ]

उत्पन्न सोमनस्य-इन्द्रिय कहाँ विलकुल निरुद्ध हो जाता है ? भिक्षुओ । भिक्षु द्वितीय-ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है । यहाँ उत्पन्न सोमनस्य-इन्द्रिय विलकुल निरुद्ध हो जाता है ।

[ ऊपर जैसा ही सुख-इन्द्रिय का भी समझ लेना चाहिये ]

भिभुओ । भिक्षु तृतीय ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है । यहीं उत्पन्न सुख-इन्द्रिय विलकुल निरुद्ध हो जाता है ।

[ ऊपर जैसा ही सोमनस्य-इन्द्रिय का भी समझ लेना चाहिये । ]

भिभुओ । भिक्षु चतुर्थ ध्यान को प्राप्त हो विहार करता है । यही उत्पन्न सोमनस्य-इन्द्रिय विलकुल निरुद्ध हो जाता है ।

[ ऊपर जैसा ही उपेक्षा-इन्द्रिय का भी समझ लेना चाहिये । ]

भिभुओ । भिक्षु सर्वथा नैवसंज्ञा नासंज्ञा-अव्यतन का अतिक्रमण कर संज्ञावेदयित-निरोध को प्राप्त हो विहार करता है । यही उपेक्षा-इन्द्रिय विलकुल निरुद्ध हो जाता है ।

भिभुओ । इसी को कहते हैं कि—भिभु ने उपेक्षा-इन्द्रिय के निरोध को जान लिया और उसके लिये चिंत लगा दिया ।

सुख-इन्द्रिय वर्ग समाप्त

## पाँचवाँ भाग

### जरा-वर्ग

§ १ जरा सुत्त ( ४६ ५ १ )

जीवन में वार्षिक्य छिपा है ।

पूसा गिने सुभा ।

एक समय भगवान् भ्रायस्ती में मृगारमाता क प्रामाण्य पूर्व्यागम में बिहार करते थ ।

उम समय भगवान् सौप्त को पण्डित की ओर पीठ किये बैठे पूर के रहे थे ।

तउ भासुप्पाम् आनम्भु भगवान् को प्रणाम कर उनके शरीर को इबाते हुये बोले 'मन्ते ! कँसी बात है भगवान् का शरीर अब बेसा चढ़ा और सुन्दर नहीं रहा भगवान् के गान्न अब सिद्धि हो गये है, चमके सिद्धि गये है शरीर आगे की ओर इउ छुका माळम होता है चम्पु भादि इन्द्रियों भी कमजोर हो गये ह ।

होँ जगम्भु ! पूसी ही बात है । जीवन में वार्षिक्य छिपा है जारोम्य में एपाधि छिपी है जीवम म यल्लु छिपी है । शरीर बंसा ही चढ़ा और सुन्दर नहीं रहता है गान्न सिद्धि हो बात है चमके सिद्धि अब ते है शरीर आगे की ओर छुका जाता है और चम्पु भादि इन्द्रियों भी कमजोर हो जाते है ।

भगवान् ने यह कहा यह कहकर कुछ फिर भी बोले—

हे बुद्धावस्था ! तुम्हें बिकर है

तुम सुन्दरता को मह कर देती हो

बैसे सुन्दर शरीर को भी

तुमने मसक बाका है ह

को सी बर्ष तउ जीता है

बह भी एक दिन सबस्य मरता है,

यल्लु किसी को भी नहीं छोड़ती है

सभी को पीस देती है ह

§ २ उप्पाम् आहण सुत्त ( ४६ ५ २ )

मन इन्द्रियों का प्रतिक्षण है

भ्रायस्ती जंतवन ।

तम उक्काम् आहण जहाँ भगवान् थे वहाँ अया आर बुलक-शेम पूर कर एउ और बैठ गया ।

एक नार बैठ उक्काम् आहण भगवान् स बोका "हे गीतम ! चम्पु योत्र प्राण सिद्धा और

बाबा बह पाँच इन्द्रियों के अपनै मिल्न-मिल्न विषय हैं एक दूसरे के विषय का अनुभव नहीं करता है ।

हे गीतम ! इन पाँच इन्द्रियों का प्रतिक्षण कौन है कौन विषयों का अनुभव करता है ?

हे आहण ! इन पाँच इन्द्रियों का प्रतिक्षण मन है अब ही विषय का अनुभव करता है ।

हे गीतम ! मन का प्रतिक्षण क्या है ?

हे आहण ! मन का प्रतिक्षण वयुधि है ।

हे गौतम ! स्मृति का प्रतिगरण क्या है ?

हे ब्राह्मण ! स्मृति का प्रतिगरण विमुक्ति है ।

हे गौतम ! विमुक्ति का प्रतिगरण क्या है ?

हे ब्राह्मण ! विमुक्ति का प्रतिगरण निर्वाण है ।

हे गौतम ! निर्वाण का प्रतिगरण क्या है ?

ब्राह्मण ! धम रहें, इसके बाद प्रथम नहीं किया जा सकता है । प्रताचर्य-पालन का स्वयं अन्तिम उद्देश्य निर्वाण ही है ।

तब, उष्णाभ ब्राह्मण भगवान् के कहे का अभिनन्दन और धनुमोदन कर, आसन से उठ, भगवान् की प्रणाम् और प्रदक्षिणा कर चला गया ।

तब, उष्णाभ ब्राह्मण के जाने के बाद ही भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, “भिक्षुओ ! किन्हीं कृशगार शाला के पूर्य की ओर के क्षरोत्थे में धूप भीतर जाकर कहां पड़ेगा ?”

भन्ते ! पण्डित की दीवार पर ।

भिक्षुओ ! उष्णाभ ब्राह्मण को बुद्ध के प्रति गूनी गहरी श्रद्धा हो गई है, कि उसे कोई श्रमण, ब्राह्मण, देव, मार, या ब्रह्मा भी नहीं दिया सकता है ।

भिक्षुओ ! यदि इस समय उष्णाभ ब्राह्मण मर जाय तो उसे ऐसा कोई स्मोजन लगा नहीं है जिसमें वह इस लोक में फिर भी आवे ।

### § ३ साकेत सुक्त ( ४६ ५ ३ )

#### इन्द्रियों ही बल है

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय, भगवान् साकेत में अजनयन मृगदाय में विहार करते थे ।

वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, “भिक्षुओ ! क्या कोई दृष्टि-कोण है जिससे पाँच इन्द्रियाँ पाँच बल हो जाते हैं, और पाँच बल पाँच इन्द्रियाँ हो जाते हैं ?”

भन्ते ! धर्म के मूल भगवान् ही ।

हाँ भिक्षुओ ! ऐसा दृष्टि-कोण है । जो श्रद्धा-इन्द्रिय है वह श्रद्धा-बल होता है, और जो श्रद्धा-बल है वह श्रद्धा-इन्द्रिय होता है । जो वीर्य-इन्द्रिय है वह वीर्य-बल होता है, और जो वीर्य-बल है वह वीर्य-इन्द्रिय होता है । जो प्रज्ञा-इन्द्रिय है वह प्रज्ञा-बल होता है, और जो प्रज्ञा-बल है वह प्रज्ञा-इन्द्रिय होता है ।

भिक्षुओ ! जैसे, कोई नदी ही जो पूर्य की ओर बहती हो । उसके बीच में एक द्वीप हो । भिक्षुओ ! तो, एक दृष्टि-कोण है जिससे नदी की धारा एक ही समझी जाय, और दूसरा ( दृष्टि-कोण ) जिससे नदी की धारा दो समझी जाय ?

भिक्षुओ ! जो द्वीप के आगे का जल है, और जो पीछे का, दोनों एक ही धारा बनाते हैं । इस दृष्टिकोण से नदी की धारा एक ही समझी जायगी ।

भिक्षुओ ! द्वीप के उत्तर का जल और दक्षिण का जल दो समझे जाने से नदी की धारा दो समझी जायगी ।

भिक्षुओ ! इसी तरह, जो श्रद्धा-इन्द्रिय है वह श्रद्धा-बल होता है ।

भिक्षुओ ! पाँच इन्द्रियों के भावित और अभ्यस्त होने से भिक्षु आश्रवों के क्षय हो जाने से अनाश्रव चित्त और प्रज्ञा की विमुक्ति को अपने देखते ही देखते स्वयं जान, देख और प्राप्त कर विहार करता है ।

### § ४ पुण्यकोट्टक सुप्त ( ४६ १ ४ )

इन्द्रिय-भायना से निषाण प्राप्ति

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय भगवान् श्रायस्ती में पुण्यकोट्टक में विहार करते थे ।

वहाँ भगवान् ने भासुप्पाम् स्वारिपुत्र की आमन्त्रित किया "स्वारिपुत्र ! तुम्हें ऐसा भय है—  
अधेन्द्रिय के भावित और अम्यस्त होने से निषाण सिद्ध होता है प्रज्ञेन्द्रिय के भावित और अम्यस्त  
होने से निषाण सिद्ध होता है ।

मन्ते ! भगवान् के प्रति भय है होने से कुछ ऐसा मैं नहीं जानता हूँ । मन्ते ! जिसने इसे प्रजा  
सं न देखा न ज्ञान न साक्षात्कार किया और न अनुभव किया है वह मन्ते इस भय के आधार पर  
मान के । मन्ते ! किन्तु जिसने इस प्रजा सं देखा पान तथा साक्षात्कार और अनुभव पर किया है वे  
वाक्य-विधिकिता से रहित होत है । मन्ते ! मैं इस प्रजा सं देखा जान तथा साक्षात्कार और अनुभव  
कर किया है । मुझे इसमें कोई वाक्य-विधिकिता नहीं है कि—अधेन्द्रिय के भावित और अम्यस्त  
होने से निषाण सिद्ध होता है प्रज्ञेन्द्रिय के भावित और अम्यस्त होने से निषाण सिद्ध होता है ।

स्वारिपुत्र ! ठीक ठीक है ! स्वारिपुत्र ! जिसने इसे प्रजा सं देखा न जाना । तुम्हें इसमें  
कोई वाक्य-विधिकिता नहीं है कि निषाण सिद्ध होता है ।

### § ५ पठम पुम्भाराम सुप्त ( ४६ ५ ५ )

प्रज्ञेन्द्रिय की भायना से निषाण-प्राप्ति

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय भगवान् श्रायस्ती में सुगारमाता के प्रासाद पुम्भाराम में विहार करते थे ।

वहाँ भगवान् ने सिद्धुओं को आमन्त्रित किया 'सिद्धुआ ! जिसने इन्द्रियों के भावित और  
अम्यस्त होने से सिद्धु क्षीणभाव हो परम ज्ञान को बोधित करता है—जाति क्षीण हुई, मक्षर्य पूरा हो  
गया जो करता था सो कर लिया कर वहाँ के जिने कुछ रह नहीं गया है—ऐसा मैंने जान किया ?'

मन्ते ! धर्म के सूत्र भगवान् ही ।

सिद्धुओ ! एक इन्द्रिय के भावित और अम्यस्त होने से सिद्धु —ऐसा मैंने जान किया ।

किस एक इन्द्रिय के ?

सिद्धुओ ! प्रज्ञावाक् कार्य प्रायः जो उससे ( = प्रजा सं ) भय होती है । उससे जीव होता  
है । उससे रक्षित होती है । उससे समाधि होती है ।

सिद्धुओ ! इसी एक इन्द्रिय के भावित और अम्यस्त होने से सिद्धु —ऐसा मैंने जान किया ।

### § ६ दुत्थिव पुम्भाराम सुप्त ( ४६ ५ ६ )

कार्य-प्रज्ञा और कार्य-विमुक्ति

[ वही निषाण ]

सिद्धुआ ! जो इन्द्रियों के भावित और अम्यस्त होने से सिद्धु ऐसा मैंने जान किया । कार्य  
प्रज्ञा सं और कार्य विमुक्ति से । सिद्धुओ ! जो कार्य-प्रज्ञा है वह प्रज्ञा-इन्द्रिय है, और जो कार्य-विमुक्ति  
है वह समाधि इन्द्रिय है ।

सिद्धुआ ! इन दो इन्द्रियों के भावित और अम्यस्त होने से सिद्धु —ऐसा मैंने जान किया ।

## § ७. ततिय पुव्वाराम सुत्त ( ४६. ५ ७ )

## चार इन्द्रियों की भावना

[ वही निदान ]

भिक्षुओ ! चार इन्द्रियों के भावित और अभ्यस्त होने से भिक्षु\* ऐसा मैंने जान लिया ।

वीर्य-इन्द्रियों के, स्मृति-इन्द्रिय के, समाधि-इन्द्रिय के, प्रज्ञा-इन्द्रिय के ।

भिक्षुओ ! इन्हीं चार इन्द्रियों के भावित और अभ्यस्त होने से भिक्षु ऐसा मैंने जान लिया ।

## § ८ चतुत्थ पुव्वाराम सुत्त ( ४६ ५ ८ )

## पाँच इन्द्रियों की भावना

[ वही निदान ]

भिक्षुओ ! पाँच इन्द्रियों के भावित और अभ्यस्त होने से भिक्षु ऐसा मैंने जान लिया ।

श्रद्धा-इन्द्रिय के, वीर्य के, स्मृति...के, समाधि के, प्रज्ञा-इन्द्रिय के ।

भिक्षुओ ! इन्हीं पाँच इन्द्रिय के भावित और अभ्यस्त होने से भिक्षु ऐसा मैंने जान लिया ।

## § ९. पिण्डोल सुत्त ( ४६ ५ ९ )

## पिण्डोल भारद्वाज को अर्हत्व-प्राप्ति

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय, भगवान् कोशाभ्थी में घोषिताराम में विहार करते थे ।

उस समय, आयुष्मान् पिण्डोल भारद्वाज ने परम-ज्ञान को घोषित किया था, "जाति क्षीण हुई —ऐसा मैंने जान लिया ।"

तब, कुछ भिक्षु जहाँ भगवान् थे वहाँ आये, और भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये ।

एक ओर बैठ, वे भिक्षु भगवान् से बोले, "भन्ते ! आयुष्मान् पिण्डोल भारद्वाज ने परम-ज्ञान को घोषित किया है... भन्ते ! किस अर्थ से आयुष्मान् पिण्डोल भारद्वाज ने परम-ज्ञान को घोषित किया है—जाति क्षीण हुई ऐसा मैंने जान लिया ?"

भिक्षुओ ! तीन इन्द्रियों के भावित और अभ्यस्त हो जाने से आयुष्मान् पिण्डोल भारद्वाज ने परम-ज्ञान को घोषित किया है—जाति क्षीण हुई ऐसा मैंने जान लिया ।

किन तीन इन्द्रियों के ?

स्मृति-इन्द्रिय के, समाधि-इन्द्रिय के, प्रज्ञा-इन्द्रिय के ।

भिक्षुओ ! इन्हीं तीन इन्द्रियों के भावित और अभ्यस्त होने से आयुष्मान् पिण्डोल भारद्वाज ने परम-ज्ञान को घोषित किया है—जाति क्षीण हुई ऐसा मैंने जान लिया ।

भिक्षुओ ! इन तीन इन्द्रियों का कहाँ अन्त होता है ?

क्षय में अन्त होता है ।

किसके क्षय में अन्त होता है ?

जन्म, जरा और मृत्यु के ।

भिक्षुओ ! जन्म, जरा और मृत्यु को क्षय हो गया देख, भिक्षु पिण्डोल भारद्वाज ने परम-ज्ञान को घोषित किया है—जाति क्षीण हुई ऐसा मैंने जान लिया ।

## § १० आपण हुच ( ४६ ५ १० )

## युद्ध मरु को धर्म में शका नहीं

पूसा मीने मुया ।

एक समय भगवान् आहु ( बभपव् ) में आपण नाम के अंतों क कस्व में बिहार करते थे ।

वहाँ भगवान् ने कायुष्माण्ड स्मरिपुत्र को आमन्त्रित किया 'सारिपुत्र ! या आर्यशाबक युद्ध के प्रति अत्यन्त भयान्तु है क्या वह युद्ध या युद्ध के धर्म में कुछ सीना कर सकता है ?'

महाँ मन्ते ! जो आर्यशाबक युद्ध के प्रति अत्यन्त भयान्तु है वह युद्ध या युद्ध के धर्म में कुछ सीका नहीं कर सकता है । मन्ते ! भयान्तु आर्यशाबक से पूसी भाषा की जाती है कि वह वीर्यवान् होकर बिहार करेगा—अहुसाक धर्मों के प्रहाय के किये भार कुशाक धर्मों को उत्पन्न करने के किये । कुशाक धर्मों से वह स्थिर रह पराक्रम बासा और कल्पा न गिरा देने काका होगा ।

मन्ते ! उसका जो वीर्य है वह वीर्य-इन्द्रिय है । मन्ते ! भयान्तु और वीर्यवान् आर्यशाबक से पूसी भाषा की जाती है कि वह स्थितिमान् होगा—आवर्ण्य स्थिति सं युक्त, चिरकाल के किये वीर कहे गये का मी स्मरण करेगा ।

मन्ते ! जो उसकी स्थिति है वह स्थिति इन्द्रिय है । मन्ते ! भयान्तु, वीर्यवान्, वीर उपस्थित स्थिति बाके मिथु से वह भाषा की जाती है कि वह निर्वाण को आक्रमण करके चित्त की पूजाप्रता समाधि को प्राप्त करेगा ।

मन्ते ! उसकी जो समाधि है वह समाधि-इन्द्रिय है । मन्ते ! भयान्तु वीर्यवान्, उपस्थित चित्त बाके भार समाहित होनेवाक आर्यशाबक से यह भाषा की जाती है कि वह जानेगा कि "इध संसार का काम बाण नहीं जाता पूर्व फेदि माह्यन नहीं होती । अधिवा के नीचरण में पद् लुप्ता के कल्पक से वीर्ये आवागमन में संबरण करते जीवों को उछी अधिवा के गिरोव से शान्त पर-सभी संरक्षकों का एक आवागमनी उपधिपी से मुक्ति-अनुवा-क्षय-चिराग-निरोव-निर्वाण सिद्ध होता है ।

मन्ते ! उसकी जो यह महा है वह महा-इन्द्रिय है । मन्ते ! भयान्तु आर्यशाबक वीर्य करते हुए, स्थिति रखते हुये समाधि फगाते हुए, पूसा ज्ञान रखते हुब वीर्ये भया करता है—वह धर्म जिन्हें पहक मीने मुया ही का उन्हें आब स्वयं अनुभव करते हुये बिहार कर रहा हूँ और महा से पैठ बन उन्म रह रहा हूँ ।

मन्ते ! उसकी जो यह महा है वह महा-इन्द्रिय है । सारिपुत्र ! वीर है वीर है ! [ कपर नहीं गई की पुमरकि ]

सारिपुत्र ! उसकी जो यह महा है वह महा-इन्द्रिय है ।

जरा वगै स्वमात



## छठाँ भाग

§ १. शाला सुत्त ( ४६ ६. १ )

प्रवेन्द्रिय श्रेष्ठ है

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय, भगवान् कोशल में शाला नामक किसी व्यापारों के ग्राम में विहार करते थे ।

भिक्षुओं । जमें, जितने तिरश्चांभ (=रश्मि) प्राणी हैं सभी में मृगराज गिह बल, तेज, और वीरता में अत्र समझा जाता है । भिक्षुओं । वैसे ही, जितने ज्ञान-पक्ष के धर्म हैं सभी में ज्ञान-प्राप्ति के लिये प्रज्ञा-इन्द्रिय ही अत्र समझा जाता है ।

भिक्षुओं ! ज्ञान-पक्ष के धर्म कौन हैं ?

भिक्षुओं ! श्रद्धा-इन्द्रिय ज्ञान-पक्ष का धर्म है, उसमें ज्ञान की प्राप्ति होती है । धर्म । समाधि । प्रज्ञा ।

§ २. मल्लिक सुत्त ( ४६. ६ २ )

इन्द्रियों का अपने-अपने स्थान पर रहना

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय, भगवान् मल्ल (जनपद) में उरुवेल कल्प नामक मरुती कस्बे में विहार करते थे ।

भिक्षुओं । जब तक आर्यश्रावक को आर्य ज्ञान उत्पन्न नहीं होता है, तब तक चार इन्द्रियों की सस्थिति=अवस्थिति (=अपने अपने स्थान पर ठीक से बैठना) नहीं होती है ।

भिक्षुओं ! जैसे, फूटागार का कूट जब तक उठाया नहीं जाता है तब तक उसके धरण की सस्थिति=अवस्थिति नहीं होती है ।

भिक्षुओं ! जब फूटागार का कूट उठा दिया जाता है तब उसके धरण की सस्थिति=अवस्थिति ही जाती है ।

भिक्षुओं ! वैसे ही, जब आर्यश्रावक को आर्य ज्ञान उत्पन्न हो जाता है, तब चार इन्द्रियों की सस्थिति=अवस्थिति हो जाती है ।

किन चार का ?

श्रद्धा-इन्द्रिय का, धीर्य-इन्द्रिय का, स्मृति-इन्द्रिय का, समाधि-इन्द्रिय का ।

भिक्षुओं ! प्रज्ञावान् आर्यश्रावक को उससे (= प्रज्ञा से) श्रद्धा सस्थित हो जाती है, उससे धीर्य सस्थित हो जाता है, उससे स्मृति सस्थित हो जाती है, उससे समाधि सस्थित हो जाती है ।

§ ३. सेख सुत्त ( ४६ ६ ३ )

शौक्ष्य-अशौक्ष्य जानने का दृष्टिकोण

ऐसा मैंने सुना है ।

एक समय, भगवान् कौशाम्बी में घोषिताराम में विहार करते थे ।

वहाँ भगवान् ने मिथुनों को आमन्त्रित किया मिथुना ! क्या ऐसा काहू दृष्टि-त्राण है जिससे शीघ्र मिथु सैर्य भूमि में स्थित हो 'मैं सैर्य हूँ' ऐसा जानूँ और असीर्य मिथु असीर्य भूमि में स्थित हो 'मैं असीर्य हूँ' ऐसा जानूँ ?

मन्ते ! धर्म के मूक भगवान् ही ।

मिथुनो ! ऐसा दृष्टि-त्राण है जिससे शीघ्र मिथु सैर्य भूमि में स्थित हो 'मैं सैर्य हूँ' ऐसा जानूँ ।

मिथुनो ! वह कीम-सा दृष्टि-त्राण है जिससे शीघ्र मिथु सैर्य-भूमि में स्थित हो 'मैं सैर्य हूँ' ऐसा जानूँ ?

मिथुनो ! शीघ्र मिथु 'यह दुःख है इसे पर्यायतः जानता है 'यह दुःख का निरोध-नामी मार्ग है इसे पर्यायतः जानता है । मिथुनो ! वह भी एक दृष्टि-त्राण है जिससे शीघ्र मिथु शीघ्र-भूमि में स्थित हो 'मैं शीघ्र हूँ' ऐसा जानता है ।

मिथुना ! फिर भी शीघ्र मिथु ऐसा चिन्तन करता है "क्या इसके बाहर भी कोई दूसरा अर्थ या ब्राह्मण है जो इस सत्य धर्म का बीसे ही उपदेश करता है उसे कि भगवान् ? तब वह इस निष्कर्ष पर आता है—इसमें बाहर कोई दूसरा अर्थ या ब्राह्मण नहीं है जो इस सत्य धर्म का बीसे ही उपदेश करता है बीसे कि भगवान् । मिथुनो ! वह भी एक दृष्टि-त्राण है जिससे शीघ्र मिथु शीघ्र भूमि में स्थित हो 'मैं शीघ्र हूँ' ऐसा जानता है ।

मिथुनो ! फिर भी शीघ्र मिथु पाँच इन्द्रियों को जानता है । अज्ञा को प्रज्ञा को । अनन्त ( = इन्द्रिया के ) को परम उद्देश्य है उसे ज्ञान या नहीं होता है किन्तु अपनी समझ से उसमें पैद कर जानूँ करता है । मिथुनो ! वह भी एक दृष्टि-त्राण है जिससे शीघ्र मिथु शीघ्र-भूमि में स्थित हो 'मैं शीघ्र हूँ' ऐसा जानता है ।

मिथुनो ! वह कीम सा दृष्टि-त्राण है जिससे असीर्य मिथु असीर्य भूमि में स्थित हो 'मैं असीर्य हूँ' ऐसा जानूँ करता है ?

मिथुनो ! असीर्य मिथु पाँच इन्द्रियों को जानता है । अज्ञा प्रज्ञा । अनन्त जो परम-उद्देश्य है उसे ज्ञान या भी होता है और प्रज्ञा स पैद कर लेना भी करता है । मिथुना ! यह भी एक दृष्टि-त्राण है जिससे असीर्य मिथु असीर्य भूमि में स्थित हो 'मैं असीर्य हूँ' ऐसा जानता है ।

मिथुनो ! फिर भी असीर्य मिथु छः इन्द्रियों को जानता है । अज्ञा ज्ञान प्रज्ञा अज्ञा ज्ञान । उसके यह छः इन्द्रियों विस्तृत समीप से दूर-दूर विस्तृत हो जाँगे भीर अन्त छः इन्द्रियों कहीं भी किसी में उत्पन्न नहीं होंगे—इसे जानता है । मिथुना ! यह भी एक दृष्टि-त्राण है जिससे असीर्य मिथु असीर्य-भूमि में स्थित हो 'मैं असीर्य हूँ' ऐसा जानता है ।

### ५ ४ पाद सुप्त ( ४६ ६ ४ )

#### प्रज्ञेन्द्रिय सर्वज्ञेय

मिथुनो ! बीसे कितने जानकर है धर्म के पैर हाजी के पैर में बक आस है । नई होने में हाजी का पैर धर्म में अज्ञ प्रज्ञा अज्ञा है । मिथुनो ! बीसे ही ज्ञान को ज्ञाने-ज्ञाने कितने यह है धर्म में 'प्रज्ञेन्द्रिय पद अज्ञ समझ जाता है ।

मिथुनो ! ज्ञान को ज्ञाने वाले कितने पद है ? मिथुनो ! अज्ञेन्द्रिय पद ज्ञान को ज्ञाने वाला है । प्रज्ञेन्द्रिय पद ज्ञान को ज्ञाने वाला है ।

## § ५ सार सुक्त ( ४६. ६. ५ )

प्रज्ञेन्द्रिय अग्र है

भिक्षुओ ! जैसे, जितने सार-गन्ध है सभी में लाल चन्दन ही अग्र समझा जाता है। भिक्षुओ ! वैसे ही, जितने ज्ञान-पक्ष के धर्म हैं, सभी में ज्ञान लाभ करने के लिये 'प्रज्ञेन्द्रिय' अग्र समझा जाता है।

भिक्षुओ ! ज्ञान-पक्ष के धर्म कौन हैं ? अद्वा-इन्द्रिय ' प्रज्ञा-इन्द्रिय ।

## § ६ पतिद्वित सुक्त ( ४६ ६. ६ )

अप्रमाद

आध्वस्ती ' जेतवन

भिक्षुओ ! एक धर्म में प्रतिष्ठित होने से भिक्षु को पाँच इन्द्रियाँ भावित हो जाते हैं, अच्छी तरह भावित हो जाते हैं।

किस एक धर्म में ?

अप्रमाद में।

भिक्षुओ ! अप्रमाद क्या है ?

भिक्षुओ ! भिक्षु आश्रवणाले धर्मों में अपने चित्त की रक्षा करता है। इस प्रकार, उसके अद्वेन्द्रिय की भावना पूर्ण हो जाती है प्रज्ञेन्द्रिय की भावना पूर्ण हो जाती है।

भिक्षुओ ! इस तरह, एक धर्म में प्रतिष्ठित होने से भिक्षु को पाँच इन्द्रियाँ भावित हो जाते हैं, अच्छी तरह भावित हो जाते हैं।

## § ७. ब्रह्म सुक्त ( ४६ ६. ७ )

इन्द्रिय-भावना से निर्वाण की प्राप्ति

ऐसा मैंने सुना।

एक समय, बुद्धत्व लाभ करने के बाद ही, भगवान् उरुवेला में नेरञ्जरा नदी के किनारे अजपाल निग्रोध के नीचे विहार करते थे।

तब, एकान्त में ध्यान करते समय भगवान् के मन में ऐसा वितर्क उठा—पाँच इन्द्रियों के भावित और अभ्यस्त होने से निर्वाण सिद्ध होता है। किन पाँच के ? अद्वा प्रज्ञा।

तब, ब्रह्मा सहस्रपति... ब्रह्मलोक में अन्तर्धान हो भगवान् के सम्मुख प्रगट हुये।

तब, ब्रह्मा सहस्रपति उपरनी को एक कन्धे पर सँभाल, भगवान् की ओर हाथ जोड़ कर बोले, "भगवान् ! ठीक है, ऐसी ही बात है ॥ इन पाँच इन्द्रियों के भावित और अभ्यस्त होने से निर्वाण सिद्ध होता है।

भन्ते ! बहुत पहले, मैंने अर्हत् सन्धक् सन्बुद्ध भगवान् काश्यप के शासन में ब्रह्मचर्य का पालन किया था। उस समय मुझे लोग 'सहक भिक्षु, सहक भिक्षु' करके जानते थे। भन्ते ! सो मैं इन्हीं पाँच इन्द्रियों के भावित और अभ्यस्त होने से लौकिक कार्यों में विरक्त हो मरने के बाद ब्रह्मलोक में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त हुआ। यहाँ भी मैं 'ब्रह्मा सहस्रपति, ब्रह्मा सहस्रपति' करके जाना जाता हूँ।

भगवान् ! ठीक व वैसी ही बात है ! मैं इसे जानता हूँ मैं इसे देखता हूँ, कि इन पाँच इन्द्रियों के भावित और अभ्यस्त होने से निर्वाण सिद्ध होता है ।

### § ८ सूकरखावा सुत्त ( ४६ ६ ८ )

#### अनुत्तर योग-श्लेष

एसा मैंने सुना ।

एक समय भगवान् राजगृह में सुद्धकुट पक्ष पर सूकरखता में विहार करते थे ।

वहाँ भगवान् ने जामुप्पाम् सारिपुत्र को आमन्त्रित किया "सारिपुत्र ! किस उद्देश्य से झीणा-अव मिद्धु बुद्ध या बुद्ध के सासन पर माथा टंकते है ?"

भन्ते ! अनुत्तर योग-श्लेष के उद्देश्य से झीणाअव मिद्धु बुद्ध वा बुद्ध के शासन पर माथा टंकते है ।

सारिपुत्र ! ठीक है तुमने ठीक ही कहा । अनुत्तर योग-श्लेष के उद्देश्य से ही झीणाअव मिद्धु बुद्ध वा बुद्ध के सासन पर माथा टंकते है ।

सारिपुत्र ! वह अनुत्तर योग-श्लेष क्या है ?

भन्ते ! झीणाअव मिद्धु शान्ति और शाप की ओर के बाधैवाक अवेन्द्रिय की भावना करता है -- मनेन्द्रिय की भावना करता है । भन्ते ! वही अनुत्तर योग-श्लेष है ।

सारिपुत्र ! ठीक कहा है वही अनुत्तर योग-श्लेष है ।

सारिपुत्र ! वह नामा देकना क्या है ?

भन्ते ! झीणाअव मिद्धु बुद्ध के प्रति गौरव और सम्मान रखते विहार करता है । धर्म के प्रति । मंत्र के प्रति । शिक्षा के प्रति । समाधि के प्रति गौरव और सम्मान रखते विहार करता है । भन्ते ! वही माथा का देकना है ।

सारिपुत्र ! ठीक कहा है वही माथा का देकना है ।

### § ९ पठम उप्पाद सुत्त ( ४६ ६ ९ )

#### पाँच इन्द्रियों

आपन्नी जलपन ।

मिद्धुओ ! बिना जईण् सम्पक् सम्भुद्ध भगवान् के प्राणुमोच के न उरपक् हुये भावित और अज्वल पाँच इन्द्रियों नहीं उरपक् होते हैं ।

हीन स पाँच !

अइहा-इन्द्रिय कीर्ण म्युति समापि मइहा-इन्द्रिय ।

मिद्धुओ ! यही न उरपक् हुये भावित और अभ्यस्त पाँच इन्द्रियों बिना जईण् सम्पक्-सम्भुद्ध भगवान् के प्राणुमोच के नहीं उरपक् होते हैं ।

### § १० बुत्तिप उप्पाद सुत्त ( ४६ ६ १० )

#### पाँच इन्द्रियों

आपन्नी जलपन ।

बिना बुद्ध के धिक्क के न उरपक् हुये भावित और अभ्यस्त पाँच इन्द्रियों नहीं उरपक् होते हैं ।

उठाँ माग ममास

## सातवाँ भाग

### बोधि पाक्षिक वर्ग

§ १. संयोजन सुक्त ( ४६. ७. १ )

संयोजन

श्रावस्ती 'जेतवन ।

भिक्षुओ ! यह पाँच भाषित और अभ्यस्त इन्द्रियों संयोजनो (=बन्धन) के प्रहाण के लिये होते हैं ।

§ २ अनुशय सुक्त ( ४६. ७. २ )

अनुशय

अनुशय को निर्मूल करने के लिये होती है ।

§ ३. परिञ्जा सुक्त ( ४६. ७. ३ )

मार्ग

मार्ग (= अज्ञान ) को जानने के लिये ।

§ ४. आश्रवक्षय सुक्त ( ४६. ७. ४ )

आश्रव-क्षय

आश्रवों के क्षय के लिये होते हैं ।

कौन से पाँच ? श्रद्धा-इन्द्रिय • प्रज्ञा-इन्द्रिय ।

§ ५. द्वे फला सुक्त ( ४६. ७. ५ )

दो फल

भिक्षुओ ! इन पाँच इन्द्रियों के भाषित और अभ्यस्त होने से दो में से एक फल अवश्य होता है—अपने देखते ही देखते परम ज्ञान की प्राप्ति, या उपादान के कुछ क्षीय रहने पर अनागामिता ।

§ ६. सत्तानिसंस सुक्त ( ४६. ७. ६ )

सात सुपरिणाम

भिक्षुओ ! इन पाँच इन्द्रियों के भाषित और अभ्यस्त होने से सात अच्छे फल=सुपरिणाम होते हैं ।

कौन से सात ?

अपने देखते ही देखते पैठकर परम ज्ञान को सिद्ध कर जाता है। यदि देखते ही देखते नहीं तो मरने के समय अवश्य परम ज्ञान का काम करता है। यदि वह भी नहीं तो पाँच बीघे के संयोगों के क्षय हो जाने से बीच ही में परिनिर्वाण पाने वाला (अस्मत्कार-परिनिर्वाणी) होता है। उपहास परिनिर्वाणी होता है। असंस्कार-परिनिर्वाणी होता है। संसंस्कार परिनिर्वाणी होता है। उर्ध्व घोट जकनिर्वाणी होता है।

### § ७ पथम रुक्ख सुच ( ४६ ७ ७ )

#### ज्ञान-पाक्षिक धर्म

मिथुनो ! जैसे अम्भुदीप में कितने वृक्ष हैं सभी में अम्भु अग्र समझा जाता है ; मिथुनो ! जैसे ही ज्ञान-पक्ष के कितने धर्म हैं सभी में ज्ञान-साधक के किये प्रबोध्य अग्र समझा जाता है।

मिथुनो ! ज्ञान-पक्ष के धर्म काम हैं ! मिथुनो ! अर्बोन्निय ज्ञान-पक्ष का धर्म है वह ज्ञान का साधक है। शीघ्र । स्फुटि । समधि । प्रज्ञा ।

### § ८ दुतिय रुक्ख सुच ( ४६ ७ ८ )

#### ज्ञान-पाक्षिक धर्म

मिथुनो ! जैसे अयस्त्रिंश देवलोके में कितने वृक्ष हैं सभी में पारिच्छन्नक अग्र समझा जाता है। [ ऊपर जैसा ही ]

### § ९ ततिय रुक्ख सुच ( ४६ ७ ९ )

#### ज्ञान-पाक्षिक धर्म

मिथुनो ! जैसे अमुर-लोके में कितने वृक्ष हैं सभी में सिद्धपाटली अग्र समझा जाता है। "

### § १० चतुरय रुक्ख सुच ( ४६ ७ १० )

#### ज्ञान-पाक्षिक धर्म

मिथुनो ! जैसे सुपर्ण-लोके में कितने वृक्ष हैं सभी में कूटसिम्बलि अग्र समझा जाता है। "

#### बोधि पाक्षिक धर्म समाप्त

## आठवाँ भाग

### गङ्गा पेठ्याल

§ १. पाचीन सुत्त ( ४६ ८ १ )

निर्वाण.की ओर अग्रसर होना

भिक्षुओ ! जैसे, गङ्गा नदी पूरव की ओर उहती है, वैसे ही पाँच इन्द्रियों की भावना और अभ्यास करनेवाला निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ।

कैसे ?

भिक्षुओ ! भिक्षु विवेक, विराग और निरोध की ओर ले जानेवाले श्रद्धेन्द्रिय की भावना करता है, जिमसे मुक्ति सिद्ध होती है । धीर्य । स्मृति । यमाधि । प्रज्ञा ।

§ २-१२. सब्बे सुत्तन्ता ( ४६. ८. २-१२ )

[ मार्ग संयुत्त के ऐसा ही इस 'इन्द्रिय-संयुत्त' में भी ]

## नवाँ भाग

### अप्रमाद वर्ग

§ १-१०. सब्बे सुत्तन्ता ( ४६ ९. १-१० )

[ मार्ग-संयुत्त के ऐसा ही 'इन्द्रिय' लगाकर अप्रमाद वर्ग का विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

[ इसी तरह, शेष विवेक 'और राग' का भी मार्ग संयुत्त के समान ही समझ लेना चाहिये ]

गङ्गा पेठ्याल समाप्त

इन्द्रिय-संयुत्त समाप्त

# पाँचवाँ परिच्छेद

## ४७ सम्यक् प्रधान-सयुक्त

पहला भाग

गङ्गा पेठ्याल

§ १-१२ सम्बन्ध सुत्तन्ता ( ४७ १-१२ )

चार सम्यक् प्रधान

धायस्त्री जेतवन ।

मिथुओ ! सम्यक् प्रधान चार हैं । कीन से चार ?

मिथुओ ! मिथु अनुत्पन्न पापमय अनुभूतत्वों के अनुत्पाद के सिधे हीसका करता है कोषित करता है इत्माह करता है मग जगाता है ।

उत्पन्न पापमय अनुभूतत्वों के प्रधान के सिधे ।

अनुत्पन्न भूतत्वों के उत्पाद के सिधे ।

उत्पन्न भूतत्वों की स्थिति बुद्धि, विपुलता भावना और धर्मता के सिधे ।

मिथुओ ! वही चार सम्यक् प्रधान हैं ।

मिथुओ ! जैसे गङ्गा नदी पूरव की ओर बहती है वैसे ही इन चार सम्यक् प्रधानों की भावना और जगत्वा करने में मिथु निर्वाण की ओर जगत्वा होता है ।

--कैसे ?

मिथुओ ! मिथु अनुत्पन्न पापमय अनुभूतत्वों के अनुत्पाद के सिधे हीसका करता है कोषित करता है इत्माह करता है मग जगाता है ।

मिथुओ ! इस तरह वैसे गंगा नदी ।

[ इसी तरह वैसे वगैरे का भी मार्ग-अनुत्पन्न के समान ही समझ देना चाहिये ]

सम्यक् प्रधान-सयुक्त समाप्त



# छठाँ परिच्छेद

## ४८. बल-संयुक्त

पहला भाग

गङ्गा पेय्याल

§ १-१२. सञ्चे सुत्तन्ता ( ४८. १-१२ )

पाँच बल

भिक्षुओ ! बल पाँच है ? फोन मे पाँच ? श्रद्धा बल, चीर्य-बल स्मृति बल, समाधि-बल, प्रज्ञा-बल भिक्षुओ ! यही पाँच बल है ।

भिक्षुओ ! जैसे, गङ्गा नदी पूर्य की ओर बहती है वमे ही इन पाँच बलों की भावना और अभ्यास करने वाला निर्वाण की ओर अग्रसर होता है ।

कैसे ?

भिक्षुओ ! भिक्षु विवेक, विरता और निरोध की ओर ले जाने वाले श्रद्धा-बल की भावना करता है, निम्नसे मुक्ति सिद्ध होती है ।

भिक्षुओ ! इस प्रकार, जैसे गंगा नदी ।

[ इस तरह, श्लेष धर्मों में भी विवेक , राग' का मार्ग-संयुक्त के समान ही समझ लेना चाहिये ] ।

बल-संयुक्त समाप्त

# सातवाँ परिच्छेद

## ४९ ऋद्धिपाद-सयुक्त

पहला भाग

चापाल वर्ग

§ १ अपरा सुप्त ( ४९ १ १ )

चार ऋद्धिपाद

मिथुनी ! चार ऋद्धि-पाद भावित और अश्वस्त होने से भागे की और अभिक्रमिक करने के किये होते हैं ।

कीम से चार ?

मिथुनी ! मिथु छन्द-समाधि प्रथम-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है । शीर्ष-समाधि प्रथम-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है । चित्त-समाधि प्रथम-संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है । मीमांसा-समाधि-प्रथम-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है ।

मिथुनी ! यह चार ऋद्धिपाद भावित और अश्वस्त होने से भागे की और अभिक्रमिक करने के किये होते हैं ।

§ २ विरद्ध सुप्त ( ४९ १ २ )

चार ऋद्धिपाद

मिथुनी ! त्रिभुज के चार ऋद्धि-पाद के उक्त सम्बन्ध-सुप्त-अप-गामी कार्य मार्ग रखा ।

मिथुनी ! त्रिभुज के चार ऋद्धि-पाद सुक्त होने उक्त सम्बन्ध-सुप्त-अप-गामी कार्य मार्ग सुक्त हुआ ।

कीम से चार ?

मिथुनी ! मिथु छन्द-समाधि-प्रथम-संस्कार से युक्त । शीर्ष । चित्त । मीमांसा ।

§ २ अरिय सुप्त ( ४९ १ ३ )

ऋद्धिपाद मुक्तिप्रद हैं

मिथुनी ! चार कार्य मुक्तिप्रद ऋद्धि-पाद भावित और अश्वस्त होने से सुप्त का विरद्ध सुप्त बन जाता है ।

कीम से चार ?

सुप्त । शीर्ष । चित्त । मीमांसा ...।

## § ४. निर्विदा सुत्त ( ४९. १. ४ )

## निर्वाण दायक

भिक्षुओ ! चार ऋद्धि-पाद भावित और अभ्यस्त होने से थिरकुल निर्वाद, विराम, निरोध, प्रान्ति, ज्ञान और निर्वाण के लिये होते हैं ।

काम से चार ?

छन्द । वीर्य । चित्त । मीमासा ।

## § ५. पट्टस सुत्त ( ४९ १ ५ )

## ऋद्धि की साधना

भिक्षुओ ! जिन श्रमण या ब्राह्मणों ने अतीत काल में ऋद्धि का कुछ भी साधन किया है, सभी चार ऋद्धि-पादों के भावित और अभ्यस्त होने से ही । भिक्षुओ ! जो श्रमण या ब्राह्मण भविष्य में ऋद्धि का कुछ भी साधन करेंगे, सभी चार ऋद्धि-पादों के भावित और अभ्यस्त होने से ही । भिक्षुओ ! जो श्रमण या ब्राह्मण वर्तमान में ऋद्धि का कुछ भी साधन करते हैं, सभी चार ऋद्धि-पादों के भावित और अभ्यस्त होने से ही ।

किन चार के ?

छन्द । वीर्य । चित्त । मीमासा ।

## § ६ समत्त सुत्त ( ४९ १. ६ )

## ऋद्धि की पूर्ण साधना

भिक्षुओ ! जिन श्रमण या ब्राह्मणों ने अतीत काल में ऋद्धि का पूरा-पूरा साधन किया है, सभी चार ऋद्धि-पादों के भावित और अभ्यस्त होने से ही । भविष्य में । वर्तमान में ।

किन चार के ?

छन्द । वीर्य । चित्त । मीमासा ।

## § ७ भिक्खु सुत्त ( ४९. १ ७ )

## ऋद्धिपादों की भावना से अर्हत्व

भिक्षुओ ! जिन भिक्खुओं ने अतीत कालमें जाश्रवोंके क्षय होनेसे अनाश्रव चित्त और प्रज्ञाकी विमुक्ति को देखते ही देखते स्वयं जान, चेत और प्राप्त कर विहार किया है, सभी चार ऋद्धि-पादों के भावित और अभ्यस्त होनेसे ही । भविष्य में । वर्तमान में ।

किन चार के ?

छन्द । वीर्य । चित्त । मीमासा ।

## § ८. अरहा सुत्त ( ४९. १. ८ )

## चार ऋद्धिपाद

भिक्षुओ ! ऋद्धि-पाद चार हैं । कौन से चार ? छन्द , वीर्य , चित्त , मीमासा ।

भिक्षुओ ! इन चार ऋद्धि-पादों के भावित और अभ्यस्त होने से भगवान् अर्हत् सम्पन्न-सम्बुद्ध होते हैं ।

# सातवाँ परिच्छेद

## ४९ ऋद्धिपाद-सयुक्त

### पहला भाग

#### षापाल वर्ग

#### ३ १ अपरा सुप्त ( ४९ १ १ )

##### चार ऋद्धिपाद

मिश्रभो ! चार ऋद्धि-पाद भावित और अम्बरत होने से अने की और अधिकाधिक बढ़ने के किये होते हैं ।

बीज से चार ?

मिश्रभो ! मिश्र छन्द-समाधि प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है । बीर्य समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है । चित्त-समाधि प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है । मीमांसा-समाधि प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है ।

मिश्रभो ! यह चार ऋद्धिपाद भावित और अम्बरत होन स भागो की और अधिकाधिक बढ़ने के किये होते हैं ।

#### ३ २ विरद सुप्त ( ४९ १ २ )

##### चार ऋद्धिपाद

मिश्रभो ! त्रिन किन्हीं के चार ऋद्धि-पाद दूके उबका सम्पन्न-दुःख-हास-गामी आर्य मार्गें दृश्य ।

मिश्रभो ! त्रिन किन्हीं के चार ऋद्धि-पाद शुरू दूके उबका सम्पन्न-दुःख-हास-गामी आर्य मार्गें शुरू हुआ ।

बीज से चार ?

मिश्रभो ! मिश्र छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त । बीर्य । चित्त । मीमांसा ।

#### ३ ३ अरिय सुप्त ( ४९ १ ३ )

##### ऋद्धिपाद मुक्तिप्रद है

मिश्रभो ! चार आर्ये मुक्तिप्रद ऋद्धि-पाद भावित और अम्बरत होने से दुःख का निवृत्त क्षय होता है ।

बीज से चार ?

छन्द । बीर्य । चित्त । मीमांसा ।

तब, भगवान् ने आयुमान् आनन्द को अगन्धित किया, "आनन्द ! जाओ, जहाँ तुम्हारी इच्छा हो ।"

"भन्ते ! वृत्त अच्छा" का, आयुमान् आनन्द भगवान् को उत्तर दे, धामन ने उठ, भगवान् को प्रणाम् और प्रदक्षिणा कर पास ही में किसी वृत्त के नीचे जाकर बैठ गये ।

तब, आयुमान् आनन्द के जाने के तब ही, पापी मार जायें भगवान् ने यहाँ आया, और बोला, "भन्ते ! भगवान् परिनिर्वाण पायें । सुगत ! परिनिर्वाण पायें । भन्ते ! भगवान् के परिनिर्वाण पाने का समय आ गया । भन्ते ! भगवान् ने ही यह बात कही थी, "३ पापी ! तब तक मैं परिनिर्वाण नहीं पाऊँगा जब तक मैंने भिक्षु ध्रावक चक्र, विनीत, विजारट, प्राप्त-योगक्षेम, वदुधुत, वर्मधर, धर्मानुधर्म-प्रतिपन्न, अच्छे मार्ग पर आरुढ़, वर्मानुवृत्त आचरण करनेवाले, आचार्य से सीखकर धर्म उपदेश करनेवाले, बतानेवाले, निन्द करनेवाले, खोल देनेवाले, विच्छेपण करनेवाले, साफ कर देनेवाले न हो लें ।" भन्ते ! भगवान् के ध्रावक भिक्षु अत्र चैमे हो गये ३ । भन्ते ! भगवान् परिनिर्वाण पायें । सुगत ! परिनिर्वाण पायें । भन्ते ! भगवान् के परिनिर्वाण पाने का समय आ गया है ।

भन्ते ! भगवान् ने ही यह बात कही थी—<sup>१३</sup> "३ पापी ! तब तक मैं परिनिर्वाण नहीं पाऊँगा जब तक मैंने भिक्षुणियाँ मैंने उपासक मेरी उपासिकायें ।"

भन्ते ! भगवान् की भिक्षुणियाँ उपासक उपासिकायें चैमी हो गई हैं । भन्ते ! भगवान् परिनिर्वाण पायें । सुगत ! परिनिर्वाण पायें । भन्ते ! भगवान् के परिनिर्वाण पानेका समय आ गया है ।"

ऐसा कहने पर, भगवान् पापी मार से बोले, "मार ! घबरा मत, बुद्ध शीघ्र ही परिनिर्वाण पायेंगे । आज से तीन मास के बाद बुद्ध का परिनिर्वाण होगा ।

तब, भगवान् ने चापाल चैत्य में स्मृतिमान् और सप्रज हो आयु-संस्कार (=जीवन-शक्ति) को छोड़ दिया । भगवान् के आयु-संस्कार को छोड़ते ही बड़ा डरावना रोमाञ्चित कर देनेवाला भ-चाल हो उठा । देवताओं ने दुन्दुभी बजायी ।

तब, इस बात को जान, भगवान् ने उस समय यह उद्दान कहा —

निर्वाण (=अतुल) और भव को तीलते हुये,  
 कपि ने भव-संस्कार को छोड़ दिया,  
 आप्यात्म-रत और समाहित हो,  
 आत्म-सम्भव को कवच के ऐसा काट डाला ॥

चापाल वर्ग समाप्त

## § ९ आप्त सुच ( ४९ १ ९ )

धान

मिथुनो ! यह 'छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार' से युक्त ऋद्धि-पाद पृथा सुभे पदक कमी नहीं सुभे गये धर्मों में बन्धु उत्पन्न हुआ ज्ञान उत्पन्न हुआ प्रज्ञा उत्पन्न हुई विद्या उत्पन्न हुई आलोक उत्पन्न हुआ । मिथुनो ! इस छन्द ऋद्धि-पाद की भावना करनी चाहिए । मिथुनो ! यह छन्द ऋद्धि-पाद भावित हो गया पृथा सुभे पदके कमी नहीं सुभे गये धर्मों में बन्धु उत्पन्न हुआ ज्ञान उत्पन्न हुआ प्रज्ञा उत्पन्न हुई विद्या उत्पन्न हुई आलोक उत्पन्न हुआ ।

वीर्य-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद ।

शिव-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद ।

मीमांसा-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद ।

## § १० चेतिय सुच ( ४९ १ १० )

सुख द्वारा जीवन-दाप्ति का त्याग

पृथा मीमे सुना ।

एक समय भगवान् वीशाही न महापुत्र की कृतांगारशाला न बिहार करते थे ।

तब भगवान् पूजाके समय पढ़ने नीर पात्र-धीवर के बीशाही में मिश्रादन के लिए बैठे । मिश्रादन से काठ भोजन कर खेत के बाद भगवान् ने आनुष्मात् आनन्द की आमन्त्रित किया "आनन्द ! स्वप्न से बचो वहाँ आपाठ वीर्य है वहाँ दिन के बिहार के लिए पास ।

'अनन्द ! बहुत अच्छा कह आनुष्मात् आनन्द भगवान् को उत्तर दे आसन उठा भगवान् के पीछे-पीछे हो लिए ।

तब भगवान् वहाँ आपाठ देव या वहाँ गये और बिछे आसन पर बैठ गये । आनुष्मात् आनन्द भी भगवान् को प्रणाम कर पृष्ठ ओर बैठ गये ।

एक जोर बैठे आनुष्मात् आनन्द से भगवान् बोले 'आनन्द ! वीशाही रमणीय है उद्यम-वीर्य रमणीय है शीतमक वीर्य रमणीय है वसन्त-वीर्य रमणीय है यज्ञपुत्रक-वीर्य रमणीय है स्तारद-वीर्य रमणीय है व्यापाठ-वीर्य रमणीय है ।

आनन्द ! तिम किसी के बार ऋद्धि-पाद भावित जन्मस्त अपना लिये गये सिद्ध कर लिये गये अनुष्ठित परिश्रित अच्छी तरह आरम्भ तिम है यदि वह चाहे तो कल्प भर रह या कल्प कल्प तक ।

आनन्द ! सुख के बार ऋद्धि-पाद भावित जन्मस्त अपना लिये गये सिद्ध कर लिये गये अनुष्ठित परिश्रित अच्छी तरह आरम्भ तिम है यदि सुख चाहे तो कल्प भर रहें या कल्प कल्प तक ।

भगवान् कह इतना रहने और महत्त्व-पूर्ण संश्लेष लिये जाते पर भी आनुष्मात् आनन्द समझ नहीं सके, भगवान् से पृथी पाचना नहीं की कि 'योगों के हित के लिये सुख के लिये कंक पर अनुष्मात् नर के देवता और मनुष्यों के धर्म हित और सुख के लिये भगवान् कल्प भर रहें ।" माथी उनके चित्त में मार बैठ गया है ।

बृहती बार भी ।

तीसरी बार भी भगवान् न आनुष्मात् आनन्द को आमन्त्रित किया "आनन्द ! तिमने पाद ऋद्धि-पाद ।" माता उभर पित्त से मार बैठ गया हो ।

का था, इस गाँव का, इस शकल का, इस आहार का, इस प्रकार के सुख-दुःख का अनुभव करनेवाला, इस आयु तक जीनेवाला । सो, यहाँ से मरकर जहाँ उलपन्न हुआ । उहाँ भी इस नाम का था इस आयु तक जीनेवाला । सो, यहाँ से मरकर जहाँ उलपन्न हुआ हूँ । इस प्रकार धाकार-प्रकार से अनेक पूर्व-जन्मों की प्रतीति याद करता है ।

“ दिव्य, विमुक्त, ओर अलौकिक चक्षु से जीवों को देखता है । मरते-जाते, जिन-प्रणीत, सुन्दर, कुलप, सुगति को प्राप्त, दुर्गति को प्राप्त, तथा अपने बर्ष के अनुसार अवस्था को प्राप्त जीवों को देखता है । यह जीव शरीर, वचन और मन से दुराचार करते हुए, मरपुरणों की निन्दा करनेवाले, मिथ्या-दृष्टि वाले, अपनी मिथ्या-दृष्टि के कारण मरने के बाद नरक में उलपन्न हो दुर्गति को प्राप्त होंगे । यह जीव शरीर, वचन और मन से सदाचार करते हुए, मरपुरणों की निन्दा न करनेवाले, सम्यक्-दृष्टि वाले, अपनी सम्यक्-दृष्टि के कारण मरने के बाद स्वर्ग में उलपन्न हो सुगति को प्राप्त होंगे है । इस प्रकार, दिव्य, विमुक्त और अलौकिक चक्षु से जीवों को देखता है ।

भिक्षुओ ! इस प्रकार, चार ऋद्धि-पादों के भावित और अभ्यस्त हो जाने पर आश्रवों के क्षय हो जाने से अनाश्रव चित्त और प्रज्ञा की विमुक्ति को अपने देखते ही देखते न्यय जान, देख और प्राप्त कर विहार करता है ।

### § २ महफल सुक्त ( ४९. २ २ )

#### ऋद्धिपाद-भावना के महाफल

भिक्षुओ ! चार ऋद्धिपाद भावित ओर अभ्यस्त होने से बड़े अच्छे फल=परिणाम वाले होते हैं ।

भिक्षुओ ! यह चार ऋद्धि-पाद कैसे भावित और अभ्यस्त हो बड़े अच्छे फल=परिणाम वाले होते हैं ?

भिक्षुओ ! भिक्षु छन्द-समाधि-प्रधान सत्कार से शुक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है—इस तरह मेरा छन्द न तो बहुत कमजोर हो जायगा और न बहुत तेज, न तो अपने भीतर ही भीतर दवा रहेगा और न बाहर इधर-उधर बिरल जायगा । पहले और पीछे का ग्याल रखते हुये विहार करता है । जैसा पहले वैसा पीछे और जैसा पीछे वैसा पहले । जैसा नीचे वैसा ऊपर और जैसा ऊपर वैसा नीचे । जैसा दिन वैसा रात, और जैसा रात वैसा दिन । इस प्रकार खुले चित्त सं प्रभा के ग्याथ चित्त की भावना करता है ।

वीर्य । चित्त । सीमासा ॥

भिक्षुओ ! इस प्रकार, यह चार ऋद्धि-पाद भावित और अभ्यस्त होने से भिक्षु अनेक प्रकार की ऋद्धियों का साधन करता है । एक होकर बहुत हो जाता है ।

भिक्षुओ ! चित्त और प्रज्ञा की विमुक्ति को अपने देखते ही देखते स्वयं जान, देख और प्राप्त कर विहार करता है ।

### § ३ छन्द सुक्त ( ४९ २ ३ )

#### चार ऋद्धिपादों की भावना

भिक्षुओ ! भिक्षु छन्द ( =उच्छा=हौसला ) के आधार पर समाधि, चित्त की एकाग्रता पाता है । यह “छन्द-समाधि” कही जाती है ।

यह अनुत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों के अनुत्पाद के लिये हौसला ( =छन्द ) करता है, कोशिश करता है, उस्साह करता है, मन लगाता है ।

## दूसरा भाग

### प्रासाद कम्पन वर्ग

§ १ हेतु सूच ( ४९ २ १ )

#### ऋद्धिपाद् की भावना

प्रापस्ती ।

मिथुनी ! तुम्हें धाम करने के पहले मेरे बोधि-सत्व रहते ही मेरे मन में यह हुआ । "ऋद्धि-पादकी भावना का हेतु-अव्यय क्या है ?" मिथुनी ! तब, मेरे मन में यह हुआ :—

मिथुनी ! छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार से पुत्र ऋद्धि-पादकी भावना करता है । इस तरह मेरा छन्द न तो बहुत कमजोर और न बहुत तेज होगा, न अपने भीतर ही भीतर छन्द रहेगा और न बाहर इधर-उधर बहुत फैल जायगा । पीछे और आगे संज्ञा न प्राय विहार करता है— जैसे पीछे जैसे आगे जैसे आगे जैसे पीछे जैसे ऊपर जैसे नीचे जैसे नीचे जैसे आगे जैसे दिग् जैसे रात जैसे रात जैसे दिन । इस तरह लुके बिन्दु से प्रया के प्राय बिन्दु की भावना करता है ।

धीर-समाधि-प्रधान-संस्कार से पुत्र ।

चित्त-समाधि-प्रधान-संस्कार से पुत्र ।

मीमांसा-समाधि-प्रधान-संस्कार से पुत्र ।

इस प्रकार चार ऋद्धि-पाद के भावित और अव्यस्त हो जाने पर अनेक प्रकार की ऋद्धिों का काम करता है । एक हीकर बहुत ही जाता है, बहुत हीतर पूत्र हो जाता है । प्रसन्न हो जाता है, अन्तर्गत हो जाता है, दीवार के बीच से भी निकल जाता है, प्राकार के बीच से भी निकल जाता है । पर्वत के बीच से भी निकल जाता है—बिना कहे हुये जाता है जैसे आकाश में । पूरणी में गोठे बनाता है—जैसे बर में । जल पर बिना जैसे जाता है—जैसे पूरणी पर । आकाश में भी पाकमी नारे पूरता है—जैसे कोई पक्षी । ऐसे बने तेजवाने सुरत और चोत्र को भी हाथ से स्वर्ण करता है । प्रहलीक तर को अपने स्तरी से बस में के जाता है ।

इस प्रकार, चार ऋद्धि-पादों के भावित और अव्यस्त हो जाने पर दिग्मिथुनी और अर्द्धिक्रम प्रोत्र प्राय से दोनों चन्द्रों को चुकता है—देवताओं के भी और मनुष्यों के भी को दूर से जन्में भी और भी बजरीक है जन्में भी ।

सुरे कोरी के चित्त को अपने चित्त से जान देता है—सुराग चित्त को सुराग चित्त के देसा जान देता है, बौदराग चित्तको बौदराग चित्त के देसा जान देता है, हेप-मुक्त चित्त को, हेच-रहित चित्त को, मोह-मुक्त चित्त को, मोह-रहित चित्त को, बने हुये चित्त को, बिठरे हुये चित्त को, महद्वारा ( = कोनोत्तर ) चित्त को, अमहद्वारा ( = कोनिक ) चित्त को, साधारण ( = मोचर ) चित्त को, असाधारण ( = अनुत्तर ) चित्त को, अतमाहित चित्त का, समाहित चित्त का, अविमुक्त चित्त को, विमुक्त चित्त को ।

अनेक प्रकार से पूर्व जन्मों की बातें याद करता है । जैसे एक जन्म में दो जन्म में पाँच जन्म में दस जन्म में बीस जन्म में बत्तार जन्म में सौ जन्म में हजार जन्म में लाख जन्म में अनेक संवत्तरण भी अनेक विपत्तें बचन भी अनेक संवत्तर-विपत्तें बचन भी—वहाँ हम नाम



भिक्षुओ ! तो सुनो । भिक्षुओ ! चार ऋद्धिपादों को भावित और अभ्यस्त कर मोग्गलान भिक्षु  
इतना बड़ा ऋद्धिशाली और महानुभाय हुआ है ।

किन चार को ?

भिक्षुओ ! मोग्गलान भिक्षु छन्द-समाधि-प्रधान-सस्कार से युक्त ऋद्धि-पादकी भावना करता  
है । वीर्य । चित्त । मीमासा ।

भिक्षुओ ! इन चार ऋद्धि-पादों को भावित और अभ्यस्त कर मोग्गलान भिक्षु अनेक प्रकार की  
ऋद्धियों का साधन करता है...। ब्रह्मलोक तक को अपने शरीर से वश में किये रहता है ।

भिक्षुओ ! 'मोग्गलान भिक्षु' चित्त और प्रजा की विमुक्ति को अपने देखते ही देखते स्वयं  
जान, देख और प्राप्त कर विहार करता है ।

इसे जान, तुम्हें इसी तरह विहार करना चाहिये ।

### § ५. ब्राह्मण सुक्त ( ४९ २ ५ )

#### छन्द-प्रहाण का मार्ग

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय, आयुष्मान् आनन्द कौशास्वी में घोपिताराम में विहार करते थे ।

तब, उष्णाम ब्राह्मण जहाँ आयुष्मान् आनन्द थे वहाँ आया, और कुशल क्षेम पूछ कर एक ओर  
बैठ गया ।

एक ओर बैठ, उष्णाम ब्राह्मण आयुष्मान् आनन्द से बोला, "हे आनन्द ! किस उद्देश्य से  
श्रमण गौतम के शासन में ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता है ?"

ब्राह्मण ! इच्छा ( = छन्द ) का प्रहाण करने के लिये भगवान् के शासन में ब्रह्मचर्य का पालन  
किया जाता है ।

आनन्द ! क्या छन्द के प्रहाण करने का मार्ग है ?

हाँ ब्राह्मण ! छन्द के प्रहाण करने का मार्ग है ।

आनन्द ! छन्द के प्रहाण करने का कौनसा मार्ग है ?

ब्राह्मण ! भिक्षु छन्द-समाधि-प्रधान-सस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है । वीर्य ।  
चित्त । मीमासा । ब्राह्मण ! छन्द के प्रहाण करने का वही मार्ग है ।

आनन्द ! ऐसा होने से तो वह और नजदीक होगा, दूर नहीं । ऐसा तो सम्भव नहीं है कि छन्द  
से छन्द हराया जा सके ।

ब्राह्मण ! तो, मैं तुम्हीं से पूछता हूँ, जैसा समझो उत्तर दो ।

ब्राह्मण ! तुम्हें पहले ऐसा छन्द हुआ कि 'आराम चल्दँगा' ? सो, तुम्हारा वह छन्द यहाँ आकर  
शान्त हो गया ?

हाँ ।

ब्राह्मण ! तुम्हें पहले ऐसा वीर्य हुआ कि 'आराम चल्दँगा' । सो, तुम्हारा वह वीर्य यहाँ आ कर  
शान्त हो गया ।

हाँ ।

ब्राह्मण ! तुम्हें पहले ऐसा चित्त हुआ कि 'आराम चल्दँगा' सो तुम्हारा वह चित्त यहाँ आकर  
शान्त हो गया ?

हाँ ।

इसके पासमय भूगणक धर्मों के प्रहारे के लिए ।

भयानक कुशल धर्मों के उन्नाद के लिए ।

इसके पुनः धर्मों का विधिति पृथि भावना और पूर्णता के लिए ।

इन्हें प्रभाव-संस्कार करते हैं ।

इस प्रकार यह उन्नाद हुआ यह उन्नाद-समाधि हुई और यह प्रभाव-संस्कार हुए ।

मिथुभा ! इसको कहते हैं "उन्नाद-समाधि प्रभाव-संस्कार म युक्त कृत्रि-गार ।

मिथुभा ! मिथु धर्मों के अन्त पर समाधि कितनी पराजया पाता है । यह "धर्म समाधि" कही जाती है ।

{ उन्नाद के समान ही }

मिथुभा ! इसको कहते हैं धर्म-समाधि प्रभाव-संस्कार म युक्त कृत्रि-गार ।

मिथुभा ! कितने अन्त पर समाधि कितनी पराजया पाता है । यह कितन-समाधि कही जाती है ।

मिथुभा ! इसी का कहते हैं कितन-समाधि प्रभाव-संस्कार म युक्त कृत्रि-गार ।

मिथुभा ! सीमाया पर अन्त पर समाधि कितनी पराजया पाता है । यह "सीमाया समाधि" कही जाती है ।

मिथुभा ! इसी का कहते हैं सीमाया समाधि-प्रभाव-संस्कार म युक्त कृत्रि-गार ।

### ६४ योगलान युक्त ( ४९ ० ५ )

#### मायालान की कृत्रि

येका मंत्र युक्त ।

एक समय महाबाहू भायस्त्री में युगात्माता के प्रासाद पृथ्वीराम में विहार करने में ।

उस समय युगात्माता के प्रासाद के नीचे उन्नत नीच चरम चलनके अन्तर्गत बाह्यबाह्य गुरु स्थिति बाह्य अन्तर्गत अन्तर्गत प्रसन्न कितनासे और अन्तर्गत कुछ मिथु विहार करने में ।

तब महाबाहू ने आनुष्मात् महामायालान का आत्मिक्रिया 'योगलान ! युगात्माता के प्रासाद के नीचे यह तुम्हारे पुनः मिथु उन्नत ही विहार करते हैं । जाओ उन्हें कुछ संविन्न कर दो ।

'अन्त ! बहुत अन्त' कह आनुष्मात् महा-सीमाकाल में हीनी कृत्रि लगाई कि अपने पर के अन्त से सारे युगात्माता के प्रासाद को कौपा दिया दिया बोला दिया ।

तब ये मिथु संविन्न और सीमाकाल ही एक ओर लगे ही गये । आश्चर्य है रे, भयानक है रे ! युगात्माता का वह प्रासाद इतना गम्भीर एव और पुष्ट है सो भी कौपा रहा है दिख रहा है डोक रहा है !!

तब महाबाहू जहाँ से मिथु से बहाँ गये और उतस बोले "मिथुभा ! तुम ऐसे संविन्न और सीमाकाल ही एक ओर क्यों पड़े हो ?

मन्ते ! आश्चर्य है अन्तुत है !! युगात्माता का वह प्रासाद इतना गम्भीर एव और पुष्ट है सो भी कौपा रहा है दिख रहा है डोक रहा है !'

मिथुभा ! तुम्हें ही संविन्न करने के लिये योगलान मिथु ने अपने पर के अन्त से सारे युगात्माता के प्रासाद को कौपा दिया है दिया दिया है उन्नाद दिया है । मिथुभा ! क्या समझते हो कि धर्मों को अन्त और अन्त कर सीमाकाल मिथु इतना बड़ा अन्तर्गत और महाबाहूबाहू हुआ है !

मन्ते ! धर्मों के एक महाबाहू ही ।

भिक्षुओ ! तो सुनो । भिक्षुओ ! चार ऋद्धिपादों को भावित और अभ्यस्त कर मोग्गलान भिक्षु इतना बड़ा ऋद्धिशाली और महानुभाव हुआ है ।

किन चार को ?

भिक्षुओ ! मोग्गलान भिक्षु छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पादकी भावना करता है । वीर्य । चित्त । मीमासा ।

भिक्षुओ ! इन चार ऋद्धि-पादों को भावित और अभ्यस्त कर मोग्गलान भिक्षु अनेक प्रकार की ऋद्धियों का साधन करता है\*\*\*। ब्रह्मलोक तक को अपने शरीर से बश में किये रहता है ।

भिक्षुओ ! मोग्गलान भिक्षु चित्त और प्रज्ञा की विमुक्ति को अपने देखते ही देखते स्वयं जान, देख और प्राप्त कर विहार करता है ।

इन्ने जान, तुम्हें इन्ही तरह विहार करना चाहिये ।

### § ५. ब्राह्मण सुक्त ( ४९ २ ५ )

#### छन्द-प्रहाण का मार्ग

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय, आयुष्मान् आनन्द कौशाभ्यी में घोषिताराम में विहार करते थे ।

तब, उषणाम ब्राह्मण जहाँ आयुष्मान् आनन्द थे वहाँ आया, और कुशल क्षेम पूछ कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, उषणाम ब्राह्मण आयुष्मान् आनन्द से बोला, "हे आनन्द ! किस उद्देश्य से ध्रमण गोतम के शासन में ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता है ?"

ब्राह्मण ! इच्छा ( छन्द ) का प्रहाण करने के लिये भगवान् के शासन में ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता है ।

आनन्द ! क्या छन्द के प्रहाण करने का मार्ग है ?

हाँ ब्राह्मण ! छन्द के प्रहाण करने का मार्ग है ।

आनन्द ! छन्द के प्रहाण करने का कौनसा मार्ग है ?

ब्राह्मण ! भिक्षु छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है । वीर्य । चित्त । मीमासा । ब्राह्मण ! छन्द के प्रहाण करने का वही मार्ग है ।

आनन्द ! ऐसा होने से तो यह और नजदीक होगी, दूर नहीं । ऐसा तो सम्भव नहीं है कि छन्द से छन्द हराया जा सके ।

ब्राह्मण ! तो, मैं तुम्हीं से पूछता हूँ, जैसा समझो उत्तर दो ।

ब्राह्मण ! तुम्हें पहले ऐसा छन्द हुआ कि 'आराम चलूँगा' ? तो, तुम्हारा वह छन्द यहाँ आकर शान्त हो गया ?

हाँ ।

ब्राह्मण ! तुम्हें पहले ऐसा वीर्य हुआ कि 'आराम चलूँगा' । तो, तुम्हारा वह वीर्य यहाँ आ कर शान्त हो गया ।

हाँ ।

ब्राह्मण ! तुम्हें पहले ऐसा चित्त हुआ कि 'आराम चलूँगा' तो तुम्हारा वह चित्त यहाँ आकर शान्त हो गया ?

हाँ ।

माझण ! तुम्हें पढ़कर पत्नी मीमांसा हुई कि भाराम चर्खा' मो तुम्हारी वह मीमांसा पढ़ो  
आकर कर शास्त्र हो गई ?

हाँ ।

माझण ! बस ही जा मिश्र महर्षि शंकाधर है उम्मा जा पढ़स महर्षि-पद पावे वा उम्मा वा  
वह महर्षि-पद पा छेने पर शास्त्र हो जाता है । वीर्य । वित्त । मीमांसा ।

माझण ! तो क्या समझते हो ऐसा जाने पर लजरीक होता है या गूर ?

जाम्बव ? मुझे उपानक रीति करे ।

### § ६ पठम मणम्राक्षण सुच ( ४९ ० ६ )

#### वार ऋद्धिपाद

मिश्रभा ! अतीतकाल में जितन भ्रमण वा माझण बड़ी ऋद्धिपाद महापुत्राव हा गये हैं सभी  
इन वार ऋद्धि-पादों के माहित होने से ही । मन्विष्य में । वर्तमान काल में ।

किन वार के ?

उम्मा ।

### § ७ द्वितीय मणम्राक्षण सुच ( ४९ ० ७ )

#### वार ऋद्धिपादों की भाषणा

मिश्रभा ! जिन भ्रमण वा माझणों ने अतीतकाल में भ्रमण प्रकार की ऋद्धिपादों का साधन  
किया है—जैसे एक होकर अनेक हो जाना —सभी इन वार ऋद्धि-पादों को माहित वार  
अन्वस्त करके ही ।

मन्विष्य । वर्तमान काल में ।

### § ८ त्रिकस्तु सुच ( ४९ ० ८ )

#### वार ऋद्धिपाद

मिश्रभा ! मिश्र वार ऋद्धि-पादों के माहित और अन्वस्त होव से आसनों के छाप होने से  
जवाभन वित्त वीर प्रजा की विसुक्ति को कहते ही वैदमे आन देख, और प्राप्त कर विहार करता है ।

किन वार के ?

### § ९ देसना सुच ( ४९ २ ९ )

#### ऋद्धि वीर ऋद्धिपाद

मिश्रभा ! ऋद्धि, ऋद्धि-पाद ऋद्धि-पाद-भाषणा वीर ऋद्धि-पाद-भाषणा-भाषणी मार्ग का उपदेश  
करेगा । इसे सुनो ।

मिश्रभा ! ऋद्धि क्या है ?

मिश्रभा ! मिश्र अनेक प्रकार की ऋद्धिपादों का साधन करता है । जैसे एक होकर बहुत हो  
जाता है । मिश्रभा ! इसे कहते हैं 'ऋद्धि' ।

मिश्रभा ! ऋद्धिपाद क्या है ? मिश्रभा ! ऋद्धिपादों मिश्र करने का भी मार्ग है इसे ऋद्धि-पाद  
कहते हैं ।

मिथुओ ! ऋद्धि-पाद-भावना क्या है ? मिथुओ ! मिथु छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त...'

...मिथुओ ! इसे कहते हैं 'ऋद्धि-पाद-भावना' ।

मिथुओ ! ऋद्धि-पाद-भावना-नामी मार्ग क्या है ? गद्दी भायं अष्टांगिक मार्ग । जो, सम्यक्-दृष्टि...सम्यक्-समाधि । मिथुओ ! इसे कहते हैं 'ऋद्धि-पाद-भावना-नामी मार्ग' ।

## § १०. विभङ्ग मुक्त ( ४९ २. १० )

### चार ऋद्धिपादों की भावना

#### ( क )

मिथुओ ! चार ऋद्धि पादों के भावित और अन्यस्त होने से क्या अच्छा फल=परिणाम होता है ? मिथुओ ! चार ऋद्धि-पादों के योगे भावित और अन्यस्त होने से क्या अच्छा फल=परिणाम होता है ?

मिथुओ ! मिथु छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है—न तो मेरा छन्द बहुत कमजोर होगा और न बहुत तेज [ देखो पृष्ठ ७४० ]

#### ( ख )

मिथुओ ! बहुत कमजोर ( =अति लीन ) छन्द क्या है ? मिथुओ ! जो कुम्भीद-भाव ( =चित्त का हलकापन ) से युक्त छन्द । मिथुओ ! इसे कहते हैं 'बहुत कमजोर छन्द' ।

मिथुओ ! बहुत तेज ( =अतिप्रगुहीत ) छन्द क्या है ? मिथुओ ! जो आँदत्य से युक्त छन्द । मिथुओ ! इसे कहते हैं 'बहुत तेज छन्द' ।

मिथुओ ! अपने भीतर ही दग छन्द क्या है ? मिथुओ ! जो भारीपन और शालस्य से युक्त छन्द । मिथुओ ! इसे कहते हैं 'अपने भीतर ही दग ( =अध्यात्म संक्षिप्त ) छन्द' ।

मिथुओ ! बाहर इधर-उधर विररा छन्द क्या है ? मिथुओ ! जो बाहर पाँच काम-गुणों में लगा छन्द । मिथुओ ! इसे कहते हैं 'बाहर इधर-उधर विररा छन्द' ।

मिथुओ ! कैसे मिथु पीछे और पहले का ख्याल करके विहार करता है जैसा पीछे वैसा पहले ? मिथुओ ! पीछे और पहले मिथु की सजा ( =ख्याल ) प्रज्ञा से अच्छी तरह गृहीत होती है, मन में लाई हुई होती है, धारण कर ली गई होती है, पैठी होती है । मिथुओ ! इस तरह, मिथु पीछे और पहले का ख्याल करके विहार करता है जैसा पीछे वैसा पहले, और जैसा पहले वैसा पीछे ।

मिथुओ ! कैसे मिथु जैसा नीचे वैसा ऊपर और जैसा ऊपर वैसा नीचे विहार करता है ? मिथुओ ! मिथु तलवे से ऊपर और केश से नीचे, चमड़े से लपेटे हुए अपने शरीर को नाना प्रकार की गन्दगियों से भरा देखकर चिन्तन करता है—इस शरीर में है केश, लोम, नख, दन्त, त्वक्, मांस, धमनियाँ, हड्डियाँ, सजा, हृक्, हृदय, यकृत, छोमक, प्लीहा ( =ति्ली ), पफ्फास ( =फुफ्फुस ), अर्त, बकी अँत, उदरस्य, मैला, पित्त, कफ, पीय, लहू, पसीना, चर्या, ऑँसू, तेल, श्रूक, पोंटा, लस्ती, मूत्र । मिथुओ ! इस प्रकार, मिथु जैसा नीचे वैसा ऊपर और जैसा ऊपर वैसा नीचे विहार करता है ।

मिथुओ ! कैसे, मिथु जैसा दिन वैसा रात और जैसा रात वैसा दिन विहार करता है ? मिथुओ ! मिथु जिन आकार, लिङ्ग और निमित्त से दिन में छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है, उन्हीं आकार, लिङ्ग, और निमित्त से रात में भी वही भावना करता है ।

मिथुओ ! इस प्रकार, मिथु जैसा दिन वैसा रात और जैसा रात वैसा दिन विहार करता है ।

मिथुओ ! कैसे, मिथु खुले चित्त से प्रभावले चित्त की भावना करता है ? मिथुओ ! मिथु को

ब्राह्मण ! तुम्हें पहले ऐसी सीमांसा हुई कि आराम चर्खेंगा तो तुम्हारा वह सीमांसा बर्हो धाकर कर धाम्त हो गई ?

हैं ।

ब्राह्मण ! जैसे ही जो मिथु बर्हैत् रीजाध्व है उगका का पहले बर्हैत्-पद पाने का छन्द का वह बर्हैत्-पद पा लेने पर धाम्त हो जाता है । योंच । चित्त । सीमांसा ।

ब्राह्मण ! तो क्या समझते हो ऐसा होने पर नब्रवीक होता है या नूर ?

आनन्द ? मुझे क्यामक रबीकार करें ।

### § ६ पठम समणब्राह्मण सुच ( ४९ ० ६ )

#### चार ऋद्धिपाद

मिथुभो ! अतीवक्रम म जितवे भमण या ब्राह्मण यकी ऋद्धिपाछे महरामुमाव हो गये हैं सभी इन चार ऋद्धि-पादा के भावित होने से ही । भविष्य में । वर्तमान काए में ।

किन चार के ?

छन्द ।

### § ७ दुविय समणब्राह्मण सुच ( ४९ ० ७ )

#### चार ऋद्धिपादों की भावना

मिथुभो ! जित भमण या ब्राह्मण वे अतीवक्रम म अनेक प्रकार की ऋद्धि-पादों का साधन किया है—जैसे एक होकर अनेक हो जाना—सभी इन चार ऋद्धि-पादों को भावित और अभ्यस्त करते ही ।

भविष्य । वर्तमान काए म ।

### § ८ तिससु सुच ( ४९ ८ )

#### चार ऋद्धिपाद

मिथुभो ! मिथु चार ऋद्धि-पादों के भावित और अभ्यस्त होने से व्यासर्षी के छद होने से अपाप्रव चित्त और मज्जा की विमुक्ति का कहते ही देखते जान वेण और प्राप्त कर बिहार करता है ।

किन चार के ?

### § ९ देसना सुच ( ४९ २ ९ )

#### ऋद्धि और ऋद्धिपाद

मिथुभो ! ऋद्धि, ऋद्धि-पाद ऋद्धि-पाद-भावना और ऋद्धि-पाद-भावना-गामी मार्ग का उपदेश करेगा । जैसे सुनी ।

मिथुभो ! ऋद्धि क्या है ?

मिथुभो ! मिथु अनेक प्रकार की ऋद्धि-पादों का साधन करता है । जैसे एक होकर बहुत हो जाता है । मिथुभो ! जैसे कहते हैं "ऋद्धि" ।

मिथुभो ! ऋद्धिपाद क्या है ? मिथुभो ! ऋद्धि-पादों मित्र करने का भी मार्ग है जैसे ऋद्धि-पाद कहते हैं ।

भिक्षुओ ! ऋद्धि-पाद-भावना क्या है ? भिक्षुओ ! भिक्षु छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ।  
 भिक्षुओ ! इसे कहते हैं 'ऋद्धि-पाद-भावना' ।  
 भिक्षुओ ! ऋद्धि-पाद-भावना-नामी मार्ग क्या है ? यही आर्य अष्टांगिक मार्ग । जो, सम्यक्-  
 ष्टि... सम्यक्-समाधि । भिक्षुओ ! इसे कहते हैं 'ऋद्धि-पाद-भावना-नामी मार्ग' ।

### § १० विमङ्ग सुक्त ( ४९ २. १० )

#### चार ऋद्धिपादों की भावना

#### ( क )

भिक्षुओ ! चार ऋद्धि-पादों के भावित और अभ्यस्त होने से बड़ा अच्छा फल=परिणाम होता है । भिक्षुओ ! चार ऋद्धि-पादों के कैसे भावित और अभ्यस्त होने से बड़ा अच्छा फल=परिणाम होता है ?  
 भिक्षुओ ! भिक्षु छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है—न तो मेरा छन्द बहुत कमजोर होगा और न बहुत तेज [ देखो पृष्ठ ७४० ]

#### ( ख )

भिक्षुओ ! बहुत कमजोर ( =अति लीन ) छन्द क्या है ? भिक्षुओ ! जो कुर्सी-भाव ( =चित्त का हलका-पन ) से युक्त छन्द । भिक्षुओ ! इसे कहते हैं 'बहुत कमजोर छन्द' ।  
 भिक्षुओ ! बहुत तेज ( =अतिप्रगृहीत ) छन्द क्या है ? भिक्षुओ ! जो औद्धत्य में युक्त छन्द । भिक्षुओ ! इसे कहते हैं 'बहुत तेज छन्द' ।  
 भिक्षुओ ! अपने भीतर ही दया छन्द क्या है ? भिक्षुओ ! जो भारीपन और आलस्य से युक्त छन्द । भिक्षुओ ! इसे कहते हैं 'अपने भीतर ही दया ( =अध्यात्म संक्षिप्त ) छन्द' ।  
 भिक्षुओ ! बाहर इधर-उधर थिरका छन्द क्या है ? भिक्षुओ ! जो बाहर पाँच काम-गुणों में लगा छन्द । भिक्षुओ ! इसे कहते हैं 'बाहर इधर-उधर थिरका छन्द' ।  
 भिक्षुओ ! कैसे भिक्षु पीछे और पहले का ख्याल करके विहार करता है ..जैसा पीछे वैसा पहले ? भिक्षुओ ! पीछे और पहले भिक्षु की सजा ( =ख्याल ) प्रज्ञा से अच्छी तरह गृहीत होती है, मन में काई हुई होती है, धारण कर ली गई होती है, पैठी होती है । भिक्षुओ ! इस तरह, भिक्षु पीछे और पहले का ख्याल करके विहार करता है जैसा पीछे वैसा पहले, और जैसा पहले वैसा पीछे ।  
 भिक्षुओ ! कैसे भिक्षु जैसा नीचे वैसा ऊपर और जैसा ऊपर वैसा नीचे विहार करता है ? भिक्षुओ ! भिक्षु तलवे से ऊपर और केश से नीचे, चमड़े से लपेटे हुए अपने शरीर को नाना प्रकार की गन्दगियों से भरा देखकर चिन्तन करता है—इस शरीर में हैं केश, लोम, नख, दन्त, त्वक्, मांस, धमनियाँ, हड्डियाँ, मज्जा, हृक्, हृदय, सकृत, क्लोमक, प्लीहा ( =तिछी ), पफ्फास ( =फुफ्फुस ), आँत, बड़ी आँत, उदरस्थ, मैला, पित्त, कफ, पीय, लहू, पसीना, चर्बी, आँसू, तेल, थूक, पोंटा, लस्सी, मूत्र । भिक्षुओ ! इस प्रकार, भिक्षु जैसा नीचे वैसा ऊपर और जैसा ऊपर वैसा नीचे विहार करता है ।  
 भिक्षुओ ! कैसे, भिक्षु जैसा दिन वैसा रात और जैसा रात वैसा दिन विहार करता है ? भिक्षुओ ! भिक्षु जिन आकार, लिङ्ग और निमित्त से दिन में छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है, उन्हीं आकार, लिङ्ग, और निमित्त से रात में भी वही भावना करता है ।  
 भिक्षुओ ! इस प्रकार, भिक्षु जैसा दिन वैसा रात और जैसा रात वैसा दिन विहार करता है ।  
 भिक्षुओ ! कैसे, भिक्षु खुले चित्त से प्रभावाले चित्त की भावना करता है ? भिक्षुओ ! भिक्षु को

आजोऊ-संज्ञा और दिवा-संज्ञा मन्जी तरह पृथीत और अभिहित होती है। मिथुनो ! इस प्रकार, मिथुन तुझे चित्त से प्रमाणासे चित्त की भावना करता है।

## ( ग )

मिथुनो ! बहुत कमजोर बीर्य क्या है ? मिथुनो ! जो कुटीत-भाव से कुछ बीर्य। मिथुनो ! हम करते हैं बहुत कमजोर बीर्य।

[ 'छन्द' के समान ही 'बीर्य' का भी समझ लेना चाहिये ]

## ( घ )

मिथुनो ! बहुत कमजोर चित्त क्या है ?

[ 'छन्द' के समान ही चित्त का भी समझ लेना चाहिये ]

## ( ङ )

मिथुनो ! बहुत कमजोर सीमांसा क्या है ?

[ 'छन्द' के समान ही ]

प्रासाद-कल्पन धर्म समाप्त

—————



## तीसरा भाग

### अयोगुल वर्ग

§ १. मग्ग सुत्त ( ४९. ३ ? )

#### ऋद्धिपाद-भावना का मार्ग

श्रावस्ती' जेतवन ।

भिक्षुओ ! बुद्धत्व लाभ करने के पहले मेरे बोधिसत्व ही रहते मेरे मन में यह हुआ—ऋद्धि-पाद की भावना का मार्ग क्या है ?

भिक्षुओ ! तब, मेरे मन में यह हुआ—यह भिक्षु छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार से युक्त ऋद्धि-पाद की भावना करता है—यह मेरा छन्द न तो बहुत कमजोर होगा और न बहुत तेज ।

वीर्य । चित्त" । मीमासा ।

भिक्षुओ ! इन चार ऋद्धि-पादों के भावित और अत्यस्त होने से भिक्षु नाना प्रकार की ऋद्धियों का साधन करता है । एक भी होकर बहुत हो जाता है ।

चित्त और प्रज्ञा की विमुक्ति की प्राप्ति कर विहार करता है ।

[ छ अभिजाओं का विस्तार कर लेना चाहिये ]

§ २ अयोगुल सुत्त ( ४९. ३. २ )

#### शरीर से ब्रह्मलोक जाना

श्रावस्ती जेतवन ।

एक ओर बैठ, आयुष्मान् आनन्द भगवान् से बोले, "भन्ते ! क्या भगवान् ऋद्धि के द्वारा मनोमय शरीर से ब्रह्मलोक तक जा सकते हैं ?"

हाँ आनन्द ! जा सकता हूँ ।

भन्ते ! क्या भगवान् ऋद्धि के द्वारा इस चार महाभूतों के बने शरीर से ब्रह्मलोक तक जा सकते हैं ?

हाँ आनन्द ! जा सकता हूँ ।

भन्ते ! भगवान् ऋद्धि के द्वारा मनोमय शरीर से और चार महाभूतों के बने शरीर से भी ब्रह्मलोक तक जा सकते हैं यह बड़ा आश्चर्य और अद्भुत है ।

आनन्द ! बुद्धों की बात आश्चर्य-जनक होती ही है । बुद्ध आश्चर्य-जनक धर्मों से युक्त होते हैं । आनन्द ! बुद्ध अपूर्व होते हैं । बुद्ध अपूर्व धर्मों से युक्त होते हैं ।

आनन्द ! जिस समय बुद्ध चित्त को काया में और काया को चित्त में लगाते हैं, तथा काया में सुख-सज्ञा और लघु-सज्ञा करके विहार करते हैं, उस समय उनका शरीर बहुत हलका हो जाता है, सूट्टु, सुखट और डेवीप्पमान ।

आनन्द ! जैसे, दिन भर का तपया लोहे का गोला हलका हो जाता है, सूट्टु, सुखट और देवीप्पमान जैसे ही, जिस समय बुद्ध चित्त की काया में और काया को चित्त में ।

आनन्द ! उस समय बुद्ध का शरीर त्रिना किसी बल के लगाये पृथ्वी से आकाश में उठ जाता

है। वे अनेक प्रकार की ऋद्धिर्षी का साधन करते हैं—एक ही करके बहुत महाकोश तक को अपने शरीर से वस में कर लेते हैं।

भामन्द ! जैसे कई या कपास का कड़ा बड़ी आसानी से पृथ्वी से आकाश में उड़ जाता है।  
भामन्द ! जैसे ही उस समय कुछ का शरीर ।

### § ३ मिश्रण सुच ( ४९ ३ ३ )

#### चार ऋद्धिपाद

मिश्रणो ! ऋद्धिपाद चार हैं। कौन से चार ?

कन्द । नीर्य । चित । मीमांसा ।

मिश्रणो ! मिश्र इन चार ऋद्धिपादों के भावित और अभ्यस्त होने से आसनों के क्षय हो जाने से अगाधम चित और प्रज्ञा की विस्तृति को अपने देखते ही देखते जब देख नीर प्राप्त कर विहार करता है।

### § ४ सुदृक सुच ( ४९ ३ ४ )

#### चार ऋद्धिपाद

मिश्रणो ! ऋद्धिपाद चार हैं। कौन से चार ?

कन्द । नीर्य । चित । मीमांसा ।

### § ५ पठम फल सुच ( ४९ ३ ५ )

#### चार ऋद्धिपाद

मिश्रणो ! ऋद्धिपाद चार हैं।

मिश्रणो ! इन चार ऋद्धिपादों के भावित और अभ्यस्त होने से दो में से एक फल अव्यक्त चित्त होता है—देखते ही देखते परम ज्ञान की प्राप्ति या उपादान के कुछ भोग रहने से अवागमिता।

### § ६ द्वितीय फल सुच ( ४९ ३ ६ )

#### चार ऋद्धिपाद

मिश्रणो ! ऋद्धिपाद चार हैं।

मिश्रणो ! इन चार ऋद्धिपादों के भावित और अभ्यस्त होने से सात बड़े अच्छे फल=परिणाम हो सकते हैं। कौन से सात ?

देखते ही देखते परम ज्ञान का काय कर लेता है। यदि नहीं तो मरने के समय से परम ज्ञान का काय करता है। यदि नहीं तो पाँच शीशेवाले बंबोइनों के क्षय हो जाने से नीच ही में परिनिर्णय पायेकामा होता है [ देखो ४९ ३ ५ ]

### § ७ पठम आनन्द सुच ( ४९ ३ ७ )

#### ऋद्धि और ऋद्धिपाद

भाष्यगी 'अतयम।

---इस और दो आनुष्याङ्ग भामन्द भाष्याङ्ग से बोले "अन्ते ! ऋद्धि क्या है। ऋद्धि-पाद क्या

है, ऋद्धि-पाद-भाषना क्या है, और ऋद्धि-पाद-भावना-नामी मार्ग क्या है ?”

.. [ देखो ४९. २. ९ ]

### § ८. दुतिय आनन्द सुत्त ( ४९. ३. ८ )

#### ऋद्धि और ऋद्धिपाद

एक ओर बैठे आद्युभमान् आनन्द से भगवान् बोले, “आनन्द ! ऋद्धि क्या है...?”  
मन्ते ! धर्म के मूल भगवान् ही । ... [ देखो ४९ २. ९ ]

### § ९. पठम भिक्षु सुत्त ( ४९. ३. ९ )

#### ऋद्धि और ऋद्धिपाद

तब, कुछ भिक्षु जहाँ भगवान् थे वहाँ आये । एक ओर बैठ, वे भिक्षु भगवान् से बोले,  
“मन्ते ! ऋद्धि क्या है . ?”

.. [ देखो ४९ २ ९ ]

### § १०. दुतिय भिक्षु सुत्त ( ४९ ३. १० )

#### ऋद्धि और ऋद्धिपाद

एक ओर बैठे उन भिक्षुओं से भगवान् बोले, “भिक्षुओ ! ऋद्धि क्या है . ?”  
मन्ते ! धर्म के मूल भगवान् ही ।

[ देखो ४९ २ ९ ]

### § ११. मोग्गलान सुत्त ( ४९ ३ ११ )

#### मोग्गलान की ऋद्धिमत्ता

भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया—भिक्षुओ ! क्या समझते हो, किन धर्मों के भावित  
और अभ्यस्त होने से मोग्गलान भिक्षु इतना बड़ा ऋद्धिशाली और महासुभाव हुआ है ?

मन्ते ! धर्म के मूल भगवान् ही ।

भिक्षुओ ! चार ऋद्धिपादों के भावित और अभ्यस्त होने से मोग्गलान भिक्षु इतना बड़ा  
ऋद्धिशाली और महासुभाव हुआ है ।

किन चार के ?

छन्द । धीर्य । चित्त । सीमांसा ।

भिक्षुओ ! इन चार ऋद्धिपादों के भावित और अभ्यस्त होने से मोग्गलान भिक्षु अनेक प्रकार  
की ऋद्धियों का साधन करता है—एक होकर बहुत हो जाता है ।

भिक्षुओ ! मोग्गलान भिक्षु चित्त और प्रज्ञा की विसुक्ति को प्राप्त कर विहार करता है ।

### § १२ तथागत सुत्त ( ४९ ३ १२ )

#### बुद्ध की ऋद्धिमत्ता

भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया—भिक्षुओ ! क्या समझते हो, किन धर्मों के  
भावित और अभ्यस्त होने से बुद्ध इतने बड़े ऋद्धिशाली और महासुभाव हुए हैं ?

[ ‘मोग्गलान’ के स्थान पर ‘बुद्ध’ करके ऊपर जैसा ही ] ।

अयोगुल वर्ना समाप्त

है। वे अनेक प्रकार की शक्तियों का साधक करते हैं—एक हो करके बहुत महत्त्वके तन्त्र की अपने शरीर से परा में कर लेते हैं।

आत्मन् ! जैसे सूर्य या कपास का फटा नहीं आसानी से टूटती से आकाश में उड़ जाता है।  
आत्मन् ! जैसे ही उस समय कुछ का शरीर ।

### § ३ मिक्षु सुच ( ४९ अ. ३ )

चार ऋद्धिपाद

मिक्षुभो ! ऋद्धिपाद चार हैं। कीन से चार ?

एन्द्र । धीर्य । विच । सीमासा ।

मिक्षुभो ! मिश्र इन चार ऋद्धिपादों के भावित धीर अत्यन्त होने से आसनों के रूप हो जाने से अनाभव विच और प्रज्ञा की विमुक्ति को अपने देखते ही देखते जल देख नीर प्राप्त कर विहार करता है।

### § ४ सुदक सुच ( ४९ अ. ४ )

चार ऋद्धिपाद

मिक्षुभो ! ऋद्धिपाद चार हैं। कीन से चार ?

एन्द्र । धीर्य । विच । सीमासा ।

### § ५ पठम फल सुच ( ४९ अ. ५ )

चार ऋद्धिपाद

मिक्षुभो ! ऋद्धिपाद चार हैं।

मिक्षुभो ! इन चार ऋद्धिपादों के भावित चार अत्यन्त होने से ही में से एक एक अक्षय सिद्ध प्राप्त है—इसने ही देखने परम ज्ञान की प्राप्ति या उपादान के कुछ रूप रहने से अनागामिवा ।

### § ६ द्वातिय फल सुच ( ४९ अ. ६ )

चार ऋद्धिपाद

मिक्षुभो ! ऋद्धिपाद चार हैं। --

मिक्षुभो ! इन चार ऋद्धिपादों के भावित धीर अत्यन्त होने से सात नौ अन्ते अन्तःपरिग्राम हो सकते हैं। कीन न सात ?

इसने ही देखने परम ज्ञान का प्राप्त कर ज्ञाना है। यदि नहीं तो मरने के समय में परम ज्ञान का प्राप्त करता है। यदि नहीं तो यदि बोधेशके संपीडनों के लक्ष हो जाने से कीच ही में परिनिर्वाण प्राप्ति-प्राप्त होता है [ वेदा ४९ अ. ६ ]

### § ७ पठम आनन्द सुच ( ४९ अ. ७ )

ऋद्धि धीर ऋद्धिपाद

ध्यायती जगत्पतः।

---इह कीर है। अन्तुआन् आत्मन् अन्तुन् ही बोधे "मन्ने ! ऋद्धि ज्ञान है। ऋद्धि-पाद ज्ञान

# आठवाँ परिच्छेद

## ५०. अनुरुद्ध-संयुक्त

### पहला भाग

### रहोगत वर्ग

§ १. पठम रहोगत सुच ( ५०. १. १ )

स्मृति-प्रस्थानों की भावना

मुग्धा मैंने सुना ।

एक समय आयुष्मान् अनुरुद्ध श्रावस्ती में अनाश्रपिण्डक के जेतवन नामक आराम में विहार करते थे ।

तब, आयुष्मान् अनुरुद्ध को एकान्त में एकाग्रचित्त होने पर मन में ऐसा वितर्क उत्पन्न हुआ । जिन किन्हीं के चार स्मृति-प्रस्थान रूढ़ गये, उनका सम्यक्-दुःख-क्षय-नामी आर्य मार्ग भी रूढ़ गया । और, जिन किन्हीं के चार स्मृति-प्रस्थान आरब्ध (=परिपूर्ण) हो गये, उनका सम्यक्-दुःख-क्षय-नामी आर्य मार्ग भी आरब्ध हो गया ।

तब, आयुष्मान् महा-भोगलान आयुष्मान् अनुरुद्ध के मन के वितर्क को अपने चित्त से जान, जैसे बलवान पुरुष थमेटी बाँह को फैलाये या फैलायी बाँह को समेटे, वैसे ही आयुष्मान् अनुरुद्ध के सम्मुख प्रगट हुए ।

तब, आयुष्मान् महा-भोगलान ने आयुष्मान् अनुरुद्ध को यह कहा—'आवुस अनुरुद्ध ! कैसे भिक्षु के चार स्मृति-प्रस्थान आरब्ध (=पूर्ण) होते हैं ?'

आवुस ! भिक्षु उद्योगी, सम्प्रज्ञ, स्मृतिमान्, सत्तार में लोभ तथा वैर-भाव को छोड़कर भीतरी काया में समुदय-धर्मानुपपत्थी होकर विहार करता है । भीतरी काया में व्यय-धर्मानुपपत्थी होकर विहार करता है । भीतरी काया में समुदय-व्यय-धर्मानुपपत्थी होकर विहार करता है ।

बाहरी काया में व्यय-धर्मानुपपत्थी होकर विहार करता है ।

भीतरी और बाहरी काया में । ।

यदि वह चाहता है कि 'अप्रतिकूल में प्रतिकूल की सज्ञा से विहार करे' तो वैसा ही विहार करता है । यदि वह चाहता है कि 'प्रतिकूल में अप्रतिकूल की सज्ञा से विहार करे' तो वैसा ही विहार करता है । यदि वह चाहता है कि 'अप्रतिकूल और प्रतिकूल में प्रतिकूल की सज्ञा से विहार करे' तो वैसा ही विहार करता है । यदि वह चाहता है कि 'अप्रतिकूल और प्रतिकूल दोनों को छोड़, उपेक्षा-पूर्वक स्मृतिमान् और सम्प्रज्ञ होकर विहार करे' तो वैसा ही विहार करता है ।

भीतरी वेदनाओं में । चित्त में " । धर्मों में ।

आवुस ! ऐसे भिक्षु के चार स्मृति-प्रस्थान आरब्ध होते हैं ।

## चौथा भाग

### गङ्गा पेठ्याल

ई १-१२ सम्भे सुचन्ता ( ४९ ४ १-१२ )

मिवाण की ओर अग्रसर होना

मिहुओ ! हमे जोगा बही पुरम की ओर लहली ई वीसे ही हम नगर कृद्धिपादों को नाहित और अग्रसर करने बाका मिहु निर्वाण की ओर अग्रसर होठा है ।

[ इसी तरह कृद्धिपाद के अनुसार अग्रमाद-वर्ग बहुरणीय-वर्ग पुपय-वर्ग और जोड-वर्ग का मार्ग-संयुक्त के पेसा विस्तार कर लेना चाहिये ] ।

गङ्गा पेठ्याल समाप्त

कृद्धिपाद-संयुक्त समाप्त

---

## § ५. दुतिय कण्टकी सुत्त ( ५०. १. ५ )

चार स्मृति-प्रस्थान

साकेत\*\*\*।

...“आबुस अनुरुद्ध ! अ-शैक्ष्य भिक्षु को कितने धर्मों को प्राप्त कर विहरना चाहिये ?”

...“चार स्मृति-प्रस्थानों को \*\*\* ।

[ शेष ऊपर जैसा ही ]

## § ६. ततिय कण्टकी सुत्त ( ५०. १. ६ )

सहस्र-लोक को जानना

साकेत ।

... आबुस अनुरुद्ध ! किन धर्मों की भावना करने और उन्हें बढ़ाने से थापने महा-अभिज्ञानों को प्राप्त किया है ?

चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना करने से । किन चार ?

आबुस ! इन चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना करने और इन्हें बढ़ाने से ही मैं सहस्र लोकों को जानता हूँ ।

## § ७. तण्हक्खय सुत्त ( ५०. १. ७ )

स्मृति-प्रस्थान-भावना से तृष्णा का क्षय

श्रावस्ती ।

वहाँ आयुष्मान् अनुरुद्ध ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया । आबुस ! चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना करने और उन्हें बढ़ाने से तृष्णा का क्षय होता है । किन चार ?

आबुस ! भिक्षु काया में कायानुपश्यी होकर विहार करता है । ‘वेदनाओं में । चित्त में’ । धर्मों में ।

आबुस ! इन चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना करने और इन्हें बढ़ाने से तृष्णा का क्षय होता है ।

## § ८. सललागार सुत्त ( ५०. १. ८ )

गृहस्थ होना सम्भव नहीं

एक समय आयुष्मान् अनुरुद्ध श्रावस्ती में सललागार<sup>७</sup> में विहार करते थे ।

वहाँ आयुष्मान् अनुरुद्ध ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया ।

आबुस ! जैसे गंगा नदी पूर्य की ओर बहती है । तब, आदिमियों का एक जत्था कुदाल और टोकरी लिये आये आर कहे—‘हम लोग गंगा नदी की पच्छिम की ओर बहा देंगे ।

आबुस ! तो क्या समझते हो, ये गंगा नदी को पच्छिम की ओर बहा सकेंगे ?

नहीं आबुस !

तो क्यों ?

‡ इससे स्वविर का सतत-विहार प्रगट है । स्वविर प्रातः सुख धोकर भूत-भविष्य के सहस्र कल्पों का अनुत्सर्ण करते थे । वर्तमानकालिक दस सदसी चक्रवाल (= ब्रह्माण्ड) उन्हें एक चिन्तन मात्र में दिखाई देने लगते थे—अद्वकथा ।

७ द्वार पर सलल वृक्ष होने के कारण इस विहार का नाम सललागार पडा था ।

### § २ द्वितीय रहोगत मुच ( ५० १ २ )

#### चार स्मृति-प्रस्थान

आयस्तीं ज्ञेयतम ।

— तब आपुष्माद् महा मोमाखान ने आपुष्माद् अनुसूक्त को यह कहा—‘आपुस अनुसूक्त ! कैसे मिश्र के चार स्मृति-प्रस्थान आरम्भ (= पूर्ण ) होते हैं ?’

मिश्र उद्योगी सम्प्रदाय स्मृतिमान्, संसार में काम तथा वीर-भाव को छोड़कर भीतरी काया में कापालुपक्षी होकर विहार करता है । बाहरी काया में कापालुपक्षी होकर विहार करता है । भीतरी बाहरी काया में कापालुपक्षी होकर विहार करता है ।

‘चेरुनामीं मे’ । चित्त में । धर्मों में ।

आपुस ! ऐसे मिश्र के चार स्मृति-प्रस्थान आरम्भ (= पूर्ण ) होते हैं ।

### § ३ सुतनु मुच ( ५० १ ३ )

#### स्मृति-प्रस्थानों की भाषना से अभिज्ञा-प्राप्ति

एक समय आपुष्माद् अनुसूक्त आयस्तीं में सुतनु के तीर पर विहार कर रहे थे ।

तब बहुत से मिश्र वहाँ आपुष्माद् अनुसूक्त से वहाँ गये । और कुसुम-शेखर पूज्यकर एक और बैठ गए । एक और बैठे हुए उन मिश्रों ने आपुष्माद् अनुसूक्त को यह कहा—‘आपुस अनुसूक्त ! किस धर्मों की भाषना करने और उन्हें बढ़ाने से आपने महा-अभिज्ञानों को प्राप्त किया है ?’

आपुस ! चार स्मृति-प्रस्थानों की भाषना करने और उन्हें बढ़ाने से मैंने महा अभिज्ञानों को प्राप्त किया है । किन्तु चार ! आपुस ! मैं उद्योगी सम्प्रदाय स्मृतिमान् हो सांसारिक काम और वीर-भाव को छोड़कर काया में कापालुपक्षी होकर विहार करता हूँ । ‘चेरुनामीं मे’ । चित्त में । धर्मों में— । आपुस ! मैंने इन्हीं चार स्मृति-प्रस्थानों की भाषना करने और उन्हें बढ़ाने से महा-अभिज्ञानों को प्राप्त किया है ।

आपुस ! मैंने एक चार स्मृति-प्रस्थानों की भाषना करने से हीन धर्म को हीन के रूप में जाना । मध्यम धर्म को मध्यम के रूप में जाना । प्रणीत ( अदृश्य ) धर्म को प्रणीत के रूप में जाना ।

### § ४ पठम कम्टकी मुच ( ५० १ ४ )

#### चार स्मृति-प्रस्थान प्राप्त कर विहरना

एक समय आपुष्माद् अनुसूक्त, आपुष्माद् सारिपुत्र और आपुष्माद् महा मोमाखान सारकेत में बचटपी-यमल में विहार करते थे ।

तब आपुष्माद् सारिपुत्र और आपुष्माद् महा-मोमाखान सम्प्रदाय ध्यान से उठ कर वहाँ आपुष्माद् अनुसूक्त से वहाँ गये और कुसुम-शेखर पूज्यकर एक और बैठ गए । एक और बैठे हुए आपुष्माद् सारिपुत्र ने आपुष्माद् अनुसूक्त को यह कहा—‘आपुस अनुसूक्त ! किस मिश्र को कितने धर्मों को प्राप्त करके विहरना पादित्व ?’

आपुस सारिपुत्र ! चार मिश्र को चार स्मृति प्रस्थानों को प्राप्त कर विहरना पादित्व । किन्तु चार ?

काया में कापालुपक्षी । चेरुनामीं मे । चित्त में । धर्मों में ।

क अराकरमय धर्म में—अदृश्य ।



## § ५. दुतिय कण्टकी सुत्त ( ५०. १. ५ )

चार स्मृति-प्रस्थान

साकेत ' ।

\*“आबुस अनुरुद्ध ! भ-शैश्य भिक्षु को कितने धर्मों को प्राप्त कर विहारना चाहिए ?”

\*\* चार स्मृति-प्रस्थानों को ‘‘ ।

[ शेष ऊपर जैसा ही ]

## § ६. ततिय कण्टकी सुत्त ( ५०. १. ६ )

सहस्र-लोक को जानना

साकेत ।

‘आबुस अनुरुद्ध ! किन धर्मों की भावना करने और उन्हें बढ़ाने से आपने महा-भमिज्ञाओं को प्राप्त किया है ?

चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना करने से । किन चार ?

आबुस ! इन चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना करने और इन्हें बढ़ाने से ही मैं सहस्र लोकों को जानता हूँ ।

## § ७. तण्हद्वखय सुत्त ( ५०. १. ७ )

स्मृति-प्रस्थान-भावना से तृष्णा का क्षय

श्रावस्ती ।

वहाँ आयुष्मान् अनुरुद्ध ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया । आबुस ! चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना करने और उन्हें बढ़ाने से तृष्णा का क्षय होता है । किन चार ?

आबुस ! भिक्षु काया में कायातुपइयी होकर विहार करता है । वेदनाओं में ‘चित्त में’ धर्मों में ।

आबुस ! इन चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना करने और इन्हें बढ़ाने से तृष्णा का क्षय होता है ।

## § ८. सलळागार सुत्त ( ५०. १. ८ )

शुद्धस्थ होना सम्भव नहीं

एक समय आयुष्मान् अनुरुद्ध श्रावस्ती में सलळागार में विहार करते थे ।

वहाँ आयुष्मान् अनुरुद्ध ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया ।

आबुस ! जैसे गंगा नदी पूरव की ओर बहती है । तब, आदिमियों का एक जात्या कुदाल और टोकरी लिये आये और कहे—हम लोग गंगा नदी को पच्छिम की ओर बहा देंगे ।

आबुस ! तो क्या सम्भते ही, वे गंगा नदी को पच्छिम की ओर बहा सकेंगे ?

नहीं आबुस !

तो क्यों ?

‡ इससे स्वविर का सतत-विहार प्रगट है । स्वविर प्रातः मुख धोकर भूत-भविष्य के सहस्र कल्पों का अनुस्मरण करते थे । वर्तमानकालिक दस सड़खी चक्रवाल (= ब्रह्माण्ड) उन्हें एक चिन्तन मात्र में दिखाई देने लगते थे—अद्भुतकया ।

‡ द्वार पर सलळ बृक्ष होने के कारण इस विहार का नाम सलळागार पडा था ।

भाबुस ! गंगा नदी पूरब की ओर बहती है उसे पच्छिम बहा देना आसान नहीं । वे लोग स्वर्ग में परेशानी उठावेंगे ।

भाबुस ! कैसे ही चार स्थिति-प्रस्थानों की भावना करने वाले चार स्थिति-प्रस्थानों को बड़ावेवाके मित्र को राजा राज-मन्त्री मित्र सहायकार या कोई बन्धु-व्याज्यव सांसारिक भोगों का लोभ दिखा कर हुरकारें—भरे ! वहाँ आओ पीछे कपने में क्या रखा है क्या माया मुझा कर घूम रहे हो ! जाओ घर पर रह कामों को मीठो और पुण्य करो ।

तो भाबुस ! यह सम्भव नहीं कि वह शिक्षा को छोड़ कर गृहस्थ बन जायगा । सो क्यों ? भाबुस ! येना सम्भव नहीं है कि श्रीरामकाय तक को चित्त विवेक की ओर ख्या रहा है वह गृहस्थी में पड़ेगा ।

भाबुस ! मित्र कैसे चार स्थिति-प्रस्थान की भावना करता है ?

मित्र क्या में कर्मानुपस्थी होकर विहार करता है । वेदनाओं में । चित्त में । धर्मों में ।

### § ९ सम्बन्ध सुच ( ५० १ ९ )

#### अनुबन्ध द्वारा अर्हत्व-प्राप्ति

एक समय आमुष्मात् अनुबन्ध और आमुष्मात् सारियुक्त वैशाखी में अम्बपाठि के व्याख्यान में विहार करते थे ।

एक ओर बैठे हुए आमुष्मात् सारियुक्त ने आमुष्मात् अनुबन्ध को यह कहा—

भाबुस अनुबन्ध ! आपकी इन्द्रियों निर्मल हैं मुझ का रंग परिलङ्घ है और स्वच्छ है । आमुष्मानुबन्ध ! इस समय आप प्रायः किस विहार से बिहारते हैं ?

भाबुस ! मैं इस समय प्रायः चार स्थिति-प्रस्थानों में सुमतिहित-चित्त होकर बिहारता हूँ । किन चार ?

भाबुस ! जाबा में कर्मानुपस्थी होकर बिहारता हूँ । वेदनाओं में चित्त में । धर्मों में । आमुष्म ! जो कोई मित्र अर्हत्व, श्रीरामकाय ब्रह्मचर्य-वास पूर्व किया हुआ कृतकृत्य, मार बरता हुआ निर्वाण प्राप्त भव-बन्धनरहित सभी प्रकार जानकर विमुक्त है वह इन चार स्थिति-प्रस्थानों में सुमतिहित-चित्त होकर प्रायः विहार करता है ।

भाबुस ! हमें काम है । आमुष्म ! हमें सु-काम है ॥ जो कि मैंने आमुष्मात् अनुबन्ध के मुख से ही उत्तम वचन कहते सुना ।

### § १० पान्दुगिलान सुच ( ५० १ १० )

#### अनुबन्ध का बीमार पड़ना

एक समय आमुष्मात् अनुबन्ध धायस्ती में सम्प्रवचन में लड़े बीमार पड़े थे ।

तब बहुत से मित्र वहाँ आमुष्मात् अनुबन्ध में वहाँ पड़े । आकर आमुष्मात् अनुबन्ध से यह बोले— आमुष्मात् अनुबन्ध को किन विहार से बिहारते हुए उत्पन्न हुई आरीरिक्त बुद्ध-वेदना चित्त को पकड़कर नहीं रहती है ?

आमुष्म ! चार स्थिति-प्रस्थानों में सुमतिहित-चित्त होकर बिहारते समय मरे चित्त को उत्पन्न हुई आरीरिक्त बुद्धवेदना पकड़ कर नहीं रहती है । किन चार ?

आमुष्म ! मैं जाबा में कर्मानुपस्थी होकर बिहारता हूँ । वेदनाओं में । चित्त में । धर्मों में । गद्दोगत धर्म समाप्त

## दूसरा भाग

### सहस्र वर्ग

#### § १. सहस्र सुत्त ( ५० २ १ )

##### हजार कल्पों को स्मरण करना

एक समय आयुष्मान् अनुरुद्ध श्रावस्ती में अनाथपिण्डिक के आराम जेतवन में विहार करते थे ।

तब बहुत से भिक्षु जहाँ आयुष्मान् अनुरुद्ध थे वहाँ गये और कुशल-क्षेम पूछकर एक ओर बैठ गये । एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् अनुरुद्ध से ऐसा बोले—'आयुष्मान् अनुरुद्ध ने किन धर्मों की भावना करने और उन्हें बढ़ाने से महा-अभिज्ञानों को प्राप्त किया है ?'

चार स्मृति-प्रस्थानों की ।

आजुस ! इन चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना करने और इन्हें बढ़ाने से मैं हजार कल्पों का अनुस्मरण करता हूँ ।

#### § २. पठम इद्धि सुत्त ( ५० २ २ )

##### ऋद्धि

आजुस ! इन चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना करने और इन्हें बढ़ाने से मैं अनेक प्रकार की ऋद्धियों का अनुभव करता हूँ । एक होकर बहुत भी हो जाता हूँ । ब्रह्मलोक तक को काया से वश में कर लेता हूँ ।

#### § ३. दुतिय इद्धि सुत्त ( ५० २. ३ )

##### द्विच्य श्रोत्र

आजुस ! इन चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना से मैं अलौकिक शुद्ध द्विच्य श्रोत्र ( =काय ) से दोनों ( प्रकार के ) शब्द सुनता हूँ, देवताओं के भी, मनुष्यों के भी, दूर के भी और निकट के भी ।

#### § ४. चेतोपरिच्च सुत्त ( ५० २ ४ )

##### पराये के चित्त को जानने का क्षान

आजुस ! इन चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना से मैं दूसरे सत्त्वों के, दूसरे लोगों के चित्त को अपने चित्त से जान लेता हूँ—राग मद्धित चित्त को रागमहित जान लेता हूँ, विमुक्त चित्त को विमुक्त चित्त जान लेता हूँ ।

आनुस ! गंगा नदी पूरब की ओर बहती है उस पश्चिम बहा देना आसान नहीं । वे लोग स्वयं म परेसामी उठावेंगे ।

आनुस ! जैसे ही चार स्मृति-प्रश्नों की भावना करने बाद चार स्मृति-प्रश्नों को ब्यवस्थित मित्र को राजा राज-मन्त्री मित्र सहायकार या कोई बन्धु-आन्धव सांसारिक लोगों का छेम दिखा कर हटावें—भरे ! यहाँ आजी पीक कपड़े में क्या रखा है क्या माया मुखा कर घूम रहे हो ! आमी, घर पर रह कामों को योगी आर पुण्य करो ।

तो आनुस ! यह सम्भव नहीं कि वह शिक्षा को छोड़ कर गृहस्थ बन जायगा । सो क्यों ? आनुस ! ऐसा सम्भव नहीं है कि शीर्षकाक तक को चित्त विवेक की ओर जगा रहा है वह गृहस्थी में पड़ेगा ।

आनुस ! मित्र कैसे चार स्मृति-प्रश्नों की भावना करता है ?

मित्र काया में कायामुपस्थी होकर विहार करता है । वेदनाओं में— । चित्त में । धर्मों में ।

### § ९ सम्भ सुष्ठ ( ५० १ ९ )

#### अनुसुत्त द्वारा बर्हत्थ-प्राप्ति

एक समय आयुष्मान् अनुसुत्त आर आयुष्मान् सारिपुत्र वैशाली में अज्यपाठि के आश्रम में विहार करते थे ।

एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सारिपुत्र ने आयुष्मान् अनुसुत्त को यह कहा—

आयुष अनुसुत्त ! आपकी बुद्धिपूर्व निर्मल हैं मुझ का रंग परिशुद्ध है और स्वच्छ है । आयुष अनुसुत्त ! इस समय आप प्रायः किस विहार से विदरते हैं ?

आयुष ! मैं इस समय प्रायः चार स्मृति-प्रश्नों में सुप्रतिष्ठित-चित्त होकर विहरता हूँ । निज चार ?

आयुष ! काया में कायामुपस्थी होकर विहरता हूँ । । बहानों में । चित्त में । धर्मों में । आयुष ! जो कोई मित्र बर्हत्थ, शीघ्राश्रय प्रकाश-वास पूर्व किया हुआ कृतकृत्य, आर उठता हुआ निर्बाध प्राप्त अक-पञ्चकारित अस्वी प्रकार जाणकर विमुक्त है वह इस चार स्मृति प्रश्नों में सुप्रतिष्ठित-चित्त होकर प्रायः विहार करता है ।

आयुष ! इमें काम है ! आयुष ! इमें सु काम है !! जो कि मैंने आयुष्मान् अनुसुत्त के मुक्त से ही उत्तम बचन कहते सुना ।

### § १० शाल्वगिष्ठान सुत्त ( ५० १ १० )

#### अनुसुत्त का बीमार पड़ना

एक समय आयुष्मान् अनुसुत्त श्रावस्ती में अज्यपाठ में बंध बीमार पड़े थे ।

तब बहुत से मित्र यहाँ आयुष्मान् अनुसुत्त के यहाँ गए । जाकर आयुष्मान् अनुसुत्त से यह बातें— आयुष्मान् अनुसुत्त का किंग विहार से विदरते हुए उत्पन्न हुई सारिपुत्र द्वारा-वेदना चित्त का पकड़कर नहीं रहती है ?

आनुसुत्त ! चार स्मृति प्रश्नों में सुप्रतिष्ठित-चित्त होकर विदरते समय भरे चित्त को उत्पन्न हुई सारिपुत्र द्वारा-वेदना बचन कर नहीं रहती है । किंग चार ?

आनुसुत्त ! मैं काया में कायामुपस्थी होकर विदरता हूँ । वेदनाओं में । चित्त में । धर्मों में । श्रावस्ती में ।

श्रावस्ती में । धर्मों में ।

## § १२. पठम विज्ञा सुत्त ( ५०. २. १२ )

## पूर्वजन्मों का स्मरण

‘आवुस ! इन चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना...से मैं अनेक पूर्व जन्मों को स्मरण करता हूँ । जैसे, एक जन्म, दो...। इस तरह आकार प्रकार के साथ मैं अनेक पूर्व जन्मों को स्मरण करता हूँ ।

## § १३. दुतिय विज्ञा सुत्त ( ५०. २. १३ )

## दिव्य चक्षु

‘आवुस ! इन चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना...से मैं शुद्ध और अलौकिक दिव्य चक्षु से अपने-अपने कर्म के अनुसार अवस्था को प्राप्त प्राणियों को जान लेता हूँ ।

## § १४. ततिय विज्ञा सुत्त ( ५०. २. १४ )

## दुःख-क्षय ज्ञान

आवुस ! इन चार स्मृति-प्रस्थानों की भावना...से मैं आश्रवों के क्षय हो जाने से आश्रव-रहित चित्त की विमुक्ति और प्रज्ञा की विमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं ज्ञान से साक्षात्कार करके प्राप्त कर विहार करता हूँ ।

सहस्र वर्ग समाप्त

अनुरुद्ध-संयुक्त समाप्त

## § ५ षष्ठम ठान सुच ( ५० २ ५ )

## स्याम का ज्ञान होना

आहुस ! इम चार स्मृति-प्रस्थाओं की भावना से स्याम को स्याम के रूप में और अ-स्याम को अ-स्याम के रूप में चर्चार्थता ज्ञान होता है ।

## § ६ दुविय ठान सुच ( ५० २ ६ )

## दिव्य अक्षु

आहुस ! इम चार स्मृति-प्रस्थाओं की भावना से मैं मूढ भविष्यत् और वर्तमान के कर्मों के विपात्र को स्याम और हेतु के अनुसार चर्चार्थता ज्ञानता है ।

## § ७ पत्तिपदा सुच ( ५० २ ७ )

## मार्ग का धाम

आहुस ! इम चार स्मृति-प्रस्थाओं की भावना से मैं सर्वज्ञ-शायी प्रतिपत् ( म्मार्ग ) को चर्चार्थता ज्ञानता है ।

## § ८ लोक सुच ( ५० २ ८ )

## ज्येक का ज्ञान

आहुस ! इम चार स्मृति-प्रस्थाओं की भावना से मैं अनेक-पातु पावा-वातुवाके लोक को चर्चार्थता ज्ञानता है ।

## § ९ नानाधिमुचि सुच ( ५० २ ९ )

## धारणा को ज्ञानता

आहुस ! इम चार स्मृति-प्रस्थाओं की भावना से मैं प्राणिनों की भावा प्रकार की अधिमुचि ( धारणा ) को ज्ञानता है ।

## § १० इन्द्रिय सुच ( ५० २ १० )

## इन्द्रियों का धाम

आहुस ! इम चार स्मृति-प्रस्थाओं की भावना से मैं बुद्धे छारों के बुद्धे व्यक्तियों के इन्द्रिय विभिन्नता को चर्चार्थता ज्ञानता है ।

## § ११ ज्ञान सुच ( ५० २ ११ )

## समापत्ति का धाम

आहुस ! इम चार स्मृति-प्रस्थाओं की भावना से मैं ध्याव-विमोक्ष-समाधि-समापत्ति के संश्लेष चारिमुचि और अभाव को चर्चार्थता ज्ञानता है ।

## दूसरा भाग

### अप्रमाद वर्ग

§ १-१०. सव्ये सुत्तन्ता ( ५१. २. १-१० )

अप्रमाद

[ सम्पूर्ण वर्ग 'मार्ग-सयुक्त' के 'अप्रमाद-वर्ग' ४३ ५ के समान जानना चाहिये । देखो, पृष्ठ ६४० ] ।

अप्रमाद वर्ग समाप्त

---

## तीसरा भाग

### बलकरणीय वर्ग

§ १-१२ सव्ये सुत्तन्ता ( ५१ ३ १-१२ )

बल

भिद्युतो । जैसे, जितने बल से कर्म किये जाते हैं सभी पृथ्वी के आधार पर ही खड़े होकर किये जाते हैं । [ विस्तार करना चाहिये ] ।

[ सम्पूर्ण वर्ग 'मार्ग सयुक्त' के बलकरणीय-वर्ग ४३ ६ के समान जानना चाहिये । देखो, पृष्ठ ६४२ ] ।

बलकरणीय वर्ग समाप्त

---

# नवाँ परिच्छेद

## ५१ ध्यान-सयुक्त

### पहला भाग

#### गङ्गा पेर्याल

§ १ पठम सुद्धिय सुक्त ( ५१ १ १ )

चार ध्यान

भाषास्त्री ।

मिथुनी ! चार ध्यान हैं : कीन चार ?

मिथुनी । मिथु कामों ( असांसारिक भोगों की इच्छा ) को छोड़ पायों को छोड़ स-वितर्क स-विचार और विवेक से उत्पन्न प्रीति सुकवाससे प्रथम ध्यान को प्राप्त कर विहार करता है ।

वितर्क और विचार के शांत हो जाने से भीखरी प्रसाद विच की पृकाशता से कुछ किन्तु वितर्क और विचार से रहित समाधि से उत्पन्न प्रीतिमुक्त वाक्ये दूसरे ध्यान को प्राप्त होकर विहार करता है ।

प्रीति और विराग से भी उपेक्षायुक्त ( अस्वभाविक ) हो स्थिति और संमन्वय से युक्त हो विहार करता है । भीर शरीर से जागी ( परिहर्तौ ) के कई रूप सभी सुगों का अनुभव करता है; भीर उपेक्षा के साथ स्थितिमात्र और मुक्त विहारवासे तीसरे ध्यान को प्राप्त होकर विहार करता है ।

सुख को छोड़ दुःख को छोड़ पदके ही सीमनस्थ और हीमनस्थ के जल हो जाने से न-दुःख-न-सुखजाने तथा स्थिति और उपेक्षा से मुक्त चौथे ध्यान को प्राप्त कर विहार करता है ।

मिथुनी ! ये चार ध्यान हैं ।

मिथुनी ! कैसे गंगा नदी बह कर भी बहती है मिथुनी ! वैसे ही मिथु चार ध्यानों की भारवना करते हुए बहात विरहीन की और बहकर होता है ।

मिथुनी ! मिथु किन चार ध्यानों की भाषना करते ?

मिथुनी ! प्रथम ध्यान । दूसरे ध्यान । तीसरे ध्यान । चौथे ध्यान ।

§ २ १२ सन्ने सुत्तन्ता ( ५१ १ २ १२ )

[ 'सुम्नि ध्यायान की भौति होय सबदा विन्तार जावना आदिये । ]

गङ्गा पेर्याल समाप्त



# दसवाँ परिच्छेद

## ५२. आनापान-संयुक्त

### पहला भाग

#### एकधर्म वर्ग

§ १ एकधर्म सुक्त ( ५२ १ १ )

#### आनापान-स्मृति

श्रावस्ती जेतवन ।

• भगवान् बोले, “मिथुओ ! एक धर्म के भावित और अभ्यस्त हो जाने से बड़ा अच्छा फल= परिणाम ( आनिसल ) होता है । किस एक धर्म के ? आनापान-स्मृति के । मिथुओ ! कैसे आनापान-स्मृति के भावित और अभ्यस्त हो जाने से बड़ा अच्छा फल=परिणाम होता है ?

मिथुओ ! मिथु भारण्य में, या वृक्ष के नीचे, या शून्य गृह में आसन जमा, शरीर को सीधा किये, सावधान होकर बैठता है । वह ख्याल से साँस लेता है, और ख्याल से साँस छोड़ता है ।

वह लम्बी साँस लेते हुये जानता है कि, ‘मैं लम्बी साँस ले रहा हूँ’ । लम्बी साँस छोड़ते हुये जानता है कि, ‘मैं लम्बी साँस छोड़ रहा हूँ’ । छोटी साँस लेते हुये जानता है कि, ‘मैं छोटी साँस ले रहा हूँ’ । छोटी साँस छोड़ते हुये जानता है कि, ‘मैं छोटी साँस छोड़ रहा हूँ’ ।

सारे शरीर पर ध्यान रखते हुये साँस लूँगा—ऐसा सीखता है । सारे शरीर पर ध्यान रखते हुये साँस छोड़ूँगा—ऐसा सीखता है । काय-संस्कार ( =आभास-प्रभास की क्रिया ) को शान्त करते हुये साँस लूँगा—ऐसा सीखता है । काय-संस्कार को शान्त करते हुये साँस छोड़ूँगा—ऐसा सीखता है ।

प्रीति का अनुभव करते हुये साँस लूँगा—ऐसा सीखता है । प्रीति का अनुभव करते हुये साँस छोड़ूँगा—ऐसा सीखता है । सुख का अनुभव करते हुये साँस लूँगा—ऐसा सीखता है । सुख का अनुभव करते हुये साँस छोड़ूँगा—ऐसा सीखता है ।

चित्त-संस्कार ( = नाना प्रकार की चित्तोत्पत्ति ) का अनुभव करते हुये साँस छोड़ूँगा । चित्त-संस्कार को शान्त करते हुये साँस लूँगा , साँस छोड़ूँगा । चित्त का अनुभव करते हुये साँस लूँगा , साँस छोड़ूँगा ।

चित्त को प्रमुदित करते हुये । चित्त को समाहित करते हुये । चित्त को विमुक्त करते हुये ।

अनित्यता का चिन्तन करते हुये । विराग का चिन्तन करते हुये । निरोध का चिन्तन करते हुये । त्याग ( = प्रतिनिवर्ग ) का चिन्तन करते हुये ।

मिथुओ ! इस तरह आनापान-स्मृति के भावित और अभ्यस्त हो जाने से बड़ा अच्छा फल = परिणाम होता है ।

## चौथा भाग

### एषण वर्ग

§ १-१० सम्बन्धे सुत्तन्ता ( ५१ ४ १-१० )

#### तीस एषण्यर्थे

मिथुजो ! एषण्य तीस है ।

[ सम्पूर्ण वर्ग 'मार्ग संयुक्त' के एषण्य वर्ग ३३ \* के समान व्यापना चाहिये । देखो पृष्ठ ६७९ ] ।

#### एषण्य वर्ग समाप्त

## पाँचवाँ भाग

### ओष वर्ग

§ १ ओष सुत्त ( ५१ ५ १ )

#### आर बाङ्क

मिथुजो ! ओष आर है । ओष से आर ? काम-बाङ्क भव-बाङ्क मिथ्या-दृष्टि-बाङ्क अविद्या-बाङ्क ।

[ विस्तार करना चाहिये ] ।

§ २-९ योग सुत्त ( ५१ ५ २-९ )

#### आर योग

[ सूत्र २ से ९ तक 'मार्ग संयुक्त' के 'ओष वर्ग' ३३.८ के सूत्र २ से ९ तक के समान व्यापना चाहिये । देखो पृष्ठ ६७८ ६७९ ] ।

§ १० उद्धम्मागिम सुत्त ( ५१ ५ १० )

#### ऊपरि पाँच संयोजन

मिथुजो ! ऊपरिवाक्य पाँच संयोजन हैं । ओष से पाँच ? रूप-राग अक्षय-राग माग अविद्या ।

मिथुजो ! इन पाँच ऊपरिवाक्ये संयोजनों की व्यापने अन्तरी तरह व्यापने अथ भीर प्रहास के किने आर व्यापों की भावना करनी चाहिये । कित आर ?

मिथुजो ! मिथुजो को ओष 'अथम प्याव को मास कर विहार करता है ।--

[ ओष "५१ १ १" के समाप्त ] ।

#### ओष वर्ग समाप्त

#### व्याप्त-संयुक्त समाप्त

# दसवाँ परिच्छेद

## ५२. आनापान-संयुक्त

पहला भाग

एकधर्म वर्ग

§ १ एकधम्म सुत्त ( ५२ ? ? )

आनापान-स्मृति

श्रावस्ती जेतवन ।

भरावान् बोले, “भिक्षुओ ! एक धर्म के भावित और अभ्यस्त हो जाने से बड़ा अच्छा फल=परिणाम ( आनिसस ) होता है । किस एक धर्म के ? आनापान-स्मृति के । भिक्षुओ ! कैसे आनापान-स्मृति के भावित और अभ्यस्त हो जाने से बड़ा अच्छा फल=परिणाम होता है ?

भिक्षुओ ! भिक्षु आरप्य मे, या वृक्ष के नीचे, या शून्य गृह में आसन जमा, शरीर को सीधा किये, सावधान होकर बैठता है । वह ख्याल से साँस लेता है, और ख्याल से साँस छोड़ता है ।

वह लम्बी साँस लेते हुये जानता है कि, ‘मैं लम्बी साँस ले रहा हूँ’ । लम्बी साँस छोड़ते हुये जानता है कि, ‘मैं लम्बी साँस छोड़ रहा हूँ’ । छोटी साँस लेते हुये जानता है कि, ‘मैं छोटी साँस ले रहा हूँ’ । छोटी साँस छोड़ते हुये जानता है कि, ‘मैं छोटी साँस छोड़ रहा हूँ’ ।

सारे शरीर पर ध्यान रखते हुये साँस लूँगा—ऐसा सीखता है । सारे शरीर पर ध्यान रखते हुये साँस छोड़ूँगा—ऐसा सीखता है । काय-संस्कार (=आन्वास-प्रश्वास की क्रिया) को शान्त करते हुये साँस लूँगा—ऐसा सीखता है । काय-संस्कार को शान्त करते हुये साँस छोड़ूँगा—ऐसा सीखता है ।

प्रीति का अनुभव करते हुये साँस लूँगा—ऐसा सीखता है । प्रीति का अनुभव करते हुये साँस छोड़ूँगा—ऐसा सीखता है । सुख का अनुभव करते हुए साँस लूँगा—ऐसा सीखता है । सुख का अनुभव करते हुए साँस छोड़ूँगा—ऐसा सीखता है ।

चित्त-संस्कार (= नाना प्रकार की चित्तोत्पत्ति) का अनुभव करते हुए साँस छोड़ूँगा । चित्त-संस्कार को शान्त करते हुए साँस लूँगा, साँस छोड़ूँगा । चित्त का अनुभव करते हुए साँस लूँगा, साँस छोड़ूँगा ।

चित्त को प्रमुदित करते हुए । चित्त को समाहित करते हुए । चित्त को विमुक्त करते हुए ।

अनिव्यथा का चिन्तन करते हुए । विराग का चिन्तन करते हुए । निरोध का चिन्तन करते हुए । त्याग (= प्रतिनिसर्ग) का चिन्तन करते हुए ।

भिक्षुओ ! इस तरह आनापान-स्मृति के भावित और अभ्यस्त हो जाने से बड़ा अच्छा फल = परिणाम होता है ।

## § २ योजनसङ्ग सुच ( १० १ )

## आनापान-स्मृति

आपस्ती जतपन ।

मिथुभो ! कर्म आनापान-स्मृति के भावित और अभ्यस्त होने से बड़ा अच्छा फल = परिणाम होता है ?

मिथुभो ! मिथु विचक विराग और निरोध की भार के जानेवाले आनापान-स्मृति से युक्त स्मृति संबोधन की भावना करता है जिससे मुक्ति सिद्ध होती है। आनापान-स्मृति से युक्त धर्म विचन-सम्बोधन की भावना प्रीति प्रशस्ति समाधि उपेक्षा-सम्बोधन की भावना करता है, जिससे मुक्ति सिद्ध होती है।

मिथुभो ! इस तरह आनापान-स्मृति के भावित और अभ्यस्त होने से बड़ा अच्छा फल = परिणाम होता है।

## § ३ सुदृक सुच ( १२ १ ३ )

## आनापान-स्मृति

आपस्ती जेतपन -- ।

कसे ?

मिथुभो ! मिथु आरम्भ में सावधान होकर देखता है। [ ५२ १ १ के जैसा ही ]

## § ४ पठम फल सुच ( ५२ १ ४ )

## आनापान-स्मृति भावना का फल

[ ५२ १ १ के जैसा ही ]

मिथुभो ! इस तरह आनापान-स्मृति भावित और अभ्यस्त होने से बड़ा अच्छा फल = परिणाम होता है।

मिथुभो ! इस प्रकार आनापान-स्मृति के भावित और अभ्यस्त होने से जो म से एक फल समर्थ सिद्ध होता है—वा तो अपने देखते ही देखते परम ज्ञान का साक्षात्कार या उपादान के कुछ रूप रहने से ज्ञानागमिता।

## § ५ द्वितीय फल सुच ( ५० १ ५ )

## आनापान-स्मृति-भावना का फल

मिथुभो ! इस प्रकार आनापान-स्मृति के भावित और अभ्यस्त होने से सात फल सिद्ध होते हैं।

नीम ल साध ?

देखते ही देखते पंजर परम-ज्ञान को देख लेता है। यदि वह नहीं तो यद्यु के समय परम ज्ञान को देख लेता है। [ देखी ५६ ३ ५ ]

मिथुभो ! इस प्रकार आनापान-स्मृति के भावित और अभ्यस्त होने से बड़ा सात फल सिद्ध होते हैं।

## § ६. अरिह सुत्त ( ५२ १ ६ )

### भावना-विधि

श्रावस्ती जेतवन ।

भगवान् बोले, “भिक्षुओ ! तुम आनापान-स्मृति की भावना करो ।”

यह कहने पर आयुष्मान् अरिह भगवान् से बोले, “भन्ते ! मैं आनापान-स्मृति की भावना करता हूँ” ।

अरिह ! तुम आनापान-स्मृति की भावना कैसे करते हो ?

भन्ते ! अतीत के कामों के प्रति मेरी जो चाह थी वह प्रहीण हो गई, ओर आनेवाले कामों के प्रति मेरी कोई चाह रह नहीं गई । आध्यात्म और याह्य धर्मों में विरोध के सारे भाव (= प्रतिघ-संज्ञा) दबा दिये गये हैं । भन्ते ! सो मैं ख्याल से सॉस लेता हूँ, और ख्याल से सॉस छोड़ता हूँ । भन्ते ! इसी प्रकार मैं आनापान-स्मृति की भावना करता हूँ ।

अरिह ! मैं कहता हूँ कि यही आनापान-स्मृति है, यह आनापान-स्मृति नहीं है सो नहीं कहता । तो भी, आनापान-स्मृति जैसे विस्तार में परिपूर्ण होती है उन्में सुनो, अच्छी तरह मन में लाओ, मैं कहता हूँ ।

“भन्ते ! बहुत अच्छा” कह, आयुष्मान् अरिह ने भगवान् को उत्तर दिया ।

भगवान् बोले, “अरिह ! कैसे आनापान-स्मृति विस्तार में परिपूर्ण होती है ?

“अरिह ! भिक्षु आरण्य में [ देखो “५२ १ १” ]

“अरिह ! इय तरह, आनापान-स्मृति विस्तार में परिपूर्ण होती है ।”

## § ७. कप्पिन सुत्त ( ५२ १ ७ )

### चंचलता-रहित होना

श्रावस्ती जेतवन ।

उस समय, आयुष्मान् महा-कप्पिन पाय ही में आसन जमाये, शरीर को सीधा किये भावधान हो बैठे थे ।

भगवान् ने आयुष्मान् महा-कप्पिन को पाय ही में आसन जमाये, शरीर को सीधा किये सावधान होकर बैठे देखा । देखकर, भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, “भिक्षुओ ! तुम इस भिक्षु के शरीर को चञ्चल या हिलते-डोलते देखते हो ?”

भन्ते ! जब कभी हम इन आयुष्मान् को सध के व्रीच या एकान्त में अकेले बैठे देखते हैं, उनके शरीर को चञ्चल या हिलते-डोलते नहीं पाते हैं ।

भिक्षुओ ! जिस समाधि के भावित और अभ्यस्त हो जाने से शरीर तथा मन में चञ्चलता या हिलना-डोलना नहीं होता है उसे इन्में पूरा-पूरा लाभ कर लिया है ।

भिक्षुओ ! किन् समाधि के भावित और अभ्यस्त हो जाने से शरीर तथा मन में चञ्चलता या हिलना-डोलना नहीं होता है ।

मिथुनो ! ज्ञानापाव-समाधि के भावित भार अग्न्यस्त हो जाने से शरीर तथा मनमें पञ्चकटा पा विकला-डोळना नहीं होता है ।

कैसे ?

मिथुनो ! मिथु धारण्य में [ देखो "५२ १ १" ] ।

मिथुनो ! इस प्रकार ज्ञानापाव-समाधि के भावित भार अग्न्यस्त हो जाने से शरीर तथा मन में पञ्चकटा पा विकला-डोळना नहीं होता है ।

### § ८ दीप सुत ( ५२ १ ८ )

#### ज्ञानापाव-समाधि की भाषणा

श्रावसी ज्ञेयत ।

मिथुनो ! ज्ञानापाव-स्युति के भावित भार अग्न्यस्त होने से बड़ा अच्छा फल न परिणाम होता है ।

कैसे ?

मिथुनो ! मिथु धारण्य में ।

मिथुनो ! इस प्रकार ज्ञानापाव-स्युति के भावित भार अग्न्यस्त होने से बड़ा अच्छा फल न परिणाम होता है ।

मिथुनो ! मैं भी बुद्धत्व लाभ करने के पहले योगि-सख रहते हुए ही इस समाधि को प्राप्त हो बिहार किया करता था । मिथुनो ! इस प्रकार बिहार करते हुए मैं तो मेरा शरीर बज्जता था और मैं मेरी धर्मों । उपादान-रहित हो मेरा चित्त व्याधना से मुक्त हो गया था ।

मिथुनो ! इसकिये यदि कोई मिथु न हो कि मैं तो मेरा शरीर और मैं मेरी धर्मों बनें तथा मेरा चित्त उपादान-रहित हो व्याधना से मुक्त हो जाय तो उसे ज्ञानापाव-समाधि का जल्दी तरह मगन करवा चाहिये ।

मिथुनो ! इसकिये यदि कोई मिथु चाहे कि मेरे छांसारिक-सकल्प प्रवीण हो धर्म- अग्रति-कृत के प्रति प्रतिशुद्ध के भाव से बिहार करके प्रतिशुद्ध के प्रति अग्रतिशुद्ध के भाव से बिहार करके प्रतिशुद्ध और अग्रतिशुद्ध दोनों के प्रति प्रतिशुद्ध के भाव से बिहार करके प्रतिशुद्ध और अग्रतिशुद्ध दोनों के प्रति अग्रतिशुद्ध के भाव से बिहार करके प्रतिशुद्ध और अग्रतिशुद्ध दोनों के भाव से इय उपादान-रहित स्युतिमान् भार संयुक्त हो कर बिहार करके प्रथम पलाय को प्राप्त हो कर बिहार करके द्वितीय पृथीय अनुपै पलाय को प्राप्त हो कर बिहार करके आकाशागम्यपलाय को प्राप्त हो कर बिहार करके विद्यागम्यपलाय को प्राप्त हो कर बिहार करके आकिञ्चन्यागम्य को प्राप्त हो कर बिहार करके वैश्वज्ञान-वासंज्ञान-पलाय को प्राप्त हो कर बिहार करके संज्ञा-वेदवित्त-निरीय को प्राप्त हो कर बिहार करके तो उसे ज्ञानापाव-समाधि का जल्दी तरह मगन करवा चाहिये ।

मिथुनो ! इस प्रकार ज्ञानापाव-समाधि के भावित भार अग्न्यस्त हो जाने से यदि उसे मुक्त की वेदना होती है तो वह जानता है कि यह ( = मुक्त की वेदना ) अतिलय है । वह जानता है कि इसमें आसक्त होना नहीं चाहिये, इसका अभिलक्षण करना नहीं चाहिये । यदि उसे मुक्त की वेदना होती है तो वह जानता है कि यह अतिलय है । यदि उसे अनुपै-मुक्त वेदना होती है तो वह जानता है कि वह अतिलय है ।

यदि वह मुक्त की वेदना का अनुभव करता है तो उससे विशुद्ध अनासक्त रहता है ।  
मुक्त की वेदना । अनुपै-मुक्त वेदना ।

वा काया-पर्यन्त वेदना का अनुभव करते हुये जानता है कि मैं काया-पर्यन्त वेदना का अनुभव कर रहा हूँ । यह जीवित-पर्यन्त वेदना का अनुभव करते हुये जानता है कि मैं जीवित-पर्यन्त वेदना का अनुभव कर रहा हूँ । शरीर गिरने, तथा जीवन के अन्त होने ही नहीं मारी वेदनायें उन्दी ही जायेंगी—ऐसा जानता है ।

भिक्षुओ ! जैसे, तेल और प्रत्ती के प्रत्यय न प्रदीप जलता है । उन्ही तेल और प्रत्ती के न रहने से प्रदीप बुझ जाता है । भिक्षुओ ! जैसे ही, वा काया-पर्यन्त वेदना का अनुभव करते हुये जानता है । वही नारी वेदनायें उन्दी हो जायेंगी—ऐसा जानता है ।

## § ९ वैशाली सुत्त ( ५२. १. ९ )

### सुख-विहार

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय भगवान् वैशाली में महावन की कुट्टागार-शाला में विहार करते थे ।

उक्त समय, भगवान् भिक्षुओं के बीच अनेक प्रकार से अशुभ-भावना की बातें कह रहे थे । अशुभ-भावना की बड़ी बटाई कर रहे थे ।

तब, भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, “भिक्षुओ ! मैं अथा महीना एकान्त-वास करना चाहता हूँ । भिक्षात्र लानेवाले को छोट सेरे पास छोड़ आने न पावे ।”

“भन्ते ! बहुत अच्छा” कह वे भिक्षु भगवान् को उत्तर दे भिक्षात्र ले जानेवाले को ‘टोड काँई’ पास नहीं जाते थे ।

वे भिक्षु भी अशुभ-भावना के अभ्यास में लगाकर विहार करने लगे । उन्हें अपने शरीर से इतनी घृणा हो उठी कि वे आत्म-हत्या के लिये बधक की खोज करने लगे । एक दिन दस भिक्षु भी आत्म-हत्या कर लेते थे । बीस भी । तीस भी ।

तब, आधा महीना के बीत जाने पर एकान्त-वास से निकल भगवान् ने आयुष्मान् आनन्द को आमन्त्रित किया, “आनन्द ! क्या बात है कि भिक्षु-सघ इतना घटता सा प्रतीत हो रहा है ?”

भन्ते ! भगवान् भिक्षुओं के बीच अनेक प्रकार से अशुभ-भावना की बातें कह रहे थे, अशुभ-भावना की बड़ी बटाई कर रहे थे । अतः वे भिक्षु भी अशुभ-भावना के अभ्यास में लगाकर विहार करने लगे । उन्हें अपने शरीर से इतनी घृणा हो उठी कि वे आत्म-हत्या के लिये बधक की खोज करने लगे । एक दिन दस भिक्षु भी आत्म-हत्या कर लेते हैं । बीस भी । तीस भी । भन्ते ! अच्छा होता कि भगवान् किसी दूसरे प्रकार से समझाते जिसमें भिक्षु-सघ रहे ।

आनन्द ! तो, वैशाली के पास जितने भिक्षु रहते हैं सभी को सभा-गृह (=उपस्थान शाला) में एकत्रित करो ।

“भन्ते ! बहुत अच्छा” कह, आयुष्मान् आनन्द भगवान् को उत्तर दे, वैशाली के पास जितने भिक्षु रहते थे सभी को सभा-गृह में एकत्रित कर, भगवान् के पास गये और बोले, “भन्ते ! भिक्षु-सघ एकत्रित है, भगवान् श्रव जिसका समय समझें ।”

तब, भगवान् जहाँ सभा-गृह था वहाँ गये और विले आसन पर बैठ गये । बैठ कर, भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, “भिक्षुओ ! यह आनापान-स्मृति-समाधि भी भावित और अन्यस्त होने से शान्त सुन्दर, सुख का विहार होता है । इससे उत्पन्न होनेवाले पाप-मय अकुशलधर्म वृत्त जाते हैं, शान्त हो जाते हैं ।

मिथुना ! उस गर्मीके पिघल गइने में उड़ती धूल अद्यतन तूज पानी पद जान म द्य जाती है शान्त हो जाती है । मिथुना ! ऐस ही आनापान-स्मृति समाधि भी भापित और अम्यस्त होने में शान्त सुन्दर सुगन्ध बिहार होता है । हमने उग्रप्र होनेवाले पाप मय अज्ञान धर्म दूब जाते हैं शान्त हो जाते हैं ।

‘कैसे ।

मिथुना ! मिथु आरभ्य म ।

मिथुमो ! हम प्रारंभ पाप-मय अज्ञान धर्म दूब जाते हैं शान्त हो जाते हैं ।

§ १० किम्बिल सुघ ( ५० १ १० )

आनापान-स्मृति भाषना

पूमा मीने सुना ।

एक समय भगवान् किम्बिल में येस्तुवन में बिहार करते थे ।

वहाँ भगवान् ने आयुष्मान् किम्बिल को आमन्त्रित किया किम्बिल ! ईमे आनापान-स्मृति समाधि भाषित और अम्यस्त होने से क्या अज्ञान धर्म-परिणाम होता है ?

यह कहने पर आयुष्मान् किम्बिल चुप रहे ।

दूसरी बार भी ।

तीसरी बार भी । आयुष्मान् किम्बिल चुप रह ।

तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् से बाकें ‘भगवान् ! यह अज्ञान अद्यतन है कि भगवान् आनापान-स्मृति-समाधि का उपदेश करते । भगवान् म सुनकर मिथु धारण करेंगे ।

आनन्द ! ती सुनो अन्धी तरह मन में कावो मँ कहता हूँ ।

‘मन्त ! बहुत अज्ञान यह आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् का उत्तर दिया ।

भगवान् बोले “आनन्द ! मिथु आरभ्य म । आनन्द ! इस प्रकार आनापान-स्मृति-समाधि भाषित और अम्यस्त होने से क्या अज्ञान धर्म = परिणाम होता है ?

‘आनन्द ! जिस समय मिथु कम्बी सोस लेते हुये आनता है कि मँ कम्बी सोस के रहा हूँ। कम्बी सोस कोहते हुये आनता है कि मँ कम्बी सोस छोड़ रहा हूँ। छोटी सोस । सारे शरीर का अनुभव करते सोस हूँगा—वेसा सीकता है। सारे शरीर का अनुभव करते सोस छोड़ूँगा—वेसा सीकता है। बाप-संस्कार को शान्त करते हुये उस समय यह नकेहो को तपाते हुये संपन्न स्मृतिमान् तथा संसार के काम कार ईर्मीनम्य को दूबा कावा मँ कन्धानुपस्थी होकर बिहार करता है । सो क्यों ?

आनन्द ! क्योंकि मँ आश्वास-प्रश्वास को एक कावा ही बताता हूँ इमीकने उस समय मिथु कापा मँ कन्धानुपस्थी होकर बिहार करता है ।

आनन्द ! जिस समय मिथु प्रीति का अनुभव करते सोस हूँगा पूंसा सीकता है ; सुख का अनुभव करते ; चित्त-संस्कार का अनुभव करते ; चित्त-संस्कार को शान्त करते ; आनन्द ! उस समय मिथु बेदुमा मँ बेदुमानुपस्थी होकर बिहार करता है । सो क्यों ?

आनन्द ! क्योंकि आश्वास-प्रश्वास का जो अन्धी तरह मनन करता है उस मँ एक बेदुमा ही बताता हूँ । आनन्द ! इसकिए, उस समय मिथु बेदुमा मँ बेदुमानुपस्थी होकर बिहार करता है ।

आनन्द ! जिस समय मिथु ‘चित्त का अनुभव करते सोस हूँगा’ वेसा सीकता है ; चित्त का प्रमुदित करते ; चित्त का समाहित करते ; चित्त को विमुक्त करते ; आनन्द ! उस समय मिथु चित्त मँ चित्तानुपस्थी होकर बिहार करता है । सो क्या ?



आनन्द ! मृद स्मृति वाला तथा असप्रज्ञ आनापान-स्मृति-समाधि का अभ्यास कर लेगा—ऐसा मैं नहीं कहता ! आनन्द ! इसलिए, उस समय भिक्षु 'चित्त मे चित्तानुपश्यी होकर विहार करता है ।

आनन्द ! जिस समय, भिक्षु 'अमित्यता का चिन्तन करते साँस लूँगा' ऐसा सीखता है , विराग का चिन्तन करते , निरोध का चिन्तन करते , त्याग का चिन्तन करते , आनन्द ! उस समय, भिक्षु ' धर्मों में धर्मानुपश्यी होकर विहार करता है । वह लोभ ओर वीर्यनस्य के प्रहाण को प्रज्ञा-पूर्वक अच्छी तरह देख लेनेवाला होता है । आनन्द ! इसलिए, उस समय भिक्षु धर्मों में धर्मानुपश्यी होकर विहार करता है ।

आनन्द ! जैसे, किसी चौराहे पर धूल की एक बड़ी ढेर हो । तब, यदि पूरब की ओर से कोई बैलगाड़ी आवे तो उस धूल की ढेर को कुछ न कुछ बिखेर दे । पच्छिम की ओर से । उत्तर की ओर से । दक्खिन की ओर से ।

आनन्द ! वैसे ही, भिक्षु काया में कायानुपश्यी होकर विहार करते हुए अपने पाप-मय अकुदाल धर्मों को कुछ न कुछ बिखेर देता है । वेदना में वेदानुपश्यी होकर । चित्त मे चित्तानुपश्यी होकर । धर्मों में धर्मानुपश्यी होकर ।

एकधर्म वर्ग समाप्त

## दूसरा भाग

### द्वितीय धर्म

३१ इच्छानङ्गल सुच ( ५२ २ १ )

#### पुत्र-विहार

एक समय भगवान् इच्छानङ्गल म इच्छानङ्गल यन-मान्त में विहार करते थे ।

वहाँ भगवान् ने मिथुओं को आमन्त्रित किया 'मिथुओ ! मैं तीन महीने एकान्त-वास करना चाहता हूँ । एक मिश्रान्त जाने वाले छोड़ मेरे पास दूसरा कोई जाने न पावे ।

'भस्ते ! बहुत अच्छा । कह ने मिथु भगवान् को उत्तर दे एक मिश्रान्त ले जाने वाले छोड़ दूसरा कोई भगवान् के पास नहीं जाने को ।

तब उन तीन महीने के बीच जाने के बाद एकान्त-वास में निकल कर भगवान् ने मिथुओं का आमन्त्रित किया 'मिथुओ ! यदि दूसरे मठ वाले साधु तुमसे पूछें कि 'आहुस ! कर्पोवास में भ्रमण गेयम किस विहार से विहार कर रहे थे ?' तो तुम उन्हें उत्तर देना कि 'आहुस ! कर्पोवास में भगवान् आनापाव-स्थिति-समाधि से विहार कर रहे थे ।

मिथुओ ! मैं तपाक से सॉस लेता हूँ, और क्याक से सॉस छोड़ता हूँ । कम्पी सॉस छेते हुवे मैं आगता हूँ कि मैं कम्पी सॉस छे रहा हूँ । । तपाक का चिन्तन करते हुये सॉस हूँगा—देसा जागता हूँ । तपाक का चिन्तन करते हुये सॉस छोड़ूँगा—देसा जागता हूँ ।

मिथुओ ! यदि कोई कीक-कीक बहना चाहे तो आनापाव-स्थिति-समाधि को ही धर्म-विहार कह सकता है या ब्रह्म-विहार भी वा बुद्ध-विहार भी ।

मिथुओ ! जो मिथु अभी वीक्ष्य है, विभने अपने उद्देश्य को धर्म नहीं पाया है जो अपुत्रत कोप-धेम ( अविर्भाव ) के किये प्रथम-वीक्ष्य है उनके आनापाव-स्थिति-समाधि के माहित और कल्पस होने से अधमर्षों का क्षय होता है ।

मिथुओ ! जो मिथु धर्म्य हो चुके हैं कीजासक विभम ब्रह्मचर्य-वास पूरा हो चुका है कृतकृत्य विभम भार उत्तर गया है विभने परमार्थ को पा किया है विभम धम संबोधन परिक्षीण हो चुका है भार को परम-दान को प्राप्त कर विमुक्त हो चुके हैं उनको आनापाव-स्थिति-समाधि माहित और कल्पस होने से धर्मने सामने ही मुक्त-हर्षक विहार तथा स्थिति और संमष्टता के किये होती हैं ।

मिथुओ ! यदि कोई कीक-कीक बहना चाहे तो आनापाव-स्थिति-समाधि को ही धर्म-विहार कह सकता है वा ब्रह्म-विहार भी वा बुद्ध-विहार भी ।

३२ कर्षेय्य सुच ( ५२ २ २ )

#### कीर्ष्य और पुत्र-विहार

एक समय आनुपमाक श्रोमसमहीश धारक ( जनक ) में कर्षेय्यसु के मित्रोधाराम में विहार करते थे ।

तब, महानाम शाक्य जहाँ आयुष्मान् लोमगवद्गीश ये वहाँ आया, और प्रणाम करके एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, महानाम शाक्य आयुष्मान् लोमगवद्गीश ने बोला, “भन्ते ! जो शैक्ष्य-विहार है वही बुद्ध-विहार है, या शैक्ष्य-विहार दूसरा है और बुद्ध-विहार दूसरा ?”

आयुस महानाम ! जो शैक्ष्य-विहार है वही बुद्ध-विहार नहीं है; शैक्ष्य-विहार दूसरा है और बुद्ध-विहार दूसरा ।

आयुस महानाम ! जो भिक्षु अभी शैक्ष्य हैं जिनने अपने उद्देश्य का अभी नहीं पाया है, जो अनुत्तर योग-क्षेम (= निर्वाण) के लिये प्रयत्न-शील हैं वे पाँच नीवरणों के प्रहाण के लिये विहार करते हैं । किन पाँच के ? काम-उन्ध नीवरण के प्रहाण के लिये विहार करते हैं; व्यापाद , आलस्य , औद्धत्यकीकृष्य , विचिकित्सा ।

आयुस महानाम ! जो भिक्षु अर्हन्त हो चुके हैं उनके यह पाँच नीवरण प्रहीण होते हैं, उच्छिन्न-मूल होते हैं, शिर कटे ताड़ के समान होते हैं, मिटा त्रिये गये होते हैं जो फिर कभी उग नहीं सकते ।

आयुस महानाम ! इस तरह समझना चाहिये कि शैक्ष्य-विहार दूसरा है और बुद्ध-विहार दूसरा । आयुस महानाम ! एक समय भगवान् इच्छानगल में इच्छानगल वन-प्रान्त में विहार करते थे । आयुस ! वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया । मैं लम्बी साँस लेते हुये । भिक्षुओ ! जो भिक्षु अभी शैक्ष्य हैं । [ ऊपर जैसा ही ]

आयुस महानाम ! इसमें भी समझना चाहिये कि शैक्ष्य-विहार दूसरा है और बुद्ध-विहार दूसरा ।

### § ३ पठम आनन्द सुत्त ( ५२. २. ३ )

#### आनापान-स्मृति से मुक्ति

##### श्रावस्ती जेतवन ।

एक ओर बैठ, आयुष्मान् आनन्द भगवान् से बोले, “भन्ते ! कोई एक धर्म है जिसके भावित और अभ्यस्त होने से चार धर्म पूरे हो जाते हैं, चार धर्म के भावित और अभ्यस्त होने से सात धर्म पूरे हो जाते हैं, तथा सात धर्म के भावित और अभ्यस्त होने से दो धर्म पूरे हो जाते हैं ?”

हाँ आनन्द ! ऐसा एक धर्म है , तथा सात धर्म के भावित और अभ्यस्त होने से दो धर्म पूरे हो जाते हैं ।

भन्ते ! किस एक धर्म के भावित और अभ्यस्त होने से ?

आनन्द ! आनापान-स्मृति-समाधि एक धर्म के भावित और अभ्यस्त होने से चार स्मृति-प्रस्थान पूरे हो जाते हैं । चार स्मृति-प्रस्थान के भावित और अभ्यस्त होने से सात बोध्यंग पूरे हो जाते हैं । सात बोध्यंग के भावित और अभ्यस्त होने से विद्या और विसुक्ति पूरी हो जाती हैं ।

#### ( क )

कैसे आनापान-स्मृति-समाधि के भावित और अभ्यस्त होने से चार स्मृति-प्रस्थान पूरे हो जाते हैं ? आनन्द ! भिक्षु आरण्य में त्याग का चिन्तन करते हुये साँस रूँगा—ऐसा सीखता है ।

आनन्द ! जिस समय, भिक्षु लम्बी साँस लेते हुये जानता है कि मैं लम्बी साँस ले रहा हूँ, काय-संस्कार को शान्त करते साँस रूँगा—ऐसा सीखता है , आनन्द ! उस समय भिक्षु काया में कायासुपस्थी हो कर विहार करता है । सो क्यों ?

[ श्लो ५२ १ १ । बीराहे पर पूरु की हैर की उपमा वर्हा वर्हा है ]

आत्मन् ! इस प्रकार आनापान-स्वृति-समाधि के भावित भीर अल्पस्त होने से चार स्वृति-प्रस्थान पूरे हो जाते हैं ।

### ( ख )

आत्मन् ! कैसे चार स्वृति प्रस्थान के भावित भीर अल्पस्त होने से सात बोध्वांग पूरे हो जाते हैं ? आत्मन् ! जिस समय मिथु साववाग ( = उपस्थित स्वृति ) हा कपवा में कपवागुपह्नी हरिम् बिहार करता है उस समय मिथु की स्वृति संग्रह नहीं होती है । आत्मन् ! जिस समय मिथु की उपस्थित स्वृति असंग्रह होती है उस समय उस मिथु के स्वृति-बोध्वांग का आरम्भ होता है । आत्मन् ! उस समय मिथु स्वृति बोध्वांग की भावना करता है और उसे पूरा कर लेता है । वह स्वृतिमान् हो बिहार करते प्रज्ञा-पूर्वक उस धर्म का चिन्तन करता है ।

आत्मन् ! जिस समय वह स्वृतिमान् हो बिहार करते प्रज्ञा-पूर्वक उस धर्म का चिन्तन करता है, उस समय उसके धर्मविषय-संबोध्वांग का आरम्भ होता है । उस समय मिथु धर्मविषय-संबोध्वांग की भावना करता है और उस पूरा कर लेता है । प्रज्ञा-पूर्वक धर्म का चिन्तन करते उसे बीर्य ( = वस्साह ) होता है ।

आत्मन् ! जिस समय मिथु का प्रज्ञा-पूर्वक धर्म का चिन्तन करते बीर्य होता है उस समय उसके बीर्य-संबोध्वांग का आरम्भ होता है । उस समय मिथु बीर्य-संबोध्वांग की भावना करता है और उसे पूरा कर लेता है । बीर्यवान् होने से उसे विरामिय प्रीति उत्पन्न होती है ।

आत्मन् ! जिस समय मिथु को बीर्यवान् होने से विरामिय प्रीति उत्पन्न होती है उस समय उसके प्रीति-संबोध्वांग का आरम्भ होता है । उस समय मिथु प्रीति-संबोध्वांग की भावना करता है और उसे पूरा कर लेता है । मन के प्रीति-बुद्ध होने से शरीर भी शान्त हो जाता है और चित्त भी ।

आत्मन् ! जिस समय मन के प्रीति-बुद्ध होने से शरीर भी शान्त हो जाता है और चित्त भी उस समय मिथु के प्रसन्न-संबोध्वांग का आरम्भ होता है । शरीर के शान्त हो जाने पर बुद्ध से चित्त समाहित हो जाता है ।

आत्मन् ! जिस समय शरीर के शान्त हो जाने पर बुद्ध से चित्त समाहित हो जाता है उस समय मिथु के समाधि-संबोध्वांग का आरम्भ होता है । चित्त समाहित हो सभी ओर से उदासीन रहता है ।

आत्मन् ! जिस समय चित्त समाहित हो सभी ओर से उदासीन रहता है उस समय मिथु के उपेक्षा-संबोध्वांग का आरम्भ होता है । उस समय मिथु उपेक्षा-संबोध्वांग की भावना करता है और उसे पूरा कर लेता है ।

[ इसी तरह 'वेदना में वेदनागुपह्नी' चित्त में चित्तागुपह्नी और धर्मों में धर्मागुपह्नी को भी सिद्धांतर समझ कना चाहिए ।

आत्मन् ! इस प्रकार चार स्वृति-प्रस्थान भावित भीर अल्पस्त होने से सात बोध्वांग पूरे हो जाते हैं ।

### ( ग )

आत्मन् ! कैसे सात बोध्वांग भावित भीर अल्पस्त होने से विद्या भीर विमुक्ति पूरी हो जाती है ?

आत्मन् ! मिथु विवेक विद्या भीर विरोध की ओर के जानेवाले स्वृति-संबोध्वांग की भावना

करता है जिससे मुक्ति सिद्ध होती है। उपेक्षा-मद्योग की भांथना करता है जिससे मुक्ति सिद्ध होती है।

आनन्द ! इस प्रकार, सात बोध्यग भावित और अभ्यस्त होने से विद्या और विमुक्ति पूरी हो जाती है।

### § ४. दुतिय आनन्द सुत्त ( ५२ २. ४ )

#### एकधर्म से सबकी पूर्ति

एक ओर बैठे आयुप्मान् आनन्द से भगवान् बोले, "आनन्द ! क्या कोई एक धर्म है जिसके भावित और अभ्यस्त होने से ...?"

भन्ते ! धर्म के मूल भगवान् ही ।

हाँ आनन्द ! ऐसा एक धर्म है... [ ऊपर जैसा ही ] ।

### § ५. पठम भिक्षु सुत्त ( ५२. २. ५ )

#### आनापान-स्मृति

तब, कुछ भिक्षु जहाँ भगवान् थे वहाँ आये । एक ओर बैठ वे भिक्षु भगवान् से बोले, भन्ते ! क्या कोई एक धर्म है... [ ऊपर जैसा ही ]

### § ६. दुतिय भिक्षु सुत्त ( ५२ २ ६ )

#### आनापान-स्मृति

तब, कुछ भिक्षु जहाँ भगवान् थे वहाँ आये, और भगवान् का अभिवादन कर एक ओर बैठ गये । एक ओर बैठे उन भिक्षुओं से भगवान् बोले, "भिक्षुओ ! क्या कोई एक धर्म है...?"

भन्ते ! धर्म के मूल भगवान् ही ।

हाँ भिक्षुओ ! ऐसा एक धर्म है... [ ऊपर जैसा ही ]

### § ७. संयोजन सुत्त ( ५२ २ ७ )

#### आनापान-स्मृति

भिक्षुओ ! आनापान-स्मृति-समाधि के भावित और अभ्यस्त होने से संयोजनों का प्रहाण होता है ।

### § ८. अनुशय सुत्त ( ५२ २ ८ )

#### अनुशय

अनुशय मूल से उल्लङ्घ जते हैं ।

### § ९. अद्धान सुत्त ( ५२ २ ९ )

#### मार्ग

मार्ग की जानकारी होती है ।

### § १०. आसवकखय सुत्त ( ५२ २ १० )

#### आश्रव-क्षय

आश्रवों का क्षय होता है ।

कैसे...?

भिक्षुओ ! भिक्षु आरण्य में ।

#### आनापान-संयुत्त समाप्त

[ देखो "५२ १ १" । चाराहे पर चूक की वीर की उपमा यहाँ नहीं है ]

आत्मन् ! इस प्रकार आभापाव-स्मृति-समाधि के भावित वीर अभ्यस्त होने से चार स्मृति प्रत्याव पूरे हो जाते हैं ।

### ( स् )

आत्मन् ! कैसे चार स्मृति प्रत्याव के भावित वीर अभ्यस्त होने से सात बोध्यांग पूरे हो जाते हैं ?  
आत्मन् ! जिस समय मिथु साध्यांग ( = उपस्थित स्मृति ) हो कपा में कायानुपस्थी होकर विहार करता है उस समय मिथु की स्मृति संयुक्त नहीं होती है । आत्मन् ! जिस समय मिथु की उपस्थित स्मृति जसंयुक्त होती है उस समय उस मिथु के स्मृति-बोध्यांग का आरम्भ होता है । आत्मन् ! उस समय मिथु स्मृति बोध्यांग की भावना करता है वीर उसे पूरा कर लेता है । वह स्मृतिमात्र ही विहार करते मञ्जा-पूर्वक उस धर्म का चिन्तन करता है ।

आत्मन् ! जिस समय वह स्मृतिमात्र ही विहार करते मञ्जा-पूर्वक उस धर्म का चिन्तन करता है उस समय उसके धर्मविषय-संबोध्यांग का आरम्भ होता है । उस समय मिथु धर्मविषय-संबोध्यांग की भावना करता है वीर उसे पूरा कर लेता है । मञ्जा-पूर्वक धर्म का चिन्तन करते उसे वीर ( = ब्रह्माह ) होता है ।

आत्मन् ! जिस समय मिथु का मञ्जा-पूर्वक धर्म का चिन्तन करते वीर होता है उस समय उसके वीर्य-संबोध्यांग का आरम्भ होता है । उस समय मिथु वीर्य-संबोध्यांग की भावना करता है वीर उसे पूरा कर लेता है । वीर्यवान् होने में उसे विरामिय प्रीति उत्पन्न होती है ।

आत्मन् ! जिस समय मिथु को वीर्यवान् होने से विरामिय प्रीति उत्पन्न होती है उस समय उसके प्रीति-संबोध्यांग का आरम्भ होता है । उस समय मिथु प्रीति-संबोध्यांग की भावना करता है वीर उसे पूरा कर लेता है । मत् के प्रीति-युक्त होने से शरीर भी शान्त हो जाता है वीर चित्त भी ।

आत्मन् ! जिस समय मत् के प्रीति-युक्त होने से शरीर भी शान्त हो जाता है वीर चित्त भी उस समय मिथु के प्रथमविषय-संबोध्यांग का आरम्भ होता है । शरीर के शान्त हो जाने पर युक्त से चित्त समाहित हो जाता है ।

आत्मन् ! जिस समय शरीर के शान्त हो जाने पर युक्त से चित्त समाहित हो जाता है उस समय मिथु के समाधि-संबोध्यांग का आरम्भ होता है । चित्त समाहित हो सभी वीर त उदासीन रहता है ।

आत्मन् ! जिस समय चित्त समाहित हो सभी वीर से उदासीन रहता है उस समय मिथु के उपस्था-संबोध्यांग का आरम्भ होता है । उस समय मिथु उपस्था-संबोध्यांग की भावना करता है वीर उसे पूरा कर लेता है ।

[ धर्मो उरह वेदना में वेदानुपस्थी चित्त में विद्यानुपस्थी वीर धर्मों में धर्मानुपस्थी को भी मित्राकर समझ लेना चाहिए ।

आत्मन् ! इस प्रकार चार स्मृति-प्रत्याव भावित वीर अभ्यस्त होने से सात बोध्यांग पूरे हो जाते हैं ।

### ( ग )

आत्मन् ! कैसे सात बोध्यांग भावित वीर अभ्यस्त होने से विद्या वीर विमुक्ति पूरी हो जाती है ?

आत्मन् ! मिथु विवेक विद्या वीर विद्या की वीर के ज्ञानरूप स्मृति-संबोध्यांग की भावना

भिक्षुओ ! जो यह चार द्वीपों का प्रतिलाभ है, और जो यह चार धर्मों का प्रतिलाभ है, इनमें चार द्वीपों का प्रतिलाभ चार धर्मों के प्रतिलाभ की एक कला के बराबर भी नहीं है ।

### § २. ओगध सुक्त ( ५३ १ २ )

चार धर्मों से श्रोतापन्न

भिक्षुओ ! चार धर्मों से युक्त होने से आर्यश्रावक श्रोतापन्न होता है, फिर यह मार्गभ्रष्ट नहीं हो सकता, परमार्थ तक पहुँच जाना उनका नियत होता है, परम-ज्ञान की प्राप्ति उन्में अवश्य होती है ।

किन चार से ?

भिक्षुओ ! आर्यश्रावक बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा

धर्म के प्रति

संघ के प्रति

श्रेष्ठ और सुन्दर शीलों से युक्त

भिक्षुओ ! इन्हीं चार धर्मों से युक्त होने से आर्यश्रावक श्रोतापन्न होता है ।

भगवान् ने यह कहा; यह कह कर बुद्ध फिर भी बोले —

जिन्हें श्रद्धा, शील, धीर स्पष्ट धर्म-दर्शन प्राप्त है,

वे काल ( = समय ) में नहीं पड़ते हैं,

परम-पद ब्रह्मचर्य के अन्तिम फल को उनमें पा लिया है ॥

### § ३ दीर्घायु सुक्त ( ५३ १ ३ )

दीर्घायु का बीमार पड़ना

एक समय भगवान् राजगृह में वेल्लुवत कलन्डक निवाप में विहार करते थे ।

उस समय दीर्घायु उपासक बड़ा बीमार पड़ा था ।

तब, दीर्घायु उपासक ने अपने पिता जोतिक गृहपति को आमन्त्रित किया, “गृहपति ! सुनो, जहाँ भगवान् हैं वहाँ आप जायें और भगवान् के चरणों में मेरी ओर से वन्दना करें—भन्ते ! दीर्घायु उपासक बड़ा बीमार पड़ा है, सो भगवान् के चरणों में शिर से वन्दना करता है । और कहें—भन्ते ! यदि भगवान् दया करके जहाँ दीर्घायु उपासक का घर है वहाँ चलते तो बड़ी कृपा होती ।”

“तात ! बहुत अच्छा” कह जोतिक गृहपति, दीर्घायु उपासकको उत्तर दे जहाँ भगवान् थे वहाँ गया, और भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठ, जोतिक गृहपति भगवान् से बोला—भन्ते ! दीर्घायु उपासक बड़ा बीमार पड़ा है । वह भगवान् के चरणों में शिर से वन्दना करता है ।

भगवान् ने श्लेष रहकर स्वीकार कर लिया ।

तब, भगवान् पहन और पात्र-चीवर ले जहाँ दीर्घायु उपासक का घर था वहाँ गये, जा कर बिछे आसन पर बैठ गये । बैठ कर, भगवान् दीर्घायु उपासक से बोले, “दीर्घायु ! कहे, तुम्हारी तबियत अच्छी है न, बीमारी बढ़ती नहीं, घटती तो जान पड़ती है न ?”

भन्ते ! मेरी तबियत अच्छी नहीं है, बीमारी बढ़ती ही जान पड़ती है, घटती नहीं ।

दीर्घायु ! तो तुम्हें ऐसा सीखना चाहिये—बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा से युक्त होऊँगा, धर्म के प्रति, संघ के प्रति, श्रेष्ठ और सुन्दर शीलों से युक्त ।

भन्ते ! भगवान् ने श्रोतापत्ति के जिन चार अर्थों का उपदेश किया है वे धर्म सुसंभे वर्तमान

# ग्यारहवाँ परिच्छेद

## ५३ स्रोतापत्ति-सयुक्त

पहला भाग

वेङ्कटद्वार वर्ग

§ १ राज सूच ( ५३ १ १ )

चार भेद धर्म

धापत्ती जेतथम ।

मिथुभो ! मङ्ग ही अक्षरवर्ती राजा चारों द्वीप पर अपना वैश्वदेवी और आधिपत्य स्थापित कर राज करके मरन के बाद स्वर्ग में प्रायश्चित्त वैश्वी के बीच उत्पन्न हो सुगति का प्राप्त होता है; वह चारों मन्त्रसयुक्त में अन्तराधर्मों से बिरा रह द्विष्य पर्वि काम-गुणों का उपभोग करता है। वह चार धर्मों से युक्त नहीं होता है, अतः वह नरक से मुक्त नहीं है। तिरश्चीन-योगि में पद्मे से मुक्त नहीं है। प्रेत-योगि में पद्मे से मुक्त नहीं है। नरक में पद् बुगति को प्राप्त होने से मुक्त नहीं है।

मिथुभो ! मङ्ग ही आर्षभाषक सिद्धान्त से जीवन निर्वाह करता है और फटी पुराणी पुराणी पहनता है। वह चार धर्मों से युक्त होता है, अतः वह नरक से मुक्त है। तिरश्चीन-योगि में पद्मे से मुक्त है। प्रेत-योगि में पद्मे से मुक्त है। नरक में पद् बुगति को प्राप्त होने से मुक्त है।

किन चार ( धर्मों ) से ?

मिथुभो ! आर्षभाषक मुक्त के प्रति एक भ्रष्टा से युक्त होता है—यस वह भगवान् अर्हत्, सम्बन्ध-सम्बुद्ध विद्या चरम-सम्बन्ध अच्छी गति का प्राप्त (सुगुण) क्षौरचित्, अनुत्तर पुराणी को ध्यान करने में सहायी के समान देवता और मनुष्यों के पुर मुक्त भगवान्।

धर्म के प्रति एक भ्रष्टा से युक्त होता है—भगवान् का धर्म स्वात्पत्त (अच्छी तरह बताया गया)। मूर्खता (अभिप्राय कर्म सामने देव किया जाता है)। अनात्मिक (अविना अधिष्ठ काक के बन्धन होने वाला) विपरीत सचाई लीगा जो मुक्त-मुक्तकर दिग्दर्श का सकती है (अधिपतिमक) निर्वाण की ओर से जानेवाला विज्ञानों द्वारा अयन धर्मों की भीतर रामस सेने योग्य है।

मङ्ग के प्रति एक भ्रष्टा से युक्त होता है—भगवान् का आचर-संय अन्त मार्ग पर आरुण है भगवान् का आचर-संय सीधे मार्ग पर आरुण है भगवान् का आचर-संय ज्ञान के मार्ग पर आरुण है भगवान् का आचर-संय मने मार्ग पर आरुण है। आ वह पुण्यों का चार जोड़ा भ्रात पुण्य है चारों भगवान् का आचर-संय है; उपागत करने के योग्य गन्धर करने के योग्य मुक्ता करने के योग्य प्रत्याय करने के योग्य समाप्त का अर्थोदिक पुण्य-येत।

धेद और मुग्ध लोगों से मुक्त होता है अन्तर्ध अतिर मित्रैक मुक्त, निर्वाण विज्ञानों प्रस्ता अतिरिक्त समाधि-प्राप्त के अनुकूल।

एक चार धर्मों से मुक्त होता है।



ठीक है सारिपुत्र ! ठीक है ॥ सत्पुरुष का सहवास ही ।

सारिपुत्र ! जो 'स्रोत, स्रोत' कहा जाता है, वह स्रोत क्या है ?

भन्ते ! यह 'आर्य अष्टांगिक मार्ग' ही स्रोत है । जो सम्यक्-दृष्टि 'सम्यक्-समाधि' ।

ठीक है सारिपुत्र ! ठीक है ॥ यह आर्य अष्टांगिक मार्ग ही स्रोत है \* \* \* ।

सारिपुत्र ! जो 'स्रोतापन्न, स्रोतापन्न' कहा जाता है, वह स्रोतापन्न क्या है ?

भन्ते ! जो इस आर्य अष्टांगिक मार्ग से युक्त है वही स्रोतापन्न कहा जाता है—जो आयुष्मान् इस नाम के, इस गोत्र के हैं ।

### § ६ थपति सुत्त ( ५३ १ ६ )

घर झंझटों से भरा है

श्रावस्ती जेतवन ।

उस समय, कुछ भिक्षु भगवान् के लिये चीवर बना रहे थे कि—तेमासा के दीत जाने पर भगवान् वने चीवर को लेकर चारिका के लिये प्रस्थान करेंगे ।

उस समय, ऋषिदत्तपुराण कारीगर साधुक में कुछ काम से रह रहे थे । उन कारीगर ने सुना कि कुछ भिक्षु भगवान् के लिये चीवर बना रहे हैं कि—तेमासा के दीत जाने पर भगवान् वने चीवर को लेकर चारिका के लिये प्रस्थान करेंगे ।

तब, उन कारीगर ने मार्ग पर एक पुरुष तानात कर दिया—जब अर्हत् सम्यक्-सम्बुद्ध भगवान् को इधर से जाते देखते तो हमें सूचित करना ।

दो या तीन दिन रहने के बाद उस पुरुष ने भगवान् को दूर ही से आते देखा । देख कर, जहाँ ऋषिदत्तपुराण कारीगर थे वहाँ गया और बोला—भन्ते ! यह भगवान् अर्हत् सम्यक्-सम्बुद्ध आ रहे हैं, अब आप जिसका काल समझें ।

तब, ऋषिदत्तपुराण कारीगर जहाँ भगवान् थे वहाँ आये, और भगवान् को अभिवादन कर पीछे पीछे हो लिये ।

तब, भगवान् मार्ग से उतर एक वृक्ष के नीचे जाकर थिछे आसन पर बैठ गये । ऋषिदत्तपुराण कारीगर भी भगवान् का अभिवादन कर एक ओर बैठ गये ।

एक ओर बैठ, ऋषिदत्तपुराण कारीगर भगवान् ने बोले, "भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् श्रावस्ती से कोशल की ओर चारिका के लिये प्रस्थान करेंगे, तब हमें बड़ा असतोष और दुःख होता है, कि—भगवान् हमसे दूर जा रहे हैं । भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् ने श्रावस्ती से कोशल की ओर चारिका के लिये प्रस्थान कर दिया है, तब हमें बड़ा असतोष और दुःख होता है, कि—भगवान् हमसे दूर जा रहे हैं ।

"भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् कोशल से मल्लों की ओर चारिका के लिये प्रस्थान करेंगे, तब हमें बड़ा असतोष और दुःख होता है, कि—भगवान् हमसे दूर जा रहे हैं । भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् ने कोशल से मल्लों की ओर चारिका के लिये प्रस्थान कर दिया है, तब हमें बड़ा असतोष और दुःख होता है, कि—भगवान् हमसे दूर जा रहे हैं ।

"भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् मल्लों से वज्जियों की ओर चारिका के लिये ।

"भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् वज्जियों से काशी की ओर चारिका के लिये ।

"भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् काशी से मगध की ओर चारिका के लिये ।

"भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् मगध से काशी की ओर चारिका के लिये प्रस्थान करेंगे, तब हमें बड़ा असतोष और आनन्द होता है, कि—भगवान् हमारे निकट आ रहे हैं । भन्ते ! जब हम

ईं सिमि उतकी साभना कर की है । मन्ते ! मैं बुद्ध के प्रति रद्द भद्रा स युक्त हूँ । धर्म के प्रति । संघ के प्रति । ब्रह्म और सुन्दर स्त्रीयों से युक्त ।

श्रीर्षाणु ! तो तुम इन चार श्रोतापत्ति के अर्थों में प्रसिद्धित हो जाओ छः विद्या भागीय धर्मों की भाषना करो ।

श्रीर्षाणु ! तुम सभी संस्कारों में भवित्यता का निवृत्तन करते हुये विहार करो । भवित्य में दुग्ध और दुग्ध में अनार्यम प्रधान विराग और विरोध समझो । श्रीर्षाणु ! तुम्हें ऐसा ही सीखना चाहिये ।

मन्ते ! भगवान् ने त्रिभुज छः विद्या-आगीय धर्मों का उपदेश किया है वे धर्म मुझमें वर्तमान हैं । मन्ते ! बधिक मुझे पंसा होता है—यह श्रोतिकगुरुपति मेरे मरने के बाद बहुत अप्रसन्न हो जाय ।

तब श्रीर्षाणु ! ऐसा नच समझो । तब श्रीर्षाणु ! भगवान् ने जो कमी बताया है उसी का मन्तन करो ।

तब भगवान् श्रीर्षाणु उपासक को इस प्रकार उपदेश दे आसन से उठकर चक गये ।

तब भगवान् के चक जाने के कुछ देर बाद ही श्रीर्षाणु उपासक की श्मशु हो गई ।

तब कुछ मिश्रु वहाँ भगवान् से वहाँ गये और भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये । एक ओर बैठ मिश्रु भगवान् से बोले मन्ते ! श्रीर्षाणु उपासक जिसे भगवान् ने कमी संक्षेप से धर्मों पदेश किया था मर गया । मन्ते ! उसकी श्मशु क्या गति होगी ?”

मिश्रुओ ! श्रीर्षाणु उपासक पण्डित या बह धर्म के मार्ग पर आकर का उसने धर्म को बिकक नहीं बताया । मिश्रुओ ! श्रीर्षाणु उपासक पाँच नीचेवाके संयोजनों के क्षय हो जाने स आपपाठिक हुआ है । बह उम कोऊ से बिना कटे वहाँ परिनिर्वाण पा डेगा ।

### ५ ४ पठम सारिपुच सुच ( ५३ १ ४ )

चार धार्यों से युक्त श्रोतापद्य

एक समय आयुष्मान् सारिपुच और आयुष्मान् आनन्द् द्यायस्ती में अनाथपिण्डिक के आराम जेतवन में विहार करते थे ।

तब संघा समय आयुष्मान् आनन्द् ध्यान से उठ । एक ओर बैठ आयुष्मान् आनन्द् आयुष्मान् सारिपुच से योक्त “आयुय सारिपुच ! कितने धर्मोंसे युक्त होये मे भगवान् दे रिस्ती को श्रोतापद्य बतलाया है जो मार्ग से च्युत नहीं हो सकता है जिसका परम-व्यह तक पहुँचना निश्चय है जिसे परम ज्ञान की प्राप्ति होता अक्षर्य है ।

आयुय आयुय ! धर्मों से युक्त होने से भगवान् ने किन्ती को श्रोतापद्य बताया है ।

आयुय ! आयुयआयुय बुद्ध के प्रति रद्द भद्रा ।

धर्म के प्रति ।

संघ के प्रति ।

ब्रह्म और सुन्दर स्त्रीयों से युक्त ।

आयुय ! इन्हीं चार धर्मों स युक्त होने से ।

### ५ ५ द्वितीय सारिपुच सुच ( ५३ १ ५ )

श्रोतापत्ति मङ्ग

-- एक ओर बैठ आयुष्मान् सारिपुच स भगवान् योक्त “सारिपुच ! जो श्रोतापत्ति मङ्ग श्रोतापत्ति मङ्ग बतलाया है बह श्रोतापत्ति-मङ्ग क्या है ?”

मन्ते ! आयुय का श्रोतापत्ति मङ्ग है । आयुय का धरम ही श्रोतापत्ति मङ्ग है । अस्ती सत्त अथवा अस्ती ही श्रोतापत्ति-मङ्ग है । अस्ती-दुग्ध आचरन करना ही श्रोतापत्ति मङ्ग है ।

ठीक है मारिपुत्र ! ठीक है ॥ सत्पुरुष का मतवास्त ही ।

मारिपुत्र ! जो 'मात, योत' कहा जाता है, यह नोत क्या है ?

भन्ते ! यह आर्य अष्टांगिक मार्ग ही नोत है । जो सम्यक्-दधि • सम्यक्-समाधि ।

ठीक है मारिपुत्र ! ठीक है ॥ यह आर्य अष्टांगिक मार्ग ही नोत है ॥

मारिपुत्र ! जो 'नोतापन, योतापन' कहा जाता है, यह योतापन क्या है ?

भन्ते ! जो इस आर्य अष्टांगिक मार्ग से मुक्त है वहाँ योतापन कहा जाता है—जो आयुष्मान् इस नाम के, इन योग के है ।

### § ६ थपति मुत्त ( ५३ १ ६ )

‘ यत्र ग्रंथद्वयं से भगवते ’

श्रावस्ती जेतवन ।

उस समय, कुछ भिक्षु भगवान् के लिये चीवर बना रहे थे कि—तेमासा के दात जाने पर भगवान् वन चीवर को लेकर चारिका के लिये प्रस्थान करेंगे ।

उस समय, ऋषिदत्तपुराण कारीगर साधुओं में कुछ काम में रत रहे थे । उन कारीगर ने सुना कि कुछ भिक्षु भगवान् के लिये चीवर बना रहे हैं कि—तेमासा के दात जाने पर भगवान् वन चीवर को लेकर चारिका के लिये प्रस्थान करेंगे ।

तब, उन कारीगर ने मार्ग पर एक पुरुष तैनात कर दिया—जत्र 'अर्हत् सम्यक्-सम्बुद्ध भगवान् को दूधर से जाते देखें तो हमें सूचित करना ।

दो या तीन दिन रहने के बाद उसे पुरुष ने भगवान् को दूर ही से आते देखा । देख कर, जहाँ ऋषिदत्तपुराण कारीगर थे वहाँ गया और बोला—भन्ते ! यह भगवान् अर्हत् सम्यक्-सम्बुद्ध का रहे है, अब आप जिनका काल समयें ।

तब, ऋषिदत्तपुराण कारीगर जहाँ भगवान् थे वहाँ आये, और भगवान् को अभिवादन कर पीछे-पीछे हो लिये ।

तब, भगवान् मार्ग से उतर एक वृक्ष के नीचे जाकर थिठे जासन पर बैठ गये । ऋषिदत्तपुराण कारीगर भी भगवान् का अभिवादन कर एक ओर बैठ गये ।

एक ओर बैठ, ऋषिदत्तपुराण कारीगर भगवान् से बोले, “भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् श्रावस्ती से कोशल की ओर चारिका के लिये प्रस्थान करेंगे, तब हमें बड़ा अमतोप और दुःख होता है, कि—भगवान् हमसे दूर जा रहे हैं । भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् ने श्रावस्ती से कोशल की ओर चारिका के लिये प्रस्थान कर दिया है, तब हमें बड़ा असतोप और दुःख होता है, कि—भगवान् हमसे दूर जा रहे हैं ।

“भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् कोशल से मल्लों की ओर चारिका के लिये प्रस्थान करेंगे, तब हमें बड़ा अमतोप और दुःख होता है, कि—भगवान् हमसे दूर जा रहे हैं । भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् ने कोशल से मल्लों की ओर चारिका के लिये प्रस्थान कर दिया है, तब हमें बड़ा अमतोप और दुःख होता है, कि—भगवान् हमसे दूर जा रहे हैं ।

“भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् मल्लों से वज्जियों की ओर चारिका के लिये ।

“भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् वज्जियों से काशी की ओर चारिका के लिये ।

“भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् काशी से मगध की ओर चारिका के लिये ।

“भन्ते ! जब हम सुनते हैं कि भगवान् मगध से काशी की ओर चारिका के लिये प्रस्थान करेंगे, तब हमें बड़ा असतोप और आनन्द होता है, कि—भगवान् हमारे निकट आ रहे हैं । भन्ते ! जब हम

सुनते हैं कि भगवान् ने भगवत् से-काशी की ओर चारिका के छिपे प्रस्थान कर दिया है। तब हमें क्या संतोष और आनन्द होता है, कि—भगवान् हमारे निकट आ रहे हैं।

काशी स बज्रियों की ओर ।

बज्रियों से मक्कों की ओर ।

मक्कों से कोशक की ओर

कोशक से आबरवी की ओर । मन्ते ! अब हम सुनते हैं कि इस समय भगवान् आबरवी में जनापविशिष्टक के आश्रम संतवन में विहार करते हैं तो हमें अत्यधिक संतोष और आनन्द होते हैं कि—भगवान् हमारे निकट आके आये।

हे करीगर ! इसछिये घर में रहना संसर्गों से भरा है राग का मार्ग है। प्रजन्मा लुके आकाश के समान है। हे करीगर ! तुम्हें अब प्रमाद-रहित हो-जाना चाहिये।

मन्ते ! इस संसर्ग से बड़ा-बड़ा दूसरा भीर संसर्ग है।

हे करीगर ! इस संसर्ग से बड़ा-बड़ा दूसरा भीर क्या संसर्ग है ?

मन्ते ! अब कोशकराज प्रसेनजित् हुआ खाने निकलना चाहते हैं। तब हम राजा की सवारी के हाथी को छात्र उगड़ी छात्रकी प्यारी रात्रियों को आने-नीचे बैठ देते हैं। मन्ते ! अब भगिनियों का पूसा गन्ध हाता है किन्तु कोई सुगन्धियों की पिठारी कोक ही गई हो ऐसे गन्ध से वे रात्र-कन्यायें विभूषित होती हैं। मन्ते ! अब भगिनियों के करीर का संस्पर्श पूसा (कोमक) होता है जैसे किसी रुई के कपड़े का ऐसा सुख से वे पोसी-पाकी गई हैं।

मन्ते ! अब समय हाथी को भी सम्हालना होता है। उन बज्रियों को भी सम्हालना होता है और अपने को भी सम्हालना होता है। मन्ते ! हम अब भगिनियों के प्रति पापमय चित्त उत्पन्न नहीं कर सकते हैं। मन्ते ! यही उस संसर्ग से बड़ा-बड़ा दूसरा भीर संसर्ग है।

हे करीगर ! इसछिये घर में रहना संसर्गों से भरा है राग का मार्ग है। प्रजन्मा लुके आकाश के समान है। हे करीगर ! तुम्हें अब प्रमाद-रहित हो-जाना चाहिये।

हे करीगर ! चार बर्गों से युक्त होने से आपेधावक सोतापक होता है । किन् चार से ?

हे करीगर ! आपेधावक बुद्ध के प्रति दण्ड भडा । चर्म के प्रति । संघ के प्रति । श्रेष्ठ और सुन्दर सीधों से युक्त ।

हे करीगर ! तुम काग बुद्ध के प्रति दण्ड भडा म युक्त । चर्म के प्रति । संघ के प्रति । श्रेष्ठ और सुन्दर सीधों से युक्त हो।

हे करीगर ! तो क्या समझते हो कोशक म राज-संविभाग में तुम्हारे समान कितने मनुष्य हैं !

मन्ते ! हम लोगों को क्या काम हुआ सुकाम हुआ कि भगवान् हमें ऐसा समझने हैं ?

### § ७ बेलुदरिय्य सुत्त ( ५३ १ ७ )

#### गाईं-रूप धम्म

येमा मीके सुवा ।

एक समय भगवान् कादास में चारिका करते हुए बड़े मिशु-संघ के साथ जहाँ कोशलों का पालुदान नामक आश्रम-भाग है वहाँ पहुँचे।

बेलुदार के आश्रम गृहपरिषदों के सुवा—साम्ब पुत्र समय शीतल शरीर-पुत्र से प्रकथित हो कोशक में चरिका करने लगे बड़े मिशु संघ के साथ बेलुदार में पहुँचे हुए हैं। अब भगवान् धीरम की ऐसी अचड़ी कीर्ति कीनी हुई है—येमे से भगवान् जहैन् मग्गल-संभुद्ध । वे देवताओं ने साथ जग के

साथ लोको को स्वयं ज्ञान से जान और साक्षात्कार कर उपदेश कर रहे हैं। वे धर्म का उपदेश करते हैं—आदि कल्याण, मध्य-कल्याण। ऐसे अर्हत्तों का दर्शन बड़ा अच्छा होता है।

तब, वेलुद्वार के वे ब्राह्मण गृहपति जहाँ भगवान् थे वहाँ गये। जाकर, कुछ भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये, कुछ भगवान् से कुशल-श्रेम पूछ कर एक ओर बैठ गये, कुछ भगवान् की ओर हाथ जोड़ कर एक ओर बैठ गये, कुछ भगवान् के पास अपने नाम और गोत्र सुना कर एक ओर बैठ गये, कुछ चुप-चाप एक ओर बैठ गये।

एक ओर बैठ, वेलुद्वार के वे ब्राह्मण गृहपति भगवान् से बोले, “हे गौतम! हम लोगों को यह कामना=अभिप्राय है—हम लड़के-बाले के झगड़ में पड़े रहते हैं, काशी के चन्दन का प्रयोग करते हैं, माला, गन्ध और लेप को धारण करते हैं, सोना-चाँदी के लोभ में रहते हैं, सो हम मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होवें। हे गौतम! अतः, हमें ऐसा धर्मोपदेश करें कि हम मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होवें।

हे गृहपति! आपकी आत्मोपनायिक धर्म की बात का उपदेश करूँगा, उसे सुनें।

“भगवान् बोले, “गृहपति! आत्मोपनायिक धर्म की बात क्या है?

गृहपति! आर्यश्रावक ऐसा चिन्तन करता है—मैं जीना चाहता हूँ, मरना नहीं चाहता, सुख पाना चाहता हूँ, दुःख से दूर रहना चाहता हूँ। ऐसे मुझको जो जान से मार दे वह मेरा प्रिय नहीं होगा। यदि मैं भी किसी ऐसे दूसरे को जान से मारूँ तो उसे भी वह प्रिय नहीं होगा। जो बात हमें अभिय है वह दूसरे को भी वैसा ही है। जो हमें स्वयं अभिय है उसमें दूसरे को हम कैसे डाल सकते हैं।

वह ऐसा चिन्तन कर अपने स्वयं जीव-हिंसा से विरत रहता है, दूसरे को भी जीव-हिंसा से विरत रहने का उपदेश करता है, जीव हिंसा से विरत रहने की बड़ाई करता है। इस प्रकार का आचरण शुद्ध होता है।

गृहपति! फिर भी, आर्यश्रावक ऐसा चिन्तन करता है—यदि कोई मेरा कुछ खुरा ले तो वह मुझे प्रिय नहीं होगा। यदि मैं भी किसी दूसरे का कुछ खुरा लूँ तो वह उसे प्रिय नहीं होगा। चोरी से विरत रहने की बड़ाई करता है। इस प्रकार उसका कायिक आचरण शुद्ध होता है।

गृहपति! फिर भी, आर्यश्रावक ऐसा चिन्तन करता है—यदि कोई मेरी स्त्री के साथ व्यभिचार करे तो वह मुझे प्रिय नहीं होगा। पर-स्त्री गमन से विरत रहने की बड़ाई करता है।

यदि कोई मुझे झूठ कहकर ठग दे तो मुझे वह प्रिय नहीं होगा। झूठ से विरत रहने की बड़ाई करता है। इस प्रकार, उसका वाचसिक आचरण शुद्ध होता है।

यदि कोई खुगली खा कर मुझे अपने मित्रों से लड़ा दे तो मुझे वह प्रिय नहीं होगा। इस प्रकार, उसका वाचसिक आचरण शुद्ध होता है।

यदि कोई मुझे कुछ कठोर बात कह दे तो वह मुझे प्रिय नहीं होगा।

यदि कोई मुझसे बर्षा बर्षा बातें बनाये तो वह मुझे प्रिय नहीं होगा। बातें बनाने से विरत रहने की बड़ाई करता है। इस प्रकार, उसका वाचसिक आचरण शुद्ध होता है।

बढ़ बुद्ध के प्रति हृद् अद्वा से युक्त होता है। धर्म के प्रति। सध के प्रति। श्रेष्ठ और सुन्दर शीलों से युक्त।

गृहपति! जो आर्यश्रावक इन सात खड्डनों से और इन चार श्रेष्ठ स्थानों से युक्त होता है, वह यदि चाहे तो अपने अपने विषय में ऐसा कह सकता है—मेरा निरय ( =नरक ) क्षीण हो गया, मेरी तिरस्कीनयोनो क्षीण हो गई, मेरा प्रेत-लोक में जन्म लेना क्षीण हो गया, मेरा नरक में पड़ कर दुर्गति को प्राप्त होना क्षीण हो गया। मैं स्रोतापन्न हूँ परम-ज्ञान प्राप्त करना अवश्य है।

बह कहने पर बेलुहार के आक्षेप गृहपति भगवान् से बोले 'हे शीतम ! मुझे अपना उपासक स्वीकार करें ।

### ४८ पठम गिञ्जकावसथ सुत्त ( ५३. १. ८ )

#### धर्मादर्श

एक समय भगवान् आसिक में गिञ्जकावसथ में विहार कर रहे थे ।

तब आपुष्पाद् आत्मन्द् बहों भगवान् से बहों आये और बोले "मन्ते ! साग्ग नाम का मित्रु मर गया है, उसकी अब क्या गति होगी ? मन्ते ! मग्गा नाम की एक मित्रुणी मर गई है, उसकी अब क्या गति होगी ? मन्ते ! सुदत्त नाम का उपासक मर गया है, उसकी अब क्या गति होगी ? मन्ते ! सुजाता नाम की उपासिका मर गई है, उसकी अब क्या गति होगी ?"

आत्मन्द् ! साग्ग नाम का जो मित्रु मर गया है वह आद्यर्षों के क्षय हो जाने से अनासब पितृ धर प्रज्ञा की विभुक्ति को स्वर्ग जात्र साक्षात्कार और प्राप्त कर किया है । आत्मन्द् ! मग्गा नाम की मित्रुणी का मर गई है वह पाँच नीचे के संयोगों के क्षय हो जाने से धीपपासिक हो उस भोक से शिरा छूटे बहीं परिशिर्षाय पायेगी । आत्मन्द् ! सुदत्त नाम का जो उपासक मर गया है वह तीन संयोगों के क्षय हो जाने से तथा राग-द्वेष और मोहके अत्यन्त दुर्बल हो जाने से सकृदागामी हो इस संसार में केवल एक पार जन्म लेकर दुर्गों का भय करेगा । आत्मन्द् ! सुजाता नाम की जो उपासिका मर गई है वह तीन संयोगों के क्षय हो जाने से जोतापक हो गई है ।

आत्मन्द् ! यह शीत बहों कि जो कोई मनुष्य मरे उसके मरने पर तत्पाप के पास आकर इस बात की पूजा जाय । आत्मन्द् ! इसलिये मैं तुम्हें धर्मादर्श नामक धर्म का उपदेश करूँगा जिससे पुत्र हो आर्यभ्रातृक यदि चाहे तो अपने विषय में ऐसा कह सकता है—मेरा निरप धीय हो गया । मैं जोतापक हूँ परमज्ञान प्राप्त करना चाहय्य है ।

आत्मन्द् ! वह धर्मादर्श नामक धर्म का उपदेश क्या है ?

आत्मन्द् ! आर्यभ्रातृक तुह के प्रति एक अर्थात् ।

धर्म के प्रति\*\* ।

धर्म के प्रति ।

भेद और सुन्दर शीलों से ।

आत्मन्द् ! धर्मादर्श नामक धर्म का उपदेश बहों है जिससे पुत्र हो आर्यभ्रातृक यदि चाहे तो अपने विषय में ऐसा कह सकता है ।

### ४९ दुतिय गिञ्जकावसथ सुत्त ( ५३. १. ९ )

#### धर्मादर्श

[ विज्ञान—उपर ईला ही ]

एक बार बौद्ध आपुष्पाद् आत्मन्द् भगवान् से बोले "मन्ते ! अग्गा नाम का मित्रु मर गया है, उसकी अब क्या गति होगी ? मन्ते ! अग्गा नाम की मित्रुणी मर गई है ? मन्ते ! अग्गे नाम का उपासक ? मन्ते ! अग्गा नाम की उपासिका ?"

---[ उपरवाके सूत्र के देखा ही कता मेरा चाहिये ]

§ १०. ततिय गिञ्जकावसथ सुत्त ( ५३. १. १० ).

धर्मादर्श

[ निदान—ऊपर जैसा ही ]

एक ओर बैठ, आयुष्मान् आनन्द भगवान् से बोले, “भन्ते ! जातिक में कक्कट नाम का उपासक मर गया है ? भन्ते ! जातिक में कालिङ्ग, निकत, कटिस्सह, तुट्ट, संतुट्ट, भद्र और सुभद्र नाम के उपासक मर गये हैं, उनकी भव क्या गति होगी ?

आनन्द ! जातिक में कक्कट नाम का जो उपासक मर गया है, वह नीचे के पाँच संयोजनों के क्षय हो जाने से औपपातिक हो उस लोक से बिना लौटे वहीं परिनिर्वाण पा लेगा । [ इसी तरह सभी के साथ समझ लेना ]

आनन्द ! जातिक में पचास से भी ऊपर उपासक मर गये हैं, जो नीचे के पाँच संयोजनों के क्षय... आनन्द ! जातिक में नब्बे से भी अधिक उपासक मर गये हैं, जो तीन संयोजनों के क्षय हो जाने, तथा राग, द्वेष और मोह के अत्यन्त दुर्बल हो जाने से सल्लुदागामी । आनन्द ! जातिक में पाँच तौ से अधिक उपासक मर गये हैं, जो तीन संयोजनों के क्षय हो जाने से खोतापन्न ।

आनन्द ! यह ठीक नहीं, कि जो कोई मनुष्य मरे, उसके मरने पर तथगत के पास आकर इस बात को पूछा जाय । ... [ ऊपर जैसा ही ]

बेलुद्वार वर्ग समाप्त

## दूसरा भाग

### सहस्रक वर्ग

§ १ सहस्र सुच ( ५३ २ १ )

आर वातों से श्रोतापत्र

एक समय भगवान् श्रावस्ती में राजकार्यालय में विहार करते थे ।

तब, सहस्र मिश्रणी-संब वहाँ भगवान् थे वहाँ जावा भीर भगवान् को जमिबादल कर एक और राजा हो गया ।

एक और एकी उग मिश्रणियों स भगवान् बोले 'मिश्रणियों ! आर धर्मों स युक्त होने से आप्र श्रावक श्रोतापत्र होता है । किन आर स ?

हुय के प्रति । धर्म के प्रति । रथ के प्रति । श्रेष्ठ भीर सुन्दर शीकों से युक्त ।  
मिश्रणियों ! इन्हीं आर धर्मों से युक्त होने स आर्षभ्रावक श्रोतापत्र होता है ।

§ २ श्रावण सुच ( ५३ २ २ )

उत्पगामी-मार्ग

श्रावणनी जतपन ।

मिश्रणों ! श्रावण कोश उत्पगामी-मार्ग पर उपदेश करते हैं । वे अपने श्रावणों को कहते हैं—  
सुनो बहुत बड़े उदकर पूरक की लीर काशी, बीच में पबनबाली ईर्षी-बीबी भूमि प्यार्ड हुंड कटीकी  
पगड गबड़े का लोके से बचकर मत निरको । वहाँ गिरते वहाँ सुन्दारी म्हाणु हो जायगी । इय मकार,  
मरने के बाद हम स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होंगे ।

मिश्रणों ! यह आह्वानों की मूर्च्छता का ज्ञान है । यह स तो निर्बेद के किये न विराग के किये  
न विराग के किये न उपवास के किये न ज्ञान-प्राप्ति के किये भीर स विचार के किये है ।

मिश्रणों ! ई आर्षेवित्त में उत्पगामी-मार्ग पर उपदेश करता हूँ जो विष्णुक निर्बेद के  
किध भीर निर्वास के किये है ।

मिश्रणों ! यह उद्व-शामी मार्ग भील सा है जो विष्णुक निर्बेद के किये ।

मिश्रणों ! आर्षेवित्तक हुड के प्रति दड भद्र ।

धर्म के प्रति ।

संब के प्रति ।

श्रेष्ठ भीर सुन्दर शीकों स युक्त ।

मिश्रणों ! यही यह उत्पगामी मार्ग है जो विष्णुक निर्बेद के किये ।

§ ३ आनन्द सुच ( ५३ २ ३ )

आर वातों स श्रोतापत्र

एक समय अनुष्मान् आनन्द और अनुष्मान् श्राविषुभ श्रावणनी में अनाथपिण्डिक के  
अनाथ जतपन में विहार करते थे ।



तय, आयुष्मान् सारिपुत्र सध्या समय ध्यान से उठ जहाँ आयुष्मान् आनन्द थे वहाँ गये आंर कुशल क्षेम पूछ कर एक ओर बैठ गये ।

एक ओर बैठ, आयुष्मान् सारिपुत्र आयुष्मान् आनन्द से बोले, “आयुस आनन्द ! किन धर्मों के ग्रहण से किन धर्मों से युक्त होने के कारण भगवान् ने किसी को स्रोतापन्न होना बतलाया है ?”

आयुस ! चार धर्मों के ग्रहण से चार धर्मों से युक्त होने के कारण भगवान् ने किसी को स्रोतापन्न होना बतलाया है । किन चार के ?

आयुस ! अज्ञ पृथक्-जन बुद्ध के प्रति जैसी अश्रद्धा से युक्त हो मरने के बाद नरक में पड़ दुर्गति को प्राप्त होता है वैसी बुद्ध के प्रति उसे अश्रद्धा नहीं रहती है । आयुस ! पण्डित आर्यश्रावक बुद्धके प्रति जैसी दृढ़ श्रद्धा से युक्त हो मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होता है, उन्से बुद्ध के प्रति वैसी ही श्रद्धा होती है—ऐसे वह भगवान् अर्हत् ।

धर्म के प्रति ।

सध के प्रति ।

आयुस ! जैसे दु शील से युक्त हो अज्ञ पृथक् जन मरने के बाद दुर्गति को प्राप्त होता है । वैसे दु शील से वह युक्त नहीं होता । जैसे श्रेष्ठ और सुन्दर शीलोंसे युक्त हो पण्डित आर्यश्रावक मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होता है, वैसे ही उसके शील श्रेष्ठ, सुन्दर, अमण्ड ।

आयुस ! इन चार धर्मों के ग्रहण से चार धर्मों से युक्त होने के कारण भगवान् ने किसी को स्रोतापन्न होना बतलाया है ।

### § ४. पठम दुग्गति सुत्त ( ५३ २. ४ )

चार बातों से दुर्गति नहीं

भिक्षुओ ! चार धर्मों से युक्त होने से आर्यश्रावक सभी दुर्गति के भय से बच जाता है । किन चार से ?

### § ५. दुतिय दुग्गति सुत्त ( ५३ २. ५ )

चार बातों से दुर्गति नहीं

भिक्षुओ ! चार धर्मों से युक्त होने से आर्यश्रावक सभी दुर्गति में पड़ने से बच जाता है । किन चार से ?

### § ६. पठम मिच्छेनामच्च सुत्त ( ५३ २. ६ )

चार बातों की शिक्षा

भिक्षुओ ! जिन पर तुम्हारी कृपा हो, तथा जिन किन्हीं मित्र, सलाहकार, या वन्धु-बान्धव को समझो कि यह मेरी बात सुनेंगे, उन्हें स्रोतापत्ति के चार अंगों में शिक्षा दो, प्रवेश करा दो, प्रतिष्ठित कर दो । किन चार में ?

बुद्ध के प्रति ।

### § ७. दुतिय मिच्छेनामच्च सुत्त ( ५३ २. ७ )

चार बातों की शिक्षा

भिक्षुओ ! जिन पर तुम्हारी कृपा हो, तथा जिन किन्हीं मित्र, सलाहकार, या वन्धु-बान्धव को समझो कि यह मेरी बात सुनेंगे, उन्हें स्रोतापत्ति के चार अंगों में शिक्षा दो, प्रवेश करा दो, प्रतिष्ठित कर दो । किन चार में ?

बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा रखने में शिक्षा दो, —ऐसे वह भगवान् अर्हत् । पृथ्वी आदि चार धानुओं में भले ही कुछ धेर-फेर हो जाय, किन्तु बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा से युक्त आर्यश्रावक में कुछ

हेर-हेर नहीं हो सकता है। हेर-हेर होगा यह है कि पुत्र के प्रति एक अन्दा में पुत्र आवेभावक तक में उत्पन्न हो जाय या तिरस्कीन-बोधि में, या प्रत-योधि में। ऐसा बनी ही नहीं सकता।

धर्म के प्रति ।

संघ के प्रति ।

श्रेष्ठ और सुन्दर चीकों में शिक्षा हो ।

मिथुनो । त्रिन पर सुन्दरी कृपा हो तथा त्रिन चिन्तीं त्रिन सम्पन्नकार या बन्धुबन्धन को समझो कि यह मेरी बात सुनो मैं उन्हें बोधापति के इव धार अंग में शिक्षा हो, प्रवेश करा दो, प्रति दित कर दो ।

- § ८ षष्ठम देवचारिक सुच ( ५३ ० ८ )

पुत्र-भक्ति से स्वर्ग-प्राप्ति

ध्यायस्ती जेतयन ।

एक आधुप्यान् महा-मोग्गखान वीम जोई बसवान् पुरुष समझी बाई को पत्नार दे और पत्नारी बाई को समेर क वीम जेतयन में अन्तर्धान हो त्रयस्त्रिंशदा देवकोक में प्रकट हुये ।

एक अचक्रिणा के कुञ्ज देवता जहाँ आधुप्यान् मोग्गखान थे वहाँ आय और प्रमान् कर एक और पड़े हो गये । एक और एवै उन देवता से आधुप्यान् महा-मोग्गखान बोके 'आधुस ! पुत्र के प्रति एक अन्दा का होना क्या अच्छा है—ऐस यह भगवान् जाईए । आधुस ! पुत्र के प्रति एक अन्दा से पुत्र होने से कितने प्राणी मरने के बाद स्वर्ग में उत्पन्न हो सुगति को प्राप्त होते हैं ।

धर्म के प्रति ।

संघ के प्रति ।

श्रेष्ठ और सुन्दर चीकों से पुत्र ।

मारिस मोग्गखान ! टीक है, आप टीक करते हैं कि पुत्र के प्रति एक अन्दा सुगति को प्राप्त होते हैं ।

धर्म के प्रति ।

संघ के प्रति ।

श्रेष्ठ और सुन्दर चीकों से पुत्र ।

§ ९ इतिय देवचारिक सुच ( ५३ २ ९ )

पुत्र-भक्ति से स्वर्ग-प्राप्ति

एक समय आधुप्यान् महा-मोग्गखान ध्यायस्ती में अनाद्यपिच्छिक के आराम जेतयन में विहार करते थे ।

एक आधुप्यान् महा-मोग्गखान 'त्रयस्त्रिंशदा देवकोक में प्रकट हुये । [ ऊपर वीसा ही ]

§ १० ततिय देवचारिक सुच ( ५३ २ १० )

पुत्र-भक्ति से स्वर्ग-प्राप्ति

एक भगवान् जेतयन में अन्तर्धान हो त्रयस्त्रिंशदा देवकोक में प्रकट हुये ।

एक और जहाँ उन देवता से भगवान् बोके—आधुस ! पुत्र के प्रति एक अन्दा का होना क्या अच्छा है । आधुस ! पुत्र के प्रति एक अन्दा से पुत्र होने से कितने लोग लोत्तापन्न होते हैं ।

धर्म- । संघ । श्रेष्ठ और सुन्दर चीक ।

मारिस ! टीक है ।

सहस्रक वर्ग सम्राट

## तीसरा भाग

### सरकानि वर्ग

§ १. षष्ठम महानाम सुत्त ( ५३ ३. १ )

भावित चित्तवाले की निष्पाप मृत्यु

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय भगवान् शाक्य ( जनपद ) में कपिलवस्तु के निजोधाराम में विहार करते थे ।

तब, महानाम शाक्य जहाँ भगवान् थे वहाँ आया, और भगवान् को अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया ।

एक ओर खड़ा हो, महानाम शाक्य भगवान् से बोला, “भन्ते ! यह कपिलवस्तु बड़ा समृद्ध, उत्तमिशील, गुलजार और गुब्जान है । भन्ते ! तो भी भगवान् या अच्छे-अच्छे भिक्षुओं का सत्संग करने के बाद जब मैं सायंकाल कपिलवस्तु को लौटता हूँ तब न तो किसी हाथी से मिलता हूँ, न घोड़ा से, न रथ से, न पैलगाड़ी से, और न किसी पुरुष से । भन्ते ! उस समय मुझे भगवान् का ख्याल चला जाता है, धर्म का ख्याल चला जाता है, सब का ख्याल चला जाता है । भन्ते ! उस समय मेरे मन में होता है—यदि मैं इस समय मर जाऊँ तो मेरी क्या गति होगी ?

महानाम ! मत डरो, मत डरो ॥ तुम्हारी मृत्यु निष्पाप होगी । महानाम ! जिसने दीर्घकाल से अपने चित्त को श्रद्धा में भावित कर लिया है, शील में भावित कर लिया है, विद्या में भावित कर लिया है, त्याग में भावित कर लिया है, प्रज्ञा में भावित कर लिया है, उसका जो यह स्थूल शरीर, चार महा-भूतों का बना, माता-पिता के संयोग से उत्पन्न, भात-ढाल खा कर पला पोसा है उसे यहाँ कौवे, गीध, चीलें, कुत्ते, सिंघार और भी कितने प्राणी ( नोंच-नोंच कर ) खा जाते हैं, किन्तु उसका जो दीर्घकाल से भावित चित्त है उसकी गति कुठ और ( ऊर्ध्वगामी, विशेषगामी ) ही होती है ।

महानाम ! जैसे, कोई घी या तेल के एक घड़े को गहरे पानी में डुबा कर फोड़ दे । तब, उसमें जो टिकड़े-ककड़ हैं वे नीचे बैठ जायेंगे, और जो घी या तेल है वह ऊपर चला आवेगा ।

महानाम ! वैसे ही, जिसने दीर्घकाल से अपने चित्त को श्रद्धा में भावित कर लिया है ।

महानाम ! तुमने दीर्घकाल से अपने चित्त को श्रद्धा में भावित कर लिया है, शील में, विद्या में, त्याग में, प्रज्ञा में भावित कर लिया है । महानाम ! मत डरो ॥ मत डरो ॥ तुम्हारी मृत्यु निष्पाप होगी ।

§ २. दुतिय महानाम सुत्त ( ५३ ३ २ )

निर्वाण की ओर अग्रसर होना

[ ऊपर जैसा ही ]

महानाम ! मत डरो ॥ मत डरो ॥ तुम्हारी मृत्यु निष्पाप होगी । महानाम ! चार धर्मों से युक्त होने से आर्षभ्रावक निर्वाण की ओर अग्रसर होता है । किंच चार से ?

बुद्ध के प्रति । धर्म । संघ । श्रेष्ठ भीरु सुम्बर शीक ।

महानाम ! कोई ब्रह्म हो जो एतद् भीरु सुम्बर हो । तब वह से काठ देने पर वह किस ओर गिरेगा ?

भन्ते ! किस ओर वह सुम्बर है ।

महानाम ! जैसे ही चार धर्मों से युक्त होने से आर्यभ्रातृक निर्वाण की ओर अप्रसर होता है ।

५३ गोच सुत्त ( ५३, ३, ३ )

गोष्ठा उपासक की बुद्ध भक्ति

कपिलवस्तु ।

तब महानाम शाक्य वहाँ गोष्ठा शाक्य था वहाँ गया । जाकर गोष्ठा शाक्य से बोका है गोथे । किसने धर्मों से युक्त होने से तुम किसी मनुष्य को जोतापन्न होना समझते हो ?

महानाम ! तीन धर्मों से युक्त होने से मैं किसी मनुष्य को जोतापन्न होना समझता हूँ । किन्तु तीन न ।

महानाम ! आर्यभ्रातृक बुद्ध के प्रति एक ब्रह्मा से युक्त होता है—एक वह भगवान् । धर्म के प्रति । संघ के प्रति ।

महानाम ! इन्हीं तीन धर्मों से युक्त होने से ।

महानाम ! तुम किसने धर्मों से युक्त होने से किसी को जोतापन्न समझते हो ?

गोथे ! चार धर्मों से युक्त होने से मैं किसी को जोतापन्न होना समझता हूँ । किन्तु चार से ।

गोथे ! आर्यभ्रातृक बुद्ध के प्रति एक ब्रह्मा ।

धर्म के प्रति ।

संघ के प्रति ।

श्रेष्ठ भीरु सुम्बर शीकों से युक्त ।

गोथे ! इन्हीं चार धर्मों से युक्त होने से मैं किसी को जोतापन्न होना समझता हूँ ।

महानाम ! इन्हो ठहरो !! भगवान् ही बतायेंगे कि इन धर्मों से युक्त होने से या नहीं होने से ।

हैं गोथे ! वहाँ भगवान् है वहाँ हम जैसे चार ब्रह्म को भगवान् से पूछें ।

तब महानाम शाक्य भीरु गोष्ठा शाक्य वहाँ भगवान् ने वहाँ आये भीरु भगवान् का प्रतिपादन कर एक ओर बैठ गये ।

एक ओर बैठ महानाम शाक्य भगवान् से बोका 'भन्ते ! वहाँ गोष्ठा शाक्य था वहाँ मैं गया भीरु बोका — 'गोथे ! किसने धर्मों से युक्त होने से तुम किसी को जोतापन्न होना समझते हो' ?

[ ऊपर की सारी बात ]" इन्हो ठहरो !! भगवान् ही बतायेंगे कि इन धर्मों से युक्त होने से या नहीं होने से ।

भन्ते ! यदि कोई धर्म की बात उठे भीरु धर्मों भगवान् एक ओर ही जायें और सिद्ध-संघ एक ओर तो भन्ते ! मैं ऊपर ही रहूँगा जिब भगवान् है; मैं भगवान् के प्रति इतना भद्राहू हूँ ।

"भन्ते ! यदि कोई धर्म की बात उठे भीरु धर्मों भगवान् एक ओर ही जायें और सिद्ध-संघ एक ओर, तो भन्ते ! मैं ऊपर ही रहूँगा जिब भगवान् है; मैं भगवान् के प्रति इतना भद्राहू हूँ ।

भन्ते ! यदि एक ओर भगवान् हो जायें और एक ओर सिद्ध-संघ सिद्ध-संघ तथा सभी उपासक ।

भन्ते ! यदि एक ओर भगवान् ही जायें और एक ओर सिद्ध-संघ सिद्ध-संघ सभी उपासक तथा उपासिकायें ।

भन्ते ! यदि एक ओर भगवान् हो जायें और एक ओर भिक्षु-सघ, भिक्षुणी-संघ, सभी उपासक, उपासिकायें, तथा देव-मार-नागा के साथ यह लोक, और देवता, मनुष्य, श्रमण तथा प्राणि ।

गंधे ! सो तुमने इस प्रकार का विचार रगते हुए महानाम शाक्य को क्या कहा ?

भन्ते ! मैंने महानाम शाक्य को कायाण और पुनल छोड़ कर कुछ नहीं कहा ?

## § ४ पठम सरकानि सुत्त ( ५३. ३. ४ )

सरकानि शाक्य का स्रोतापन्न होना

कापिलवस्तु ।

उस समय सरकानि शाक्य मर गया था, और भगवान् ने उसके स्रोतापन्न हो जाने की बात कह दी थी—

यहाँ, कुछ शाक्य इकट्ठे होकर चिढ़ रहे थे, गिरसिया रहे थे, और विरोध कर रहे थे—आश्रय है रे, अद्भुत है रे, आज्ञाएँ भी कोई यहाँ क्या स्रोतापन्न होगा ! कि सरकानि शाक्य मर गया है, और भगवान् ने उसके स्रोतापन्न हो जाने की बात कह दी है । सरकानि शाक्य तो धर्मपालन में बड़ा व्यर्थ था, मदिरा भी पीता था ।

तब, एक ओर उठ, महानाम शाक्य भगवान् से बोला, “भन्ते ! .. यहाँ कुछ शाक्य इकट्ठे होकर चिढ़ रहे हैं, गिरसिया रहे हैं, और विरोध कर रहे हैं ।”

महानाम ! जो उपासक दीर्घकाल से बुद्ध की शरण में आ चुका है, धर्म की , और सघ की शरण में आ चुका है, उसकी घुरी गति कैसे हो सकती है !

महानाम ! यदि कोई सच कहना चाहे तो कहेगा कि सरकानि शाक्य दीर्घकाल से बुद्ध की शरण में आ चुका था, धर्म की , और सब की ।

महानाम ! कोई पुरुष बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा से युक्त होता है—ऐसे वह भगवान् अर्हत् । धर्म के प्रति । सघ के प्रति । श्रेष्ठ प्रज्ञा और विमुक्ति से युक्त होता है । वह आश्रयों के क्षय हो जाने से अनाश्रय चित्त और प्रज्ञा की विमुक्ति को देखते ही देखते स्वयं जान, साक्षात्कार कर और प्राप्त कर विहार करता है । महानाम ! वह पुरुष नरक में मुक्त होता है, तिरश्चीन ( =पशु ) योनि से मुक्त होता है ।

महानाम ! कोई पुरुष बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा से युक्त होता है—ऐसे वह भगवान् अर्हत् । धर्म के प्रति । सब के प्रति । श्रेष्ठ प्रज्ञा से युक्त होता है, किन्तु विमुक्ति से युक्त नहीं होता है । वह नीचे के पाँच बन्धनों के क्षय हो जाने से आपपातिक होता है । महानाम ! वह पुरुष भी नरक से मुक्त होता है ।

महानाम ! कोई पुरुष बुद्ध के प्रति । धर्म के प्रति । सघ के प्रति । किन्तु न तो श्रेष्ठ प्रज्ञा से युक्त होता है और न विमुक्ति से । वह तीन संयोजनों के क्षय हो जाने तथा राग-द्वेष-मोह के अत्यन्त दुर्बल हो जाने से सकृदानामी होता है, एक बार हम लोक में जन्म लेकर दुःखों का भन्त कर लेता है । महानाम ! वह पुरुष भी नरक से मुक्त होता है ।

महानाम ! किन्तु, न तो श्रेष्ठ प्रज्ञा से युक्त होता है और न विमुक्ति से । वह तीन संयोजनों के क्षय हो जाने से स्रोतापन्न होता है । महानाम ! वह पुरुष भी नरक से मुक्त होता है ।

महानाम ! कोई पुरुष न बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा से युक्त होता है, न धर्म के प्रति, न सघ के प्रति, न श्रेष्ठ प्रज्ञा से युक्त होता है, और न विमुक्ति से । किन्तु, उसे यह धर्म होते हैं—ब्रह्मिन्द्रिय, धर्मिन्द्रिय, स्तुतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय, प्रज्ञेन्द्रिय । बुद्ध के बताये धर्मों को वह बुद्धि से कुछ समझता है । महानाम ! वह पुरुष नरक में नहीं पड़ेगा, तिरश्चीन योनि में नहीं पड़ेगा ।

महात्मा ! किन्तु, वैसे यह धर्म हाते हैं—अद्वैतियत्र 'सुख के प्रति उसी कुछ प्रेम = भ्रष्टा हाती है । महात्मा ! वह पुण्य भी नरकमें नहीं पहुँचा' ।

महात्मा ! यदि वह बड़े-बड़े बुद्ध भी सुमायिग और दुर्भाषित को समझत तो मैं इन्हें भा खोतापन्न होना चाहता' । सरकानि शाक्यका ता कहना ही क्या ! महात्मा ! सरकानि शाक्य ने मरते समय धर्मको प्रहण किया था ।

### § ५ दुतिय सरकानि सुख ( ५३ ३ ५ )

नरक में न पहुँचनेवाले उपकि  
कपिसुखस्तु ।

[ ऊपर जैसा ही ]

तब एक जोर बंद महात्मा शाक्य भगवान्से बोला— भग्ने ! कुछ शाक्य हकट्टे होकर फिर रहे हैं ।

महात्मा ! जो बुद्धके प्रति एव भ्रष्टा धर्म संघ उसकी गति तुरी कैस हो सकती है ?

महात्मा ! कोई पुण्य बुद्धके प्रति अल्पन्त भ्रष्टालु हाता है—ऐसे वह भगवान् । वह नरकसे मुक्त हो गया है' ।

महात्मा ! कोई पुण्य बुद्धके प्रति अल्पन्त भ्रष्टालु हाता है धर्मके प्रति सबके प्रति भ्रष्ट प्रज्ञा और विमुक्ति से मुक्त होता है वह नीचके पाँच वर्णवर्गोंके कट जानेसे नीच ही में परिवर्तन वा केनेवाला होता है । अपहण्य-परिवर्तनीयक हाता है । संस्कार-परिवर्तनीयक हाता है अस्वरपर परिवर्तनीयक हाता है । कर्षकोत 'अकविहगामीक हाता है । महात्मा ! वह पुण्य भी नरक से मुक्त होता है ।

महात्मा ! कोई पुण्य बुद्ध के प्रति अल्पन्त भ्रष्टालु हाता है धर्म के प्रति संघ के प्रति किन्तु न तो भ्रष्ट प्रज्ञा और न विमुक्ति से मुक्त होता है वह तीन संबोधनों के लक्ष हो जाने से तथा राग द्वेष और मोह के अल्पन्त दुर्बल हो जाने से संकृपागामी हाता है । महात्मा ! वह पुण्य भी नरक से मुक्त होता है ।

महात्मा ! कोई पुण्य बुद्ध के प्रति अल्पन्त भ्रष्टालु हाता है धर्म के प्रति संघ के प्रति किन्तु न तो भ्रष्ट प्रज्ञा और न विमुक्ति से मुक्त होता है वह तीन संबोधनों के लक्ष होने से खोतापन्न होता है । महात्मा ! वह पुण्य भी नरक से मुक्त होता है ।

महात्मा ! कोई पुण्य बुद्ध के प्रति अल्पन्त भ्रष्टालु नहीं हाता, न धर्म के प्रति न संघ के प्रति किन्तु उस यह धर्म होते हैं—अद्वैतियत्र । महात्मा ! वह पुण्य भी नरक में नहीं पहुँचा है ।

महात्मा ! न विमुक्ति से मुक्त होता है किन्तु उसे यह धर्म और बुद्ध के प्रति उसे कुछ भ्रष्टा-मेस रहता है महात्मा ! वह पुण्य भी नरक में नहीं पहुँचा है ।

महात्मा ! जैसे कोई डूरी बसील हो जिसमें चास-पीने साक नहीं किंच गद हों और नीच भी हुरे हों सबै-गळे हवा और रूप में सुख गवे खार-रहित भी सख में जगाये नहीं वा सकते हैं । पापी भी डीक से नहीं बरसत । तो क्या वह नीच जगत्तर बनने पावेंगे ? नहीं भग्ने !

महात्मा ! जैसे ही यदि धर्म डूरी तरह कटा गया हो (= दुराक्यात ) तुरी तरह जगाया गया हो निर्वाण की धीर के जानेवाला नहीं हो ( राग द्वेष और मोह के ) अपधर्म के छिपू नहीं हो, तथा असम्बन्ध-सम्बुद्ध सं प्रद्वैतित हो तो उसे मैं तुरी बसील बघाता हूँ । उस धर्म के अनुसार डीक से कटनेवाले भी आसक है उम्हें ही तुरे नीच बघाता हूँ ।

७ इन शब्दों की व्याख्या के लिये देखी ५१ २ ५ पृष्ठ ७१४ ।

महानाम ! जैसे, कोई अच्छी जमीन हो, जिसमें घास-पौधे साफ कर दिये गये हों, और बीज भी अच्छे पुष्ट हों, न सड़े-गले, न हवा और धूप में सूख गये, सारयुक्त, जो सहज में लगाये जा सकते हों । पानी भी ठीक से बरसे । तो, क्या वह बीज उगकर बढ़ने पायेंगे ?

हाँ भन्ते !

महानाम ! वैसे ही, यदि धर्म अच्छी तरह कहा गया हो (= स्वाध्याय), अच्छी तरह बतया गया हो, निर्वाणकी ओर ले जानेवाला हो, उपशम के लिए हो, तथा सम्यक्-सम्बुद्ध से प्रवेदित हो, तो उसे मैं अच्छी जमीन बताता हूँ । उस धर्म के अनुसार ठीक से चलनेवाले जो श्रावक हैं, उन्हें मैं अच्छे बीज बताता हूँ ।

महानाम ! सरकानि शाक्य ने मरने के समय धर्म को पूरा कर लिया था ।

## ६. पठम अनाथपिण्डक सुत्त ( ५३. ३ ६ )

### अनाथपिण्डक गृहपति के गुण

श्रावस्ती जेतवन ।

उस समय, अनाथपिण्डक गृहपति बड़ा बीमार पड़ा था ।

तब, अनाथपिण्डक गृहपति ने एक पुरुष को आमन्त्रित किया, सुनो, जहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र हैं वहाँ जाओ और मेरी ओर से उनके चरणों पर शिर से वन्दना करना—भन्ते ! अनाथपिण्डक गृहपति बड़ा बीमार पड़ा है, सो आयुष्मान् सारिपुत्र के चरणों पर शिर से वन्दना करता है । और, यह कहो—भन्ते ! यदि अनुकम्पा करके आयुष्मान् जहाँ अनाथपिण्डक गृहपति का घर है वहाँ चलते तो यही अच्छी बात होती ।

“भन्ते ! बहुत अच्छा” कह, वह पुरुष ।

आयुष्मान् सारिपुत्र ने चुप रहकर स्वीकार कर लिया ।

तब, आयुष्मान् सारिपुत्र पूर्वाह्न समय, पहन और पात्र-चीवर ले आयुष्मान् आनन्द को पीछे कर जहाँ अनाथपिण्डक गृहपति का घर था वहाँ गये, और बिछे आसन पर बैठ गये ।

बैठकर, आयुष्मान् सारिपुत्र अनाथपिण्डक गृहपति से बोले, “गृहपति ! आप की तत्रियत्त ?” भन्ते ! मेरी तत्रियत्त अच्छी नहीं ।

गृहपति ! अज्ञ प्रथक्-जन बुद्ध के प्रति जिस श्रद्धा से युक्त होकर मरने के बाद नरक में उत्पन्न हो दुर्गति को प्राप्त होता है, वैसी श्रद्धा आप में नहीं है, बरिक्त गृहपति आपको बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा है—ऐसे वह भगवान् । बुद्ध के प्रति उस दृढ़ श्रद्धा को अपने में देखते हुए वेदना को शान्त करें ।

गृहपति ! धर्म के प्रति उस दृढ़ श्रद्धा को अपने में देखते हुए वेदना को शान्त करें ।

गृहपति ! सधके प्रति ।

गृहपति ! अज्ञ प्रथक्-जन जिस दुर्गति में युक्त होकर मरने के बाद नरक में ; बरिक्त, गृहपति ! आप श्रेष्ठ और सुन्दर शीलों से युक्त हैं । उन श्रेष्ठ और सुन्दर शीलों को अपने में देखते हुए वेदना में देखते हुए वेदना को शान्त करें ।

गृहपति ! अज्ञ प्रथक्-जन निमि मिश्रा-दृष्टि से युक्त, बरिक्त गृहपति ! आपको सम्यक्-दृष्टि है । उस सम्यक्-दृष्टि को अपने में देखते हुए ।

उस सम्यक्-सकलप को अपने में देखते हुए ।

उस सम्यक्-वाचा को अपने में देखते हुए ।

उस सम्यक्-कर्मान्त को अपने में देखते हुए ।

इस सम्बन्ध-आधीन को अपने में देखते हुए ।  
 इस सम्बन्ध-व्यापाम को अपने में देखते हुए ।  
 इस सम्बन्ध-सृष्टि को अपने में देखते हुए ।  
 इस सम्बन्ध-समाधि को अपने में देखते हुए ।

गृहपति ! अज्ञ प्रथम्-जन जिस सिन्धा-ज्ञान से युक्त ; बहिरु गृहपति ! आप को सम्बन्ध-ज्ञान है । इस सम्बन्ध-ज्ञान को अपने में देखते हुए ।

गृहपति ! अज्ञ प्रथम्-जन जिस सिन्धा-विमुक्ति से युक्त ; बहिरु गृहपति ! आपको सम्बन्ध-विमुक्ति है । इस सम्बन्ध-विमुक्ति को अपने में देखते हुए ।

तब अनाद्यपिण्डिक गृहपति भी वेदमार्ग प्राप्त हो गई ।

तब अनाद्यपिण्डिक गृहपति ने आपुष्मात् सारियुञ्ज और आपुष्मात् आत्मन् को स्वर्ग-स्वाधीपाक परोसा ।

तब आपुष्मात् सारियुञ्ज के भोजन कर खेने के बाद अनाद्यपिण्डिक गृहपति भी वा आसन ऊपर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठे अनाद्यपिण्डिक को आपुष्मात् सारियुञ्ज ने इन गायार्थों से अनुमोदन किया—

बुद्ध के प्रति जिस अन्नक अज्ञा सुमतिवित्तु है  
 जिसका शीक कल्याणकर अज्ञ सुन्दर और प्रसंसित है ॥ १ ॥  
 संघ के प्रति जिसे अज्ञा है जिसकी समस्त सीमा है  
 उसी को अद्विष्ट कहते हैं उसका अधिपति तत्त्व है ॥ २ ॥  
 इसविषय अज्ञा शीक और स्पष्ट वर्तमान स  
 पवित्रतजन युक्त होयें बुद्धा के उपदेश को स्मरण करते हुए ॥ ३ ॥

तब आपुष्मात् सारियुञ्ज अनाद्यपिण्डिक गृहपति को इन गायार्थों से अनुमोदन कर आसन से उठ खड़े गये ।

तब आपुष्मात् आत्मन् अज्ञा अनाद्यपिण्डिक ने कहा 'आत्मन्' । एक ओर बैठे हुए आपुष्मात् आत्मन् से अनाद्यपिण्डिक बोले— 'आत्मन् ! तुम इस रुपहरिने में कहाँ से आ रहे हो ?'

आत्मन् ! आपुष्मात् सारियुञ्ज ने अनाद्यपिण्डिक गृहपति को ऐसे-ऐसे उपदेश दिये हैं ।

आत्मन् ! सारियुञ्ज पवित्र है महाप्रज्ञ है कि आद्यपति के चार अंगों को इस प्रकार से विभक्त कर देता है ।

३ ७ द्वितीय अनाद्यपिण्डिक सुष्ठ ( ५३ ३ ७ )

आर्य धर्मों से मय नहीं

आद्यपति जेतवम ।

तब अनाद्यपिण्डिक गृहपति ने एक पुत्र को आमन्त्रित किया 'सुतो अज्ञ आपुष्मात् आत्मन् है कहाँ आओ' ।

तब आपुष्मात् आत्मन् अज्ञा समस्त अन्न और पाक-पौष्टिक ।

सम्पत् ! मेरी तबिचत अज्ञा नहीं ।

गृहपति ! आर्य धर्मों से युक्त होने से अज्ञ प्रथम्-जन को पचराहद अर्धवर्षी और सत्य से मय होते हैं । किन्तु आर्य से ?

गृहपति ! अज्ञ प्रथम्-जन बुद्ध के प्रति अन्नक में युक्त होता है । इस अन्नक को अपने में देख उठे पचराहद अर्धवर्षी और सत्य से मय होत हैं ।



धर्म के प्रति अश्रद्धा\* ।

संघ के प्रति अश्रद्धा ।

दुःशील\* ।

गृहपति ! इन्हीं चार धर्मों से युक्त होने से अज्ञ पृथक्-जन को घबड़ाहट, कँपकँपी और मृत्यु में भय होते हैं ।

गृहपति ! चार धर्मों से युक्त होने से पण्डित आर्यश्रावक को न घबड़ाहट, न कँपकँपी और न मृत्यु से भय होते हैं । किन् चार से ?

गृहपति ! पण्डित आर्यश्रावक बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा से युक्त ।

धर्म । संघ । श्रेष्ठ और सुन्दर शील ।

गृहपति ! इन्हीं चार धर्मों से युक्त होने से पण्डित आर्यश्रावक को न घबड़ाहट, न कँपकँपी और न मृत्यु से भय होते हैं ।

भन्ते आनन्द ! मुझे भय नहीं होता । मैं किससे डरूँगा ? भन्ते ! मैं बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा , धर्म , संघ \*\*, तथा भगवान् ने जो गृहस्थोचित शिक्षापद बताये हैं, उनमें से मैं अपने में किसी को खण्डित हुआ नहीं देखता हूँ ।

गृहपति ! लाभ हुआ, सुलाभ हुआ ॥ यह आपने स्रोतापत्ति-फल की बात कही है ।

### § ८ ततिय अनाथपिण्डक सुत्त ( ५३ ३. ८ )

#### आर्यश्रावक को वैर-भय नहीं

श्रावस्ती जेतवन ।

तत्र, अनाथपिण्डक गृहपति जहाँ भगवान् ये वहाँ आया ।

एक ओर बैठे हुए अनाथपिण्डक गृहपति से भगवान् बोले—“गृहपति ! आर्यश्रावक के पाँच भय, वैर शान्त होते हैं । वह स्रोतापत्ति के चार अंगों से युक्त होता है । वह आर्यज्ञान को प्रज्ञा से पैठ कर देख लेता है । वह यदि चाहे तो अपने विषय में ऐसा कह सकता है—मेरा नरक क्षीण हो गया, तिरश्चीन योनि क्षीण हो गई मैं स्रोतापन्न हूँ ।

गृहपति ! जीव-हिंसा करनेवाले को जीव-हिंसा करनेके कारण इस लोक में भी और परलोक में भी भय तथा वैर होते हैं । जीव-हिंसा से विरत रहनेवाले के वह वैर और भय शान्त होते हैं ।

चोरी से विरत रहनेवाले के ।

व्यभिचार से विरत रहनेवाले के ।

\*\*\*मिथ्या-भाषण से विरत रहनेवाले के ।

सुरा आदि नशीली वीजों के सेवन से विरत रहने वाले के ।

इन से पाँच भय-वैर शान्त होते हैं ।

वह किन् स्रोतापत्ति के चार अंगों से युक्त होता है ?

बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा । धर्म । संघ । श्रेष्ठ और सुन्दर शील ।

वह इन्हीं स्रोतापत्ति के चार अंगों से युक्त होता है ।

किस आर्यज्ञान को वह प्रज्ञा से पैठ कर देख लेता है ?

गृहपति ! आर्यश्रावक प्रतीत्य सम्मुत्पाद का ढीक से मनन करता है—इस तरह, इसके होने से यह होता है, इसके उत्पन्न होने से यह उत्पन्न हो जाता है । इस तरह इसके न होने से यह नहीं होता है, इसके निरोध होने से यह निरुद्ध हो जाता है । जो यह अविद्या के प्रथम से सम्कार, सम्कारों के प्रथम से विज्ञान । इस तरह सारे दुःख-समुदाय का निरोध होता है ।

हमी आर्यशास्र को वह प्रश्न से पैठ कर देण छटा है ।

गृहपति ! ( इस तरह ) आर्यशास्रक क पाँच भय कर श्राव्य होत हैं । वह जोतापति के चार भयों स पुक्त होता है । वह आर्य-ज्ञान को प्रश्न से पैठकर देण सेता है । वह यदि चाहे तो अपने नियम से देना कह सकटा है—जेरा भरक शीण हो गवा ।

### § ९ भय सुच ( ५३ ३ ९ )

वैर-भय रहित व्यक्ति

भावन्ती जेतवन ।

तव कुञ्ज मिथु वहाँ भगवान् व वहाँ भाये ।

एक ओर बैठे तब मिथुभों से भगवान् बोले— [ रूपर जैसा ही ]

### § १० लिच्छवि सुच ( ५३ ३ १० )

भीतरी स्नान

एक समय भगवान् वैशाली में महायम की कूटागारपाला म बिहार करते थे ।

तब लिच्छविका का महामात्य मन्दक वहाँ भगवान् व वहाँ आवा और भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठ गया ।

एक ओर बैठे लिच्छवियों के महामात्य मन्दक से भगवान् बोले— मन्दक ! चार धर्मों से पुक्त होने से आर्यशास्रक जोतापक होता है । चिब चार स ?

पुक्त के प्रति टक कहा । धर्म । संय । श्रेष्ठ और सुन्दर शीक ।

मन्दक ! इन चार धर्मों से पुक्त होने स आर्यशास्रक त्रिप्य और मानुष जातुषाका होता है वर्षाका होता है सुखवाला होता है भाविपत्ववाका होता है ।

मन्दक ! इसे मैं किन्ती रूपरे भ्रमण या माहण से सुनकर वहाँ कह रहा हूँ किन्तु त्रिसे मैंने तबर्ष आना देना और अनुभव किया है वही कह रहा हूँ ।

वह कहने पर कोई एक पुरुष आकर मन्दक से बोका—मन्ते ! स्नान का समय हो गया ।

करे ! इस बाहरी स्नान स क्या मैंने आप्पारम ( = भीतरी ) स्नान कर लिया जो भगवान् के प्रति भद्रा हुई ।

सरकानि धरा नमोस

## चौथा भाग

### पुण्याभिसन्द वर्ग

§ १ पठम अभिसन्द सुत्त ( ५३ ४. १ )

#### पुण्य की चार धारायें

• श्रावस्ती जेतवन ।

भिक्षुओ ! चार पुण्य की धारायें = कुशल की धारायें, सुखवर्धक हैं । कौन-सी चार ?

भिक्षुओ ! आर्यश्रावक बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा ।

धर्म के प्रति ।

सद्य के प्रति ।

श्रेष्ठ और सुन्दर शीलें संयुक्त ।

भिक्षुओ ! यही चार पुण्य की ।

§ २. दुतिय अभिसन्द सुत्त ( ५३ ४ २ )

#### पुण्य की चार धारायें

भिक्षुओ ! चार पुण्य की धारायें = कुशल की धारायें, सुखवर्धक हैं । कौन-सी चार ?

भिक्षुओ ! आर्यश्रावक बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा ।

धर्म के प्रति ।

सद्य के प्रति ।

भिक्षुओ ! फिर भी आर्यश्रावक मल-मालस्य से रहित चित्त से घर में बसता है, दानशील, दामी, त्याग में रत, याचन करने के योग्य । यह चौथी पुण्य की धारा = कुशल की धारा सुखवर्धक है ।

भिक्षुओ ! यही चार पुण्य की ।

§ ३. ततिय अभिसन्द सुत्त ( ५३. ४ ३ )

#### पुण्य की चार धारायें

भिक्षुओ ! चार पुण्य की । कौन चार ?

भिक्षुओ ! आर्यश्रावक बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा ।

धर्म के प्रति ।

सद्य के प्रति ।

प्रज्ञावान् होता है; ( सभी चीजें ) उदय और अस्त होने वाली हैं—इस प्रज्ञा से युक्त होता है, श्रेष्ठ और तीक्ष्ण प्रज्ञा से युक्त होता है जिसमें दुस्वों का विच्छेद क्षय हो जाता है । यह चौथी पुण्य की धारा, कुशल की धारा सुखवर्धक है ।

मिथुनी ! यही चार देवों की ।

### § ४ पठम देवपद सूच ( ५३ ४ ४ )

चार देव-पद

आपस्ती जैतवन ।

मिथुनी ! यह चार देवों के देव-पद अविष्णु, प्राणिनों के पिष्णु, के किर, अस्वत्थ प्राणिनों की स्वत्थ करने के किर हैं । कौन से चार ?

मिथुनी ! आर्यभाषक बुद्ध के प्रति एक अक्षर ।

‘बनी के प्रति’ ।

संघ के प्रति ।

श्रेष्ठ और सुन्दर स्त्रीयों से युक्त ।

मिथुनी ! यह चार देवों के देव-पद ।

### § ५ द्वितीय देवपद सूच ( ५३ ४ ५ )

चार देव-पद

मिथुनी ! यह चार देवों के देव-पद । कौन से चार ?

मिथुनी ! आर्यभाषक बुद्ध के प्रति एक अक्षर से युक्त होता है—ऐसे वह भगवान् बर्ष । वह देमा विष्णु करता है देवों का देवपद क्या है ? वह वह समझता है, मैं सुझता हूँ कि देवता हिंसा से बिरत रहते हैं मैं भी कितनी एक या अन्ध प्राणी को नहीं छत्रता हूँ । यह मैं तो देव-पद से युक्त होकर विहार करता हूँ । वह भवम देवों का देव-पद है ।

बनी के प्रति ।

संघ के प्रति ।

श्रेष्ठ और सुन्दर स्त्रीयों से युक्त ।

मिथुनी ! यही चार देवों के देव-पद ।

### § ६ सभागत सूच ( ५३ ४ ६ )

युवता भी स्वागत करते हैं

मिथुनी ! चार पदों से युक्त युवता की देवता भी सम्योपर्यंक स्वागत के रूप करते हैं ।

किन चार से ?

मिथुनी ! आर्यभाषक बुद्ध के प्रति एक अक्षर से युक्त होता है—ऐसे वह भगवान् । जो देवता बुद्ध के प्रति एक अक्षर से युक्त है वह यहाँ भगवत् बर्षो अस्वत्थ होते हैं । उनके मन में यह होता है—‘बुद्ध के प्रति कितने अक्षर से युक्त हो हम यहाँ भगवत् बर्षो उत्पन्न हुए हैं कभी अक्षर से युक्त आर्यभाषक को देवता ब्याहने ?’ वह अपने पास बुझाते हैं ।

बनी ।

संघ ।

श्रेष्ठ और सुन्दर स्त्रीयों से युक्त ।

मिथुनी ! यही चार पदों से युक्त युवता की देवता भी सम्योपर्यंक स्वागत के रूप करते हैं ।

### § ७. महानाम सुत्त ( ५३. ४ ७ )

#### सच्चे उपासक के गुण

एक समय भगवान् शाक्य ( जनपद ) में कपिलवस्तुमें निग्रोधाराममें विहार करते थे । तब महानाम शाक्य जहाँ भगवान् थे वहाँ आया । एक और ब्रह्म महानाम शाक्य भगवान्से बोला, "भन्ते ! कोई उपासक कैसे होता है ?"

महानाम ! जो उद्ध की, धर्म की और सच की शरण में आ गया है वही उपासक है ।

भन्ते ! उपासक शीलम्पन्न कैसे होता है ?

महानाम ! जो उपासक नीचहिंसा में विरत होता है शरान इत्यादि नशीली चीजोंके सेवन करने से विरत होता है, वह उपासक शील-म्पन्न है ।

भन्ते ! उपासक श्रद्धा-सम्पन्न कैसे होता है ?

महानाम ! जो उपासक धृद्वालु होता है, बुद्ध की बोधिमें श्रद्धा करता है—ऐसे वह भगवान् , महानाम ! इतनेसे उपासक श्रद्धा-सम्पन्न होता है ।

भन्ते ! उपासक त्याग-सम्पन्न कैसे होता है ?

महानाम ! उपासक मल-मात्सर्यसे रहित , महानाम ! इतनेसे उपासक त्याग-सम्पन्न होता है ।

भन्ते ! उपासक प्रज्ञा-सम्पन्न कैसे होता है ?

महानाम ! उपासक प्रज्ञावान् होता है, सभी चीज उदय और अस्त होती हैं—इस प्रज्ञासे युक्त होता है, धार्य और तीक्ष्ण प्रज्ञासे युक्त होता है । जिससे दुखोंका विलुक्त क्षय होता है । महानाम ! इतनेसे उपासक प्रज्ञा-सम्पन्न होता है ।

### § ८. वस्स सुत्त ( ५३. ४ ८ )

#### आश्रव-श्रय के साधक-धर्म

भिक्षुओं । जैसे पर्वत के ऊपर कुछ बरस जाने से पानी नीचे की ओर गहते हुए पर्वत के कन्दरे और प्रदर को भर देता है, उनको भरकर छोटी-छोटी नालियों को भर देता है, उनको भरकर बड़े बड़े नालों को भर देता है, छोटी-छोटी नदियों को भर देता है, बड़ी-बड़ी नदियों को भर देता है, महासमुद्र, सागर को भी भर देता है ।

भिक्षुओं ! वैसे ही आर्यश्रावक को जो बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा है, धर्म के प्रति , सच के प्रति , श्रेष्ठ और सुन्दर शीलों में युक्त , वह धर्म गहते हुए जाकर आश्रवों के क्षय के लिए साधक होते हैं ।

### § ९. कालि सुत्त ( ५३. ४ ९ )

#### स्रोतापन्न के चार धर्म

[ ऊपर जैसा ही ]

तब, भगवान् पूर्वाह्न-समय पहन और पात्र-चीवर ले जहाँ कालिगोधा शाक्यानी का घर था वहाँ गये । जाकर बिछे आसन पर बैठ गये ।

एक ओर बैठी कालिगोधा शाक्यानी से भगवान् बोले—"गोधे ! चार धर्मों से युक्त होने से आर्यश्राविका स्रोतापन्न होती है । किन चार से ?

"गोधे ! आर्यश्राविका बुद्धके प्रति दृढ़ श्रद्धा ।

"धर्म के प्रति ।

"सच के प्रति ।

“मक-मारसर्पे स रक्षित चित्त से घर में बसती है ।

गोधे ! इन्हीं चार घर्मों से ।

भस्ते ! मगबाहू ने जो यह चार जोटापत्ति के अंग बताए हैं वह घर्म सुसर्पे में उपका पाकन करती हैं।

गोधे ! तुम्हें कम हुआ सुकाम हुआ, तुमने जोटापत्ति कुछ भी बात कही है ।

१ १० नन्दिय सुप्त ( ५३ ४ १० )

प्रमाह तथा अप्रमाह से विह्वलना

[ कपर जैसा ही ]

एक और बंध नन्दिय काश्य मगबाहू से बोकर—‘भस्ते ! चित्त आर्षभाषक के चार जोटापत्ति-अंग किसी तरह कुछ भी नहीं है वह प्रमाह से विहार करने बाका कहा जाता है ।

नन्दिय ! जिसे चार जोटापत्ति-अंग किसी तरह कुछ भी नहीं है उस में पाहुर का प्रयत्न-अप करता है ।

नन्दिय ! और भी जैम आर्षभाषक प्रमाह से विहार करनेबाका या अप्रमाह से विहार करने बाका जाता है उसे सुप्तो अण्डो तरह मन में काजो में कहा है ।

‘भस्ते ! बहुत अण्डो’ यह नन्दिय काश्य ने मगबाहू को उतर दिया ।

मगबाहू बोधे—

नन्दिय ! कैसे आर्षभाषक प्रमाह से विहार करने बाका होता है ?

नन्दिय ! आर्षभाषक बुद्ध के प्रति दृढ़ अज्ञान से पुच्छ होता है—ऐसे वह मगबाहू । वह अपनी इस अज्ञान से मंगुच्छ हो इसके आगे दिन में प्रविष्टक के किये वा रात में प्यामाभ्यास के किये परपाह नहीं करता है । इस प्रकार प्रमाह से विहार करने से उसे प्रमोह नहीं होता है । प्रमोह के न होने से इसे प्रीति भी नहीं होती है । प्रीति के नहीं होने से उसे मज्जविष भी नहीं होती है । मज्जविष के नहीं होने से वह दुःख-पूर्वक विहार करता है । दुःखी पुच्छ का चित्त समाहित नहीं होता है । चित्त के समाहित न होने से इस घर्म भी प्रगट नहीं होते हैं । घर्मों के प्रगट नहीं होने से वह प्रमाह-विहारी कहा जाता है ।

घर्म । संघ ।

भेद और तुम्हुर घीकों से पुच्छ । इसके आगे दिन में प्रविष्टक के किये वा रात में प्यामाभ्यास के किये परपाह नहीं करता है ।

नन्दिय ! कैसे आर्षभाषक अप्रमाह से विहार करने बाका होता है ?

नन्दिय ! आर्षभाषक बुद्ध के प्रति दृढ़ अज्ञान से पुच्छ होता है । वह अपनी इस अज्ञान से मंगुच्छ न हो इसके आगे दिन में प्रविष्टक के किये और रात में प्यामाभ्यास के किये मगल करता है । इस प्रकार अप्रमाह से विहार करने से उसे प्रमोह होता है । प्रमोह के होने से प्रीति होती है । प्रीति के होने से उसे मज्जविष होती है । मज्जविष के होने से वह दुःख-पूर्वक विहार है । दुःख से चित्त समाहित होता है । चित्त के समाहित होने से उसे घर्म प्रगट हो जाते हैं । घर्मों के प्रगट होने से वह अप्रमाह-विहारी कहा जाता है ।

घर्म । संघ ।

भेद और तुम्हुर घीकों से पुच्छ ।

पुण्याभिसम्भूय वा स्वमाह

## पाँचवाँ भाग

### सगाथक पुण्याभिसन्द वर्ग

#### § १. पठम अभिसन्द सुत्त ( ५३ ५ १ )

##### पुण्य की चार धारायें

भिक्षुओ ! चार पुण्य की धारायें = कुशल की धारायें, सुखवर्धक हैं । कौन चार ?

भिक्षुओ ! आर्यश्रावक बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा ।

धर्म के प्रति ।

सच के प्रति ।

श्रेष्ठ और सुन्दर शीलों से युक्त ।

भिक्षुओ ! यही चार पुण्य की धारायें ।

भिक्षुओ ! इन चार से युक्त आर्यश्रावक को यह कहना कठिन है कि—इतने पुण्य इतने हैं, कुशल इतने हैं, सुख की वृद्धि इतनी है । अतः वह असख्येय = अप्रमेय = महा-पुण्य-स्कन्ध नाम पाता है ।

भिक्षुओ ! जैसे समुद्र के जल के विषय में यह कहा नहीं जा सकता कि—इतना जल है, इतना आरहक (= उस समय की एक तौल ) है, इतना सौ, हजार या लाख आरहक है, यत्किं वह असख्येय = अप्रमेय महा-उदक-स्कन्ध—ऐसा कहा जाता है ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, इन चार से युक्त आर्यश्रावक के विषय में यह कहना कठिन है ।

भगवान् यह बोले—

जैसे अमाच, महासर, महोदधि,  
खतरों से भरे, रत्नों के धाकर में,  
नर-गण-स्रध-सेवित नदियाँ,  
आकर मिल जाती हैं ॥

वैसे ही, अन्न-पान-वस्त्र के दान करने वाले,  
शय्या-आसन-चादर के दानी,  
पण्डित पुरुष में पुण्य की धारायें आ गिरती हैं,  
वारि-वहा नदियाँ जैसे सागर में ॥

#### § २. दुत्तिय अभिसन्द सुत्त ( ५३ ५ २ )

##### पुण्य की चार धारायें

भिक्षुओ ! चार पुण्य की धारायें । कौन चार ?

भिक्षुओ ! बुद्ध के प्रति । धर्म के प्रति । सच के प्रति । मल मात्सर्य-रहित चित्त से घर में बसता है ।

भिक्षुओ ! इन चार से युक्त आर्यश्रावक के विषय में यह कहना कठिन है ।

मिथुनो ! जैसे तहाँ गंगा, यमुना, अचिरवती, सरयू, मही महावर्षों गिरती हैं वहाँ के बर के विषय में यह कहना कठिन है ।

मिथुनो ! जैसे ही हम चार से कुछ आर्यशास्त्र के विषय में यह कहना कठिन है ।

भगवान् यह बोले —

जैसे अगाध महाधर महोदधि;

[ ऊपर बीसा ही ]

§ ३ तृतीय अमिसन्द सुच ( ५३ ५ ३ )

पुण्य की चार धारायें

मिथुनो ! चार पुण्य की धारायें । कीम चार ?

मिथुनो ! बुद्ध के प्रति । धर्म के प्रति । संघ के प्रति । प्रज्ञावान् होता है ।

मिथुनो ! हम चार से कुछ आर्यशास्त्र के विषय में यह कहना कठिन है ।

भगवान् बोले —

जो पुण्य-कामी पुण्य में प्रतिष्ठित

अज्ञान यह की प्राप्ति के लिये मार्ग की भावना करता है

उसने धर्म के रहस्य को पा लिया कहे-अथ में रत

यह कल्पित नहीं होता यत्तु-राज के पास नहीं जाता है ॥

§ ४ पठम महान्न सुच ( ५३ ५ ४ )

महाधनवान् आशयक

मिथुनो ! चार धर्मों से कुछ होने से आर्यशास्त्र सम्पत्तिवादी महाधनी महाभोग महा बसवादा कहा जाता है ? किन चार से ?

बुद्ध के प्रति । धर्म । संघ । श्रेष्ठ और सुन्दर शीका से ।

मिथुनो ! इन्हीं चार धर्मों से कुछ होने से ।

§ ५ द्वितीय महान्न सुच ( ५३ ५ ५ )

महाधनवान् आशयक

[ ऊपर बीसा ही ]

§ ६ तिस्रु सुच ( ५३ ५ ६ )

चार धर्मों से अतोत्पन्न

मिथुनो ! चार धर्मों से कुछ होने से आर्यशास्त्र अतोत्पन्न होता है । किन चार से ?

बुद्ध के प्रति । धर्म । संघ । श्रेष्ठ और सुन्दर शीका से ।

§ ७ तन्दिप सुच ( ५३ ५ ७ )

चार धर्मों से अतोत्पन्न

कपिष्ठवन्तु ।

“बुद्ध और श्रेष्ठ तन्दिप आशय से भगवान् बोले—“तन्दिप ! चार धर्मों से कुछ होने से आर्यशास्त्र अतोत्पन्न ।”



## § ८. भदिय सुत्त ( ५३. ५ ८ )

चार बातों से स्रोत

कपिलवस्तु... ।

' एक ओर बैठे भदिय शाक्य से ' ।

## § ९ महानाम र ( ५३. ५. ९ )

चार बातों से स्रोतापन्न

कपिलवस्तु ।

एक ओर बैठे महानाम शाक्य से ।

## § १०. अङ्ग सुत्त ( ५३. ५ १० )

स्रोतापन्न के चार अङ्ग

भिक्षुओं । स्रोतापत्ति के अंग चार हैं । कौन चार ?

सत्पुरुष का सेवन । सद्धर्म का श्रवण । ठीकसे मनन करना । धर्मानुष्ठान आचरण ।

भिक्षुओं ! यही स्रोतापत्ति के चार अङ्ग हैं ।

सगाथक पुण्याभिसन्द वर्ग समाप्त

## छठों भाग

### समझ वर्ग

§ १ सगाधक सुत्त ( ५३ ६ १ )

चार दातों से झोटापत्र

मिथुओ ! चार धर्मों ने युक्त होने से आर्यमावक झोटापत्र होता है । किंच चार से ?

मिथुओ ! आपमावक वृत्त के प्रति इह भ्रजा ।

धर्म के प्रति ।

संघ के प्रति ।

श्रेष्ठ और सुन्दर सीधों से युक्त ।

मिथुओ ! इन्हीं चार धर्मों से ।

सगाधक यह बोले —

वृत्त के प्रति किसे जपक सुप्रसिद्धि भ्रजा है

त्रिसका सीध कथ्याक-उर आर्य सुन्दर और प्रसिद्धि है ।

संघ के प्रति जो प्रसन्न है त्रिसका ज्ञान अज्ञुपुत्र है

उसी का अग्रिम कहते उसका जीवा सक्क है ॥

इसविषय, भ्रजा सीध और स्पष्ट धर्म-दर्शन में

पवित्रवचन का नाम वृत्त के उपदेश को स्मरण करते हुए ॥

§ २ वस्सवुत्थ सुत्त ( ५३ ६ २ )

अहत्त कम दीक्ष्य अपिक

धायस्ती जतघन ।

उस समग्र कोई मिथु धायस्ती में वर्षावास कर किसी काम से कणिलघयन्तु आपा हुआ था ।

तब कणिलघयन्तु के शरण आई यह मिथु था आई गये और उसे जपिवाचन कर एक ओर बैठ गये ।

एक ओर बैठ कणिलघयन्तु के शरण उस मिथु ने बोले — “अन्ते ! सगधक भ्रज चति तो हैं न ।

हो आहुत ! सगधक भ्रजे-अंग है ।

अन्ते ! स्मरिपुत्र आर माग्गयान ता भ्रजे-अंगे है न ?

हो आहुत ! वे भी भ्रजे-अंगे हैं ।

अन्ते ! और किणुमंथ ती भ्रजा-अंगे है न ?

हो आहुत ! किणु-अंगे भी भ्रजा-अंगे है ।

अन्ते ! इह वर्षावास न बना आचने सगधक के सुत्त स एवम वृत्त सुन्दर सीधा है ?

हा आहुत ! सगधक के गुण एव एवम वृत्त सुन्दर सिधे सीधा है—मिथुओ ! किने मिथु बोले

ही हैं जो आश्रवों के क्षय हो जाने से अनाश्रव चित्त और प्रज्ञा की विमुक्ति को देखते ही देखते स्वयं ज्ञान, साक्षात्कार कर और प्राप्त कर विहार करते हैं । किन्तु, ऐसे ही भिक्षु बहुत हैं जो पाँच नीचेवाले बन्धनों के क्षय हो जाने से ओपपातिक हो बिना उन लोक में लौटे परिनिर्वाण पा लेते हैं ।

आवुस ! मैंने और भी कुछ भगवान् के मुख से स्वयं सुनकर सीखा है—भिक्षुओ ! ऐसे भिक्षु थोड़े ही हैं जो पाँच नीचेवाले बन्धनों के क्षय हो जाने में, किन्तु, ऐसे ही भिक्षु बहुत हैं जो तीन सयोजनों के क्षय हो जाने से राग-द्वेष-मोह के अव्यन्त दुर्बल हो जाने से सकृदागाम होते हैं, इस लोक में एक ही बार आ हूँ खों का अन्न कर लेते हैं ।

आवुस ! मैंने और भी सीखा है—भिक्षुओ ! ऐसे भिक्षु थोड़े ही हैं जो सकृदागामी होते हैं । किन्तु ऐसे ही भिक्षु बहुत हैं जो तीन सयोजनों के क्षय होने से चोत्तापन्न होते हैं, जो मार्ग से च्युत नहीं हो सकते, परम-पद पाना जितना निश्चय है, जो सर्वोधि-परायण हैं ।

### § ३. धम्मदिन्न सुत्त ( ५३ ६. ३ )

#### गार्हस्थ्य-धर्म

एक समय भगवान् वाराणसी के पास ऋषिपतन मृगशाय में विहार करते थे ।

तब, धर्मदिश उपासक पाँच सौ उपासकों के साथ जहाँ भगवान् थे वहाँ आया, और भगवान् को अभिवादन कर एक ओर घँट गया ।

एक ओर बैठ, धर्मदिश उपासक भगवान् से बोला, “भन्ते ! भगवान् हमें कृपया कुछ उपदेश करें कि जो दीर्घकाल तक हमारे हित और सुख के लिये हो ।”

धर्मदिश ! तो तुम्हें ऐसा सीखना चाहिये—बुद्ध ने जिन गम्भीर, गम्भीर अर्थ वाले, लोकोत्तर और शून्यता को प्रकाशित करनेवाले सूत्रा का उपदेश किया है, उन्हें समय-समय पर लाभकर विहार कहेगा । धर्मदिश ! तुम्हें ऐसा ही सीखना चाहिये ।

भन्ते ! बाल-बच्चों की संसृत में रहनेवाले रूपये-पैसे के पीछे पड़े हुए इस लोगों को यह आसान नहीं कि उन्हें समय-समय पर लाभ कर विहार करें । भन्ते ! पाँच शिक्षा-पद्यों में शिक्षित रहने वाले हमको इसके ऊपर के कुछ धर्म का उपदेश करें ।

धर्मदिश ! तो, तुम्हें ऐसा सीखना चाहिए—

बुद्ध के प्रति दृढ़ श्रद्धा से युक्त होऊँगा धर्म के प्रति । सब के प्रति । श्रेष्ठ और सुन्दर वीलों से युक्त ।

भन्ते ! भगवान् ने जो यह स्रोतारत्ति के पार अग बताया है वे मुझमें हैं ।

धर्मदिश ! तुम्हें लाभ हुआ, सुलभ हुआ ।

### § ४. बिलान सुत्त ( ५३. ६ ४ )

विमुक्त शूद्रस्थ और भिक्षु में अन्तर नहीं

कपिलवस्तु निम्नोधाराम ।

उस समय, कुछ भिक्षु भगवान् के लिए चीवर बना रहे थे कि तेमासा के वीतने पर बने चीवर को लेकर भगवान् चारिका के लिए निकलेंगे ।

महानाम शाक्य ने सुना कि कुछ भिक्षु ।

भन्ते ! एक ओर बैठ महानाम शाक्य भगवान् से बोला—“भन्ते ! मैंने सुना है कि कुछ भिक्षु भगवान् के लिए चीवर बना रहे हैं कि तेमासा के वीतने पर बने चीवर को लेकर भगवान् चारिका के

छिद्र विकर्षणे । मन्ते ! जो समग्र से समग्र उपासक हैं उन्होंने अपनी तक भगवान् क मुख से स्वर्ग सुनकर कुछ सीधने नहीं पाया है वे जो बड़े बीमार पड़े हैं उन्हें भगवान् चर्मोपदेश करते ही बड़ा अरुण पा ।

महानाम । उन्हें हृद चार धर्मों से आश्वासन देना चाहिए—आयुष्मान् आश्वासन करें कि आयुष्मान् तुम्ह के प्रति यह भद्रा से जुक्त हैं—ऐसे वह मरणार्थ ।

धर्म । संघ । भेद और सुन्दर शीर्षों से युक्त

महानाम । उन्हें हृद चार धर्मों से आश्वासन देकर यह कहना चाहिए— क्या आयुष्मान् को माता पिता के प्रति मोह-माया है ?

पदि यह कहे कि—हाँ मुझे माता-पिता के प्रति मोह-माया है तो उसे बह कहना चाहिये— यदि आप माता-पिता के प्रति मोह-माया करेंगे तो भी मरेंगे ही और नहीं करेंगे ता भी तो क्यों न उस मोह माया को छोड़ दें ।

पदि यह ऐसा कहे—माता-पिता के प्रति मेरी जो मोह-माया थी वह महीन हो गई तो उसे यह कहना चाहिये क्या आयुष्मान् की भी और वाक-बन्धों के प्रति मोह-माया है ?

क्या आयुष्मान् को मायुषिक पर्व काम-गुणों के प्रति ?

पदि यह कहे—मायुषिक पर्व काम-गुणों से चित्त हट चुका पार महाराज देवों में पित्त लगा है, तो उसे यह कहना चाहिए—“आयुष । चार महाराज देवों से भी प्रयत्नित देव बने-बन है । अर्थात् यदि आयुष्मान् चार महाराज देवों से अपने चित्त को हटा प्रयत्नित देवों में करायें ।

पदि यह कहे—हाँ मैंने चार महाराज देवों से अपने चित्त को हटा प्रयत्नित देवों में लगा दिया है तो उसे यह कहना चाहिए— आयुष । प्रयत्नित देवों से भी याम देव । सुपित देव । निर्माण-वृत्ति देव । परनिर्मितवसवती देव । महलोक ।

पदि यह कहे—हाँ मैंने परनिर्मितवसवती देवों से अपने चित्त को हटा महलोक में लगा दिया है तो उसे यह कहना चाहिए— आयुष । महलोक भी भविष्य है अमुक है सत्ताव की भविष्य से युक्त है अर्थात् यदि आयुष्मान् महलोक से अपने चित्त को हटा सत्ताव के निरोध के किण्ड लगा दें ।

पदि यह कहे—मैंने महलोक से अपने चित्त को हटा सत्ताव के निरोध के किण्ड लगा दिया है तो हे महानाम । उक्त उपासक का आश्रयों से विमुक्त चित्तवाले मिथु से कोई भेद नहीं है ऐसा ही कहता हूँ । विमुक्ति विमुक्ति एक ही है ।

### ३ ५ पठम चतुष्फल मुच ( ५३ ६ ५ )

चार धर्मों की भायना से ओतापत्ति-फल

मिथुओ । चार धर्म भावित और अन्वस्त होने से ओतापत्ति-फल के साक्षात्कार के किण्ड होने हैं । कौन न चार ?

सत्पुरुष का मन्त्र करना सद्गुरु का मन्त्र डीक स मन्त्र करना धर्मचतुष्क आश्रय ।

मिथुओ ! वही चार धर्म भावित और अन्वस्त होने से ओतापत्ति-फल के साक्षात्कार के किण्ड होते हैं ।

### ३ ६ द्वितीय चतुष्फल मुच ( ५३ ६ ६ )

चार धर्मों की भायना से सद्गुणगामी-फल

“ सद्गुणगामी फल के साक्षात्कार के किण्ड ।

§ ७. तृतीय चतुष्फल सुत्त ( ५३. ६. ७ )

चार धर्मों की भावना से अनागामी-फल.

\*\*अनागामी-फल के साक्षात्कार के लिए \* ।

§ ८ चतुर्थ चतुष्फल सुत्त ( ५३. ६. ८ )

चार धर्मों की भावना से अर्हत् फल

\* अर्हत्-फल के साक्षात्कार के लिए \*\* ।

§ ९. पटिलाभ सुत्त ( ५३ ६. ९ )

चार धर्मों की भावना से प्रजा-लाभ

\*\*\*प्रजा के प्रतिलाभ के लिए \*\* ।

§ १०. बुद्धि सुत्त ( ५३ ६ १० )

प्रजा-बुद्धि

\* प्रजा की वृद्धि के लिए ।

§ ११. वेपुल्ल सुत्त ( ५३ ६ ११ )

प्रजा की विपुलता

\*\* प्रजा की विपुलता के लिए ।

सप्रज्ञ-चर्म समाप्त

## सातवाँ भाग

### मटाप्रज्ञा वर्ग

§ १ महा सुप्त ( ५३ ७ १ )

महा-प्रज्ञा

महा-प्रज्ञता के किये ।

§ २ पृथु सुप्त ( ५३ ७ २ )

पृथु-प्रज्ञा

पृथु-प्रज्ञता के किये

§ ३ विपुल सुप्त ( ५३ ७ ३ )

विपुल-प्रज्ञा

विपुल-प्रज्ञता के किये ।

§ ४ गम्भीर सुप्त ( ५३ ७ ४ )

गम्भीर-प्रज्ञा

गम्भीर-प्रज्ञता के किये ।

§ ५ अप्पमत्त सुप्त ( ५३ ७ ५ )

अप्पमत्त-प्रज्ञा

अप्पमत्त-प्रज्ञता के किये ।

§ ६ भूरि सुप्त ( ५३ ७ ६ )

भूरि-प्रज्ञा

भूरि-प्रज्ञता के किये ।

§ ७ बहुल सुप्त ( ५३ ७ ७ )

प्रज्ञा-बाहुल्य

प्रज्ञा-बाहुल्य के किये ।

§ ८ सीघ सुप्त ( ५३ ७ ८ )

सीघ-प्रज्ञा

सीघ-प्रज्ञता के किये ।

§ ९ लघु सुप्त ( ५३ ७ ९ )

लघु-प्रज्ञा

लघु-प्रज्ञता के किये ।

§ १०. हास सुत्त ( ५३ ७ १० )

प्रसन्न-प्रज्ञा

\*\* प्रसन्न-प्रज्ञा के लिये ।

§ ११. जवन सुत्त ( ५३ ७. ११ )

तीव्र-प्रज्ञा

• तीव्र-प्रज्ञा के लिये ।

§ १२. तिकख सुत्त ( ५३ ७ १२ )

तीक्ष्ण-प्रज्ञा

• तीक्ष्ण-प्रज्ञा के लिये ।

§ १३. निव्वेधिक सुत्त ( ५३ ७ १३ )

निव्वेधिक-प्रज्ञा

\*\* 'सत्त्व में पैठनेवाली प्रज्ञा के लिये ।

महाप्रज्ञा चर्ग समाप्त  
चोतापत्ति-सयुत्त समाप्त

# बारहवाँ परिच्छेद

## ५४ सत्य-सयुक्त

### पहला भाग

### समाधि वर्ग

#### ४१ समाधि सुक्त ( ५४ १ १ )

##### समाधि का अभ्यास करना

आवस्ती जेतवन ।

मिथुभो ! समाधि का अभ्यास करो । मिथुभो ! समाधिरूप मिथु पचार्थतः जाव सेता है ।

क्या पचार्थतः जाव सेता है ?

वह दुःख है इसे पचार्थतः जाव सेता है । वह दुःख समुद्रम (= दुःख की उत्पत्ति का कारण) है इस पचार्थतः जाव सेता है । यह दुःख-विरोध है इस । यह दुःख-विरोध-नामी मार्ग है हमने ।

मिथुभो ! इसलिये यह दुःख-समुद्रम है—येसा समझना चाहिये । यह दुःख-विरोध है । यह दुःख-विरोध-नामी मार्ग है ।

#### ४२ पटिसख्खान सुक्त ( ५४ १ २ )

##### आत्म-चिन्तन

मिथुभो ! आत्म-चिन्तन (= पटिसख्खान) करने में करो । मिथुभो ! मिथु आत्म चिन्तन कर पचार्थतः जाव सेता है । क्या पचार्थतः जाव सेता है ?

वह दुःख है हम [ कपर भीसा ही ]

#### ४३ षठम कुत्तपुत्त सुक्त ( ५४ १ ३ )

##### चार आर्य-सत्य

मिथुभो ! अतीतकाल में जो दुःखपुत्र दीक में घर में बिहार हो प्रकथित हुए थे सभी चार आर्य सत्यों को पचार्थतः जानने के किये ही ।

मिथुभो ! अनागतकाल में ।

मिथुभो ! वर्तमानकाल में भी सभी चार आर्य सत्यों को जानने के किये ही ।

किन चार को ?

दुःख आर्यसत्य को । दुःख-समुद्रम आर्यसत्य को । दुःख-विरोध आर्यसत्य को । दुःख-विरोध-नामी-मार्ग आर्यसत्य का । "

मिथुभो ! इसलिये यह दुःख है—येसा समझना चाहिये । यह दुःख-समुद्रम है । यह दुःख-विरोध है । यह दुःख-विरोध-नामी मार्ग है ।



## § ४. दुतिय कुलपुत्त सुत्त ( ५४. १. ४ )

## चार आर्य-सत्य

भिक्षुओ ! अतीतकाल में जो कुलपुत्र ग्रीक से घर से बेघर हो प्रव्रजित हुये थे, और जिनने यथार्थत जाना, सभी ने चार आर्य-सत्यो को यथार्थत जाना ।

भिक्षुओ ! अनागतकाल में ।

भिक्षुओ ! वर्तमानकाल में ।

[ श्लेष ऊपर जैसा ही ]

## § ५ पठम समणब्राह्मण सुत्त ( ५४. १. ५ )

## चार आर्य-सत्य

भिक्षुओ ! अतीतकाल में जिन भ्रमण-ब्राह्मणों ने यथार्थत जाना, सभी ने चार आर्य-सत्यो को यथार्थत जाना ।

भिक्षुओ ! अनागतकाल में ।

भिक्षुओ ! वर्तमानकाल में ।

[ श्लेष ऊपर जैसा ही ]

## § ६. दुतिय समणब्राह्मण सुत्त ( ५४. १. ६ )

## चार आर्य-सत्य

भिक्षुओ ! जिन भ्रमण-ब्राह्मणों ने अतीतकाल में परम-ज्ञान को यथार्थत प्राप्त कर प्रगट किया था, सभी ने चार आर्य-सत्यो को ही यथार्थत प्राप्त कर प्रगट किया था ।

[ श्लेष ऊपर जैसा ही ]

## § ७ वित्तक सुत्त ( ५४. १. ७ )

## पाप-वित्तक न करना

भिक्षुओ ! पाप-मय अकुशल वित्तक मन में मत आने दो । जो यह, काम-वित्तक, व्यापार-वित्तक, विहिसा-वित्तक । सो क्यों ?

भिक्षुओ ! यह वित्तक अर्थ सिद्ध करने वाले नहीं हैं, ब्रह्मचर्य के अनुकूल नहीं हैं, निर्वेद के लिये नहीं हैं, विराग के लिये नहीं हैं, न निरोध, न उपशम, न अभिजा, न सम्बोधि और न निर्वाण के लिये हैं ।

भिक्षुओ ! यदि तुम्हारे मन में कुछ वित्तक उठे, तो इसका कि 'यह दु ख है, यह दु ख-समुदय है, यह दु ख-निरोध है, यह दु ख-निरोध-गामी मार्ग है ।

सो क्यों ?

भिक्षुओ ! यह वित्तक अर्थ सिद्ध करने वाले हैं, ब्रह्मचर्य के अनुकूल हैं सम्बोधि और निर्वाण के लिये हैं ।

भिक्षुओ ! इसलिये, यह दु ख है—'ऐसा समझना चाहिये' ।

§ ८ चिन्ता मुच ( ५४ १ ८ )

पाप-विस्तन न करना

मिथुनो ! पापमय अशुद्ध चिन्तन मत करो—कोक शास्त्रत है या लोक अशास्त्रत है, लोक शास्त्र है या लोक अशास्त्र है जो जीव है वही शरीर है या जीव दूसरा है और शरीर दूसरा, लबागत मरने के बाद नहीं होते हैं वा होते हैं होते भी हैं और नहीं भी होते हैं व होते हैं और न नहीं होते हैं। सो क्यों ?

मिथुनो ! यह चिन्तन अर्थ सिद्ध करने बाधे नहीं है ।

मिथुनो ! यदि तुम कुछ चिन्तन करो तो इसका कि 'यह दुःख है' ।

[ ऊपर जैसा ही ]

§ ९ विग्राहिक मुच ( ५४ १ ९ )

लड़ाई-झगड़े की बात न करना

मिथुनो ! विग्रह ( लड़ाई-झगड़े ) की बातें मत करो—तुम इस धर्म-विनय को नहीं जानते मैं जानता हूँ, तुम इस धर्म विनय को क्या जानोगे, तुम तो गलत रास्ते पर हो मैं हीक रास्ते पर हूँ। जो पहल कहना चाहिये या उसे पीछे कह दिया और जो पीछे कहना चाहिये या उसे पहरे कह दिया। मैंने मलजब की बात नहीं और तुमने तो उदपटांग, तुमने तो उकड़ चुकड़ दिया, तुम पर यह बात भारपित हुआ इसने कृष्ण की कोसिध करो, पहल किये गये यदि मत्रो तो मुकसाधो ।

सो क्यों ?

मिथुनो ! यह बात अर्थ सिद्ध करने बाधे नहीं है [ सोच ऊपर जैसा ही ]

§ १० कथा मुच ( ५४ १ १० )

निरर्धक कथा न करना

मिथुनो ! अनेक प्रकार की निरर्धक ( निरर्थक ) कथानें मत करो—जैसे राज-कथा और कथा महा भ्रमण कथा सेना-कथा सब-कथा मुद्र-रथा अन्न कथा पात्र कथा कथ-कथा शबन-कथा मुक्ता कथा शत्रु आति-विहारी सवारी प्राप्त निगम नगर कथपत्र पी पुत्र " सूर " वाजार ( = विधिज्ञा ) वनपद भूत-वैत वाजार कोक आम्बायिका समुद्र धान्पायिका और भी इस तरहकी अशुभितियाँ ।

सो क्यों ?

[ सोच ऊपर जैसा ही ]

समाधि वर्ग समाप्त

## दूसरा भाग

### धर्मचक्र-प्रवर्तन चर्चा

§ १. धम्मचक्र-प्रवर्तन सुत्त ( ५४. २. १ )

तथागत का प्रथम उपदेश

ऐसा मैंने सुना ।

एक समय, भगवान् वाराणसी में क्षुत्पित्तन सुगटाय में विहार करने थे ।

यहाँ, भगवान् ने पञ्चशरीर्य भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, "भिक्षुओं ! प्रवर्तितको दो अन्तों का सेवन नहीं करना चाहिये । किन्तु दो पा ?

( १ ) जो यह कामों के सारा पै पोटै पद जाना है—हीन, प्रान्त, पृथक् पानों के अनुपल, क्षनार्थ, अनर्थ करनेवाला । और ( २ ) जो यह आत्म-बलमधालुयोग (=पचासिन तपना, टाटि कटोर तपस्वार्थ = आत्म पीडा ) है—हु ख देनेवाला, अनार्थ, अनर्थ करनेवाला ।

भिक्षुओ ! उन दो अन्तों को छोड़, तथागत ने मध्यम मार्ग का ज्ञान प्राप्त किया है—जो चक्षु देनेवाला, ज्ञान पैदा करनेवाला, उपवास के लिये, अभिषा के लिये, सम्यग्धि के लिये, तथा चिन्ता के लिये है ।

भिक्षुओ ! यह मध्यम मार्ग क्या है जिसका तथागत ने ज्ञान प्राप्त किया है, जो चक्षु देनेवाला ?

यहाँ आर्य अष्टांगिक मार्ग । जो यह, ( १ ) सम्यक्-दृष्टि, ( २ ) सम्यक्-संस्कार, ( ३ ) सम्यक्-वचन, ( ४ ) सम्यक्-कर्मन्ति, ( ५ ) सम्यक्-आजीव, ( ६ ) सम्यक्-व्यायाम, ( ७ ) सम्यक्-स्मृति, और ( ८ ) सम्यक्-समाधि ।

भिक्षुओ ! यही मध्यम मार्ग है जिसका तथागत ने ज्ञान प्राप्त किया है ।

भिक्षुओ ! 'हु ख आर्य-सत्य है' । जाति भी हु ख है, जरा भी, व्याधि भी, मरणा भी, शोक-परिदेव ( =रोना पीटना )-हु ख, दोर्मनस्य, उपायास (=परेशानी) भी । जो चाहा हुआ नहीं मिलता है वह भी हु ख है । मक्षेप से, पांच उपादान स्कन्ध हु ख ही है ।

भिक्षुओ ! 'हु ख-समुदय आर्य-सत्य है' । जो यह "तृष्णा" है, पुनर्जन्म करनेवाली, मजा चाहनेवाली, राग करनेवाली, घट्ट-वहाँ आनन्द उठानेवाली । जो यह काम तृष्णा, भव-तृष्णा (=साधन उच्छि-सम्बन्धिनी तृष्णा), विभव-तृष्णा ( उच्छि-दवा-दृष्टि-सम्बन्धिनी-तृष्णा ) ।

भिक्षुओ ! 'हु ख-निरोध आर्य-सत्य है' । जो उरही तृष्णा का विस्फुल बिराग=निरोध=त्याग=प्रतिनि सर्ग=मुक्ति=अनालय है ।

भिक्षुओ ! हु ख-निरोध-नामी मार्ग आर्य-सत्य है जो यह आर्य अष्टांगिक मार्ग है—सम्यक्-दृष्टि सम्यक्-समाधि ।

भिक्षुओ ! "हु ख आर्य-सत्य है" यह सुने पहले कभी नहीं सुने गये धर्मों में चक्षु उत्पन्न हुआ, ज्ञान उत्पन्न हुआ, मजा उत्पन्न हुई, विद्या उत्पन्न हुई, आलोक उत्पन्न हुआ । भिक्षुओ ! "वह हु ख आर्य-सत्य परिज्ञेय है" यह सुने पहले कभी नहीं सुने गये धर्मों में चक्षु । भिक्षुओ ! "यह हु ख आर्य-सत्य परिज्ञात हो गया" यह सुने पहले कभी नहीं सुने गये धर्मों में चक्षु ।

भिक्षुओ ! "हु ख-समुदय आर्य-सत्य है" यह सुने । भिक्षुओ ! "हु ख-समुदय आर्य-सत्य का

प्रहास कर चुका चाहिये" यह मुझे । मिथुभो ! 'दुःख-समुत्थप आर्यसत्य प्रहीन हो गया" यह मुझे ।

मिथुभो ! दुःख-निरोध आर्यसत्य है यह मुझे । मिथुभो ! दुःख-निरोध आर्यसत्य का साक्षात्कार करना चाहिये यह मुझे । मिथुभो ! साक्षात्कार कर लिया गया" यह मुझे ।

मिथुभो ! "दुःख-निरोध-गामी मार्ग आर्यसत्य है" यह मुझे । मिथुभो ! 'दुःख-निरोध गामी मार्ग का अभ्यास करना चाहिये" यह मुझे । मिथुभो ! दुःख-निरोध-गामी मार्ग का अभ्यास निरह हो गया यह मुझे पहले कभी नहीं मुझे गये धर्मों में बहुत उत्पन्न हुआ आकांक्ष उत्पन्न हुआ ।

मिथुभो ! अब तक मुझ इन चार आर्यसत्वों में इस प्रकार तेहरा बारह प्रकार संज्ञान दर्शन वयाप्यत हुए नहीं हुआ था तब तक मिथुभो ! मीने देवता-भार-जडा के साथ इस लोक में धर्मज और प्राणियों में जनता में तथा पक्षतर और मनुष्या के बीच एसा राधा नहीं किया कि 'मीने अनुत्तर सम्यक सम्वाधि का काम कर लिया है ।

मिथुभो ! अब मुझे इन चार आर्यसत्वों में इन प्रकार तेहरा बारह प्रकारसे ज्ञान-दर्शन वयाप्यत हुए हो गया । मिथुभो ! तभी मीने ऐसा कहा कि 'मीने अनुत्तर सम्यक सम्वाधि का काम कर लिया है । मुझ ज्ञान-दर्शन उत्पन्न हुआ—मेरा थिच विमुक्त हो गया नहीं मेरा अन्तिम जन्म है अब पुनर्जन्म होने का नहीं ।

भगवान् यह पाले । समुद्र हो पश्चर्यापि मिथुभो न भगवान् के कह का अमितम्भ क्रिया । इस धर्मोपदेश क कह आपे पर आनुष्मात् कोषहृन्म को एत-रहित मरु-रहित धर्म-बहु उत्पन्न हो गया—जो कुछ उत्पन्न होत पाया है सभी निरह होने बाधा है ।

भगवान् क यह धर्म-वक्र प्रवर्तित करने पर भूमिस्थ देवों न राष्ट्र मुनाथ—बाराजसी के पास एतपिपतन सुपहाय न भगवान् ने अनुत्तर धर्म-वक्र का प्रवर्तन किया है जिस न हा कोई धर्मज न प्राणज न द्य न मार न दद्या और न इस लोक में कोई दूसरा प्रवर्तित कर मरता है ।

भूमिस्थ देवों के राष्ट्र तुल यातुमदाराजिक देवों में भी सन्द् मुनाथ—बाराजसी के पास । पर्यत्रिशा देवों में भी ।

इन प्रकार उर्मा ज्ञान उर्मा लव उर्मा सुहृत् न द्रष्टालोक तक यह सन्द् पूर्ण गये । यह एत सदय छाव-घातु वीर्ये न द्विर्ने जालव लगी । देवों के देवानुमाव स भी वद कर अपमाल नभभाव साक में प्रगट हुआ ।

तब भगवान् ने उर्मा के यह सन्द् बहे—अर ! कोषहृन्म ने जान लिया कावहम्भ ने जान लिया !! इर्माजिये आयुष्मान कावहृन्म का नाम अन्त्रा कोषहृन्म पका ।

‡ ० तथागतंन युक्त गुप्त ( ५४ ० ० )

चार भाष-सत्यों का काम

मिथुभो ! "दुःख आर्य-सत्य है यह मुझे को पहले कभी नहीं मुझ गये धर्मों में बहुत उत्पन्न हुआ" परिशेष है "। परिशेष हो गया ।

मिथुभो ! "दुःख-समुत्थप आर्य-सत्य है यह मुझे को पहले कभी नहीं मुझे गये धर्मों में बहुत" । का प्रहास करना चाहिये । प्रहीन हो गया ।

मिथुभो ! "दुःख-निरोध आर्य-सत्य है यह मुझे का पहले कभी नहीं मुझे गये धर्मों में बहुत" । का साक्षात्कार करना चाहिये "। का साक्षात्कार हो गया ।

मिथुभो ! "दुःख-निरोध-गामी मार्ग आर्य-सत्य है यह मुझे का पहले कभी नहीं मुझे गये धर्मों में बहुत" । का अभ्यास करना चाहिये । का अभ्यास निरह हो गया ।

## § ३. खन्ध सुत्त ( ५४. २. ३ )

## चार आर्य-सत्य

भिक्षुओ ! आर्य-सत्य चार हँ । कौन से चार ? दुःख आर्य-सत्य, दुःख-समुदय आर्य-सत्य, दुःख-निरोध आर्य-सत्य, दुःख-निरोध-नामी मार्ग आर्य-सत्य ।

भिक्षुओ ! दुःख आर्य-सत्य क्या है ? कहना चाहिये कि—यह पाँच उपादान-स्कन्ध, जो यह रूप-उपादान-स्कन्ध विज्ञान-उपादान-स्कन्ध । भिक्षुओ ! इसे कहते हैं दुःख आर्य-सत्य” ।

भिक्षुओ ! दुःख-समुदय आर्य-सत्य क्या है ? जो यह तृष्णा ।

भिक्षुओ ! दुःख-निरोध आर्य-सत्य क्या है ? जो उसी तृष्णा का धिक्कुल विराग=निरोध ।

भिक्षुओ ! दुःख-निरोध-नामी मार्ग क्या है ? यह आर्य अष्टांगिक मार्ग ।

भिक्षुओ ! यही आर्य-सत्य हैं । इसलिये, यह दुःख है—ऐसा यमझना चाहिये ।

## § ४ आयतन सुत्त ( ५४ २ ४ )

## चार आर्य-सत्य

भिक्षुओ ! आर्यसत्य चार है ।

भिक्षुओ ! दुःख आर्यसत्य क्या है ? कहना चाहिये कि—यह छ आध्यात्म के आयतन । कौन से छ ? चक्षु-आयतन मन-आयतन । भिक्षुओ ! इसे कहते हैं दुःख आर्यसत्य ।

भिक्षुओ ! दुःख-समुदय आर्यसत्य क्या है ?

[ शोष ऊपर जैसा ही ]

## § ५. पठम धारण सुत्त ( ५४. २ ५ )

## चार आर्यसत्त्यों को धारण करना

भिक्षुओ ! मेरे उपदेश किये गये चार आर्यसत्त्यों को धारण करो ।

यह कहने पर, कोई भिक्षु भगवान् से बोला—भन्ते ! भगवान् के उपदेश किये गये चार आर्य-सत्त्यों को मैं धारण करता हूँ ।

भिक्षु ! कष्टो तो, मेरे उपदेश किये गये चार आर्यसत्त्यों को धारण कैसे करते हैं ?

भन्ते ! भगवान् ने दुःख को प्रथम आर्यसत्य बताया है, उसे मैं धारण करता हूँ । दुःख-समुदय को द्वितीय आर्यसत्य । दुःख-निरोध को तृतीय । दुःख-निरोध-नामी मार्ग को चतुर्थ ।

भन्ते ! भगवान् के उपदेश किये गये चार आर्यसत्त्यों को धारण मैं इस प्रकार करता हूँ ।

भिक्षु ! ठीक, बहुत ठीक ॥ तुमने मेरे उपदेश किये गये चार आर्यसत्त्यों को ठीक से धारण किया है । मैंने दुःख को प्रथम आर्यसत्य बताया है, उसे वैसा ही धारण करो मैंने दुःख-निरोध-नामी मार्ग को चतुर्थ आर्यसत्य बताया है, उसे वैसा ही धारण करो ।

## § ६. दुतिय धारण सुत्त ( ५४ २. ६ )

## चार आर्यसत्त्यों को धारण करना

[ ऊपर जैसा ही ]

भन्ते ! भगवान् ने दुःख को प्रथम आर्यसत्य बताया है, उसे मैं धारण करता हूँ । भन्ते ! यदि कोई श्रमण या ब्राह्मण कहे, "दुःख प्रथम आर्यसत्य नहीं है, जिसे श्रमण गौतम ने बताया है, मैं दुःखको छोट दूसरा प्रथम आर्यसत्य बताऊँगा", तो यह सम्भव नहीं ।

हुण्ड-समुच्चय को द्वितीय आर्षसत्य ।

हुण्ड-निरोध को तृतीय आर्षसत्य ।

“ हुण्ड-निरोध-नामी मार्ग को चतुर्थ आर्षसत्य ।

मन्ते ! मृगबाण के बताये चार आर्षसत्यों को मैं इसी प्रकार धारण करता हूँ ।

मिथु ! ठीक यजुठ ठीक ॥ मेरे पताके चार आर्षसत्यों को तुमसे बहुत ठीक धारण किया है ।

### § ७ अविज्ञा सुच ( ५४ ० ७ )

अविद्या क्या है ?

एक ओर बैठ वह मिथु मृगबाण से बोका मन्ते ! जोग अविद्या अविद्या कहा करते हैं ! मन्ते ! अविद्या क्या है और कोई अविद्या मैं कैसे पढ़ जाता है ?

मिथु ! जो हुण्ड का अज्ञान है हुण्ड-समुच्चय का हुण्ड-निरोध का और हुण्ड-निरोध-नामी मार्ग का अज्ञान है इसी को कहते हैं अविद्या और इसी से कोई अविद्या मैं पढ़ता है ।

### § ८ विज्ञा सुच ( ५४ २ ८ )

विद्या क्या है ?

एक ओर बैठ वह मिथु मृगबाण ने बोका मन्ते ! जोग विद्या विद्या कहा करते हैं ! मन्ते ! विद्या क्या है और कोई विद्या मैं कैसे प्राप्त करता है ?

मिथु ! जो हुण्ड का ज्ञान है हुण्ड-समुच्चय का हुण्ड-निरोध का और हुण्ड-निरोध-नामी मार्ग का ज्ञान है इसी को कहते हैं विद्या और इसी से कोई विद्या का ज्ञान करता है ।

### § ९ संकासन सुच ( ५४ २ ९ )

आर्षसत्यों को प्रगट करना

मिथुजी ! हुण्ड आर्षसत्य है यह मैंने बताया है । उस हुण्ड को प्रगट करने के मतलब समझ लो ।

हुण्ड-समुच्चय आर्षसत्य है ।

हुण्ड-निरोध आर्षसत्य है ।

हुण्ड-निरोध-नामी मार्ग आर्षसत्य है ।

### § १० तथा सुच ( ५४ २ १० )

चार यथार्थ बातें

मिथुजी ! यह चार तथ्य अविद्यक ह-क-हू बने ही हैं । कील से चार ।

मिथुजी ! हुण्ड तथ्य है यह अविद्यक ह-क-हू ऐसा ही है ।

हुण्ड-समुच्चय ।

हुण्ड-निरोध ।

हुण्ड-निरोध-नामी मार्ग ।

परमब्रह्म-प्रयत्न धर्म समाप्त

## तीसरा भाग

### कोटिग्राम वर्ग

#### § १. षष्ठम विज्जा सुत्त ( ५४. ३. १ )

आर्यसत्त्वों के अदर्शन से ही आवागमन

ऐसा मंते सुना ।

पुरु षमप, भगवान् बज्जी ( जनपद ) में कोटिग्राम में विहार करते थे ।

पहले, भगवान् ने शिषुओं को आमन्त्रित किया—भिषुओ ! चार आर्यसत्त्वों के अनुबोध = प्रतिबोध न होने से ही दीर्घकाल से मेरा वीर पुत्रद्वारा यह अदर्शन-रूपना, पुरु जन्म से दूसरे जन्म में पड़ना लगा रहा है । किन चार ह ?

भिषुओ ! दु ग आर्यसत्त्व है, इसके अनुबोध = प्रतिबोध न होने से 'मि, तु' चल रहा है ।  
दुःख-समुदय '। दु ग-निरोध । दु ग-निरोध गामी मार्ग ।

भिषुओ ! इन्हीं दु ग अर्यसत्त्व, दु ग समुदय... । दु ग निरोध , तथा दु ग-निरोध-गामी मार्ग आर्यसत्त्व के अनुबोध = प्रतिबोध हो जाने से भय-वृत्ता उत्पन्न हो जाती है, भय (=त्रासन) का खिलसिला दृष्ट जाता है, पुनर्जन्म नहीं होता ।

भगवान् यह बोले... ।

चार आर्यसत्त्वों के यथार्थ ज्ञान न होने से ,  
दीर्घकाल से उस उम जन्म में पड़ते रहना पड़ा ।  
अब वे ( चार आर्यसत्त्व ) देख लिये गये हैं ,  
भय में खानेवाली (= वृत्ता) नष्ट कर दी गई है ।  
दुःखों का जड़ कट गया ,  
अब, पुनर्जन्म होने का नहीं ।

#### § २. द्वातिय विज्जा सुत्त ( ५४. ३. २ )

वे श्रमण और ब्राह्मण नहीं

भिषुओ ! जो श्रमण या ब्राह्मण 'यह दु ख है' इसे यथार्थत नहीं जानते हैं, 'यह दु ख-समुदय है' इसे... , 'यह दु ख-निरोध है' इसे , 'यह दु ख-निरोध-गामी मार्ग है' इसे , यह न तो श्रमणों में श्रमण जाने जाते हैं, और न ब्राह्मणों में ब्राह्मण । वह आयुष्मान् श्रमण या ब्राह्मण के परमार्थ को देखते ही देखते स्वयं जान, साक्षात्कार कर और प्राप्त कर विहार नहीं करते हैं ।

भिषुओ ! जो श्रमण या ब्राह्मण 'यह दु ख है' इसे यथार्थत जानते हैं वह आयुष्मान् श्रमण या ब्राह्मण के परमार्थ को देखते ही देखते स्वयं जान, साक्षात्कार कर और प्राप्त कर विहार करते हैं ।

भगवान् यह बोले ।

जो दु ख को नहीं जानते हैं, और दु ख की उत्पत्ति को ।  
और वहाँ दु ख सभी तरह से त्रिक्लक निरुद्ध हो जाता है ॥

उस मार्ग को भी नहीं जानते हैं जिससे दुःखों का उपशम होता है ।  
 चित्त की विमुक्ति से हीन और प्रज्ञा की विमुक्ति से भी ।  
 वे जगत् करने में असमर्थ, जाति भीरु जरा में पड़ते हैं ।  
 जो दुःख को जानते हैं और दुःख की उत्पत्ति को ।  
 और वहाँ दुःख सभी तरह से बिन्दुक निवृत्त हो जाता है ।  
 उस मार्ग को भी जानते हैं जिससे दुःखों का उपशम होता है ।  
 चित्त की विमुक्ति से मुक्त और प्रज्ञा की विमुक्ति से भी ।  
 वे जगत् करने में समर्थ, जाति भीरु जरा में नहीं पड़ते हैं ।

### § ३ सम्प्रासम्बुद्ध सुच ( ५४ ३ ३ )

चार आर्यसत्त्वों के ज्ञान से सम्बुद्ध

भाषस्ती जेतयन ।

मिथुजो ! आर्यसत्त्व चार हैं । जौन स चार ?

दुःख-आर्यसत्त्व दुःख-विरोध-नामी मार्ग आर्यसत्त्व । मिथुजो ! यही चार आर्यसत्त्व हैं ।

मिथुजो ! इन चार आर्यसत्त्वों का ब्यार्थता बुद्ध की डीङ् डीङ् ज्ञान प्राप्त हुआ है । इसी से वे  
 अर्हत् सम्बुद्ध सम्बुद्ध बने जाते हैं ।

### § ४ अरहा सुच ( ५४ ३ ४ )

चार आर्यसत्त्व

भाषस्ती जेतयन ।

मिथुजो ! अतीतजन्म में त्रिक अर्हत् सम्बुद्ध-सम्बुद्ध ने ब्यार्थ का अवबोध किया है । सभी  
 ने इन्हीं चार आर्यसत्त्वों के पयार्थ का ही अवबोध किया है ।

अनायनज्जक में ।

अर्हमायज्जक में ।

किस चार के ? दुःख आर्यसत्त्व का दुःख-समुत्पन्न आर्यसत्त्व का दुःख-विरोध आर्यसत्त्व का  
 दुःख-विरोध-नामी मार्ग आर्यसत्त्व का

### § ५ भासयक्खय सुच ( ५४ ३ ५ )

चार आर्यसत्त्वों के ज्ञान से आश्रय क्षय

मिथुजो ! मैं जान और देख कर ही आश्रयों के क्षय का उपदेश जाता हूँ, विषय जाने देने  
 नहीं । मिथुजो ! क्या ज्ञान और देख कर आश्रयों का क्षय होता है ?

“बुद्ध दुःख हैं । इन्हें ज्ञान और देख कर आश्रयों का क्षय होता है । “बुद्ध दुःख-विरोध-नामी  
 मार्ग हैं” इस ज्ञान और देख कर आश्रयों का क्षय होता है ।”

### § ६ मिस सुच ( ५४ ३ ६ )

चार आर्यसत्त्वों की शिरा

मिथुजो ! त्रिक चर सुम्हारी अनुकम्पा है । जिन्हें सम्मत्ता कि सुम्हारी वाच सुनेगे । मिस सम्मत्ता  
 चार का सम्बुद्ध-सम्बुद्ध इन्हें चार आर्यसत्त्वों का ब्यार्थ ज्ञान मैं शिक्षा दे रहा प्रवेश कर रहा अनिहित  
 कर दो ।



किन चार के ? दु ख आर्य-सत्य के दु ख-निरोध-गामी मार्ग आर्य-सत्य के ।”

### § ७. तथा सुत्त ( ५४ ३ ७ )

आर्य-सत्य यथार्थ हैं

भिक्षुओ ! आर्य-सत्य चार हैं । ”

भिक्षुओ ! यह चार आर्य-सत्य तथ्य हैं, अधितथ्य हैं, ह्य-वहू वंसे हीं हैं, इमी से वे आर्य-सत्य कहे जाते हैं ।

### § ८. लोक सुत्त ( ५४ ३ ८ )

बुद्ध ही आर्य हैं

भिक्षुओ ! आर्य-सत्य चार हैं ।

भिक्षुओ ! देव-मार-मह्य सहित इम लोक मे बुद्ध ही आर्य हैं । इमलिये आर्य-सत्य कहे जाते हैं ।

### § ९. परिञ्जेय सुत्त ( ५४ ३ ९ )

चार आर्य-सत्य

भिक्षुओ ! आर्य-सत्य चार हैं ।

भिक्षुओ ! इन चार आर्य-सत्यां मे कोई आर्य सत्य परिञ्जेय है, कोई आर्य-सत्य प्रहीण करने योग्य है, कोई आर्य-सत्य साक्षात्कार करने योग्य है, कोई आर्य-सत्य अभ्यास करने योग्य है ।

भिक्षुओ ! कौन आर्य सत्य परिञ्जेय है ? भिक्षुओ ! दु ख आर्य-सत्य परिञ्जेय है । दु ख-समुदय आर्य-सत्य प्रहाण करने योग्य है । दु ख-निरोध आर्य-सत्य साक्षात्कार करने योग्य है । दु ख-निरोध-गामी मार्ग आर्य-सत्य अभ्यास करने योग्य है ।

### § १०. गवम्पति सुत्त ( ५४ ३ १० )

चार आर्य-सत्यां का दर्शन

एक समय, कुछ स्वविर भिक्षु चेत ( जनपद ) मे सहज्जनिक मे विहार करते थे ।

उस समय, भिक्षाटन से लौट, भोजन कर लेने के बाद सभा-गृह मे इकट्ठे हो बैठे उन स्वविर भिक्षुओं मे यह बात चली, आयुस ! जो दु खको देखता है और दु ख समुदय को, वह दु ख-निरोध को भी देख लेता है और दु ख-निरोध-गामी मार्ग को भी ।

यह कहने पर आयुप्मान् गवम्पति उन स्वविर भिक्षुओं से बोले—आयुस ! मैंने भगवान् के अपने मुख से सुन कर सीखा है—

भिक्षुओ ! जो दु ख को देखता है, वह दु ख-समुदय को भी देखता है, दु ख-निरोध को देखता है, दु ख-निरोध-गामी मार्ग को भी देखता है । जो दु ख-समुदय को देखता है, वह दु ख को भी देखता है, दु ख-निरोध को भी देखता है, दु ख-निरोध गामी मार्ग को भी देखता है । जो दु ख-निरोध को देखता है, वह दु ख को देखता है, दु ख-समुदय को भी देखता है, दु ख-निरोध गामी मार्ग को भी देखता है । जो दु ख-निरोध गामी मार्ग को देखता है, वह दु ख को भी देखता है, दु ख-समुदय को भी देखता है, दु ख-निरोध को भी देखता है ।

कोटिग्राम वर्ग समाप्त

## चौथा भाग

### सिसपावन धर्म

४ १ सिसपा सुच ( ५४ ४ १ )

कही हुई बातें थोड़ी ही हैं

एक समय, मगबाब् कौशाम्बी में सिसपावन में विहार करते थे।

तब मगबाब् ने हाथ में थोड़े-से सिसप (= छीसम) के पत्ते लेकर मिथुनों को कामन्वित किया "मिथुनों ! तो क्या समझते हो कौन अचिन्त है वह जो मरे हाथ में थोड़े सिसप के पत्ते हैं या जो ऊपर सिसप-वण में हैं ?

भन्ते ! मगबाब् ने अपने हाथ में जो सिसप के पत्ते किये हैं वह तो बहुत थोड़ा है जो ऊपर इस सिसप-वण में हैं वह बहुत हैं।

मिथुनों ! जैसे ही मैंने जाबहर जिसे महीं कहा है वही बहुत है जो कहा है वह तो बहुत थोड़ा है।

मिथुनों ! मैंने क्यों नहीं कहा है ? मिथुनों ! यह न तो अर्थ सिद्ध करनेवाला है न अज्ञान्य का छावक है न निर्बोध न विराग न विरोध न उपशम न अमिशा न सम्मोधि और न निर्वाण के किये हैं। इच्छकिये मैंने इस परी कहा है।

मिथुनों ! मैंने क्या कहा है ? वह दुःख ही ऐसा मैंने कहा है। वह दुःख-समुद्र है। वह दुःख-विरोध है। वह दुःख-विरोध-गामी मार्ग है।

मिथुनों ! मैंने यह क्यों कहा है ? मिथुनों ! परी अर्थ सिद्ध करनेवाला है निर्वाण के किये हैं। इच्छकिये यह कहा है।

४ २ खदिर सुच ( ५४ ४ २ )

आर भार्यसरथों के क्षण से ही दुःख का भन्त

"मैं दुःख को बधार्थता बिना जाने दुःख-समुद्र को बधार्थता बिना जाने दुःख-विरोध को बधार्थता बिना जाने दुःख-विरोधगामी मार्ग को बधार्थता बिना जाने, 'दुःखों का निवृत्त भन्त कर दूँगा' तो वह सम्भव नहीं।

मिथुनों ! जैसे, यदि कोई बड़े "मैं हीर या बन्धन या भीरों के पत्तों का होना बनावर पानी या तैल के आर्से "तो यह सम्भव नहीं जैसे ही यदि कोई बड़े "मैं दुःख को बिना जाने।

मिथुनों ! यदि कोई बड़े "मैं दुःख भावैनाय को बधार्थता बिना 'दुःख-विरोध-गामी मार्ग को बधार्थता बिना दुःखों का निवृत्त भन्त कर दूँगा" तो वह सम्भव है।

मिथुनों ! जैसे यदि कोई बड़े "मैं पद्म पकास या मनुष्य के पत्तों का होना बनावर पानी या तैल के आर्से" तो वह सम्भव है जैसे ही यदि कोई बड़े "मैं दुःख भावैनाय को बधार्थता बिना।

## § ३ दण्ड सुक्त ( ५४. ४. ३ )

चार आर्य-सत्त्वों के अ-दर्शन से आचागमन

भिक्षुओ ! जैसे लाठी ऊपर आकाश में फेंकी जाने पर एक बार मूल से गिरती है, एक बार मध्य से, और एक बार अग्र से, वैसे ही अधिष्ठा में पड़े प्राणी, सृष्टि के बन्धन में बँधे, संसार में एक बार इस लोक से परलोक जाते हैं और एक बार परलोक से इस लोक में आते हैं। सो क्यों ? भिक्षुओ ! चार आर्य-सत्त्वों का दर्शन न होने से।

किन चार का ? दुःख आर्य-सत्त्व का • दुःख-निरोध-गामी मार्ग आर्य सत्त्व का ।.....

## § ४. चेल सुक्त ( ५४. ४. ४ )

जलने की परचाह न कर आर्य-सत्त्वों को जाने

भिक्षुओ ! कपड़े या शिर में आग पकड़ लेने से उसे क्या करना चाहिये ?

मन्ते ! कपड़े या शिर में आग पकड़ लेने से उसे बुझाने के लिये उसे अत्यन्त छन्द, व्यायाम, उत्प्राह, तत्परता, ख्याल और खबरगिरी करनी चाहिये।

भिक्षुओ ! कपड़े या शिर में आग पकड़ लेने पर भी उसकी उपेक्षा करके न जाने गये चार आर्य-सत्त्वों को यथार्थत जानने के लिये अत्यन्त छन्द, व्यायाम, उत्प्राह, तत्परता, ख्याल और खबरगिरी करनी चाहिये।

किन चार को ? दुःख आर्य-सत्त्व को • दुःख-निरोध-गामी मार्ग आर्य-सत्त्व को।

## § ५. सत्तिसत् सुक्त ( ५४. ४. ५ )

सौ भाले से भोंका जाना

भिक्षुओ ! जैसे, कोई सा बर्षों की आयु वाला पुरुष हो। उसे कोई कहे, हे पुरुष ! सुबह मैं तुम्हें सौ भाले भोंके जायेंगे, दोपहर में भी तुम्हें सौ भाले भोंके जायेंगे, शाम में भी तुम्हें सौ भाले भोंके जायेंगे। हे पुरुष ! सो तुम इस प्रकार दिन में तीन बार सौ सौ भालों से भोंके जाते हुये सौ बर्षों के बाद न जाने गये चार आर्य-सत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करोगे" तो हे भिक्षुओ ! परमार्थ पाने की इच्छा रखने वाले कुलपुत्र को स्वीकार कर लेना चाहिये। सो क्यों ?

भिक्षुओ ! इस संसार का छोड़ जाना नहीं जाता। भाले, तलवार और फरसे के प्रहार कब आरम्भ हुये ( =पूर्वकोटि ) पता नहीं चलता। भिक्षुओ ! बात ऐसी ही है, इसीलिये उसे मैं दुःख और दीर्घमनस्य से चार आर्य-सत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करना नहीं समझता, किन्तु सुख और सौमनस्य से।

किन चार का ?

## § ६. पाण सुक्त ( ५४. ४. ६ )

अपाय से मुक्त होना

भिक्षुओ ! जैसे, कोई पुरुष इस जम्बूद्वीप के चारों चूण-काष्ठ-शाखा-पलास को काट कर एक जगह इकट्ठा करे, और उनके खँटे बनावे। फिर, महासमुद्र के बड़े बड़े जीवों को बड़े खँटे में बाँध दे, मझले जीवों को मझले खँटे में बाँध दे, छोटे जीवों को छोटे खँटे में बाँध दे। तो, भिक्षुओ ! महासमुद्र के पकड़े जा सकने वाले जीव समाप्त नहीं होंगे, और चारों चूण-काष्ठ समाप्त हो जायेंगे। भिक्षुओ ! और महासमुद्र में इनसे कहीं अधिक तो जैसे सूक्ष्म जीव हैं जो खँटे में नहीं बाँधे जा सकते हैं।

तो क्यों ? मिथुनो ! क्योंकि वे अत्यन्त सूक्ष्म हैं ।

मिथुनो ! भ्राम्य (अर्थात् 'नीच योगि') इतना कहा है । मिथुनो ! सम्यक्-वृष्टि संयुक्त पुरुष उस भ्राम्य से मुक्त हो जाता है किन्तु 'बह दुःख है' पदार्थतः जान लिया है 'बह दुःख-निरोध-नामी मार्ग है' पदार्थतः जान लिया है ।

### § ७ षष्ठम सुरियूपम सुप्त ( ५४ ४ ७ )

#### ज्ञान का पूर्व-दर्शन

मिथुनो ! आकाश में लम्बाई का छा जाना पूर्वोदय का पूर्व-दर्शन है । मिथुनो ! जैसे ही सम्यक्-वृष्टि चार कार्यसत्त्वों के ज्ञान के ज्ञान का पूर्व-दर्शन है ।

मिथुनो ! सम्यक्-वृष्टिवाका मिथु 'बह दुःख है' इसे पदार्थतः मकबता जान सकता है 'बह दुःख-निरोध-नामी मार्ग है' इसे पदार्थतः मकबता जान सकता है ।

### § ८ द्वितीय सुरियूपम सुप्त ( ५४ ४ ८ )

#### तथागत की उत्पत्ति से ज्ञानाच्छोक

मिथुनो ! अथवा चोंच का सूत्र नहीं उगता है तभी तक महात्मा आच्छोक = अथवा का प्रानुमान नहीं होता है ।

मिथुनो ! जब चोंच या सूत्र उग जाता है तब महात्मा आच्छोक = अथवा का प्रानुमान होता है । उस समय अन्धा बना देनेवाली भ्रमिचारी नहीं रहती है । शत-दिन का पता चलता है । महीना और आधे महीना का पता चलता है । ऋतु भीर वर्ष का पता चलता है ।

मिथुनो ! जैसे ही अथवा तथागत अर्थात् सम्यक्-सम्बुद्ध नहीं उत्पन्न होते हैं तब तक महात्मा आच्छोक = अथवा का प्रानुमान नहीं होता है । तब तक अन्धा बना देनेवाली भ्रमिचारी कहीं रहती है । तब तक चार कार्यसत्त्वों की व तो कोई पार्थ करता है न उपदेश करता है न शिक्षा देता है, न सिद्धि करता है न उम्मे छोड़ता है न विमिश्रित करता है न साक्ष करता है ।

मिथुनो ! जब तथागत अर्थात् सम्यक्-सम्बुद्ध संसार में उत्पन्न होते हैं तब महात्मा आच्छोक = अथवा का प्रानुमान होता है । तब अन्धा बना देनेवाली भ्रमिचारी रहन नहीं पाती । तब चार कार्यसत्त्वों की वृत्त होने लगती हैं शिक्षा होने लगती है सिद्धि होती है बह लोक दिया जाता है विमिश्रित कर दिया जाता है पाठ कर दिया जाता है ।

जिन चार की ?

### § ९ इन्द्रखील सुप्त ( ५४ ४ ९ )

#### चार कार्यसत्त्वों के ज्ञान से स्थिरता

मिथुनो ! जो समय का ज्ञान 'बह दुःख है' इसे पदार्थतः नहीं जानते हैं 'बह दुःख निरोध-नामी मार्ग है' इसे पदार्थतः नहीं जानते हैं वे दूसरे समय का ज्ञान का सुँद लकते हैं— शायद बह संसार को जानना हुआ जानता होगा देखा हुआ हैलता ज्ञान ।

मिथुनो ! जैसे कोई हकका कर्ने का कपामना कहा हुआ बहते समय क्षमता क्षमता पर सँक दिया जाय । तब चार की हवा उम्मे पश्चिम की ओर उड़ा कर के ज्ञान पश्चिम की हवा पूर्व की ओर उड़ा कर के ज्ञान उत्तर की हवा दक्षिण की ओर उड़ा कर के ज्ञान भीर दक्षिण की हवा उत्तर की ओर उड़ा कर के ज्ञान ।

सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि ऋपास का फाहा बहुत हलका है ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, जो श्रमण या ब्राह्मण 'यह दुःख है' इसे यथार्थत नहीं जानते हैं, 'यह दुःख-निरोध-नामी मार्ग है' इसे यथार्थत नहीं जानते हैं, वे दूसरे श्रमण या ब्राह्मण का मुँह ताकते हैं ।

सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि उनसे चार आर्य-सत्वों का दर्शन नहीं किया है ।

भिक्षुओ ! जो श्रमण या ब्राह्मण 'यह दुःख है' इसे यथार्थत जानते हैं 'यह दुःख-निरोध-नामी मार्ग है' इसे यथार्थत जानते हैं, वे दूसरे श्रमण या ब्राह्मण का मुँह नहीं ताकते हैं ।

भिक्षुओ ! जैसे, कोई अचल, अकम्प, खूब गहरा अचड़ी तरह गड़ा हुआ लोहे या पत्थर का खूँटा हो । तब, यदि पूरव की ओर से भी खूब आँधी-पानी आवे तो उसे कुछ भी कँपा नहीं सके, पश्चिम की ओर से भी, उत्तर, दक्षिण ।

सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि वह खूँटा इतना गहरा, और अचड़ी तरह गड़ा हुआ है ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, जो श्रमण या ब्राह्मण 'यह दुःख है' इसे यथार्थत जानते हैं 'यह दुःख-निरोध-नामी मार्ग है' इसे यथार्थत जानते हैं, वे दूसरे श्रमण या ब्राह्मण का मुँह नहीं ताकते ।

सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि उसने चार आर्य-सत्वों का अचड़ी तरह दर्शन कर लिया है ।

किन चार का ? दुःख आर्य-सत्व का, दुःख-निरोध-नामी मार्ग आर्य-सत्व का ।

### § १० वादि सुक्त ( ५४. ४ १० )

#### चार आर्य-सत्वों के ज्ञान से स्थिरता

भिक्षुओ ! जो भिक्षु 'यह दुःख है' इसे यथार्थत जानता है 'यह दुःख-निरोध-नामी मार्ग है' इसे यथार्थत जानता है, उसके पास यदि पूरव की ओर से भी कोई वहसी श्रमण या ब्राह्मण बहस करने के लिये आवे, तो वह उसे धर्म से कँपा देगा, ऐसा सम्भव नहीं । पश्चिम की ओर से । उत्तर । दक्षिण ।

भिक्षुओ ! जैसे, सोलह कुक्कु ( = उस समय में लम्बाई का एक परिमाण ) का कोई पत्थर का घूम ( = वज्र-स्तम्भ ) हो । आठ कुक्कु जमीन में गड़ा हो, और आठ कुक्कु ऊपर निकला हो । तब, पूरव की ओर से खूब आँधी-पानी आवे, किन्तु उसे कँपा नहीं सके । पश्चिम । उत्तर । दक्षिण ।

सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि वह पत्थर का घूम बहुत गहरा अचड़ी तरह गड़ा हुआ है ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, जो भिक्षु 'यह दुःख है' इसे यथार्थत जानता है 'यह दुःख-निरोध-नामी मार्ग है' इसे यथार्थत जानता है, उसके पास यदि पूरव की ओर से ।

सो क्यों ? भिक्षुओ ! क्योंकि उसने चार आर्य-सत्वों का दर्शन अचड़ी तरह कर लिया है ।

किन चार का ?

सिंसपाघन वर्ग समाप्त

## पाँचवाँ भाग

### प्रपात चर्ग

§ १ पिन्ता सुष ( ५४ ५ १ )

छोक का चिन्तन न करे

एक समय भगवान् राजगृह में धेलुथन कसम्क निपाप में विहार पर रहे थे ।

वहाँ भगवान् ने मिथुओं को आमन्त्रित किया "मिथुओं ! बहुत पहले, कोई पुत्र राजगृह से निकल छोड़ का चिन्तन करने के लिये जहाँ सुमागधा पुष्करिणी थी वहाँ गया । अथवा, सुमागधा पुष्करिणी के तीर पर छोड़ का चिन्तन करते हुए बैठ गया ।

'मिथुओं ! उस पुत्र ने सुमागधा पुष्करिणी के तीर पर ( बैठे ) कमल-नालों के नीचे बहुत-सी सोना को बँटती देखा । देखकर उसके मन में हुआ, जरे ! मैं क्या पायक हो गया हूँ कि मुझे यह अनहोनी बात दिखाई पड़ी है ।

"मिथुओं ! तब वह पुत्र नगर में आकर लोगों से बोला भन्ते ! मैं पायक हो गया हूँ कि मुझे यह अनहोनी बात दिखाई पड़ी है ।

हे पुत्र ! तुम कैसे पागल हो गये हो ? तुमने क्या अनहोनी बात देखी है ?

भन्ते ! मैं राजगृह से निकल कर छोड़ का चिन्तन करने के लिये । भन्ते ! जो मैं पायक हो गया हूँ कि मुझे यह अनहोनी बात दिखाई पड़ी है ।

हे पुत्र ! तो तुम छोक में पागल हो कि ।

मिथुओं ! उस पुत्र ने मूल ( व्यर्थ ) को ही देखा बहुत को नहीं ।

मिथुओं ! बहुत पहले व्यासुर-संग्राम छिड़ा हुआ था । उस संग्राम में वैपता जीत गये और असुर पराजित हुये । सो वैपताओं के घर से वह असुर कमल-नाक के नीचे से होकर असुर-पुर चले गये ।

मिथुओं ! इसलिये छोड़ का चिन्तन मत करो—छोक साक्षर है या छोड़ अपाक्षर है—  
[ देखो ७२ व अध्याय-संक्षुभ ]

मिथुओं ! यह चिन्तन न तो जर्म सिद्ध करने काय है न ब्रह्मचर्य का साधक है ।

मिथुओं ! यदि तुम्हें चिन्तन करना है तो चिन्तन करो कि 'यह हुआ है 'यह हुआ-विरोध-गामी मार्ग है ।

तो क्यों ? मिथुओं ! क्योंकि यह चिन्तन जर्म सिद्ध करने काय है ।

§ २ प्रपात सुष ( ५४ ५ २ )

भयानक प्रपात

एक समय भगवान् राजगृह में शून्यकृत पर्वत पर विहार करते थे ।

तब भगवान् ने मिथुओं को आमन्त्रित किया "आओ मिथुओं ! जहाँ प्रतिमानकृत है वहाँ चिन्तन के विहार के लिये चले" ।

"भन्ते ! बहुत अप्रजा" वह मिथुओं ने भगवान् को उत्तर दिया ।

तत्र, भगवाः एष भिक्षुर्वा दे साप जज्ञं प्रतिभान्णट ईं पदो गये । एष भिक्षु ने वहाँ प्रतिभान-  
पट पर एक नद्वान् प्रपात को रेखा । देर पर भगवान् ने बोला, “भन्ते ! यह एक बड़ा भयानक प्रपात  
है । भन्ते ! इस प्रपात से भी दद कर कोई दूसरा बड़ा भयानक प्रपात है ?”

हाँ भिक्षु ! इस प्रपात से भी दद कर दूसरा बड़ा भयानक प्रपात है ।

भन्ते ! वह कौन सा प्रपात है ?

भिक्षु ! जो श्रमण या ब्राह्मण ‘यह दुःख है’ इन्से यथार्थत नहीं जानते हैं— ‘यह दुःख-निरोध-  
गामी मार्ग है’ इन्से यथार्थत नहीं जानते हैं, वे जन्म देने वाले संस्कारों में पड़े रहते हैं, बुढ़ापा लाने  
वाले संस्कारों में पड़े रहते हैं, मृत्यु देने वाले संस्कारों में पड़े रहते हैं, शोक-परिदेव-दुःख दास्य-संस्कार-  
वप्याम लाने वाले संस्कारों में पड़े रहते हैं । इन प्रकार पड़े रह, वे और भी संस्कारों का मंचय  
करते हैं । अत वे जाति-प्रपात में गिरते हैं, जरा-प्रपात में गिरते हैं, मरण-प्रपात में गिरते हैं, शोकदि  
के प्रपात में गिरते हैं । वे जाति से भी मुक्त नहीं होते, जरा से भी, मरण से भी, शोकदि से  
भी मुक्त नहीं होते । दुःख से मुक्त नहीं होते हैं—ऐसा मैं कहता हूँ ।

भिक्षु ! जो श्रमण या ब्राह्मण ‘यह दुःख है’ इन्से यथार्थत जानते हैं— ‘यह दुःख-निरोध-गामी  
मार्ग है’ इन्से यथार्थत जानते हैं वे जन्म देनेवाले संस्कारों में नहीं पड़ते हैं, बुढ़ापा लानेवाले संस्कारों  
में नहीं पड़ते हैं । इन प्रकार न पड़े वे और भी संस्कारों का सञ्चय नहीं करते हैं । अत, वे जाति-  
प्रपात में भी नहीं गिरते हैं, जरा-प्रपात में भी नहीं गिरते हैं । वे जाति से भी मुक्त हो जाते हैं, जरा  
से भी । दुःख से मुक्त हो जाते हैं—ऐसा मैं कहता हूँ ।

### § ३. परिदाह सुत्त ( ५४. ५. ३ )

#### परिदाह-नरफ

भिक्षुओ ! मल-परिदाह नाम का एक नरक है । वहाँ जो कुछ और से देखता है अनिष्ट ही  
देखता है, हृष्ट नहीं, असुन्दर ही देखता है, सुन्दर नहीं, अभिय ही देखता है, प्रिय नहीं । जो कुछ  
कान से सुनता है अनिष्ट ही । जो कुछ मन से धर्मों को जानता है अनिष्ट ही ।

यह कहने पर कोई भिक्षु भगवान् से बोला, “भन्ते ! यह तो बहुत बड़ा परिदाह है । भन्ते !  
इससे भी क्या कोई दूसरा बड़ा भयानक परिदाह है ?”

हाँ भिक्षु ! इससे भी एक दूसरा बड़ा भयानक परिदाह है ।

भन्ते ! वह परिदाह कौन सा है जो इस परिदाह से भी बड़ा भयानक है ?

भिक्षु ! जो श्रमण या ब्राह्मण ‘यह दुःख है’ इन्से यथार्थत नहीं जानते हैं ‘यह दुःख-निरोध-  
गामी मार्ग है, इन्से यथार्थत नहीं जानते हैं, वे जन्म देनेवाले संस्कारों में पड़े रहते हैं । और भी  
संस्कारों का सञ्चय करते हैं । अत, वे जाति-परिदाह से भी जलते हैं, जरा परिदाह से भी जलते हैं ।  
वे जाति से भी मुक्त नहीं होते । दुःख से मुक्त नहीं होते हैं—ऐसा मैं कहता हूँ ।

भिक्षु ! जो श्रमण या ब्राह्मण ‘यह दुःख है’ इन्से यथार्थत जानते हैं ‘यह दुःख-निरोध-गामी  
मार्ग है’ इन्से यथार्थत जानते हैं, वे जन्म देनेवाले संस्कारों में नहीं पड़ते । संस्कारों का सञ्चय नहीं  
करते हैं । अत वे जाति-परिदाह से भी नहीं जलते हैं, जरा-परिदाह से भी नहीं जलते हैं । वे जाति से  
मुक्त हो जाते हैं । दुःख से मुक्त हो जाते हैं—ऐसा मैं कहता हूँ ।

### § ४. कूटागार सुत्त ( ५४. ५. ४ )

#### कूटागार की उपमा

भिक्षुओ ! जो कोई ऐसा कहे कि, ‘मैं दुःख आर्यसत्य को बिना जाने दुःख-निरोध-गामी मार्ग  
आर्यसत्य को बिना जाने दुःखों का बिल्कुल अन्त कर दूँगा,’ तो यह सम्भव नहीं ।

मिथुभो ! जैसे जो कोई कहे कि "मैं बुद्धाचार का निषेधा करता बिना बनाये ऊपर का करता क्या हूँगा" तो यह सम्भव नहीं। मिथुभो ! जैसे ही जो कोई कहे कि "मैं बुद्ध-आर्षसत्य को बिना जाने बुद्ध-निरोध-नामी मार्ग आर्षसत्य को बिना जाने दुःखों का विस्तृत जन्म कर हूँगा" तो यह सम्भव नहीं।

मिथुभो ! जो कोई ऐसा कहे कि "मैं बुद्ध आर्षसत्य को जान बुद्ध-निरोध-नामी मार्ग आर्षसत्य को जान बुद्ध का विस्तृत जन्म कर हूँगा" तो यह सम्भव है।

मिथुभो ! जैसे जो कोई कहे कि "मैं बुद्धाचार का निषेधा करता बनाकर ऊपर का करता क्या हूँगा" तो यह सम्भव है। मिथुभो ! जैसे ही जो कोई कहे कि "मैं बुद्ध आर्षसत्य को जान बुद्ध-निरोध-नामी मार्ग आर्षसत्य को जान बुद्धों का विस्तृत जन्म कर हूँगा" तो यह सम्भव है।

### § ५ पठम छिगल सुत्त ( ५४ ५ ५ )

#### सबसे कठिन कथ्य

एक समय महाबाहू वैशाखी में महायान की कूट्यागाच्छाळा में बिहार करते थे।

तब पूर्वाह्न समय आयुष्मान् आनन्द पहल और पात्र नीचर के वैशाखी में सिद्धाठन के किये पड़े।

आयुष्मान् आनन्द ने कुछ क्षिप्य-दुमाराँ को संस्थागार में धनुर्विद्या का जन्मास करते देखा जो दूर से ही एक छोटे छिद्र में बाण पर बाण चेंक रहे थे।

देखकर उनके मन में हुआ—अरे ! यह क्षिप्य-दुमाराँ सब सीखे हुये हैं जो दूर से ही एक छोटे छिद्र में बाण पर बाण चेंक रहे हैं।

तब सिद्धाठन से डीठ मोहन कर देने के उपरान्त आयुष्मान् आनन्द वहाँ महाबाहू के वहाँ आये और महाबाहू को अभिवादन कर पूछ और बैठ गये।

एक और बैठ आयुष्मान् आनन्द महाबाहू से बाँके भर्षे। यह मैं पूर्वाह्न समय। देख कर मरे मन में हुआ—अरे ! यह क्षिप्य-दुमाराँ सब सीखे हुये हैं।

आनन्द ! तो तुम क्या समझते हो कीन अभिध कठिन है यह जो दूर से ही एक छोटे छिद्र में बाण पर बाण चेंक रहे हैं यह था यह जो बाण के बने हुये सीखे जाग जो बाण से बंध है।

भर्षे ! वही अभिध कठिन है जो बाण के बने हुये सीखे जाग जो बाण से बंध है।

आनन्द ! किन्तु वे सब से कठिन कथ्य को देखते हैं जो 'यह बुद्ध है' इसे पचाईता बंध जत है "यह बुद्ध-निरोध-नामी मार्ग है" इसे पचाईताः बंध देते हैं।

### § ६ अन्वकार सुत्त ( ५४ ५ ६ )

#### सबसे बड़ा भयानक अन्वकार

मिथुभो ! एक बोक है जो जन्मा बना देनाइके घोर अन्वकार से हैना है वहाँ इतने बड़े लेख बाँके चैंक-सुराज की भी रोधनी नहीं पहुँचती है।

यह कहन पर कोई मिथु महाबाहू ने बोका "भर्षे ! यह तो महा अन्वकार है सुमहा अन्वकार है ॥ भर्षे ! क्या कोई इससे भी बड़ा भयानक दूसरा अन्वकार है ?

हाँ मिथु ! इसमें जी बड़ा भयानक एक दूसरा अन्वकार है।

भर्षे ! यह कीन-या दूसरा अन्वकार है जो इससे भी बड़ा भयानक है।

मिथु ! जो अन्वकार का अन्वकार 'यह बुद्ध है' इसे पचाईता नहीं जानते हैं "यह बुद्ध-निरोध



गामी मार्ग है' इन्से यवार्थत नहीं जानते हैं, वे जन्म देनेवाले संस्कारों में पड़े रहते हैं...जाति-अन्धकार में गिरते हैं, जरा-अन्धकार में गिरते हैं ।

भिक्षु ! जो श्रमण या ब्राह्मण 'यह दुःख है' इन्से यवार्थत जानते हैं, वे जन्म देनेवाले संस्कारों में नहीं पड़ते... जाति-अन्धकार में नहीं गिरते, जरा-अन्धकार में नहीं गिरते ।

### § ७. दुतिय छिग्गल सुत्त ( ५४. ५. ७ )

#### काने कळुये की उपमा

भिक्षुओ ! जैसे, कोई पुरप एक छिद्रवाला एक धुर महा-समुद्र में फेंक दे । वहाँ एक काना कळुआ हो जो सौं-सौं वर्षों के बाद एक चार ऊपर उठता हो ।

भिक्षुओ ! तो तुम क्या समझते हो, इस प्रकार वह कळुआ क्या उस छिद्र में अपना गला कभी घुसा देगा ?

भन्ते ! शायद बहुत काल के बाद ऐसा हो जाय ।

भिक्षुओ ! इस प्रकार भी वह कळुआ ग्रीध्र हो उस छिद्र में अपना गला घुसा लेगा, किन्तु मूर्ख एक चार नीचे गति को प्राप्त कर मनुष्यता का जट्टी लाभ नहीं करता है । सो क्यों ?

भिक्षुओ ! यहाँ धर्म-चर्या=सम-चर्या=कुशल-चर्या=पुण्य-क्रिया नहीं है । भिक्षुओ ! यहाँ एक दूसरे को खाने पर पड़ा है, सबल दुर्बल को खा जाता है । सो क्यों ?

भिक्षुओ ! चार आर्यसत्त्वों का दर्शन न होने से । किन चार का ?

### § ८ ततिय छिग्गल सुत्त ( ५४ ५ ८ )

#### काने कळुये की उपमा

भिक्षुओ ! जैसे, यह महा-पृथ्वी पानी से बिल्कुल लबालब भर जाय । तब कोई पुरुष एक छिद्र-वाला एक धुर फेंक दे । उसे पूरव की हवा पश्चिम की ओर बहाकर ले जाय, पश्चिम की हवा पूरव की ओर, उत्तर की हवा दक्षिण की ओर, और दक्षिण की हवा उत्तर की ओर । वहाँ कोई एक काना कळुआ हो ।

भिक्षुओ ! तो तुम क्या समझते हो, इस प्रकार वह कळुआ क्या उस छिद्र में अपना गला कभी घुसा देगा ?

भन्ते ! शायद ऐसा कभी संयोग लग जाय तो वह कळुआ उस छिद्र में अपना गला कभी घुसा दे ।

भिक्षुओ ! वैसे ही, यह बड़े संयोग की बात है कि कोई मनुष्यत्व का लाभ करता है । भिक्षुओ ! वैसे ही, यह भी बड़े संयोग की बात है कि तथागत अर्हत् सम्यक्-सम्बुद्ध लोक में उत्पन्न होते हैं । भिक्षुओ ! वैसे ही, यह भी बड़े संयोग की बात है कि बुद्ध का उपदिष्ट धर्म लोक में प्रकाशित हो ।

भिक्षुओ ! सो तुमने मनुष्यत्व का लाभ किया है । तथागत अर्हत् सम्यक्-सम्बुद्ध लोक में उत्पन्न हुये हैं । बुद्ध का उपदिष्ट धर्म लोक में प्रकाशित भी हो रहा है ।

### § ९ पठम सुमेरु सुत्त ( ५४ ५ ९ )

#### सुमेरु की उपमा

भिक्षुओ ! जैसे, कोई पुरप सुमेरु पर्वतराज से सात भूँग के बराबर ककण लेकर फेंक दे ।

मिथुनो ! तो क्या समझते हो कीन अधिक महान् होगा यह जो सात सूर्य के बराबर कंकड़ फेंका गया है या यह जो पर्वतराज सुमेरु है ?

मन्त्री ! बही अधिक महान् होगा जो पर्वतराज सुमेरु है । वह सात सूर्य के बराबर फेंका गया कंकड़ तो क्या भवना है उसकी मध्य पर्वतराज सुमेरु के सामने कीव ही गिरती !!

मिथुनो ! वैसे ही चर्म को समझ लेते जाते सम्पक-रुधि से कुछ आर्षभ्यायु के कुछ का यह हिस्सा बहुत बड़ा है जो क्षीय-समाप्त हो गया, जो बचा है वह उसके सामने अत्यन्त भय है— वह 'यह दुःख है इस पदार्थतः आगता है 'यह दुःख-निरोध-नाशी मार्ग है इसे पदार्थता जानता है ।

§ १० दुविय सुमेरु सुत्त ( ५४ ५ १० )

सुमेरु की उपमा

मिथुनो ! वैसे यह पर्वतराज सुमेरु सात सूर्य के बराबर एक कंकड़ को छोड़ क्षीय हो जाय, समाप्त हो जाय ।

मिथुनो ! ता क्या समझते हो कीन अधिक होगा यह जो पर्वतराज सुमेरु क्षीय हो गया है-समाप्त हो गया है या यह जो सात सूर्य के बराबर कंकड़ बचा है ? [ ऊपर वीसा ही छाया केना चाहिये ]

मपात चर्ग समाप्त



## छठाँ भाग

### अभिसमय वर्ग

#### § १. नखसिख सुत्त ( ५४. ६. १ )

##### धूल तथा पृथ्वी की उपमा

तब, अपने नखाग्र पर धूल का एक कण रख, भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, "भिक्षुओ ! तो क्या समझते हो, कौन अधिक है, यह जो धूल का एक कण मैंने अपने नखाग्र पर रक्खा है, या यह जो महापृथ्वी है ?

भन्ते ! यही अधिक है जो महा-पृथ्वी है । भगवान् ने जो अपने नखाग्र पर धूल का कण रख लिया है वह तो यदा अदना है; महापृथ्वी के सामने भला उसकी क्या गिनती ! !

भिक्षुओ ! वैसे ही, धर्म, को समझ लेने वाले, सम्बन्ध-दृष्टि से युक्त आर्यभ्रातृक के दुःख का वह हिस्सा बहुत बड़ा है जो क्षीण-समाप्त हो गया, जो पचा है, वह उसके सामने अत्यन्त अल्प है वह 'यह दुःख है' इसे यथार्थत जानता है • 'यह दुःख-निरोध-गामी मार्ग है' इसे यथार्थत जानता है ।

#### § २. पोक्खरणी सुत्त ( ५४. ६. २ )

##### पुष्करिणी की उपमा

भिक्षुओ ! जैसे, कोई पचास योजन लम्बी, पचास योजन चौड़ी, और पचास योजन गहरी एक पुष्करिणी हो, जो जल से ल्पालव भरी हो, कि कौआ भी किनारे बैठे-बैठे पी सके । तब, कोई पुरुष कुदा के अग्र भाग से कुछ पानी निकाल कर बाहर फेंक दे ।

भिक्षुओ ! तो क्या समझते हो, कौन अधिक है, यह जो कुदा के अग्र भाग से कुछ पानी निकाल कर बाहर फेंका गया है, या यह जो जल पुष्करिणी में है ?

... [ ऊपर जैसा ही लगा लेना चाहिये ]

#### § ३. पठम सम्बेज्ज सुत्त ( ५४. ६. ३ )

##### जलकण की उपमा

भिक्षुओ ! जैसे, जहाँ गंगा, जमुना, अश्विनवती, सरभू, मही इत्यादि महानदियाँ गिरती हैं वहाँ से कोई पुरुष दो या तीन जल-कण निकाल कर फेंक दे ।

भिक्षुओ ! तो क्या समझते हो • [ ऊपर जैसा ही लगा लेना चाहिये ]

#### § ४. दुत्तिय सम्बेज्ज सुत्त ( ५४. ६. ४ )

##### जलकण की उपमा

भिक्षुओ ! जैसे, जहाँ... महानदियाँ गिरती हैं वहाँ का सारा जल दो या तीन कण छोड़कर क्षीण हो जाय = समाप्त हो जाय ।

भिक्षुओ ! तो क्या समझते हो • [ ऊपर जैसा ही लगा लेना चाहिये ]

मिथुजो ! तो क्या समझते ही कीम अधिक महान् होगा यह जो सात सूर्य के बराबर चंक्र चला गया है, या यह जो पर्वतराज सुमेरु है ?

मन्ते ! बड़ी अधिक महान् होगा, जो पर्वतराज सुमेरु है । यह सात सूर्य के बराबर चला गया चंक्र या क्या बड़ा है उसकी मजा पर्वतराज सुमेरु के सामने कीम की गिबती !!

मिथुजो ! बैसे ही धर्म को समझ केने वाले सम्प्रदाय से कुछ कार्यवाहक के कुछ का यह हिस्सा बहुत बड़ा है जो क्षीय-समाप्त हो गया जो बचा है वह उसके सामने अत्यन्त अल्प है— यह 'यह हुआ है इस पर्यायतः जागता है 'यह हुए-विरोध-गामी मार्ग है इसे पर्यायतः जानता है ।

### § १० इतिय सुमेरु सुच ( ५४ ५ १० )

#### सुमेरु की उपमा

मिथुजो ! जते यह पर्वतराज सुमेरु सात सूर्य के बराबर एक चंक्र को छोड़ क्षीय हो क्या समाप्त हो जाय ।

मिथुजो ! तो क्या समझते हो कीम अधिक होगा यह जो पर्वतराज सुमेरु क्षीय हो गया है-समाप्त हो गया है या यह जो सात सूर्य के बराबर चंक्र बचा है ? [ ऊपर जसा ही जगा केना चाहिये ]

मपाठ धर्म समाप्त

---

## छठों भाग

### अभिसमय वर्ग

#### § १. नखसिख सुत्त ( ५४. ६. १ )

##### धूल तथा पृथ्वी की उपमा

तब, अपने नखात्र पर धूल का एक कण रख, भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, "भिक्षुओ ! तो क्या समझते हो, कौन अधिक है, यह जो धूल का एक कण मैंने अपने नखात्र पर रक्खा है, या यह जो महापृथ्वी है ?

भन्ते ! यही अधिक है जो महा-पृथ्वी है । भगवान् ने जो अपने नखात्र पर धूल का कण रखा लिया है वह तो बड़ा बढ़ना है, महापृथ्वी के सामने बल्ला उसकी क्या गिनती ॥

भिक्षुओ ! जैसे ही, धर्म को समझ लेने वाले, सम्प्रकृष्टि से युक्त आर्यशावक के दुःख का वह हिस्सा बहुत बढ़ा है जो क्षीण=समाप्त हो गया, जो चषा है, वह उसके सामने अत्यन्त अल्प है वह 'यह दुःख है' इसे यथार्थत जानता है • 'यह दुःख-निरोध-नामी मार्ग है' इसे यथार्थत जानता है ।

#### § २. पोक्सरणी सुत्त ( ५४. ६. २ )

##### पुष्करिणी की उपमा

भिक्षुओ ! जैसे, कोई पचास योजन लम्बी, पचास योजन चौड़ी, और पचास योजन गहरी एक पुष्करिणी हो, जो जल से ल्वालब भरी हो, कि कौवा भी किनारे बैठे-बैठे पी सके । तब, कोई रूप कृषा के अग्र भाग से कुछ पानी निकाल कर बाहर फेंक दे ।

भिक्षुओ ! तो क्या समझते हो, कौन अधिक है, यह जो कुल के अग्र भाग से कुछ पानी निकाल कर बाहर फेंका गया है, या यह जो जल पुष्करिणी में है ?

• [ ऊपर जैसा ही लगा लेना चाहिये ]

#### § ३. पठम सम्बेज्ज सुत्त ( ५४. ६. ३ )

##### जलकण की उपमा

भिक्षुओ ! जैसे, जहाँ गंगा, जमुना, अचिरवती, सरभू, मही इत्यादि महानदियाँ गिरती हैं वहाँ से कोई पुरुष दो या तीन जल-कण निकाल कर फेंक दे ।

भिक्षुओ ! तो क्या समझते हो •• [ ऊपर जैसा ही लगा लेना चाहिये ]

#### § ४. दुतिय सम्बेज्ज सुत्त ( ५४. ६. ४ ) -

##### जलकण की उपमा

भिक्षुओ ! जैसे, जहाँ...महानदियाँ गिरती हैं वहाँ का सारा जल दो या तीन कण छोड़कर शीण हो जाय = समाप्त हो जाय ।

भिक्षुओ ! तो क्या समझते हो • [ ऊपर जैसा ही लगा लेना चाहिये ]

## § ५ पठम पठवी सुच ( ५४ ६ ५ )

पृष्ठी की उपमा

मिथुनो ! जैसे कोई पुण्य इस महापृष्ठी से सात बेर की गुठकी के बराबर एक बेका से कर  
-केंद्र है ।

मिथुनो ! तो क्या समझते हो कीन अधिक है यह जो सात बेर की गुठकी के बराबर बेका है  
या यह जो महापृष्ठी है ?

[ ऊपर जैसा ही कगा लेना चाहिये ]

## § ६ द्वितिय पठवी सुच ( ५४ ६ ६ )

पृष्ठी की उपमा

मिथुनो ! जब सात बेर की गुठकी के बराबर एक बेका को छोड़ यह महापृष्ठी क्षीण-अवसात  
हो जाय ।

[ ऊपर जैसा ही कगा लेना चाहिये ]

## § ७ पठम समुद्र सुच ( ५४ ६ ७ )

महासमुद्र की उपमा

मिथुनो ! जैसे कोई पुण्य महासमुद्र से दो या तीन जल-कण निकाल ले ।

[ ऊपर जैसा ही कगा लेना चाहिये ]

## § ८ द्वितिय समुद्र सुच ( ५४ ६ ८ )

महा-समुद्र की उपमा

मिथुनो ! जैसे दो या तीन जल-कण का छोड़ महा-समुद्र का मात्र जल क्षीण-अवसात हो जाय ।

[ ऊपर जैसा ही कगा लेना चाहिये ]

## § ९ पठम पद्मपुपमा सुच ( ५४ ६ ९ )

दिवालय का उपमा

मिथुनो ! जैसे कोई पुण्य पर्वतराज दिवालय से सात तरसों के बराबर एक कंकड़  
छुड़ कर केंद्र है ।

[ ऊपर जैसा ही कगा लेना चाहिये ]

## § १० द्वितिय पद्मपुपमा सुच ( ५४ ६ १० )

दिवालय की उपमा

मिथुनो ! जैसे सात तरसों के बराबर एक कंकड़ को छीप पर्वतराज दिवालय क्षीण-  
अवसात हो जाय ।

-- [ ऊपर जैसा ही कगा लेना चाहिये ]

अभिगमय या स्वमात

## सातवाँ भाग

### सप्तम वर्ग

#### § १. अब्जत्र सुत्त ( ५४. ७. १ )

##### धूल तथा पृथ्वी की उपमा

तब, अपने नरपर कुछ धूल रख भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, "भिक्षुओं ! ...कौन अधिक है, यह मेरे नरपर रखी हुई धूल या गट्ट महाशूची ?

भन्ते ! यही अधिक है जो महाशूची ! ।

भिक्षुओं ! वैसे ही, वे जीव बहुत कम हैं जो मनुष्य-योनि में जन्म लेते हैं, वे जीव बहुत हैं जो मनुष्य योनि में दूसरी-दूसरी योनियों में जन्मते हैं । क्यों ?

भिक्षुओं ! चार आर्य-सत्त्वों का दर्शन न होने से ।

किन चार का ? दुःख आर्यसत्त्व का दुःख-निरोध गामी मार्ग आर्यसत्त्व का ।...

#### § २. प्रत्यन्त सुत्त ( ५४. ७. २ )

##### प्रत्यन्त जनपद की उपमा

[ ऊपर जैसा ही ]

भिक्षुओं ! वैसे ही, वे बहुत थोड़े हैं जो मध्यम जनपदों में जन्म लेते हैं, वे बहुत हैं जो प्रत्यन्त जनपदों में अज्ञ म्लेच्छों के बीच पैदा होते हैं ।

#### § ३. प्रज्ञा सुत्त ( ५४. ७. ३ )

##### आर्य-प्रज्ञा

भिक्षुओं ! वैसे ही, वे बहुत थोड़े हैं जो आर्य प्रज्ञा-चक्षु से युक्त हैं, वे बहुत हैं जो अविद्या में पड़े सम्मूढ़ हैं ।

#### § ४. सुरामेरय सुत्त ( ५४. ७. ४ )

##### नशा से विरत होना

भिक्षुओं ! वैसे ही, वे बहुत थोड़े हैं जो सुरा, मेरय (= कच्ची शराब), मद्य, हव्यादि नशीली चीजों से विरत रहते हैं, वे बहुत हैं जो इनसे विरत नहीं रहते हैं ।

#### § ५. आदेक सुत्त ( ५४. ७. ५ )

##### स्थल और जल के प्राणी

भिक्षुओं ! वैसे ही, वे प्राणी बहुत थोड़े हैं जो स्थल पर पैदा होते हैं, वे प्राणी बहुत हैं जो जल में पैदा होते हैं ।

## § ६ मत्तेश्य सुच ( ५४ ७ ६ )

मातृ मघ

ये बहुत बोधे हैं जो मातृ-मघ हैं; वे बहुत हैं जो मातृ-मघ नहीं हैं।

## § ७ पितेश्य सुच ( ५४ ७ ७ )

पितृ मघ

वे बहुत बोधे हैं जो पितृ-मघ हैं; वे बहुत हैं जो पितृ-मघ नहीं हैं।

## § ८ सामञ्ज सुच ( ५४ ७ ८ )

ग्रामण्य

वे बहुत बोधे हैं जो ग्रामण्य (= मुक्ति के लिए ग्राम बनने वाले ) हैं; वे बहुत हैं जो ग्रामण्य नहीं हैं।

## § ९ ब्राह्मण सुच ( ५४ ७ ९ )

ब्राह्मण्य

वे बहुत बोधे हैं जो ब्राह्मण्य हैं; वे बहुत हैं जो ब्राह्मण्य नहीं हैं।

## § १० पचायिक सुच ( ५४ ७ १० )

कुम्भ के जेठों का सम्मान करना

वे बहुत बोधे हैं जो कुम्भ के जेठों का सम्मान करते हैं; वे बहुत हैं जो कुम्भ के जेठों का सम्मान नहीं करते हैं।

सप्तम वर्ग समाप्त





§ ९. कुक्कुटसूकर सुत्त ( ५४. ९. ९ )

मूर्गा-सूअर

• जो मुर्गे और सूअर के ग्रहण करने से ••• ।

§ १०. हृत्थि सुत्त ( ५४. ९ १० )

हार्थी

जो हार्थी-नाय-घोडा-घोदी के ग्रहण करने से • ।

शामकधान्य-पेप्याल समाप्त

## दसवाँ भाग

### बहुतर सत्त्व धर्मा

§ १ खेत्त सुच ( ५४ १० १ )

खेत

जो खेत-बस्तु के ग्रहण करने से ।

§ २ क्यविक्रय सुच ( ५४ १० २ )

कल्प-विक्रय

जो कल्प-विक्रय से विरत रहते हैं ।

§ ३ वृत्तेय्य सुच ( ५४ १० ३ )

वृत्त

जो वृत्त के काम में कहीं काम से विरत ।

§ ४ मुलाकूट सुच ( ५४ १० ४ )

माप-जोप

जो माप-जोप में ठगी करने से विरत ।

§ ५ लक्ष्कोटन सुच ( ५४ १० ५ )

ठगी

जो इसमें जोका देने, हाग देने से विरत ।

§ ६-११ सन्ने सुचन्ता ( ५४ १० ६ ११ )

कादमा-भारमा

जो कादमा-भारमा-बाँबने-बोरी-बकैली मूर नर्म से विरत रहते हैं ।

बहुतर सत्त्व धर्मा समाप्त

## ग्यारहवाँ भाग

### गति-पञ्चक वर्ग

§ १. पञ्चगति सुत्त ( ५४. ११. १ )

नरक में पैदा होना

“ भिक्षुओ ! वैसे ही, ऐसे मनुष्य बहुत थोड़े हैं जो मरकर फिर भी मनुष्य ही के यहाँ जन्म लेते हैं, वे बहुत हैं जो मरने के बाद नरक में पैदा होते हैं । ”

§ २ पञ्चगति सुत्त ( ५४ ११ २ )

पशु-योनि में पैदा होना

• वे बहुत हैं जो मरने के बाद तिरश्चीन (=पशु) योनि में पैदा होते हैं । •

§ ३. पञ्चगति सुत्त ( ५४ ११ ३ )

प्रेत-योनि में पैदा होना

• वे बहुत हैं जो मरने के बाद प्रेत-योनि में पैदा होते हैं । •••

§ ४-६ पञ्चगति सुत्त ( ५४ ११. ४-६ )

देवता होना

भिक्षुओ ! वैसे ही, ऐसे मनुष्य बहुत थोड़े हैं जो मरकर देवों के बीच उत्पन्न होते हैं, वे बहुत हैं जो नरक में ।

तिरश्चीन-योनि में ।

प्रेत-योनि में • ।

§ ७-९. पञ्चगति सुत्त ( ५४. ११ ७-९ )

देवलोक में पैदा होना

भिक्षुओ ! वैसे ही, ऐसे बहुत थोड़े हैं जो देवलोक से मर कर देवलोक में ही उत्पन्न होते हैं । वे बहुत हैं जो देवलोक में मरकर नरक में •• तिरश्चीन योनि में प्रेत-योनि में ।

§ १०-१२ पञ्चगति सुत्त ( ५४ ११ १०-१२ )

मनुष्य योनि में पैदा होना

भिक्षुओ ! वैसे ही, ऐसे बहुत थोड़े हैं जो देवलोक में मर कर मनुष्य-योनि में उत्पन्न होते हैं, वे बहुत हैं जो देवलोक में मर कर नरक तिरश्चीन-योनि में प्रेत-योनि में ।

§ १३-१५. पञ्चगति सुत्त ( ५४ ११ १३-१५ )

नरक से मनुष्य-योनि में आना

••• भिक्षुओ ! वैसे ही, ऐसे बहुत थोड़े हैं जो नरक में मर कर मनुष्य-योनि में उत्पन्न होते हैं, वे बहुत हैं जो नरक में मर कर नरक में तिरश्चीन-योनि में •• प्रेत-योनि में • ।

§ १६ १८ पञ्चगति सूत्र ( ५४ ११ १६ १८ )

मरक से देवलोक में जाना

ऐसे बहुत बोधे हैं जो मरक में मर कर देवलोक में उत्पन्न होते हैं [ ऊपर बैठा ही लगा देना चाहिये । ]

§ १९ २१ पञ्चगति सूत्र ( ५४ ११ १९ २१ )

पशु से मनुष्य होना

ऐसे बहुत बोधे हैं जो तिरस्त्रीन-योगि में मर कर मनुष्य-योगि में उत्पन्न ।

§ २२ २४ पञ्चगति सूत्र ( ५४ ११ १ २४ )

पशु से श्वेता होना

ऐसे बहुत बोधे हैं जो तिरस्त्रीन-योगि में मर कर देवलोक में उत्पन्न ।

§ २५ २७ पञ्चगति सूत्र ( ५४ ११ २५ २७ )

प्रेत से मनुष्य होना

ऐसे बहुत बोधे हैं जो प्रेत-योगि में मर कर मनुष्य-योगि में उत्पन्न ।

§ २८-३० पञ्चगति सूत्र ( ५४ ११ २८-३० )

प्रेत से श्वेता होना

ऐसे बहुत बोधे हैं जो प्रेत-योगि में मरकर देवलोक में उत्पन्न होते हैं, व बहुत हैं जो प्रेत-योगि में मरकर मरक में तिरस्त्रीन-योगि में 'प्रेत-योगि में' ।

सो क्यों ? मिथुनो ! चार आर्षसत्त्वों का दर्शन करी जाने से ।

किम चार का ? बुद्ध आर्षसत्त्व का बुद्ध-समुत्पन्न आर्षसत्त्व का बुद्ध-विरोध आर्षसत्त्व का बुद्ध-विरोध-नामी मार्ग आर्षसत्त्व का ।

मिथुनो ! इसलिये 'बुद्ध बुद्ध ई देवा समझना चाहिये, 'बुद्ध बुद्ध-समुत्पन्न ई देवा समझना चाहिये, 'बुद्ध बुद्ध-विरोध ई देवा समझना चाहिये, 'बुद्ध बुद्ध-विरोध-नामी मार्ग ई देवा समझना चाहिये ।

मगध्या बुद्ध योगि । संतुष्ट हा मिथुनो मे भयबाध क बन्धे हा अभिनन्दन क्रिया ।

शक्तिपञ्चक वर्ग समाप्त

सत्य-संयुक्त समाप्त

महापर्या समाप्त

संयुक्त निकाय समाप्त

# परिशिष्ट

## १. उपमा-सूची

अन्धकार में तेलप्रदीप ठठाना ४९७, ५८०  
अचिरवती नदी ६३८  
अच्छी जमीन ७८७  
आकाश ६४१, ६४३  
आकाश में ललाई छाना ६३३, ६३४, ६५६, ६६६  
आकाश में विविध वायु का बहना ५४०, ५४१  
आग ६१४, ६७०, ६७१  
आहार ६५०  
उलटे की सीधा करना ४९७, ५८०  
कछुआ का आहार खोजना ५२४  
कण्टकमय वन में पैठना ५२९  
कपास का फाहा ७४८, ८१७  
काना कछुआ ८२१  
काला-वजला बैल ५१८, ५७०  
काशी का कपड़ा ६४१  
किसुक का फूल ५३०  
कूटसिम्बलि ७३२  
कूटागार ६४१, ६५४, ७२७, ८२०  
कृपक गृहस्थ के तीन खेत ५८३  
खस ६४१  
खुली धर्मशाला ५४१  
गया नदी ५२९, ६३७, ६७९, ६८१, ७०७, ७३३,  
७५३, ७५८, ७५०, ८२३  
गर्मी के पिछले महीने की वर्षा ७६६  
गहरे जलाशय में पत्थर छोड़ना ५८२  
शीघ्र क्रतु की वर्षा ६४४  
शोचातक ४७४  
घड़ा ६२८, ६४३  
घाव भरा पके शरीरवाला पुरुष ५३२  
घाव पर मलहम लगाना ५२४  
बी या तेल का घड़ा ५८२, ७८३  
चक्रवर्ती ६४१, ६६५  
घार उड़े विपैके डग्न सर्व ५००

चार द्वीप ७७३  
चाँद ६४१  
चिड़मार ६८६  
चित्रपाटली ७३२  
चौराहे पर पुष्ट घोड़ों से जुता रथ ५२३  
चौराहे पर धूल की धली डेर ७६७  
छ प्राणियों को भिन्न-भिन्न स्थान पर बाँधना ५३२  
जनपद कल्याणी ६९६  
जमुना नदी ६३७  
जम्बू वृक्ष ७३२  
जम्बू द्वीप के सारे तृण-काष्ठ ८१५  
जलपात्र ६७३  
जूही ६४१  
जेतवम के तृण-काष्ठ ४८५, ५०३  
डालपात में हीर खोजना ४९०, ४९२  
हँके को उघाड़ना ४९७, ५८०  
तेल और बत्ती से प्रदीप का जलना ५३९, ७६५  
दिन भर का तपाया लोहे का गोला ७४७  
दिन भर का तपाया लोहा ५२९  
दूध से सरा पीपल का वृक्ष ५१७  
देवासुर-संग्राम ५३३, ८१८  
धर्मशाला ६४०  
धान या जौ का काँटा ६४७  
धान या जौ का नांक ६२३  
धुरे को बचाना ५२४  
पचास योजन लम्बी पुंकरिणी ८०३  
पत्थर का खूँटा ८१७  
पत्थर का शूष ८१७  
पर्यंत के ऊपर की वर्षा ७९३  
पानों के तीन मटके ५८३  
पारिच्छत्रक ७३२  
सुरानी राक्षी ६८९  
पूरव की ओर बहनेवाली नदी ७०३

पेर बाँक प्राची ६७९  
 पूष्पी ६४२ ७५९ ८२३, ८२४  
 प्राची के चार सामान्य काम ६५६  
 पीक हुए रींच पके हुए ६९१  
 बकबाद पुरण ५६७ ६९५ ७५१  
 पीह पक कर बधइती भाग में लपाना ४७४  
 बनी छगामेबाका ११७  
 पेल के बन्धन सं रींची गाव ६४७  
 भटके को राह दिखावा ४९७ ५८  
 भाक सं छिदा पुरण ५३७  
 महापूष्पी का पानी सं भर जाना ८९१  
 महामेव का तितर-बितर होना ६४४  
 महासमुद्र ८२४  
 महासमुद्र कं बक की वास ६ ७  
 मही नदी ६३८  
 मिट्टी का बसा रींचे लेपवाका बूसाधार ५६८  
 मूर्ध रसोहृवा ६८७  
 पच का पोस ५३३  
 राजा का सीमान्त नगर ५३१ ६९२  
 सक्की का हुन्दा ५२१  
 कौ सेत का आकसी रखाका ५३१  
 कहर-भैरव माहवाके समुद्र को पार करना ५१६  
 काकचन्द ६४१ ७२९

बाजा ५३२  
 बूस ६४३  
 बूस की पकी बाकी का गिर जाना ६९३  
 बाँस फूडनेपाका ५८५  
 गिर में कसकर रस्ती लपेटना ४७६  
 गिर में लकवार जुमाना ४७६  
 समुद्र का बक ७९५  
 समुद्र ६४  
 सरकी की सूखी जर्जर शायकी ५२७  
 सरयू नदी ६३८  
 सारपी ५६७  
 सिंह ७२७  
 मिरजटा साक ५६  
 सुमर से सात कंकड़ फेंकना ८२१  
 सुकगती भाग की डेर ५२८  
 सूखा-साजा पीपल का हुए ५१७  
 सोमा ६६२  
 सी बाँपों की आसुवाका पुरण ८११  
 हवा की बाल सं बन्धना ५७  
 हाथी का पैर ६४ ७२८  
 हिमाकन पर्वत ६४२ ८२४  
 हीर आइनेवाका पुरण ५१९  
 होसिबार रसोहृवा ६८८

## २. नाम-अनुक्रमणी

अंग जनपद ७२६  
 अचिरवती ( नदी ) ६३८, ८२३  
 अचेल काश्यप ५७८  
 अजपाल निग्रोध ( डरुवेला में ) ६९५, ७०४,  
 ७२९  
 अजित केशकर्म्यली ५९७, ६१३  
 अजिन (- मृग ) ४९९  
 अजनवन मृगदाय ६०३ ( सावेत में ), ७२३  
 अनायपिण्डिक ४५१ ( सेठ ), ४९३, ४९४, ५२२,  
 ५६४, ५६७, ५८०, ६०६, ६१९, ६३०,  
 ६२३, ६९२, ७५१, ७७४, ७८०  
 अनुराध ( -आयुष्मान् ) ६०७ ( वैशाली में )  
 अनुरुद्ध ( -आयुष्मान् ) ५५०, ५५४, ५५५, ६९८,  
 ७५१, ७५२, ७५३, ७५४  
 अन्धवन ४९४ ( ध्रावस्ती में ), ७५४ ( अनुरुद्ध  
 का भीमार पड़ना )  
 अभयरजकुमार ६७४ ( राजगृह में )  
 अम्बपालीवन ६८४, ७५४ ( वैशाली में )  
 अम्बाटक वन ५७० ( मच्छिकासण्ड में ), ५७१-  
 ५७४, ५७६  
 अरिष्ठ ( -आयुष्मान् ) ७६३ ( ध्रावस्ती में )  
 अर्हत् ५०१  
 अचन्ती ४९८ ( जनपद ), ४९९, ५७२  
 असिबन्धकपुत्र ग्रामणी ५८२-५८५  
 असुर पुर ६१८  
 असुर-लोक ७३२  
 अशोक ७७८ ( -भिष्णु )  
 अशोका ७७८ ( भिष्णुणी )  
 आकाशान्त्यायसन ५४० ( समापत्ति ), ५४४  
 आकिञ्चन्यायसन ५४० ( समापत्ति ), ५४४  
 आसन्न ( -आयुष्मान् ) २७५, ४९०, ४९१, ४९८,  
 ५१९, ५४१, ५४२, ६१४, ६१०, ६२०,  
 ६२६, ६८९, ६९२, ६९७, ६९९, ७२०,  
 ८३८, ७४३, ७४७, ७४८, ७४९, ७६६,  
 ७६९, ७७१, ७७४, ७७८, ७७९, ७८०, ८२०  
 आपण ( -कस्या ) ७२६ ( अन्न जनपद में )

आयुष्मान् पूर्ण ४७७ -  
 इच्छानङ्गल ( -ग्राम ) ७६८, ( -वन ) ७६८  
 उक्काचेल ५६३ ( घञ्जी जनपद में गंगा नदी के  
 तीर ), ६९३  
 उग्रगृहपति ४९६ ( वैशाली का रहनेवाला ), ४९६  
 ( हस्तिग्राम का रहनेवाला )  
 उष्णाभ ब्राह्मण ७२० ( ध्रावस्ती में )  
 उत्तर ५९३ ( कोलिय जनपद का कस्या )  
 उत्थिय ६९४ ( -भिष्णु )  
 उदयन ४९६ ( कौशाम्बी का राजा ), ७३८  
 ( वैशाली में चैष्य )  
 उदायी ५०१ ( -भिष्णु ), ५१९, ५४३, ६६०, ६६१  
 उहकरामपुत्र ४८४  
 उपवान ४६९ ( -भिष्णु ), ६५४  
 उपसेन ४६८ ( -भिष्णु ), ४६९  
 उपालि गृहपति ४९६ ( नालन्दावानी )  
 उरुवेलाकप ५८७ ( मरलजनपद में कस्या ), ७२७  
 उरुवेला ६९५, ७०४, ७२९ ( नेरञ्जरा नदी के  
 तीर )  
 ऋषिदत्त ५७१, ५७२ ( -भिष्णु ), ( -पुराण ) ७७५  
 ऋषिपतन मृगदाय ५१८, ६०९ ( वाराणसी में ),  
 ७९९, ८०७  
 कक्कट ७७९ ( उपासक )  
 कटिस्सह ७७९ ( उपासक )  
 कण्टकीवन ६९८ ( सावेत में ), ७५० ( महाकर-  
 मण्ड वन—अट्टकथा )  
 कपिलवस्तु ५२६ ( शाक्य जनपद में ), ७६८,  
 ७८३, ७८५, ७९३, ७९८, ७९९  
 कामण्डा ५०१ ( ग्राम )  
 कामभू ५१९, ५७४, ५७५ ( भिष्णु )  
 कालिगोधा शाक्यानी ७९३ ( कपिलवस्तु में )  
 कालिङ्ग ७७९ ( उपासक )  
 काशी ६४१, ७७५  
 काश्यप भगवान् ७२९  
 किन्विक ( -आयुष्मान् ) ५२६, ७६६  
 किन्विला ५२६, ७६६ ( नगर, गंगा नदीके किनारे )

कुम्भकराम ३३६ ( पारक्षियुत में ) ३३७ ३३८  
 कुम्भकराम परिभाषक ३३३  
 कुम्भकराम ३३८ ( अश्वत्थी अक्षय में एक वर्षत )  
 कुम्भकराम ३३२ ( सुपुत्र लोक का हस्त )  
 कुम्भकरामका ३३६ ( वैशाखी के महापत्र में )  
 ३३६ ३ ७ ३३८ ३३५ ३३ ८२  
 कुम्भकराम ८३३ ( वज्रवी अक्षय में )  
 कुम्भकराम अक्षय ५३३ ३३३  
 कुम्भकराम ५३५ ( अक्षय ) ३ ३ ३३७ ३३५  
 कुम्भकराम ३३३ ३३८ ५३३ ५३५ ३३५ ३३३  
 ३३७ ३३३ ८३३  
 कुम्भकराम ३ ३  
 कुम्भकराम ५३५ ( कुम्भकराम में ) ५३६ ( कुम्भकराम  
 में ) ५३३ ( अक्षय में ) ३ ७ ( अक्षय  
 अक्षय को गिनता ) ३३७ ( अक्षय )  
 ३३५ ३३३ ३३३ ३३३ ३३३ ( अक्षय  
 अक्षय में ) ७ ७ ३३३ ३५ ३५३ ३५८  
 ८३३ ( अक्षय महापत्र में )  
 कुम्भकराम ३५८ ( अक्षय पर )  
 कुम्भकराम ३५८ ( अक्षय में )  
 कुम्भकराम ८३३ ( अक्षय )  
 कुम्भकराम ३३३ ( अक्षय में ) ३३३ ( अक्षय  
 में ) ३३८ ( अक्षय में )  
 कुम्भकराम वर्षत ३३३ ( अक्षय में ) ३३३ ३५७  
 ३३३ ३३५, ३३ ८३८  
 कुम्भकराम ५३६ ( अक्षय )  
 कुम्भकराम ७८७ ( अक्षय अक्षय का अक्षय )  
 कुम्भकराम ३३३ ५३३ ५३ ५३७ ३८५ ५३३  
 ३३३ ३३३ ३५३ ३३३ ( -अक्षय ) ३३८  
 ३३३ ( -अक्षय ) ३३८ ३३३  
 कुम्भकराम ५३५

कुम्भकराम ३३२ ( अक्षय-अक्षय का अक्षय )  
 कुम्भकराम ५३८ ( अक्षय-अक्षय के अक्षय अक्षय  
 का अक्षय )  
 कुम्भकराम ३३३  
 कुम्भकराम ३३६ ( अक्षय )  
 कुम्भकराम ३३३ ( अक्षय ) ८३३ ( अक्षय  
 अक्षय में एक )  
 कुम्भकराम ५३५ ( -अक्षय )  
 कुम्भकराम ३३३ ८३३  
 कुम्भकराम ३३३  
 कुम्भकराम ३५३ ३८५ ३३३, ३३३ ५३३ ५३३  
 ५३३ ५३८ ३ ३ ३३३-३३३ ३३३-३३३  
 ३३३-३३३ ३३३ ३३३ ३३ ३३३  
 ३३८, ३५ ३ ३ ३३३ ३३३ ३३३  
 ३८३ ३८३ ३३३ ३३३, ३३३ ३३३  
 ३३८ ७ ३ ७ ३ ७ ३ ७ ३ ७ ३  
 ७३ ७३३ ७३३ ७३८ ७५३ ७५३  
 ७३३-७३३ ७३३ ७३३ ७३३ ७३३  
 ७८ ७८३ ८३३  
 कुम्भकराम ७३ ( अक्षय अक्षय का अक्षय  
 अक्षय-अक्षय )  
 कुम्भकराम ३३३ ७७८ ७७३  
 कुम्भकराम ३३३ ३ ३ ३ ३, ७७८  
 कुम्भकराम अक्षय अक्षय ५८  
 कुम्भकराम ७७३ ( अक्षय )  
 कुम्भकराम < ( अक्षय )  
 कुम्भकराम ५ ३ ( अक्षय )  
 कुम्भकराम ३ ३ ( अक्षय अक्षय के अक्षय  
 एक अक्षय )  
 कुम्भकराम ५३३ ५३३ ७३३ ७३३ < ( अक्षय )  
 कुम्भकराम ७७३  
 कुम्भकराम अक्षय ७७३  
 कुम्भकराम ७३३ ७३३  
 कुम्भकराम ५ ३ ( अक्षय अक्षय का अक्षय )  
 कुम्भकराम ७७३ ( अक्षय अक्षय का अक्षय )  
 कुम्भकराम ३३८ ( अक्षय अक्षय-अक्षय )  
 कुम्भकराम ७३ ( अक्षय अक्षय का अक्षय )  
 कुम्भकराम ५३५ ( अक्षय-अक्षय )  
 कुम्भकराम ७ ३  
 कुम्भकराम ७७८ ( अक्षय )



नमिदय परिभाजक ६२३  
 नमिदय शाक्य ७९४  
 नाग ६४२ ( सर्प )  
 नातिक ४८९  
 नालकग्राम ५५९, ६९२ ( मगध में )  
 नालन्दा ४९६ ( का पावारिक आश्रम ), ५८२,  
 ५८३, ५८४, ५८५, ६९१  
 निगण्ठ नातपुत्र ५७७, ५८४, ५८५, ६१३  
 निर्माणरति ८०० ( देव )  
 निग्रोधाराम ५२६ ( कपिलवस्तु में ), ७६८, ७८३,  
 ७९२, ७९९  
 नेरजरा नदी ६९५, ७०४, ७२९ ( उरुवेला में )  
 पञ्चकाग ५४३ ( कारीगर, थपति )  
 पञ्चवर्षीय भिक्षु ८०७ ( धर्मचक्र-प्रवर्तन, ऋषिपत्तन  
 मृगदाय में )  
 पञ्चशिख गन्धर्वपुत्र ४९२  
 परनिर्मित वरावर्ती ८०० ( देव )  
 पश्चिम भूमिवाले ५८२  
 पाटलिग्रामणी ५९४, ५९९ ( फौलिय जनपद के  
 उत्तर कस्बे का निवासी )  
 पाटलिपुत्र ६२६, ६९७, ६९८  
 पारिचट्टप्रक ७३२ ( त्रयविंशति देवलोक का वृक्ष )  
 पावारिक आश्रम ४९६, ५८२-५८५, ६९१  
 ( नाकन्दा में )  
 पिण्डोल भारद्वाज ४९६, ७२५ ( कौशाम्बी के  
 घोषिताराम में )  
 पिण्डकलिगुहा ६०६ ( राजगृह में )  
 पुत्रकोट्टक ७२४ ( श्रावस्ती में )  
 पुत्रविद्युज्जान ४७७ ( वज्रिणी का एक ग्राम, भिक्षु  
 लक की मातृभूमि )  
 पूरण कस्सप ६७४ ( एक आचार्य )  
 पूर्ण ४७७ ( सुनापरान्त के भिक्षु )  
 पूर्णकाश्यप ५९८, ६१३ ( एक आचार्य )  
 पूर्वाराम ७२२, ( श्रावस्ती में ) ७२४, ७४२  
 शकुन्तलास्थायन ६१३ ( एक आचार्य )  
 मत्तिमान कूट ८१८ ( राजगृह में )  
 मत्सेनजित् ६०६ ( कौशल नरेश ), ७५६  
 महास-श्रेय ५८० ( एक देव-योनि )  
 महुपुत्रक सैत्य ७३८ ( वैशाली में )  
 वाहिय ४७९, ६९४ ( भिक्षु )

बुद्ध ४९० ५३५, ५३६, ५६७, ५७१, ५७९, ५८३-  
 ५८५, ५८८, ६००, ६०२, ६०८, ६२१,  
 ६५३, ६५७, ६९७, ७२३, ७२६, ७३०, ७३८,  
 ७४७, ७४९, ७७२, ७७३, ७७४, ७७८,  
 ७८२, ७९३  
 बोधिसत्व ४५४, ४९१, ५४८, ७४७, ७६४  
 ब्रह्मजाल सूत्र ५७७  
 ब्रह्मलोक ७२९, ७४७, ८००  
 ब्रह्मा ४९९, ७२३  
 भर्ग ४९८  
 भद्र ६०६, ६९७ ( भिक्षु ), ७७९ ( उपासक )  
 भद्रक ग्रामणी ५८७  
 भैसकलावन मृगदाय ४९७ ( भर्ग में )  
 भस्करकट ४९९, ५०० ( अवनती का एक आरण्य )  
 सक्खलि गोसाल ६१३ ( एक आचार्य )  
 मगध ५५९, ६९२, ७७५  
 मच्छिन्नासण्ड ५७०, ५७१-५७४, ५७६, ५७७,  
 ५७८  
 मणिचूळक ग्रामणी ५८६  
 मल-परिदाह मरक ६१९  
 मल्ल ५८७ ( -जनपद ) ७२७, ७४५  
 महक ५७३  
 महाकथिन ७६३ ( भिक्षु, श्रावस्ती में )  
 महाकात्यायन ४९८, ४९९ ( अवनती में )  
 महाकाश्यप ६५६ ( राजगृह की पिण्डली गुहा में  
 शीमार )  
 महाकोट्टित ५१०, ५१८, ६०९, ६१०  
 महासुन्द ४७६, ६५७ ( भगवान् श्रीमार थे )  
 महाशाम शाक्य ७६९ ( कपिलवस्तु में ), ७८३,  
 ७८४, ७८५, ७९३, ७९९  
 महासोमालान ५२७ ( निग्रोधाराम में ), ५२८,  
 ५६४ ( जेतवन में ), ५६७, ६११ ( ऋषिपत्तन  
 मृगदाय में ), ६१३, ६५७ ( गृहकूट पर्वत  
 पर ), ६९३ ( -का परिनिर्वाण ), ६९८  
 ( कण्ठकीवन में ), ७४२ ( पूर्वाराम में ),  
 ७४९ ( जेतवन ), ७५१, ७५२, ७८२  
 ( जेतवन )  
 महायन ४९८ ( वैशाली में ), ५३८, ६०७, ७३८,  
 ७६५, ७७०, ८००  
 महासमुद्र ८०४ "

मही नदी ६३८ ( पूरव की ओर बहना ) ८१३  
( पाँच महानदियों में से एक )

मानसिंह ७ ( गृहपति बीमार पड़ना )  
मार ३९८ ३९ ५१० ६९५ ७१६ ७२३ ८१३

मातृकपयुक्त ३४२ ४८२  
महकपयुक्तिका ६९५ ( खेडाधी का सामर्थ )

भोक्तिप सीमक ५३६ ( परिभाषक )  
सूत्रशास्त्र ४६० ( सिद्ध )

भूतपत्यक ५७ ( बिना गृहपति का अपना गाँव )  
सुगारमाया ७२२ ( विराजा ) ७२४, ७३२

पाम ८० ( देव )  
पीपाजीवी ग्रामणी ५८१

राजकाराम ७८ ( आश्वती में )  
राजगृह ३५९ ( बेलुवन ) ३६८ ७७२ ४२२

( गुरुवृक्ष पर्यंत ) ४९७ ( बेलुवन ) ५ ९  
( जीवक का आश्रयन ) ५३९ ( बेलुवन ),

५८ ५८६ ६५६ ६५७ ६७४ ( गुरुवृक्ष  
पर्यंत ) ६९९ ( बेलुवन ) ७३ ७७३,  
८१८

राय ४७२ ( -मिथु )  
रासिच ग्रामणी ५८८

राष्ट्रक ४९७  
खिपडधी ८३

कोमलसर्पणीता ७६८  
कोदिरुच ३९९ ( ब्राह्मण )

कजी ३०७ ३९६ ५९३ ( जलपत्र ) ६ ३  
७३१ ( जलपत्र ) ८११

कामगोप परिभाषक ६३१ ६३३, ६३४  
कशावर्ती ५६९ ( देवपुत्र )

कारामणी ५१८ ६ ९ ७९९ ८ ७  
विनामलक-आवतन ५४ ५४४ ( समाप्ति )

केरु ४९९ ( तीव्र )  
केशविधि ५३३ ( अतुल्य )

केरुवृक्षमि ५ १ ( नीच )  
केरुगार ७७६ ( कोशकी का सामान्य ग्राम )

केरुवृक्षमात्र ६८८ ( बीताली में )  
केरुवन कलकट विद्या ३५ ४३८ ४७६ ४९०

५४६ ५८ ५८६ ६५६ ६५ ६९९  
७३६ ७ ३ ८१८

केरुली ४९९ ५३८ ६ ७ ( कुम्हारशास्त्र )

६८४ ( अश्वपार्श्वीवन ) ६८८ ( बिलुब-ग्राम )  
७३८ ( कुट्यागारशाका ) ७५४ ( अश्वपार्श्वी

का आश्रयन ) ७६५ ( कुट्यागारशाका ) ७९  
८२

काक ४९२ ५३३, ५६७  
काक्य ५ २ ५२६ ( -जलपत्र ) ६१९ ७६८,

( -पुत्र ) ७७६ ( -जलपत्र ) ७८३ ७९३  
काक्य-पुत्र ५८६

काका ७३७ ( -याज्ञिक ग्राम )  
कातवन ४९८ ( राजगृह में )

कावस्ती ४५१ ( बेलुवन ) ४५७ ४६२, ४६३,  
४६४ ४६७ ४७१ ४८४ ४९९ ४९४

५२९ ५६४ ५६७ ५८, ६ ६ ६३९,  
६२ ६२१ ६२९ ६३ ६३७ ६४ ६३९

६४८ ६५ ६५३, ६६७ ६६८ ६७३,  
६७६ ६८१ ६८९ ६९१, ६९२ ६९४

६९५ ६९८ ७ १ ७ २ ७०४ ७ ६, ७२२  
७२४ ७३ ७३४ ७४ ७४२ ७४७

७४८ ७५२, ७६१, ७६२, ७६३ ७६४  
७५१ ७५२ ७५३ ७६९ ७७२ ७७४

८०५, ७८ ८१२

की कर्षण ६ ९  
कीगारव ६७३

कीशवेदित विरोध ५४ ५४७  
कीतु ७०९ ( जपायक )

कीगुमि ५६९ ( देवपुत्र )  
कीगुमार ५३२ ( -मगर )

कीगुमार गिरि ७९८ ( मर्ग में )  
कीर ६१९ ( कदा शाक्य जलपत्र में )

कीरुवेलुद्विपुत्र ६३३ ( एक भावार्थ )  
कीरुवेलुद्विपुत्र ७३३ ( राजगृह में )

कीरुवेलुद्विपुत्र ७३३ ( बीताली में )  
कीरुवेलुद्विपुत्र ६१४

कीरुवेलुद्विपुत्र ६१४  
कीरुवेलुद्विपुत्र ६१४ ( -मिथु )

कीरुवेलुद्विपुत्र ६१४ ५ ३ ५९७ ६३ ६९५  
६९१ ७२९ ७३ ७ ५ ७७६

कीरुवेलुद्विपुत्र ६१४  
कीरुवेलुद्विपुत्र ६१४ ( का अंशक; एक तुल )  
कीरुवेलुद्विपुत्र ५८१

कीरुवेलुद्विपुत्र ६१४ ८ १

मलकागार ७५३ ( भावमती में )

महक भिन्दु ७००

महम्मति यत्ना ६००

माहेत ६०१, ६०३, ६०४, ७०३, ७००, ७०३

माधुक ७००

मासण्डक ७६३

सारवृद्ध शैत्य ७३१

मारिपुत्र ४६८-४६९, ४७८, ४७३, ५११, ५६०,

५६१, ५६०, ५६३, ६०९, ६१०, ६००,

६५३, ६५४, ६९१, ६९०, ६९१, ७०४,

७०६, ७३०, ७५०, ७५४, ७७८, ७१०

मारुह ७७८ ( -भिन्दु )

सिंसवायन ८१७ ( कीशाम्बी न )

सुगत ४७१ ( उद )

सुजाता ७०८ ( उपामक )

सुवन्दु नदी ७५२ ( भावमती में )

सुवस्त ७७८ ( उपामक )

सुपमा द्वासभा ७३३

सुनिमित्त ७०९ ( त्रैवपुत्र )

सुपर्ण लोक ७३२

सुमद्र ७७९

सुम्भा जनपद ६६१, ६९०, ६९६

सुमानवा ८१८ ( राजगृह में, पुष्करिणी )

सुमेर पर्वतराज ८२१

सुवाम ७६९ ( देवपुत्र )

सुररग्याता ७३० ( राजगृह में )

सुनापरान्त ४७८ ( -जनपद )

सेतन ६६१ ( कस्या )

सेदक ६९५, ६९६ ( कस्या )

सोण ४९८ ( -गृहपतिपुत्र )

हृदिहयमन ६७१ ( फोलिया का कस्या )

हस्तिग्राम ४९६ ( यजी जनपद में )

हृदिहिकानि ४९८ ( गृहपति )

हिमात्य ६४०, ६५०, ६८०, ८२४

### ३ शब्द अनुक्रमणी

अहमिद ११५ ००१ (विता दी के मन्दात बक देवराणा)	अमावसि ११५ ०११ ०८१
अहमद ५३३ (बाग)	अमावसि १०१ ५ १ (शिप)
अह ५३३ ११	अहमदा १११ (मय)
अहम १८१	अहिहासीय ११० (हाप न हापराता)
अहमपुत्रीय ०१५ (बहुम मेम)	अपाय ८१६ (बाष योवि)
अह न ०५३ (मा) १५३ ५११ ५८०	अपार १५० (संसार)
अहम १८१	अपविष्टम ०५१
अहमुदि १५१ (धारा)	अपविष्टि १ १ ११०
अहम ८	अपमत्त ११०
अहम ५००	अहमाम ११
अहमवदा ११ (विर्भवता)	अहमाम अपोविष्टि ५०१
अहोष्ट १५३	अहमापु ५ १ ०११
अहमिदि संज्ञा १ ८	अहमव ०१५
अहमम ५३० (राम-रहिष)	अहिष्ठा ५८८ ०५१
अहमाम १ ३ (अहिष्णु) १५३ १११	अहिष्णु ११३
अहमाम ०११ ०१० (अम) ०	अहिष्ठा १०१ (मात्र) ११८
अहमामिष्ठा ११८	अहिष्णु ०१३
अहमाम १ ३ १५३ (अहिष्ठा) १०८	अहिष्णु ००१ ११८
अहमाम १८ (अहिष्णु)	अहिष्णु ११८ (हाला मदा) १०१ १०५
अहिष्णु १११	अहिष्णु ५ ५ (हाला मी हापक)
अ ३ अह ५३३ ५३३ १ १	अहिष्णु ५३३ (अहिष्णु)
अ ५३३ ३ ३ (अहिष्णु १)	अहिष्णु ५३३ ०१३
अहिष्णु १ ५ (अहिष्णु)	अहिष्णु ५३३
अहम ५३३	अहिष्णु ११३ (अहिष्णु) १११
अहम ११३ (अहिष्णु) ३ ५३ ५३३ १११	अहिष्णु ११३ (अहिष्णु)
०१ ११३ ११३	अहिष्णु ११३ ११३ ११३ ११३ ११३ ११३
अहम १-	अहिष्णु ५ ५
अहम ११३	अहिष्णु ५३३ ५ ५
अहम ११३	अहिष्णु ५ ५
अहम ५३३	अहिष्णु ५ ५
अहम ५३३ ११३ (अहिष्णु) ११३ १	अहिष्णु ५ ५ (अहिष्णु ५ ५)
अहम ५३३	अहिष्णु ५ ५ (अहिष्णु ५ ५)
अहम ५ ५ (अहिष्णु ५ ५)	अहिष्णु ५ ५ (अहिष्णु ५ ५)
अहम ५ ५	अहिष्णु ५ ५ (अहिष्णु ५ ५)

अधितमं ५०३

अधिया ६१०

अध्याकृत ६०६, ६१०, ६१२, ६१५, (मिसर का उत्तर 'हो' या 'ना' नहीं दिया जा सकता)

अध्यापाठ ६२१

अधुन ४०७

अधुन-भाषना ७६०

अधुन-गंजा ६०८

अधीय ६९०, ७०८, (-भूमि) ७०१

अष्टमिक मार्ग ५०५, ५२२, ६०९

अमबर ४८४

अमन्कार परिमियादी ७१४, ७१६

असकृत ६०० (अकृत, निर्माण), ६००

असम्भूत ५८५

अस्त २५६, ५८७

अन्धकन्वया ६७६ (एग्री की भाषना, एक कर्मन्याय)

अस्मिता ५३० (अहकार)

अस्मिमान ५०५ ('मैं हूँ' का लभमान)

अहकार ५३२

अद्विसा ६०१

अन्तो ६१९ (निलंजता)

आकार-परिवर्तक ५०७

आकिञ्चन्य ५७६

आकीर्ण ४६७ (पूर्ण, भरे हुए)

आच्छादन ५७४ (छाजन, छपन)

आत्मापी ६०० (क्लेशों की तपानेवाला), ६९१ ७२१

आत्म-हत्या २७६

आत्मकलमथानुयोग ५८८ (पञ्चाग्नि आदि में अपने शरीर को कष्ट देना)

आत्मा ४७५, ६१४

आत्मानुदष्टि ५११

आत्मोपनायिक धर्म ७७७

आदिस २५८, ५२०

आधिपत्य ७७२

आध्यात्म ७९० (भीतरी)

आध्यात्मिक ४५४

आनापान ६७७ (आश्वास-प्रश्वास)

आनापान स्मृति ७६१

आनिसंय ७६१ (सुरिणाम, गुण)

आगमन ४५०, ४५२, ४५४, ४८३, ५००

आशुत ६०१

आयुस्कार ७३९ (जीवन-शक्ति)

आरः ७५१ (परिपूर्ण)

आर्य ५०२, ७५८ (पण्डित)

आर्य आष्टमिक मार्ग ५३१, ५५०

आर्य-विनय ४७७, ४९१, ५१६

आर्य-विहार ७६८

आर्य-त्रयक ४५१, ४५०, ४५३, ४५९, ५१३, ७०७

आर्यमय १११, ८१७

आलिन्द ५७३ (घरामदा)

आलोक मंजा ७४५

आरहक ६०७ (एक माप)

आवरण ४०३, ५२२, ६६३

आवाम ४००

आह्वासन ५६०

आश्वास-प्रश्वास ५४०

आश्रय ४५९ (चित्त-मल), ४६५, ४९४, ५६१, ६४७ (चार) ७०६, ७७१

आसक्ति ६६७

इन्द्रिय ६०१

ईपा ६२१

उच्छेदवाद ६१४

उत्पत्ति ४५६

उदयगामी मार्ग ७८०

उद्भुत्तक ६७७

उपक्लेश ६६२ (मल)

उपगन्तव्य २७७ (जिनके पास जाया जाये)

उपज ४७७ (जाने आने के समर्थ वाला)

उपशम ७८० (शान्ति)

उपपेण ५३२

उपस्थानशाला ७६५ (सभा-गृह)

उपसृष्ट ४६३ (परेशान)

उपहृत्तपरिनिवृत्तार्थी ७१२, ७१६

उपादान ४५९, ४६०, ४६५, ४७२, ४८८, ४८९, ४९२, ५६१, ५६२, ६१४, (चार) ६४८, ८०७

उपादान स्कन्ध ५२२ (पाँच)



दुन्दुभी ७३९	६२३, ६३७, ६४३, ६५४, ६५७, ६५८, ६५९,
दुर्गति ५९४	६६४, ७०७, ७२३, ७२४, ७२९, ७३३,
दुष्पण ६६५ ( वेचक्रफ )	७३९ ( अनुल ), ७८०
दूत ५३१	निर्णेत ४९०
द्वैदीप्यमान ७४७	निर्वेद ४५२, ४५३, ४५९, ४६५, ५०८, ५१३,
देवासुर संग्राम ५३३	६५८, ७८०
द्रोणी ५३०	निष्कटमप ५६८ ( निर्मल )
द्वीमेनस्य ४५८, ५२८, ७२१	निष्काम ५४१
द्वैवारिक ५३१	निस्तु ४७७ निष्पाप ७८२ ( लगाव )
दृष्टिनिध्यान-क्षान्ति ५०७	नीचरण ६५० ( चित्त के आवरण ), ६६३, ६६४,
धरण ६४१	६६७, ६७५
धनुर्विद्या ८२०	नैर्गमिक मार्ग ६५८ ( मोक्ष-मार्ग )
धर्म-कथिक ५०८	नैवसञ्ज्ञी-नासञ्ज्ञी ६१५
धर्म-विनय ४७०	नैवसञ्ज्ञा-नासञ्ज्ञायतन ७२१
धर्म-स्वरूप ४९०	परमशान्ति ५८८
धर्म-स्वामी ४९१	परमज्ञान ६५७
धर्म-संज्ञा ४९१	परमार्थ ७६८
धर्म-यान ६२१	परिचर्या ५८२
धर्मानुषङ्ग ६८४	पवित्रास ४६० ( भय ), ४७९
धर्मानुसारी ७१३, ७१४	परिदेव ४५८, ५८७, ६८४ ( शोभा-पीटना ), ८१७
धर्मादर्श ७७८	पहिनायकरसन ६६५
धातुनामात्व ४९८	परिनिर्वाण ४७४, ४९२, ५३५, ६८९, ६९४, ६९७,
नट ५८०	७९९, ७७९
नरक ५०२, ५८६	परिल्लाह ५२८, ६१०
नास्तिता ६१४	परिव्राजक ६१४
निदान ५८७, ७२१ ( कारण )	परिहान धर्य ४८३
निमित्त ७२१	परिहानि ६९८
निरय ७७७ ( नरक )	परिज्ञा २६५, ६२१ ( पहचान )
निरामिप ५४७ ( निष्काम ), ( -प्रीति ) ७७०	परिज्ञात ४६५
निरुद्ध ४९१, ७३५, ६१५, ६५९, ७२१ ( रुक जाना )	परिज्ञेय ४६३
निरोध ४५२, ४५३, ४५६, ४७७, ४८८, ५०५, ५३०, ५७७, ६५८	पर्यवसान ५०१
निरोधगामी ६६१	पर्यावृत्त ४६५ ( नष्ट ), ४६६
निरोधधर्मा ४६२	पर्यावान ४६५ ( नाश ), ४६६
निरोध-संज्ञा ६७८	पाताल ५३६
निरोध-न्यनापत्ति ५७५	पाप ६९६
निर्जर ५९३ ( जीर्णता प्राप्त )	पाप-चीवर २०४
निर्वाण ४६०, ४७७, ४७९, ४८२, ५०७, ५०३, ५०५, ५०८, ५३५, ५३९, ५५९, ५६३, ५८८,	पुलकक ६७७
	पुलकदिगी ८१८
	पूर्वकौटि ८१५ ( आरम्भ )
	प्रथम-जन ५१६ ५३३, ५८८, ( भय ) ७१५

- उपवास ४५८ ( परंतापी ) ५३० ५८० ८ ०  
 उपेक्षा ५९९ ६२१  
 उपर्णयामी ७८३  
 उपर्णकोट-भक्तनिहयामी ७१२ ७१६  
 मनु-सिद्धि ६५४  
 अग्नि ५७३ ६ १ ७१०  
 अक्षिपाद ६ ३, ७३६ ७३८ ७४५  
 एकबीची ७१०  
 पृथ्विहारी ७६०  
 पृथ्वीमता ७१३  
 पूज ७७९ ( विष्णु का सम्बन्ध )  
 पूषन्क ६६५ ( सेंच बैसा गैया )  
 पूष्या ६७६ ७१ ( लोच ग्याह )  
 पृथ्विपस्त्रिक ७६९ ( जो कोर्गी को पुकार कर  
 दिधाने के बोल्ब ही कि 'आओ हुसे देलो )  
 पूष ५९३ ( पाठ ), ६८१ ( अर )  
 नीज्ज्व ७४५  
 लोत्तथ-कीकृत्य ६३९ ६५५, ६५९ ( आर्यस म  
 आकर लुड पकटा-सकटा कर बैठना भीर पीड  
 उसका पछताया करवा )  
 लीपतामिक ७३९ ( निर्वाण की ओर के जायेबाक )  
 लीपतामिक ५९० ( स्वर्णभू ) ७७८  
 करवा ५७६, ५८५, ५९९  
 कर्म ७३८  
 कर्मपाल मित्र ६१९  
 काम-मुष्का ८ ०  
 कामैवना ६४६  
 कामतास्युवि ५३२  
 काम ७५८  
 कामानुपस्थी ६ २ ६६७ ६९४  
 काकाकुमारी ६४१ ( अल )  
 किचन ५७७ ( अल )  
 कुण्ड ६१७ ( कर्मार्थ का एक परिमाण )  
 कुम्हा ५५३ ( बैसा )  
 कुम्भुष ५७३  
 कुशा ६१९ ( पुत्रव )  
 कुशीव ५५३ ( कल्याण-दीव ) ७४५  
 कुशमार ५२८ ६४१ ६५४ ७३०  
 कुशागरसाका ५२८ ७९३  
 कुर्नकोम्ब ७१०
- कौमुदलकाका ६३३ ( सर्वधर्म-सम्बन्ध-गृह )  
 कुतकृत्य ५७९  
 कुवकर्मो ७६९  
 क्षीमात्मक ५ २ ५७७ ७४, ७६८ ( सर्वार्थ )  
 क्षामवर्षान ७५५, ७१९  
 क्षामस्वरूप ७९०  
 पण्ड ७८६ ( पुष्क )  
 गोपातक ७७६ ( कसाई )  
 ग्यावसाका ५३८ ( रोमिर्गी को रवाने का कर )  
 गृहपति ६९९ ( गृहपति दीव )  
 गृहपति-वर्त ६६५  
 गन्ध ६७८ ( -अर )  
 गर्भमात्र ७२३, ५२४ ( इच्छता )  
 गच्छ ५८ ( समाप्तक )  
 गद्युविज्ञान ७५८  
 गद्युविद्येय ७६७  
 गारिका ५८५, ७७५ ( जमल रमत )  
 गितसमाधि ६ ३  
 गितानुपस्थी ६८४  
 गीवर ७९९  
 गेयोविस्तुकि ५ ५२७ ५३२ ५८५  
 गीय ७३८  
 गम्बुदाय ७५४ ७८६ ५१८, ५७७ ( गुष्का )  
 गम्बुष ७७८ ५८७ ( मात )  
 गम्बुष कर्मार्थी ६९६ ( वेदना )  
 गम्बुषो ७६२ ( गृह होने के स्वभाववाला )  
 गाति ७५८ ( जम्भ )  
 गतिधर्मो ७६९ ( उत्पन्न होने के स्वभाव वाला )  
 गद्यायत ५७३ ( बीव ) ६ ६ ६ ०  
 गिरस्थीन ५२ ( पण्ड ) ५८१ ७९७ ( -कोमि )  
 ७७२ ७८५, ( गिरधर्क ) ८ ६  
 गैरिषिक ७६७ ( जम्भ मवाकजम्भी )  
 गियु ६६९ ( अस्ता )  
 गृष्का ७६७ ५ ८ ५६१ ६७०  
 गपति ५७३ ( करीवर )  
 गीमिन्द्र ६६७ ( कारीरिष एवं मासिकिष आच्छल )  
 गृष ७६३ ( गीव )  
 गर्सव ५३ ( वरमार्थ की समता )  
 गिवा-रीशा ७४६  
 गिब ५५४ ( जम्भीकिक )



- कुन्दुर्मा ७३५  
 कुर्वति ५९४  
 कुम्भ ६१५ ( वेद्यक )  
 कृत ५३१  
 देवीप्यमान ७४७  
 देवामुर-संश्राम ५३३  
 प्रोणी ५३०  
 दोर्मन्तर्य ४५८, ५०८, ७०१  
 दोषारिक ५३१  
 दृष्टिनिष्यान-क्षान्ति ५०५  
 धरण ६४१  
 धनुर्विद्या ८००  
 धर्म-कथिक ५०८  
 धर्म-विनय ४७०  
 धर्म-स्वरूप ४९०  
 धर्मस्थानी ४०१  
 धर्मज्ञ ४९१  
 धर्मयान ६२१  
 धर्मानुपदेशी ६८४  
 धर्मानुसारी ७१३, ७१४  
 धर्मादर्श ७७८  
 धातुनात्त्व ४९४  
 नट ५८०  
 नरक ५०२, ५८६  
 नास्तिता ६१४  
 निदान ५८७, ७०१ ( कारण )  
 निमित्त ७२१  
 निरय ७७७ ( नरक )  
 निरामिय ५४९ ( निष्काम ), ( -प्रीति ) ७७०  
 निरुद्ध ४९१, ५३५, ६१५, ६५९, ७०१ ( रुक  
 जाना )  
 निरोध ४५२, ४५३, ४५६, ४७७, ४८८, ५०५,  
 ५३०, ५७७, ६५८  
 निरोधगामी ६६१  
 निरोधधर्मा ४६२  
 निरोध-सज्ञा ६७८  
 निरोध समापत्ति ५७५  
 निर्जर ५९३ ( जीर्णता प्राप्त )  
 निर्वण ४६०, ४७२, ४७९, ४८२, ५०२, ५०३,  
 ५०५, ५०८, ५२५, ५३१, ५७९, ५६३, ५८८,
- २२३, ६३७, ६४३, ६५४, ६५७, ६५८,  
 ६६४, ७०७, ७२३, ७०५, ७२९, ७३३,  
 ७३९ ( अनुल ), ७८०  
 निर्जिता ४९०  
 निर्वेद ४५०, ४५३, ४५९, ४६५, ५०४, ५१३,  
 ६५४, ७८०  
 निष्काम ५८८ ( निर्मल )  
 निष्काम ५४१  
 निरुद्ध ४७७ निरुद्ध ७८३ ( लयाय )  
 नीवरण ६५० ( चित्त के आवरण ), ६६३, ६६४,  
 ६६७, ६७५  
 नैर्वांगिक मार्ग ६५८ ( भोक्ष-मार्ग )  
 नैवसंज्ञी-नासंज्ञी ६१५  
 नैवसंज्ञा-नासंज्ञायतन ७०१  
 परमप्रान्ति ५८८  
 परमज्ञान ८५७  
 परमार्थ ७६८  
 परिचर्या ५८०  
 पवित्राम ४६० ( भय ), ४७९  
 परिवेष ४५८, ५८७, ६८४ ( रीता-पीठना ), ८१७  
 पहिनात्यपररत ६६५  
 परिनिर्वाण ४७७, ४९२, ५३५, ६८९, ६९४, ६९७,  
 ७९९, ७७९  
 परिलाह ५२८, ६१०  
 परित्रालक ६१४  
 परिहान धर्म ४८३  
 परिहानि ६९८  
 परिज्ञा ६६५, ६२१ ( पहचान )  
 परिज्ञात ४६५  
 परिज्ञेय ४६३  
 पर्यवसान ७०१  
 पर्याप्त ४६५ ( नष्ट ), ४६६  
 पर्यादान ४६५ ( नाश ), ४६६  
 पाताल ५३६  
 पात्र ६९६  
 पात्र-चीवर ४०४  
 पुलक ६७७  
 पुष्करिणी ८१८  
 पूर्वकोटि ८१५ ( आरम्भ )  
 प्रयक-जन ५१६, ५३३, ५८८, ( भय ) ७१५

प्रतिपाल १९ ( विद्य कमान्द्र )	महाधर्म ३५१ ३५९ ३६८ ५०१
प्रचीत ७५३ ( उत्तम )	महाधर्मपत्नी ३३६
प्रतिबृह-दीक्षा १०८	महाधाम ३३० ३३१
प्रतिव ५३५ ( विद्यता )	महाविहार ३६८
प्रतिभानुसय ५३९ ( द्वैप विद्यता )	महात्मक्य ४९
प्रतिभिःसर्ग ७९१ ( त्याय )	ममभानु ३९५
प्रतिपदि ३३ ( मार्ग )	मिमु ३९१
प्रतिपद् ७५३ ( मार्ग )	मत्तसम्मह ३६०
प्रतिवेव ८११	मव ३९७ ( तीव ) ८११ ( क्षीवव )
प्रतिहरण ७२३	मय-मृत्ना ८ ७
प्रतिष्ठित ७२९	मव-राग ५ ३
प्रतिस्वकान ३८५ ( विद्य की पृथामहा )	मव-संभोजन ५ ३
प्रतीव-समुत्पन्न ५३९ ( कार्य उत्तरव ही उत्तरव )	मव-श्रोत ५ ३
प्रत्यय ३५८ ( कारण ) ५१८ ५३३ ३९७ ७९१	मवपत्नी ३३६
प्रत्यात्म ३५५ ( अपत्ने शीतर ही शीतर )	माकित ७२९
प्रपद्य ३७४ ( -संज्ञा ) ४८३	भूत ८१८ ( वधार्थ )
प्रपात ८१९	मध्वम मार्ग ५८८
प्रमाद् ३८३	मनसिस्वर ३३४ ( मवव करण )
प्रकीर्णधर्म ३९३ ( नासवाद् )	मनासव ७४७
प्रकीर्णधर्म ३७५ ( नाशावाद् स्वभाव वाहा )	मनोविद्या ४५८
प्रकथा ५३३ ( संव्हास )	मनोविद्येय ५९७
प्रकथन ५३३, ५३५, ५३६	मन्व ३७३
प्रकथिय ३८४ ( छ ) ५४	मर्मकार ५३९
प्रहास ५५९	मरुतधर्म ४३९
प्रहास-संज्ञा ३७८	महत्त्वक ३८९
प्रहास्य ३६३	महाधर्मस ३७६ ( महागुणवाद् )
प्रहितारम ३६७	महाधुक् ३९१
प्रहीन ३६४ ५३५ ५३३ ७	महामिथा ७९१
प्रथा ३९१	महाभूत ५३१ ७७७ ( धार )
प्रजाविमुक्ति ५ ५३७ ५३९	महामात्व ७९
प्रभुधीव ७३	मात्सर्ध ५५४ ( वंशुली ) ७९३
प्रभुधुत ३८३	मावापुसव ३६९
मेस-मोमि ७३	मावा ५९७
पाद ३७८ ( पाद )	मार ५१
पुस्तक ३५७ ३९१ ५३८ ३९५, ७२९ ७७७	मारवाद्य ३९
७६७	मारिय ५६८
दुक्कविहार ७३८	मिपव-वधि ५२६
धोव ३५९ ( धाम )	मौमीषा ३ ३, ७७६
धोधि ७९३	मुदिता ५७६ ५८३, ५९९
धोर्ध्वग ३ ३ ३५ ( धाठ ) ३५७ ३५५ ३५९	मूक ५८

मूढ ६६७ ( सात्विक भावस्य )  
 मंत्री-नामान ५३६ ( शिवता गुण )  
 स्मृत्यु १२७  
 मत्त ५३७  
 मृष ११३ ( घटा स्तम्भ )  
 योग ६२८ ( चर )  
 योगक्षेम १३०, ( शिवलि ) ३६८  
 योगधर्म ४८३  
 रण ४१०  
 रमार्थ ५८८  
 रामानुज ५३३  
 राजभवन ५८८  
 र ४००  
 रूप-मंत्रा ५४५  
 रक्षाधर्म ५११  
 रक्षाधर्म ५०३  
 रघु-मृगा ७२७  
 र्शन ७४५ ( कर्मगौर, सुख )  
 रूढि ४३४ ( उत्पत्ता-व्यवस्था )  
 र्ण ६०५ ( गुण )  
 र्ण ४६८, ४७४, ४९०, ४९१, ५०७, ६११  
 र्ण-विद् ५६३, ५८४, ७७२  
 र्णोत्तर ७२९  
 र्णोभामिन् ५९१  
 र्ण ४७७  
 र्णव्यय ७२२  
 र्ण ८०६  
 र्णिकिस्ता ५७८, ६१४, ६४९, ६५९, ७०४  
 र्णिलदक ६७७  
 र्णुणा ५३५  
 र्णुर्षा ५३१, ६००  
 र्ण ६६५ ( अभिमान )  
 र्णालक ६७७  
 र्णपरिणत ४६९, ४९१  
 र्णुल ७८५  
 र्णव तुष्ठा ८०७  
 र्णमति ५८७  
 र्णुक ४५९, ६९१, ७६६  
 र्णुक्ति ४५१, ४५४, ४९४, ६६३, ७०३  
 र्णोक्ष ७५६

र्ण ४५७, ४५८  
 र्ण ४०३, ४०३, ( -गणा ) ६१८  
 र्ण ५३०, ६०३, ६०१  
 र्ण ५१३, ६९४  
 र्ण ४५१  
 र्ण ५९३  
 र्ण ५३१, ६११  
 र्ण ५३०  
 र्ण ५८०  
 र्ण ६०३  
 र्ण ४८८ ( शानी )  
 र्ण ५३५, ( र्ण ) ६४३  
 र्णानुपठय ८८४  
 र्ण ५३३  
 र्ण ६६३  
 र्ण ४६३  
 र्ण ६५८ ( र्ण-भाव ), ६५९ ( र्ण-भाव )  
 ६६३  
 र्ण ५३६, ५४७  
 र्ण ६१३, ( -वाद ) ६१४  
 र्ण ७३९, ७३९, ७३०  
 र्ण ( बुद्ध ), ५०५ ( गुण )  
 र्ण ६३१  
 र्ण ४७१  
 र्ण-परामर्श ६४८  
 र्ण ४९७  
 र्ण-निमित्त ६५१  
 र्ण ५७६, ७९०  
 र्ण ५०५  
 र्ण ६२५, ६०८, ७२८, ( -भूमि ) ७२८, ७६८  
 ७६९  
 र्ण ४६३  
 र्ण ६२१  
 र्ण ७१३, ७१४, ७१५  
 र्ण ६३१  
 र्ण ५३५, ५८५  
 र्ण ४०२  
 र्ण ५८५  
 र्ण ४६२  
 र्ण ५६८

सघटी ५२७, ६८४	सम्भार ५३२ ( अक्षय )
संवागार ५२६ ( पञ्चमिह-मन्त्र )	सम्भोह ५३७
संवाह ५२६, ५२७ ५३७ ५३५, ५३८, ५८५ ६८७	सम्भु-दृष्टि ५०८
संवाहक ५३७ ( अक्षय ) ७८८, ५३८ ५३५	सम्भु-प्रभाव ६०३
५७७ ६३२ ६७७ ६७९	सम्भु-सम्भु ७५७, ७३६
संवाहनीय ७८८	सर्व ७५७
संवाह ७८४	सर्वभित् ७८६
संवाह ५२५	सर्वज्ञ ७९७
संवाह ५७५ ७२३	सर्वज्ञपरिनिर्वाणी ७३७ ७३६
संवाह ५३९	सातवारपरम ७३७
संवागार ५२६ ८२ ( पञ्चमिह-मन्त्र )	साध ५७२
संवाह ७५७	साध ५७२ ( अक्षय )
संवाह ७२७	साध ५७२ ( अक्षय )
संवाह ७२३ ( अक्षय ) ७७५	सु-अंश ७७७
संवाह ७२३ ( अक्षय ) ७७३	सु-अंश ५५२ ( अक्षय गति को प्राप्त, सु-अंश )
संवाह ७२३ ७७२	सु-अंश ५२८, ७८०
संवाह ५२७	सु-अंश ५२९ ( अक्षय मार्ग पर अक्षय )
संवाह ५७३	सु-अंश ५३२
संवाह ७३२, ७३५ ७३६ ७७८ ८ १	सु-अंश ७२९
संवाह ७८२	सु-अंश ५८
संवाह ५२२	सु-अंश ७३२, ७३७ ७३५, ७७२ ७७८, ७८५
संवाह-दृष्टि ५३ ५७	सु-अंश-अक्षय ७७७
संवाह ५२७	सु-अंश-अक्षय ५३२ ५२७ ७२३
संवाह ६२८ ७७४	सु-अंश-अक्षय ७२
संवाह ७२७	सु-अंश ५७२
संवाह ८	सु-अंश ६३२ ( आर्यिक अक्षय )
संवाह ७२ ( अक्षय )	सु-अंश ७७७ ( अक्षय )
संवाह ५३३, ६	सु-अंश-अक्षय ६ ६५७ ( आर ) ६२८
संवाह ५७७ ५८८ ५२८	सु-अंश-अक्षय ७२३ ५२७ ५२७ ५८५, ६८७
संवाह ७८५ ७३६ ५ ९ ५३५, ६८८	सु-अंश ५ २, ७८
संवाह ७७७, ७८७ ५३ ५३७ ५८७	सु-अंश-अक्षय ७७२
संवाह ७३२ ७२७	सु-अंश ७५६
संवाह ५८६ ६५८	सु-अंश ६३२ ( अक्षय )